स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य

[१९४७ ई० से १९७४ ई० पर्यन्त]

(जोधपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच० डी० की उपाधि के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध)

कापीराइट : डॉ० रामस्वरूप व्यास

प्रथम संस्करण . १९८०

मूल्य : ५४.०० रुपए (चौवन रुपए)

मुद्रक —
कमल आर्ट प्रेस
नया बाजार, अजमेर

प्रकाशक —
राजीव प्रकाशन
पीपली की गली व डाक
नागौर (राजस्थान)

पुरोवाक्

मन्त्रो हीन स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह ।
स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ॥

महर्षि पतञ्जलि ने उपर्युक्त श्लोक संस्कृत भाषा के स्वरो के महत्त्व को व्यक्त करने की दृष्टि से लिखा है और यह उस भाषा की अपनी एक पृथक् विशेषता है । प्राच्य भाषा की यही विशेषता राजस्थानी भाषा मे भी उसी रूप मे (मानो यह विशेषता उसे धरोहर के रूप मे मिली हो)मिले तो इसे केवल सयोगमात्र ही समझ-कर टाल नही सकते, परन्तु इसे राजस्थानी भाषा की विशेषता के रूप मे स्वीकार करना होगा । राजस्थानी भाषा के इसी आकर्षण ने मुझे आकृष्ट किया है । मैं उसी विचार को लेकर चलता रहा हूँ— उसी मे तन्मय होता रहा हूँ और उसी भाषा के बारे मे सोचता रहा हूँ । शोध के लिए इसी भाषा के स्वातन्त्र्योत्तर गद्य-साहित्य को विषय के रूप मे अपनाने की प्रेरणा भी मुझे इसी श्लोक तथा प्रारम्भ से ही मातृ-भाषा के प्रति अगाध निष्ठा से मिली है यद्यपि मैंने अपना प्रतिपाद्य विषय इसके स्वरो एव वर्णों के विवेचन से अलग रखा है तथापि भाषा के विशिष्ट तत्त्व ने मुझे सतत अपनी ओर आकृष्ट किया है ।

गद्य कवियो के लिए निकष-पट्टिका है । कवि की समग्रता इसके माध्यम से पाठको के समक्ष आ सकती है। छन्दो का बन्धन नही रहता— मात्राओ का पाश नही रहता और वाक्यो की सीमा नही रहती । इसी कसौटी पर मैंने स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य को परखने का प्रयास किया है । एकान्त के क्षणो मे बुद्धि उद्दीप्त होती रही है और मैं राजस्थानी भाषा के लेखको के मर्म के पीछे दौडता रहा हूँ । इसी विषय पर चिन्तन करते करते कुछ असाधारण क्षण आए हैं और उन असाधारण क्षणो मे मैं असाधारण मर्म को पकडने का प्रयास करता रहा हूँ । मर्म को जानने के लिए सन्देह को छोडना होता है तथा चिन्तन को गतिशील बनाना होता है । मैं इस कार्य को आगे बढाने की दृष्टि से इसके प्रति कटिबद्ध रहा हूँ और प्रतिभा को उद्बोधक बना कर विषय की समग्रता की ओर भी ध्यान देता रहा हूँ । मैं यह मान कर चलता रहा हूँ कि मातृभाषा मानव के अन्तःकरण की भाषा होती है— उसी मे मानव के विचार अकुरित, प्रस्फुटित और विकसित होते हैं । इस भाषा के गद्य-साहित्य को शोध का विषय बनाने से राजस्थानी परिवेश और राजस्थानी जन-जीवन से तो अपने आपको जुडा हुआ रख ही सका हूँ, साथ ही अन्तःकरण की भाषा को मूर्त रूप देने के दायित्व का निर्वहण भी कर सका हूँ ।

बारह अध्यायो मे विभक्त इस शोध-पुष्ट गद्य-साहित्य के ऐतिहासिक ग्रन्थ मे स्वातंत्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य की लगभग सभी विविध विधाओं का विवेचन

किया गया है। मैंने उपन्यास, कहानी, नाटक, एकाकी, रेखाचित्र, सस्मरण, रिपोर्ताज, निवन्ध और गद्य-काव्य के बारे मे तो विश्लेषण किया ही है परन्तु साथ ही पत्र-पत्रिका, समीक्षा तथा अनूदित गद्य-साहित्य से सम्बन्धित सामग्री को उजागर करने का विशेष प्रयास किया है जिसे मेरे पूर्ववर्ती शोधार्थियो ने उपेक्षित अवस्था मे ही छोड रखा था।

इस ग्रन्थ के प्रथम अध्याय मे राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति और इसके गद्य-साहित्य के क्रमिक विकास पर सक्षिप्त विचार प्रकट किए गए हैं। किशोरसिंह बार्हस्पत्य, सुनीतिकुमार चटर्जी, उदयसिंह भटनागर, मोतीलाल मेनारिया, नरोत्तमदास स्वामी, हीरालाल माहेश्वरी, सीताराम लालस, गजराज ओझा, पुरुषोत्तमदास स्वामी इत्यादि विद्वानो ने राजस्थानी भाषा का उद्गम-स्रोत नागर अपभ्रंश तथा इसकी उत्पत्ति का काल सातवी शताब्दी से बारहवी शताब्दी के बीच माना है। राजस्थानी के प्राचीन गद्य से आधुनिक गद्य-साहित्य तक विषय-सामग्री को क्रमिक सूत्र मे पिरोने का पूर्ण प्रयास किया गया है। प्रारम्भिक अध्याय को छोड कर एकादश अध्यायो मे मैंने स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी के उपन्यास, कहानी, नाटक, एकाकी, निबन्ध एव साहित्य की अन्यान्य विधाओ का विविधोन्मुखी विवेचन किया है।

उपन्यास के क्षेत्र मे लोक-उपन्यासो की सर्जना, उन्हे सामयिक सन्दर्भो मे नूतन व्याख्या के साथ प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति और सस्कृति की अनुकूल स्थिति के रग मे रजित सामाजिक उपन्यासो की सृष्टि राजस्थानी उपन्यासो की उल्लेखनीय विशेषता रही है। लोक-उपन्यासो की सर्जना मे बोरुन्दा के रूपायन सस्थान का कार्य सर्वोपरि रहा है। स्वतन्त्रता से अब तक न केवल लोक एव सामाजिक उपन्यासो की अपितु ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक एव पौराणिक उपन्यासो की भी सृष्टि हुई है। इन उपन्यासो के अध्ययन के बाद निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि इस भाषा के उपन्यास कलेवर की दृष्टि से लघु होते हुए भी विषय की दृष्टि से अधिक व्यापक हैं, रोचक हैं और समग्रता से ओतप्रोत है। इनकी कथायें विशेषत सामाजिक उपन्यासो की— निम्न एव मध्यम वर्ग से अधिक तारतम्य रखने वाली है। लोक-उपन्यासो मे अतिमानवीय तत्वो का आधिक्य रहा है। सामाजिक उपन्यासो का दृष्टिकोण आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद या केवल आदर्शवाद का ही रहा है। वित्तीय अभाव मे कुछ उपन्यास तो पत्र-पत्रिकाओ मे ही प्रकाशित होकर रह गए हैं।

कहानी के क्षेत्र मे लोककथाओ, ऐतिहासिक और सामाजिक परिवेश का दिग्दर्शन करने वाली कहानियो का प्राधान्य रहा है। ये कहानियाँ अपने युग के सम्पूर्ण सजीव चित्र को प्रस्तुत करने मे सफल रही है। कहानी की दृष्टि से राजस्थानी-साहित्य अधिक सम्पन्न रहा है। अनेक प्रकाशित कहानी-सग्रहो ने तो पाठको के मनोरञ्जन मे वृद्धि की ही है साथ ही पत्र पत्रिकाओ के माध्यम से भी हजारो कहा-

नियाँ प्रकाश मे आई है। लोककथाओ का धरातल भी अधिक पुष्ट है। अकेले रूपायन सस्थान, बोरुन्दा से प्रकाशित 'बाता री फुलवाडी' के दस भागो मे लगभग चार सौ लोककथायें उपलब्ध हो जाती हैं। बालोपयोगी, हास्य, व्यग्य व नीतिपरक, मनोवैज्ञानिक, पौराणिक एव ऐतिहासिक कथायें भी राजस्थानी के स्वातन्त्र्योत्तर-काल मे अधिक मात्रा मे लिखी गई हैं।

नाटको मे सामाजिक जीवन की समस्याओ पर आधारित सुधारवादी भावनाओ के साथ मनोरजक एव अभिनेय नाटको की प्रधानता रही है। वैसे राजस्थानी नाटको की सख्या न्यून रही है परन्तु प्रवासी राजस्थानियो के अभिनय-कला तथा मातृभाषा के प्रति मोह ने रूपक-साहित्य को उन्नति के शिखर पर ले जाने का निश्चय-सा कर लिया है। फलस्वरूप बम्बई मे प्रति वर्ष दो-तीन राजस्थानी नाटको का सफल अभिनय होता रहता है। नाटक प्राय: सामाजिक परिवेश वाले ही हैं। मारवाडी बोली के प्रवाह मे बहने वाले नाटको ने हाडौती बोली का भी आलिगन किया है। राजस्थानी नाटक-साहित्य भारतीय तथा पाश्चात्य शैलियो का सगम-स्थल रहा है।

एकाकियो मे भी नाटको की भाँति सुधारात्मक दृष्टिकोण की प्रमुखता रही है। ऐतिहासिक एकाकियो मे तत्कालीन समाज के अच्छे-बुरे पक्षो के विश्लेषण की क्षमता भी उभर कर आई है। आज सख्या की दृष्टि मे काफी एकाकी-सग्रह दृष्टि मे आते है। वित्तीय कठिनाई के कारण कई एकाकी-सग्रह प्रकाशन से दूर रह गए है। फिर भी पत्र-पत्रिकाओ ने राजस्थानी एकाकी-साहित्य को अत्यधिक सुदृढ और सम्पन्न कर दिया है। शताधिक एकाकी राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे आ चुके हैं तथा उनकी निरन्तरता पर अब भी कोई प्रतिबन्ध नही लगा है। सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, बालोपयोगी, रेडियो, हास्य और व्यग्यमूलक एकाकी आज भी दर्शको एव पाठको के समक्ष अपने कौशल को दिखाने हेतु आतुर हैं। राजस्थानी के अधिकाश एकाकी अभिनेयता मे सफल घोषित हुए हैं।

इस भाषा के रेखाचित्र, सस्मरण और रिपोर्ताज क्षेत्रीय लोक-जीवन को सही रूप मे प्रस्तुत करने मे सफल हुए हैं। इनमे विशेषत निम्न-मध्यमवर्गीय पात्रो को आधार बनाया गया है। रिपोर्ताज को छोड गद्य-साहित्य की ये नवीन विधाएँ स्वतन्त्रता के बाद पुस्तकाकार मे देखने को मिल जाती है, राजस्थानी गद्य-साहित्य के लिए यह एक गौरव की बात है। अकेले डा० व्रजनारायण पुरोहित ने सस्मरणात्मक रेखाचित्रो के चार-पाँच सग्रह लिख डाले हैं। हास्याधिक्य एव रूप-वर्णन इस नवीन विधा के प्रमुख गुण रहे हैं। पत्र-पत्रिकाओ मे समय-समय पर रिपोर्ताज-विधा के भी दर्शन भी हो जाते हैं। लेखको ने इन विधाओ मे राजस्थानी सभ्यता एव सस्कृति, का ध्यान रखने मे सतर्कता बरती है। फलस्वरूप पात्रो के नामकरण तथा वातावरण

की सृष्टि इसीके अनुरूप ही हो सकी है।

निबन्धो की सख्या अन्य विधाओ की अपेक्षा सीमित होते हुए भी राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से वर्णन तथा विचारप्रधान निबन्ध प्रकाश मे आए है। परन्तु नीरसता के कारण ही निबन्धो के स्वतन्त्र सग्रहो की न्यूनता रही है। अनेक विषयो से युक्त निबन्ध स्फुट रूप मे पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए हैं। राजस्थानी निबन्धो मे एक अन्य विशेषता मिलती है, वह है—कथात्मकता की। ऐसे निबन्ध राजस्थानी मे अधिक तो नही पर निबन्ध-साहित्य की निधि को देखते हुए पर्याप्त अवश्य है। पत्र-पत्रिकाओ से प्राप्त होने वाले निबन्ध राजस्थानी के निबन्धकारो की मातृभाषा के प्रति निष्ठा एव उसके प्रति अगाध प्रेम को अभिव्यक्त करने वाले है। राजस्थानी भाषा को केन्द्रीय साहित्य अकादमी से मान्यता दिलाने के विषय मे सर्वाधिक प्रयास इस विधा का ही रहा है। शैली मुख्यत वर्णनात्मक ही रही है।

राजस्थानी के गद्य-काव्य, जीवनी तथा इतरेतर प्रकीर्ण ललित साहित्य मे कलेवर की लघुता, चिन्तन-मनन की प्रधानता, वर्णन एव सवाद-शैली की अधिकता पाई जाती है। राजस्थानी का ऐसा साहित्य विकीर्ण रूप मे पत्र-पत्रिकाओ से ही अधिक प्राप्त होता है। इनमे सम्बन्धित पुस्तके तो गिनती मात्रा की ही दिखाई देती है। राजस्थानी गद्य-काव्य, जीवनी एव प्रकीर्ण साहित्य की कुछ अलग विशेषताएँ हैं जिन्हे हिन्दी-साहित्य की सम्बन्धित विधाओ से तुलना कर देखना उचित नही है। इसके मुख्य कारण यहाँ की सभ्यता, सस्कृति, भूमि और वातावरण ही हो सकते है। जीवनी-साहित्य की शैली आत्म-कथात्मक या वर्णनात्मक ही मुख्यत देखी गई है जबकि गद्यकाव्य मे सम्बोधनात्मक शैली भी अपना चमत्कार दिखाती नजर आती है। गद्यकाव्य मे दार्शनिक दृष्टिकोण का समावेश भी हुआ है। अनूठी शैली मे लिखित वार्ताएँ, लघु कथन, चुटकले, पहेलियाँ और सूक्तियाँ भी इस साहित्य की गरिमा को आगे बढाने मे अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देती है। समीक्षा पर स्वतन्त्र रूप मे कोई ग्रन्थ उपलब्ध नही हुआ है तथापि पत्र-पत्रिकाओ से विकीर्ण समीक्षा-साहित्य अल्पता की सीमा को लाघ चुका है। पत्रकारिता के उद्गम से ही इस विधा का श्रीगणेश हुआ है। समीक्षा-साहित्य की गति आज भी अवरुद्ध नही हुई है। आज भी वह विकास की ओर निरन्तर बढता जा रहा है।

अनूदित साहित्य को राजस्थानी के विकास का आधार-स्तम्भ समझा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। निबन्ध, कहानी, रेखाचित्र, उपन्यास, नाटक, एकाकी, गद्यगीत इत्यादि गद्य की सभी विधाओ का अनुवाद प्रचुर मात्रा मे प्रकाश मे आया है। ऐसे साहित्य के पचासो स्वतन्त्र ग्रन्थ भी आज देखने को मिल जाते है। छायानुवाद को छोड शेष सारानुवाद, भावानुवाद एव शब्दानुवाद राजस्थानी गद्य-साहित्य मे अधिकता से प्राप्त हो जाता है। बगला, सस्कृत, रूसी, अग्रेजी, मराठी, तेलुगु, तामिल, पजाबी, उर्दू, गुजराती तथा हिन्दी भाषाओ के साहित्य का अनुवाद राजस्थानी मे

हुआ है। प्राचुर्य की दृष्टि से बंगला, संस्कृत तथा अंग्रेजी को ही लिया जा सकता है। सारानुवाद और भावानुवाद काफी उत्कृष्टता की श्रेणी में रखे जा सकते हैं। 'श' और 'ष' का प्रयोग, अन्यान्य भाषाओं के शब्दों में अधिकतम आसक्ति राजस्थानी भाषा की सरलता एवं स्वाभाविकता से दूर रह जाना—राजस्थानी अनुवादकों की कमियां भी देखने को मिलती हैं। फिर भी संस्कृत की इस उक्ति के आधार पर इनका इस क्षेत्र में भरसक प्रयास सराहनीय रहा है—'एको हि दोषो गुणसन्निपाते, निमज्जतीन्दोः किरणेष्विवाङ्कः।''

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं की गति कभी तीव्र, कभी मंद और कभी अवरुद्ध स्थिति में देखी गई है। पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन-कार्य स्वतन्त्रता से पूर्व ही आरम्भ हो गया था। आधिक्य के प्रवाह में बहने वाली पत्रिकाएँ आज न्यूनता की श्रेणी में आ गई हैं। मातृभाषा को उपयुक्त स्थान दिलाने तथा उसकी प्रगति में हाथ बटाने का अत्यधिक श्रेय राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं तथा उनके सम्पादकों को ही है। वित्तीय एवं अन्यान्य जटिलताओं से ग्रस्त होकर भी कई पत्रिकाएँ आज भी जीवितावस्था में दृष्टिगत होती हैं। इन पत्र-पत्रिकाओं को सरकारी सहायता तो केवल अंशमात्र की ही है। फिर भी ये मातृभाषा के मोह में निमग्न स्वतन्त्र स्वाभिमान के साथ गतिशील हैं। व्यावसायिक दृष्टिकोण रखने वाली कई पत्रिकाओं का प्रकाशन बन्द हो चुका है। कुछ मृत पत्र-पत्रिकाएँ नए आवरण एवं नई साज-सज्जा में समय-समय पर प्रकट होती दिखाई देती हैं। "राष्ट्रपूजा" पत्रिका इसका ज्वलन्त उदाहरण या प्रमाण है।

स्वतन्त्रता के पूर्व तक राजस्थानी-साहित्य के क्षेत्र में प्रवासी राजस्थानी साहित्यकारों का प्राधान्य रहा। उन साहित्यकारों का झुकाव विशेषतः नाटक विधा की ओर ही रहा। राजस्थानी गद्यकारों ने अपनी रचनाओं में आदर्श, यथार्थ एवं सुधारात्मक मनोवृत्ति को ही प्रमुखतः स्थान दिया है। स्वतन्त्रता के बाद के गद्य में आलंकारिकता और काव्यत्व का मोह तनिक भी नहीं देखा गया है। राजस्थानी भाषा को मान्यता देने का प्रश्न, राजस्थानी साहित्यकारों एवं राजनीतिज्ञों के अधिक संघर्ष के बाद राजस्थानी को साहित्यिक भाषा के रूप में मान्यता मिल जाना, राजस्थानी की प्रगति हेतु साहित्यकारों को सरकार द्वारा वित्तीय सहायता, अनेक संस्थाओं का इस क्षेत्र में योगदान, राज्य सरकार द्वारा संस्थापित संगमों में पुस्तक प्रकाशन की सुविधाएँ तथा श्रेष्ठ कृतियों पर पुरस्कारों की घोषणा, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा में राजस्थानी भाषा को वैकल्पिक विषय के रूप में स्वीकृत करना इत्यादि अनेकानेक सफल प्रयास इस युग में दृष्टिगोचर हुए हैं। इस प्रकार गत कुछ ही वर्षों से राजस्थानी गद्य-साहित्य की ओर विशेष रूप से ध्यान दिया जाने लगा है। गद्य-साहित्य के उत्तरोत्तर बढ़ते इस चरण को देखते हुए यह आशा की जा सकती है कि निकट भविष्य में गद्य-साहित्य की निधि में अपार वृद्धि हो जायेगी।

इस ग्रन्थ के इस रूप में आने मे जाने-अनजाने में बहुत से विद्वानों तथा सहयोगियों का सहयोग मिला है। सहयोग मे ही समग्रता है। किसी भी शोध-ग्रन्थ में निर्देशक का योगदान असंदिग्ध और अप्रतिम रहता है। इसी दृष्टि से शोध-निर्देशक आदरणीय डा० राजकृष्ण दूगड, रीडर, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर की अद्भुत गुणवत्ता की जितनी प्रशसा की जाय, कम है—

वाग्जन्मवैफल्यमसह्यशल्य

गुणाद्भुते वस्तुनि मौनिता चेत् ।

डा० दूगड के विपुल निर्देशन के अतिरिक्त राजस्थानी के जिन विद्वज्जनों का पर्याप्त सहयोग मिला, उनका मैं आभारी हूँ। राजस्थानी भाषा की दुर्लभ पत्र-पत्रिकाओं, स्वरचित एव पररचित पुस्तकों तथा अन्यान्य सामग्री की अमूल्य निधि को वात्सल्य भाव से उपलब्ध कराने वाले बीकानेर-निवासी श्रीलाल नथमल जोशी, यहीं के भारतीय विद्या-मन्दिर शोध प्रतिष्ठान मे कार्यरत रामनिवास शर्मा, मूलचन्द 'प्राणेश' सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट के डा० मेघराज शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य सगम के सहायक सचिव धनञ्जय वर्मा तथा राजस्थानी की विद्वान् विभूतियों—अगरचन्द नाहटा, डा० ब्रजनारायण पुरोहित, नरोत्तमदास स्वामी तथा डा० मनोहर शर्मा—का मैं हृदय से बहुत आभारी हूँ। जोधपुर मे राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी के निदेशक डा० नारायणसिह भाटी, यहीं कार्यरत सौभाग्यसिह शेखावत, राजस्थानी शब्द-कोश के निर्माता सीताराम लाळस, नन्द भारद्वाज तथा पारस अरोडा जैसे पण्डित-शिरोमणियों से मेरी कई गुत्थियाँ अविलम्ब सुलझ गईं—इस हेतु मैं इस विद्वद्-वर्ग के प्रति कृतज्ञ हूँ। रतनगढ मे 'ओळमो' पत्रिका के सम्पादक किशोर कल्पनाकान्त तथा राजस्थानी के उद्भट विद्वान् सीताराम महर्षि का कृपाभाजन बनने का अवसर मिला। मैं इन नि स्पृह और सेवाभावी विद्वानों का किन शब्दों मे आभार प्रकट करूँ जिनकी निष्काम सेवा ही प्रशसा का मूर्त रूप धारण कर लेती है।

अपनी कला के द्वारा पुस्तक के आवरण पृष्ठ को सज्जित करने के लिए श्री महावीरप्रसाद कुमायत क. व्या. (चित्रकला) को धन्यवाद दे दूं। अन्त में नवनवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के धनी तथा भाषा के असाधारण अधिकारी श्रीभवरलाल पारीक, अनुवादक, माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर, के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ— जिन्होंने अत्यन्त ही सहृदयभाव से पत्र-पत्रिकाओं से सम्बन्धित अन्यत्र अनुपलब्ध सामग्री उपलब्ध कराई।

—रामस्वरूप व्यास

विद्वानो के लोचन

वैदिक संस्कृत की उदात्तादि स्वरो के प्राधान्य की धारा को अक्षुण्ण बनाए रखने वाली राजस्थानी भाषा सवैधानिक मान्यता के लिए सघर्षशील है। इस सघर्ष को आगे बढाने का, गति देने का, विजय-श्री प्राप्त करने का और इसके लिए जनतंत्र व राजतत्र को अनुकूलता प्राप्त करने का दायित्व यो तो प्रत्येक राजस्थानी का है, परन्तु विशेष दायित्व उन निष्ठावान्, कर्मठ, चिन्तनशील शोधार्थियो का है, जो समाज और देश के सामने राजस्थानी भाषा की रचनाओ को प्रकाश मे ला सके—इसकी ललित विधाओ को उजागर कर सके तथा भाषागत सौष्ठव को जनमानस तक पहुँचा सके। स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य का इतिहास इसी दृष्टि से, इसी भावना से लिखा गया नवीनतम मौलिक ग्रथ है। स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी परिवेश का, राजस्थानी गद्य-साहित्य का सर्वतोमुखी दृष्टि से किया गया शोध-निष्ठ विश्लेषण इस ग्रन्थ की मुख्य विशेषता है।

भवरलाल पारीक
ई १७९, शास्त्रीनगर, अजमेर

जोधपुर विश्वविद्यालय की पीएच.डी. (हिन्दी) उपाधि के लिए श्रीरामस्वरूप व्यास द्वारा प्रस्तुत 'स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य' शीर्षक शोध-प्रवन्ध की पाण्डुलिपि पढकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। इसमे लेखक ने प्रतिपाद्य विषय का युक्ति-युक्त वर्गीकरण करके दुर्लभ ग्रन्थो को प्रकाश मे लाने का प्रयत्न किया है। सम्बन्धित ग्रन्थो का सार-सक्षेप प्रस्तुत करने के बाद लेखक ने उनकी जो समीक्षा प्रस्तुत की है वह युक्तियुक्त तथा समालोचना के स्वीकार्य मानदण्डो पर आधारित है। मुझे विश्वास है कि प्रस्तुत ग्रन्थ का राजस्थानी साहित्य मे समुचित स्वागत होगा तथा राजस्थानी भाषा के विकास मे यह योग देगा।

डा ब्रह्मानन्द शर्मा
भू पू. निदेशक राज प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

राजस्थानी भाषा के स्वातन्त्र्योत्तर गद्य-साहित्य के निर्दिष्ट अध्यायो का प्रस्तुतीकरण शोधार्थी का एक मौलिक एव स्तुत्य प्रयास है। इस दिशा मे लेखक का अथक प्रयास, उसकी अगाध निष्ठा एव उसका अनवरत लेखन-कार्य भावी शोधार्थियो को नूतन प्रकाश दिखाने वाले है। लेखक ने पर्याप्त एव सन्तोषजनक मात्रा मे राजस्थानी के अथाह गद्य-साहित्य का मन्थन किया है।

डा. भोलाशकर व्यास
प्रोफेसर एव विभागाध्यक्ष
हिन्दी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

लेखक ने 'स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य का समीक्षात्मक एवं विकासात्मक इतिहास' नामक शोधग्रंथ में राजस्थानी गद्य-साहित्य का अनुद्घाटित पक्ष उद्घाटित और अविवक्षित पक्ष विवक्षित हुआ है। राजस्थान में स्वतन्त्रता के बाद सृजनधर्मी लेखकों द्वारा राजस्थानी गद्य-साहित्य में दिये गये योगदान का मौलिक और युक्तियुक्त विवेचन शोधग्रंथ की विशेषता है। शोध के लिए अब भी व्यापक क्षेत्र खाली पड़ा है। इस दृष्टि से यह शोध प्रबन्ध भावी शोधार्थियों, राजस्थानी भाषा-भाषियों एवं अन्य जिज्ञासुओं के लिये उपयोगी सिद्ध होगा।

प्रभुलाल पारीक

निदेशक, अकादमिक एवं मूल्यांकन विभाग,

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर

द्वादश अध्यायों में विभक्त यह शोध-प्रबन्ध भावी शोधार्थियों के लिए एक समुचित एवं अभूतपूर्व दिशा-निर्देशक के रूप में प्रकट हुआ है। शोधार्थी का सूक्ष्मातिसूक्ष्म एवं पर्याप्त अभिव्यञ्जना-कौशल इसका विचार-स्वातन्त्र्य भाषा-सौष्ठव, उक्ति-वैचित्र्य तथा अपनी मातृभाषा राजस्थानी के प्रति अटूट प्रेम एवं ज्ञान इस शोध-ग्रन्थ में स्पष्टतः साहित्य-मर्मज्ञ भावी शोध-पिपासुओं के समक्ष अपने विलक्षण रूपों में अवतरित हुए हैं। राजस्थानी भाषा की अनेकानेक पत्र-पत्रिकाओं का विस्तृत विश्लेषण और लगभग सभी गद्य-कृतियों की गहन समीक्षाएँ लेखक की अगाध एवं अटूट श्रम-निष्ठा की द्योतक हैं।

पं. अयोध्यानाथ शर्मा,

भू. पू. विभागाध्यक्ष (हिन्दी विभाग), कानपुर



अनुक्रमणिका

अध्याय १

विषय--प्रवेश

राजस्थानी भाषा सम्पूर्ण राजस्थान क्षेत्र की भाषा है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत भूमि, भाषा, रहन-सहन, विचार-व्यवहार एव इतिहास आदि की दृष्टि से पश्चिमी भारत के उत्तर मे सरस्वती अथवा हाकडा नदी के सूखे थाले से, दक्षिण मे सतपुडा पर्वत के ढालो तथा ताप्ती नदी तक और पूर्व मे वेतवा नदी की ऊपरी धारा से पश्चिम मे उमरकोट सहित सिन्धु नदी की पूर्वी धारा तक के समस्त भाग को लिया जाता है।

राजस्थानी भाषा के अन्तर्गत अर्वाचीन राजस्थान राज्य की बोलियो के साथ ही [धौलपुर और करौली के 'व्रज' क्षेत्र को छोडकर] मध्यप्रदेश के अन्दर मालवी, पहाडी प्रदेशो की भीली, पजाब तथा काश्मीर की गूजरी और बणजारो एव बालदियो आदि घुमक्कड जातियो की समस्त बोलियाँ आ जाती है। वैसे राजस्थान के मारवाडी व्यापारियो के साथ राजस्थानी भाषा का प्रवेश भारत के अनेक भू-भागो मे हो चुका है। इस प्रकार राजस्थानी भाषा-भाषियो की सख्या लगभग तीन करोड़ से ऊपर आकी गई है। राजस्थानी भाषा मे राजस्थान मे बोली जाने वाली समस्त बोलियाँ सम्मिलित है। राजस्थान मे श्रीनाथ चतुर्वेदी के लेख 'राजस्थान मे हिन्दी या राजस्थानी की विभिन्न बोलियाँ' के अनुसार लगभग 41 प्रकार की बोलियाँ प्रचलित हैं—मारवाडी, ढूंढाडी, गोरावाटी, मेरवाडी, सरवाडी, खैराडी, डेओरावाडी, गोडवाडी, थली, शेखावाटी, आगरी, अजमेरी, मेवाडी, सिरोही, बीकानेरी, मगरा की बोली, जयपुरी, केथरा, चौरासी, तोरावाटी, नगरावल, राजावती, किशनगढी, हाडौती, सियारी, मेवाती, राथी, राठी, अहीरवाटी, सौंधवाडी, मालवी, बागरू, जाटी, कालीमाल, डागभाग, डागी, भीलोडी, बागडी, जाडोवाली, गिरासिया और मारवाडी गुजराती। इन बोलियो मे लोकगीतो तथा कहावतो आदि का अलिखित साहित्य तो काफी मात्रा मे मिलता है लेकिन कुछ ऐसी बोलियाँ भी है जिनमे लिखित साहित्य भी मिलता है। ऐसी बोलियो मे मेवाती, ढूंढाडी, हाडौती और मारवाडी विशेषत आती है। राजस्थानी भाषा अपने विस्तार क्षेत्र, जनसख्या, सुविस्तृत तथा उत्कृष्ट साहित्य के कारण प्रमुख भारतीय भाषाओ मे उच्च स्थान प्राप्त करने योग्य है।

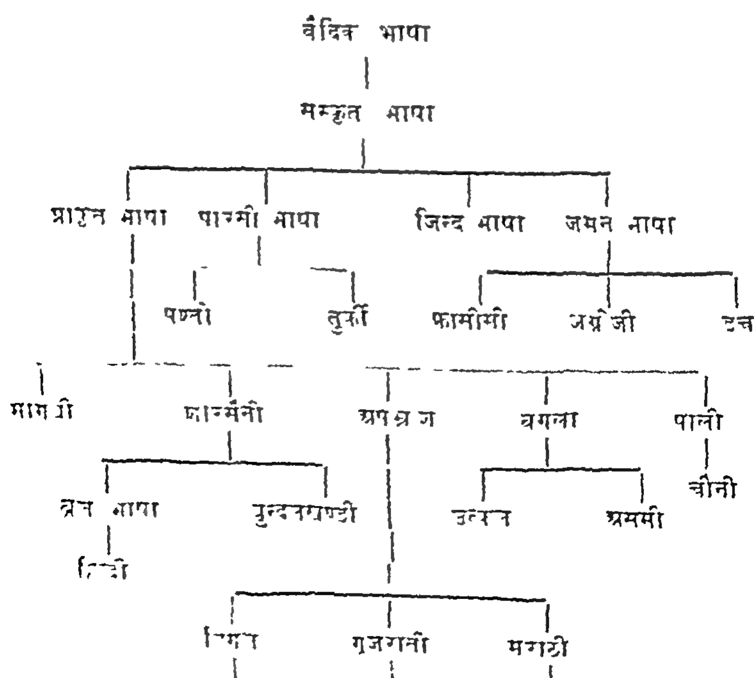
राजस्थानी भाषा का नामकरण

राजस्थानी भाषा का नाम 'राजस्थान'' क्षेत्र के आधार पर विख्यात है। वैसे राजस्थानी भाषा को प्राचीन काल मे मरु भूमि भाषा, मरु भाषा, मरुदेशीय

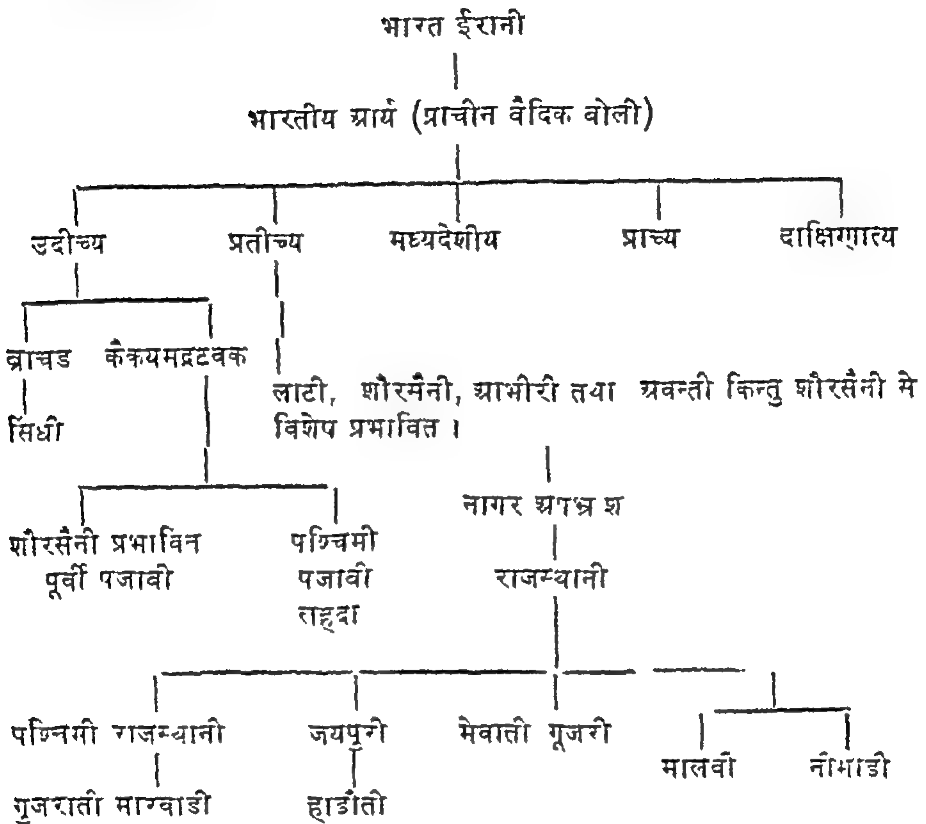
भाषा और मरुवाणी आदि नामों से भी अलंकृत किया गया है। राजस्थानी का साहित्यिक रूप मुख्यतः पश्चिमी राजस्थानी अर्थात् मारवाड़ी रहा है और मारवाड़ी साहित्य ही प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। मारवाड़ राजस्थान का एक विशेष और बड़ा ही महत्त्वपूर्ण भू-भाग है जिसमें जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, नागौर, जालौर, बाड़मेर, सिरोही, पाली आदि क्षेत्र या जिले सम्मिलित किये गए हैं। राजस्थानी भाषा की समस्त राजस्थान में प्रचलित एक विशेष शैली "डिंगल" भी मुख्यतः मारवाड़ी पर ही आधारित है। अतः आधुनिक काल में राजस्थानी भाषा के साहित्यिक रूप पर मारवाड़ी बोली का अधिकाधिक प्रभाव है।

राजस्थानी भाषा की उत्पत्ति

उत्तर भारत की एक प्रमुख भाषा होने से राजस्थानी का सम्बन्ध उत्तर भारतीय आर्य जाति से होना स्वाभाविक है। पुरुषोत्तम मेनारिया ने राजस्थानी को आर्यभाषा परिवार की एक भाषा मानी है। सूर्यकरण पारीक के अनुसार भाषा-विज्ञान की दृष्टि से राजस्थानी संस्कृत से उत्पन्न आर्यभाषाओं के वर्ग में आती है। श्री किशोरसिंह बार्हस्पत्य ने एक तालिका के साथ राजस्थानी को वैदिक भाषा परिवार की एक भाषा मानी है जिसकी उत्पत्ति अपभ्रंश से स्पष्ट है—



सुनीतिकुमार चटर्जी ने भारत-यूरोपीय भाषाओं से राजस्थानी का सम्बन्ध बताते हुए यह तालिका दी है —



इन तालिकाओं से स्पष्ट है कि राजस्थानी आर्य भाषा कुलान्तर्गत अपभ्रंश से उत्पन्न एक भाषा है। किस अपभ्रंश से इसकी उत्पत्ति हुई है—इसमें विद्वानों का थोड़ा विभेद देखने को मिलता है।

परन्तु राजस्थान में प्रचलित नागर अपभ्रंश को ही राजस्थानी भाषा की जननी माना गया है। राजस्थानी भाषा के प्राचीनतम रूप विक्रमीय ८ वीं सदी से प्राप्त होते हैं। शालिभद्र सूरि रचित 'भरतेश्वर बाहुबली रास" का रचनाकाल वि. सं. १२४१ है। १३ वीं सदी की अन्य राजस्थानी भाषा की रचनाओं में "जम्बू स्वामी चरित" 'स्थूलिभद्र रास" रेवन्तगिरि रास" "आबू रास' और "चन्दनबाला रास" आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। इन रचनाओं से स्पष्ट है कि १३ वीं सदी में राजस्थानी भाषा ने विकसित होकर साहित्यिक स्वरूप प्राप्त कर लिया था। राजस्थानी भाषा और साहित्य का प्रारम्भ-काल डा. मोतीलाल मेनारिया १०४५ वि. सं. से, नरोत्तमदास स्वामी १०५० वि. सं. से तथा उदयसिंह भटनागर ९०० वि. सं. से मानते हैं। इस विषय में उल्लेखनीय है कि इस भाषा का प्राचीनतम

लिखित प्रमाण वि स ८३५ में प्राप्त हो चुका है। राजस्थानी के पूपी कवि वि स ७०० (६१३ ई), ढेढणिया कृत 'चतुर्योग भावना" वि स ९०० (८४३ ई), गोरखनाथ कृत "गोरखवाणी" वि स ९०० (८४३ ई), खुमाण कृत 'खुमाण रासो' वि स ९०० (८४३ ई) और देवसेन कृत "सावयधम्म दोहा" तथा "दर्शन-सार" वि स ९०० (९३३ ई) की उपलब्धि होती हैं। अतएव राजस्थानी भाषा का उत्पत्ति-काल ८वी शताब्दी के प्रथम चरण को ही मानना उपयुक्त होगा।

राजस्थानी भाषा की विभिन्न बोलियाँ और उनके मुख्य क्षेत्र

इतने विशाल क्षेत्र राजस्थान प्रान्त की राजस्थानी भाषा की विभिन्न बोलियो को निम्नाङ्कित रूपो मे प्रकट किया जा रहा है —

(१) पश्चिमी राजस्थानी भाषा —मारवाडी, मेवाडी, जिसमें थली, बीकानेरी, शेखावाटी, गोडवाडी आदि का समावेश है।

(२) उत्तर-पूर्वी राजस्थानी भाषा —इसमे अहीर वाटी और मेवाती सम्मिलित हैं।

(३) मध्य-पूर्वी राजस्थानी भाषा —ढूढाडी, हाडौती जिसमे तोरावाटी, जयपुरी, काठेडी, राजावाटी, अजमेरी, नागरचाल आदि का समावेश हैं।

(४) दक्षिणी और दक्षिण-पूर्वी राजस्थानी भाषा —इस क्षेत्र मे नीमाडी और मालवी हैं।

(५) पहाडी राजस्थानी भाषा —इसमे भीली बोली आती है।

(६) घुमक्कड जातियो —बालदियो एव बनजारो आदि की राजस्थानी भाषा — इन घुमक्कड जातियो द्वारा प्रयुक्त राजस्थानी बोलियाँ कुछ अनोखापन और अस्पष्टता लो हुई हैं।

राजस्थानी भाषा का विकास –

डा पुरुषोत्तमलाल मेनारिया ने राजस्थानी भाषा के विकास को स्थूल रूप से इस प्रकार विभक्त किया है —

(१) प्रस्तावना-काल—वि स ८०७ से वि स १०५७ तक
(७५० ई से १००० ई तक)

(२) प्राचीन राजस्थानी भाषा काल—वि स १०५८ से वि स १५५७ तक
(१००१ ई से १५०० ई तक)

(३) मध्यकालीन राजस्थानी भाषा-काल—वि स १५५८ से वि स १९०७ तक
(१५०१ ई से १८५० ई तक)

(४) आधुनिक राजस्थानी भाषा-काल—वि स १९०८ से प्रारम्भ
(१८५१ ई से प्रारम्भ)

कुछ विद्वानो ने राजस्थानी भाषा का विकास-क्रम इस प्रकार से भी निर्धारित किया है —

(१) [illegible] राजस्थानी ([illegible] शती से [illegible] शती तक)

(२) विकासशील राजस्थानी (विक्रम की तेरहवी शती से सोलहवी शती तक)
(३) पूर्ण विकसित राजस्थानी (विक्रम की १६वी शती से १९वी शती तक
(४) आधुनिक राजस्थानी (विक्रम की १९वी शती से निरन्तर)

राजस्थानी साहित्य--एक सिंहावलोकन :--

राजस्थानी साहित्य जीवन मे सदैव आस्था रखते हुऐ श्रेय के लिए सतत सघर्ष करने वाले वीर-वीराङ्गनाओ और जीवन को रस-सिक्त बनाने वाले पीयूष-वर्षी सन्तो का साहित्य है। राजस्थानी साहित्य वीरता, भक्ति, प्रेम, स्वाधीनता, की सुरक्षा के साथ ही देश के नव-निर्माण और विभिन्न क्षेत्रों में विकास के लिए राजस्थानी भाषा-साहित्य का महान् सहयोग रहा है। राजस्थानी साहित्य का अतीत गौरवमय रहा है, वर्तमान आशाप्रद और भविष्य उज्ज्वल है। आधुनिक राजस्थानी साहित्य मे मनोरजन तत्त्व के साथ साथ आदर्श और यथार्थ का समन्वय सराहनीय है।

(क) राजस्थानी साहित्य से तात्पर्य :--

राजस्थानी साहित्य का अर्थ हम अनेक रूपो मे लेते है —

(१) राजस्थानी भाषा मे रचित साहित्य।
(२) राजस्थान प्रान्त मे रचित साहित्य चाहे वह किसी भी भाषा का हो।
(३) राजस्थानवासियो द्वारा रचित साहित्य चाहे वह किसी भी भाषा का हो।
(४) राजस्थान से सम्बन्धित साहित्य चाहे वह किसी भी भाषा मे हो।

परन्तु अर्वाचीन युग मे राजस्थानी साहित्य मुख्यत वही माना गया है जो राजस्थानी भाषा मे रचित है।

(ख) राजस्थानी साहित्य का काल-विभाजन :--

निम्नांकित विद्वानो ने राजस्थानी साहित्य का काल-विभाजन इस प्रकार से किया है .—

(१) डा एल पी टैसीटोरी—
 (अ) प्राचीन डिंगल काल (१२५० ई से १६५० ई तक)
 (ब) अर्वाचीन डिंगल काल (१६५१ ई से निरन्तर)

(२) डा मोतीलाल मेनारिया—
 (अ) प्रारम्भ काल (स १०४५ से १४६० तक)
 (ब) पूर्व मध्यकाल (स १४६१ से १७०० तक)
 (स) उत्तर मध्यकाल (स १७०१ से १९०० तक)
 (द) आधुनिक काल (स १९०१ से निरन्तर)

(३) नरोत्तमदास स्वामी—
 (अ) प्राचीनकाल (स ११५० से १५५० तक)

(ब) मध्यकाल (सं १५५१ से १८७५ तक)

(स) अर्वाचीन काल (सं १८७६ से निरन्तर)

(४) डा हीरालाल माहेश्वरी—

(अ) प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी का आदिकाल—सं ११०० से १५०० तक

(ब) प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी का नवीन काल—सं १५०१ से प्रारम्भ होकर निरन्तर

(५) सीताराम लालस—

(अ) आदिकाल—वि सं ८०० से १४६० तक

(ब) मध्यकाल—वि सं १४६१ से १९०० तक

(स) आधुनिक काल—वि सं १९०१ से निरन्तर

(६) गजराज ओझा—

(अ) प्रारम्भ काल—वि सं १००० से १४०० तक

(ब) मध्यकाल—वि सं १४०१ से १८०० तक

(स) उत्तर काल—वि सं १८०१ से निरन्तर

(७) पुरुषोत्तमदास स्वामी—

(अ) प्राचीन राजस्थानी काल—वि सं १००० से १६०० तक

(ब) माध्यमिक राजस्थानी काल—वि सं १६०१ से १९०० तक

(स) आधुनिक राजस्थानी काल—वि सं १९०१ से निरन्तर

(८) डा जगदीशप्रसाद—

(अ) प्राचीन काल—१३०० ई से १६५० ई तक

(ब) मध्यकाल—१६५१ ई से १८५० ई तक

(स) आधुनिक काल—१८५१ ई से निरन्तर

(९) उदयसिंह भटनागर—

(अ) पूर्वपात युग—वि सं ७०० से १००० तक

(ब) नव निर्माण युग—वि सं १००१ से १२०० तक

(स) वीर गाथा युग—वि सं १२०१ से १५०० तक

(द) भक्ति युग—वि सं १५०१ से १७०० तक

(य) रीति युग—वि सं १७०१ से १९०० तक

(र) आधुनिक युग—वि सं १९०१ से निरन्तर

[illegible] राजस्थानी साहित्य के इतिहास को निम्नलिखित [illegible] में विभक्त करना अधिक उचित होगा—

(अ) प्रारम्भिक युग—वि सं ८३५ से १२८० तक

(ब) वीर-गाथा युग—वि सं १२८१ से १५८८ तक

(स) भक्ति युग—वि स १५८५ से १९१३ तक
(द) आधुनिक युग—वि स १९१४ से निरन्तर

डा मोतीलाल मेनारिया नरोत्तमदास स्वामी, पुरुषोत्तमलाल मेनारिया, शान्तिलाल भारद्वाज इत्यादि विद्वानो ने प्रथम स्वतंत्रता संग्राम (१८५७ ई) के आसपास से राजस्थानी साहित्य का आधुनिक काल माना है। शिवचन्द भरतिया का प्रथम नाटक "केसर विलास" राजस्थानी साहित्य का आधुनिक काल १९०० ई से प्रारम्भ होना बता रहा है। किन्तु इस ग्रन्थ से पूर्व भी कई गद्य-ग्रन्थ लिखे गए। "केसर-विलास" नाटक के प्रकाशन के पश्चात् एक दशक से भी कम की अवधि मे ही भरतियाजी की 'कनकसुन्दर" (उपन्यास), "बुढापा की सगाई" (नाटक), "फाटका जजाल" (नाटक), कृतियाँ प्रकाश मे आई। इसी समयावधि मे भगवती प्रसाद दारूका का "वृद्ध-विवाह" नामक नाटक, गगाराम बी ए का "धर्मपाल" नाटक तथा लछमनदास सालगराम का "सगीत मोहन" नाटक आदि रचनाये भी प्रकट हुई। इसी दशक मे सोलापुर से राजस्थानी भाषा का प्रथम पत्र "मारवाडी भास्कर" और अहमदनगर से "मारवाडी" नामक पत्रो के प्रकाशन प्रारम्भ हुए। साथ ही रामकर्ण आसोपा द्वारा राजस्थानी भाषा का प्रथम व्याकरण भी प्रकाशित हुआ। आसोपाजी ने राजस्थानी को शिक्षा के माध्यम के रूप मे स्वीकृति दिलवा कर प्रचलित करवाने के उद्देश्य से ही प्रेरित होकर राजस्थानी पाठ्य-पुस्तको की रचना की।

इन सभी प्रमाणो से स्पष्ट है कि राजस्थानी साहित्य के आधुनिक युग का सूत्रपात वि सं १९०० से न होकर १९०० ई मे ही हुआ। तब से लेकर आज तक उसमे निरन्तर साहित्य-सर्जन का कार्य कभी त्वरित गति से तो कभी शिथिलता के साथ होता जा रहा है। ७४-७५ वर्षो की अवधि मे देश के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एव धार्मिक-जीवन मे अनेक उतार-चढाव आए है और उसी के अनुरूप साहित्य मे भी परिवर्तन का दौर चलता रहा है। इन अठत्तर वर्षीय लम्बी अवधि मे राजस्थानी-साहित्य इन तीन युगो से गुजरा है—

(१) १९०० ई. से १९३० ई. तक :—इस अवधि मे प्रवासी राजस्थानी साहित्यकारो का प्रभुत्व रहा और उनके द्वारा सर्जित साहित्य ब्रिटिश भारत की राजनीतिक तथा सामाजिक उथल-पुथल और उन प्रदेशो की साहित्यिक गतिविधियो से अधिक प्रभावित रहा।

(२) १९३१ ई. १९५० ई. तक :—इस अवधि मे प्रवासी राजस्थानी साहित्यकारो का ध्यान क्रमश अपनी मातृभाषा और उसके साहित्य मे हटता गया परन्तु राजस्थान मे कतिपय प्रेरक व्यक्तियो के प्रयासो और राजनीतिक हलचलो के कारण साहित्य-सर्जन की गति मे तीव्रता आई।

(३) १९५१ ई. से निरन्तर :— इस समयावधि तक भारत अंग्रेजो की दासता के बन्धन से मुक्त हो चुका था। अत सुविधाओ और साधनो के विस्तार ने साहित्य-सृष्टि को अपेक्षया काफी तीव्रता प्रदान की। साथ ही पद्य-साहित्य के समान गद्य-साहित्य की नाना विधाओ के विकास हेतु एक ठोस धरातल भी तैयार हुआ। इस प्रकार स्वतन्त्रता के पश्चात् राजस्थानी साहित्य पद्य और गद्य दोनो ही क्षेत्रो मे विकास की सीढियो पर गतिशील है।

राजस्थानी गद्य-साहित्य :—

राजस्थानी गद्य १३ वी शताब्दी से आधुनिक काल मे अविच्छिन्न रूप मे उपलब्ध होता है। राजस्थानी भाषा मे प्राचीन गद्य के विविध रूप प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं। आधुनिक गद्य मे इन विविध रूपो के नामो मे परिवर्तन आया है तथा कुछ विस्तार को भी प्राप्त हुआ है। राजस्थानी गद्य-साहित्य को दो भागों मे विभक्त करते है —

(अ) प्राचीन राजस्थानी गद्य—१३ वी सदी से २० वी सदी के द्वितीय चरण तक

(ब) नवीन या आधुनिक राजस्थानी गद्य—२०वी सदी के द्वितीय चरण के बाद से निरन्तर।

प्राचीन राजस्थानी गद्य — ऐसे गद्य का एकाधिकार १३ वी सदी से २०वी सदी के द्वितीय चरण के मध्य तक रहा है। इसके प्रमुख रूप ये है —

(क) प्राचीन राजस्थानी धार्मिक-गद्य :—

यह गद्य जैनियो तथा ब्राह्मणो द्वारा रचित है। इस क्षेत्र मे अनेक टीकायें, व्याकरण, चरित्र-ग्रन्थ, पट्टावलियाँ, गुर्वावलियाँ, विज्ञप्ति-पत्र नियम-पत्र, समाचारी, योग-ग्रन्थ इत्यादि अधिक मात्रा मे उपलब्ध होते है। जैनेतर धार्मिक गद्य मे साहित्यकारो ने भी मेवाडी, मारवाडी, ढूंढाडी, हाडौती, और मालवी आदि मे अनुवाद-ग्रन्थ रचे। दोनो ही गद्यो के उदाहरण के रूप मे उद्धरण इस प्रकार से है —

जैन धार्मिक गद्य का उद्धरण —

'जेहे परब्रह्म केवल ज्ञान प्रामिउ। दुर्लभ मुक्ति रूप लाभ हुई जेहनई, जेहे सरभ पदार्थनु आरोप मुक्यउ। त्रिभुवन रूपधर धरिया स्तम्भ समान। ते सिद्धि शरणि हुजै हे आरम्भ छाडिया। इस सिद्धनउ शरणि करो। न्याय सहित ज्ञान नु कारण।"

(मजेन गणि रचित "चउ सरण पयन्ना टब्बा' से)

जैनेतर धार्मिक गद्य का उद्धरण —

'श्रीगुरु परमात्मा तिनको दर्शन है। है कैसे परमानन्द आनन्द स्वरूप है, सरीर जिनि हि रो। जिन्हो के नित्य गावै ते सरीर

चेतन्नि अरु आनन्दमय होतु है। मैं जु हौ गोरखि तो मछन्दरनाथ को दडवत करत हूं। हैं कैसे वे मछन्दरनाथ।"

(ख) प्राचीन राजस्थानी ऐतिहासिक गद्य :—

प्राचीन राजस्थानी ऐतिहासिक गद्य ख्यातो, वातो, विगतो, पीढियों, वशावलियो, दवावैतो, वैतो, वचनिकाओ इत्यादि रूपो मे प्राप्त होता है। "ख्यात" शब्द इतिहास का सूचक है। मुसलमान इतिहासकारो के अनुकरण पर राजस्थानी इतिहासकारो ने भी राजस्थानी गद्य मे विभिन्न राजवशो से सम्बन्धित अनेक ख्यातें लिखी। वात अथवा वार्ताएँ ख्यात से छोटी होती हैं जो कहानी की प्रतीक मानी जा सकती हैं। विगत में किसी विषय का विस्तृत वर्णन होता है। पीढियो और वशावलियो में प्रमुख ऐतिहासिक व्यक्ति की वश-परम्परा का अथवा सम्पूर्ण वश का गद्यात्मक वर्णन होता है। ऐसी रचनाओ में सामान्य व्यक्तियो का नामोल्लेख मात्र होता है। फारसी और तुर्की आदि भाषाओ मे रचित दुवैती के प्रभाव से लिखी गई दवावैतें गद्य और पद्य-शैली में मिलती हैं। गद्यबन्ध दवावैतो में मात्राओ आदि का नियम नही होता है परन्तु पद्यबन्ध दवावैतो में नियम होता है। दवावैत मे तुकान्त वाक्य लिखे जाते हैं। वचनिका भी दवावैत की तरह गद्य और पद्य के दो भेदो में विभक्त हैं। वचनिका को हम चम्पू काव्य भी कह सकते हैं "गद्यपद्यमय काव्य चम्पूरित्यभिधीयते"

कुछ प्रसिद्ध ख्यातें —

सीसोदिया री ख्यात, राठोडा री ख्यात, जाडेचा री ख्यात, कछावा री ख्यात, मुहणोत नैणसी री ख्यात, बाकीदास री ख्यात, महाराजा मानसिंह री ख्यात, जोधपुर री ख्यात, उमरावा री ख्यात, बीकानेर री ख्यात, देवलिये री धणिया री ख्यात, चवाण सोनगरा री ख्यात।

"ख्यात" के गद्य का उद्धरण —

"माछला रा मगरा सूं ऊतर न सहर छै। दीवाण रा मोहल पीछोला री पाल ऊपर छै। मोहलां थी आथवण नूं तलाव लगतो सहर छै। कोस दोरै फेरै छै।"
("मुहता नैणसीरी ख्यात" से उद्धृत)

कुछ प्रसिद्ध वाते —

राणा उदैसिंह री वात, हाडा सुरजमल री वात, राव बीकेजी री वात, जैसलमेर री वात, पाबूजी री वात, राणा कुम्भा चितभरमिया री वात, राव रिणमल री वात, सोढा री वात।

"वात" के गद्य का उद्धरण —

"पिंगल राजा सावतसी देवडा नू आदमी मेल कहायो-अर्थ थै आणो वरो। तद सावतसी घणो ही विचारियो पण वात वाथ कोई वैसे नही। कुंवरी नै ऊभणी दे मेलीजै।"

("ढोला मारु री वात" से उद्धृत)

कुछ प्रसिद्ध विगतें —

गैहलोता री चौवीस साखा री विगत, मेवाड रा भाखरा री विगत, जोधपुर बीकानेर टीकायता री विगत, जोधपुर रा निवाणा री विगत गढ कोटा री विगत, कछवाहाँ सेखावता री विगत, विदावतां री विगत।

"विगत" के गद्य का उदाहरण —

"मोहिल अजीत ने राणो वडो इयारा राजथान लाडनु नै छापर हुतो नै द्रुणपुर मोहिल कान्हो वस्तो। पछै महाराई श्री जोधजी सगलाणु मारिनै मोहिले रे री धरती ले नै राजिश्री वीदेजी नु रापीयो।"

कुछ प्रसिद्ध पीढियाँ —

ईडर रा धणी राठोडा री पीढिया, राठोडा रै खापा री पीढिया, हमीरोत भाटिया री पीढिया, आहाडा री पीढिया, भायला री पीढिया, चन्द्रावता री पीढिया।

"पीढी" के गद्य का उदाहरण —

"निरवाणा रो साप। निरवाण पैहली देवडा था। देवडाया निरवाण कहाणां, निरवाण सीरोही था। आय कवरसी दाहलीका कन्हा पाडेलो लीयो। ऊदेपुर लीयो। पछे वसी गांव सोलहर पाटेला नजीक छै तठे रापी।"

("निरवाणा री पीढिया" से उद्धृत)

कुछ प्रसिद्ध वंशावलिया —

राठोडा री वंशावली, राजपूता री वंशावली, जैसलमेर रा भाटी महारावल री वंशावली, झाला री वंशावली, बीकानेर रै राठोड राजावा री वंशावली, उदेपुर रा राजावा री वंशावली।

"वंशावली" के गद्य का उदाहरण —

"पछै सुलतान री फौजा नै दिल्ली री फौजा ले नै दाऊदखां ऊपर नागौर आयो। राऊ चूंडो नागौर मारियां पछै केल्हण अरडो आयो।"

("राठोडा री वंशावली" से उद्धृत)

कुछ प्रसिद्ध दवावैतें तथा [illegible] —

[illegible] पीर री दवावैत, जिनसुख सूरिजी री दवावैत, जिन लाभ सूरि री दवावैत [illegible] महाराणा श्री जवानसिंह जी री [illegible] री वही।

दवावैत के गद्य का उदाहरण —

"[illegible] सुगन्ध ही [illegible] । [illegible] नोटवा का [illegible] । वडी [illegible] नाग [illegible] जूटा थी

खीची हाले। जिका रे पाछै मस्त हाथी टला देण नू चाले।
वाणा राऊँट ठाटडियाँ रा ठाट। जिका मे वडी छोटी केई घाट।"

कुछ प्रसिद्ध वचनिकायें —

अचलदास खीची री वचनिका (शिवदास चारण कृत) वचनिका राठौड रतनसिंहजी री महेस दासोत री वचनिका।

(जग्गा खिडिया रचित)

वचनिका के गद्य का उद्धरण —

"पग पग पउलि पउलि हस्ती की गजघटा। तो उपरि सात
सात सै जोध धनकधर सावठा। सात सात ओलि पाइक की
बैठी। सात सात आली पाइक ऊठी।"

("अचलदास खीची री वचनिका" से उद्धृत)

(ग) प्राचीन राजस्थानी मनोरंजनात्मक गद्य.-

ऐसे गद्य मे मनोरजनात्मक कथा-वार्त्ताओ तथा वर्णनात्मक राजस्थानी गद्य का समावेश है। मनोरजनात्मक कथाओ मे प्रेम, वीरता, भक्ति और हास्य की अनूठी योजना चलती है। इसमे कल्पना का आश्रय भी अनेक स्थानो पर लिया गया है। इन कथाओ मे गद्य के साथ कही कही पद्य की छटा भी देखने को मिलती है। ऐसी वार्ताओ मे व्रज, गुजराती और उर्दू का प्रभाव भी देखने को मिलता है।

ऐसी कुछ प्रसिद्ध रचनायें —

पदैक विंशति, पृथ्वीराज चरित्र, मुत्कलानुप्रास, राजा नृ राउत रो बात वणाव, खीची गगैव नीवावत रो दोपहरो सभा शृ गार।

ऐसे गद्य का उदाहरण —

"पछे बामण सीदो लेने तलाव ऊपर रोटी करवा बैठो।
जठे तलाव री तीर एक मीडक आयो। आवे न बामण थी कही।
देवता तो है तो मैं अठे कदी नही देख्यो। तू कठै जाअ है।"

("प्राचीन वार्ता" से)

(प्राचीन राजस्थानी अभिलेखीय गद्य:-

इस गद्य के अन्तर्गत शिलाभिलेखो, ताम्रपत्रो, सून्हो और पट्टा-परवानो के गद्य मिलते है।

ताम्रपत्र के गद्य का उदाहरण —

"श्री राव चूंडाजी रो दत वड़ली गांव
प्रोयत सादा नैं दीधां संवत् १४००
वरस आठतरो काती सुद पुनम रे
दिन वार सूरज पुस्करजी माथै
पुण्यारथ कीदों महाराज चूंडाजी।"

(वडली गाव मे प्राप्त "राव चूडा का ताम्रपत्र" से)

परवाने के गद्य का उदाहरण —

"लोढ़ावना बारहठजी श्री लखीजी समसत चारण वरण वीस जाग। सीरदारा सू श्री जेमाताजी की वाचीज्यो अठे तषत आगरा श्री पातसाजी श्री १०८ श्री अकबर साहजी रा हजुरात दरीयाना माही भाट चारणा रा कुल री नदीक कीधी जण वषत समसत राजेसुर हाजर था वाका सेवागीर वी हाजर था ।"

(ङ) **प्राचीन राजस्थानी व्याकरण, वैद्यक, ज्योतिष, टीका आदि विषयक गद्य:—**

राजस्थानी भाषा मे व्याकरण, वैद्यक, ज्योतिष, टीका, स्तवन आदि विषयक गद्य भी लेखको द्वारा प्रचुर परिमाण मे लिखा गया है। अनेक राजस्थानी महाकाव्यों मे भी गद्य के दर्शन होते हैं।

इस प्रकार के गद्य के उदाहरण —

(i) "आसोज आवता ही नभ वहता आकास थैं वादल दूरि हुया। पृथी तैं पंक महता वादो दूरि हुयो। जल की गुडलता दूरि हुई। निर्मल हुओ।..."

(लाखा चारण कृत "वेलिक्रिसन रुकमणी री टीका" से)

(ii) "राजा कान्हडदे तणइ कटि कि पाछिलइ पुहरी कडाहि चडइ। वाज पडइ। सिंह थी दीडा प्रवाहि घोडा पडपता न सहइ। थानातरि वहिला सु पाचण चाल्या। कठ लीया किय्या। भडार भन्यिा। आलोचि आत्मानइ आव्या। सत्र सुहाडि हुई।"

("कान्हडदे प्रबन्ध" से उद्धृत)

नवीन या आधुनिक राजस्थानी गद्य —

राजस्थानी साहित्य मे नवीन युग के जन्मदाता महाकवि सूर्यमल्ल मिश्रण है। इन्होंने अपने "वंश-भास्कर" मे पद्य के साथ ही गद्य भी अनेक प्रसगो मे लिखा है। इन्होंने साहित्य मे आधुनिक काल मे मौलिक साहित्य के सर्जन के समान ही व्याकरण, इतिहास, ज्योतिष, वैद्यक आदि उपयोगी साहित्य मे भी गद्य का बराबर उपयोग होता रहा। इसके अतिरिक्त शासन-सचालन, धर्म-प्रचार एव सामान्य व्यक्ति के दैनिक जीवन मे भी गद्य समान रूप से व्यवहृत होता रहा। साहित्येतर गद्य—[illegible], शिलालेख, वशावली, पट्टावली, गुर्वावली इत्यादि नाना रूपों मे प्राप्त [illegible] नाना विधाओं वाले साहित्यिक गद्य की परम्परा भी निर्बाध रूप से रही। इस प्रकार सुदृढ गद्य-परम्परा वाली राजस्थानी भाषा का आधुनिक गद्य-साहित्य ([illegible]) यदि अपनी पूर्व-परम्परा से भिन्न तथा सर्वथा नवे [illegible] प्रतीत होगा किन्तु यह [illegible] आधुनिक राजस्थानी साहित्य मे ही नहीं अपितु समस्त भारतीय

साहित्य के गद्य-क्षेत्र मे उपन्यास, कहानी, नाटक, एकाङ्की, निबन्ध, रेखाचित्र, ससमरण आदि विधाओ का आज जो रूप स्वीकृत है, वह सब पाश्चात्य साहित्य से गृहीत है। अत राजस्थानी गद्य-क्षेत्र की इन विधाओ का अपनी पूर्व परम्पराओ से सर्वथा विलग होकर (ख्यात, वात, वचनिका और दवावैत आदि के बन्धन से परे हट कर) नवीन रूप मे प्रकट होना कोई अनहोनी वात नही है। स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी भाषा का गद्य अपनी गद्य-परम्परा की विशेषताओ के साथ साथ कुछ अन्य विशिष्ट लक्षणो से सुशोभित भी हैं। प्राचीन राजस्थानी गद्य-साहित्य की निम्नलिखित विशेषताएँ रही हैं —

(i) प्राचीन राजस्थानी गद्य मे इतिहास-तत्त्व की प्रधानता रही है।

(ii) राजस्थान के सास्कृतिक जीवन की झाकी इन गद्य-रचनाओ मे देखने को मिलती है।

(iii) तात्कालिक सामाजिक जीवन, लोक-विश्वासो, रीति-रिवाजो और परम्पराओ की सशक्त अभिव्यक्ति इन गद्य-रचनाओ में पर्याप्त मात्रा मे है।

देश की स्वतन्त्रता के कुछ पूर्व समय से ही आधुनिक राजस्थानी गद्य ने परिवर्तन का चोला पहन लिया था और आज वह प्राचीन गद्य से बहुत कुछ प्रगति कर चुका है। इस गद्य-साहित्य में गद्य की प्रत्येक विधा का मिलना सहज हो गया है। उपन्यासो और कहानियो की भरमार, पत्र-पत्रिकाओ का समृद्ध रूप, नाटको और एकाङ्कियो की क्षिप्र दौड, रेखाचित्रो तथा सस्मरणो की तीव्र गति, जीवनी-साहित्य का अकुरण, अनुवाद की अटूट परम्परा, निबन्धो तथा गद्य-काव्यो का त्वरित वेग, आलोचना-साहित्य का वैविध्य स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य में देखने को मिलते हैं जिसका प्राचीन राजस्थानी गद्य-साहित्य में एक अभाव-सा था। आज राजस्थानी साहित्य केवल गद्य के क्षेत्र में ही नही अपितु पद्य के क्षेत्र मे भी तीव्र गति से समृद्ध हो रहा है। राजस्थानी भाषा के शब्द-कोश और व्याकरण भी आज अपने प्रगतिशील रूप मे देखने को मिलते है। अपनी इस समृद्ध-शाली गद्य एव पद्य-परम्परा के कारण ही आज राजस्थानी भाषा में अन्य भाषाओ की समता करने की क्षमता है, साहस है, उसमें पर्याप्त सामग्री है।

शोध का विषय "स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य" है अत इस प्रबन्ध के अन्यान्य आगे के अध्यायो मे गद्य की अनेकानेक विधाओ का विशद तथा विस्तृत अवलोकन किया जायेगा।



राजस्थानी उपन्यास : एक सामान्य परिचय.—

राजस्थानी भाषा में उपन्यास-लेखन का प्रारम्भ इतर भारतीय भाषा भाँति पाश्चात्य-साहित्य से सम्पर्क के पश्चात् ही सम्भव हो सका है। वैसे राजस्थानी भाषा का प्राचीन कथा-साहित्य अत्यन्त समृद्ध रहा है। यह कथा-साहित्य लिखित और मौखिक दोनों ही रूपों में अपनी भव्यता के साथ प्रकट हुआ है। जहाँ एक ओर राजस्थानी की बातें (कथायें) सैंकड़ों पृष्ठों की लम्बाई में समाविष्ट हुई हैं वहाँ दूसरी ओर कुछ ही पृष्ठों में उनकी समाप्ति के दर्शन होते हैं। इन बातों की दीर्घता को देखते हुए डा. मनोहर शर्मा ने "कुंवरसी सांखलो" तथा "राहिव-साहिव" इन दोनों को उपन्यास की संज्ञा से अभिहित किया है। परन्तु उपन्यास के आधुनिक और प्राचीन स्वीकृत अर्थों में किसी भी दृष्टि से ये दोनों ग्रन्थ उपन्यास के गौरव को प्राप्त नहीं कर सकते हैं। अतः इन दोनों ग्रन्थों के विषय में डा. मनोहर शर्मा का दृष्टिकोण मेरी दृष्टि में समीचीन नहीं कहा जा सकता।

राजस्थानी में उपन्यास का उद्भव श्री नरोत्तमदास स्वामी ने शिवचन्द्र भरतिया के वि. सं. १९६० में प्रकाशित "कनक-सुन्दर" से माना है। "कनक-सुन्दर" का प्रथम भाग तो प्रकाश में आया है किन्तु द्वितीय भाग राजस्थानी भाषा के साहित्य-रसिकों की आँखों से ओझल रहा है। भरतियाजी ने "कनक-सुन्दर" को "नवल कथा" कहा है। गुजराती तथा दक्षिण भारतीय प्रान्त आन्ध्रप्रदेश की भाषा तेलुगु में 'नवल' का अर्थ उपन्यास है। सम्भवतः भरतियाजी को भी इन्हीं भाषाओं से प्रभावित होकर उपन्यास के स्थानपर 'नवल कथा' शब्द अधिक इष्ट रहा होगा। परन्तु भरतियाजी का यह शब्द आगे नहीं चल सका। फलस्वरूप उनके परवर्ती उपन्यासकारों ने उपन्यास शब्द को ही स्वीकृत किया। "कनक-सुन्दर" के पश्चात् काल-क्रम की दृष्टि से श्रीनारायण अग्रवाल का वि. सं. १९८२ में प्रकाशित "चम्पा" उपन्यास का स्थान आता है। इसके प्रकाशन के पश्चात् लगभग ३० वर्षों तक राजस्थानी उपन्यास-लेखन का कार्य अवरुद्ध रहा। उपन्यासों के प्रकाशन-पथ में आए इस व्यवधान को दूर करते हुए इस युग का सूत्रपात करने का श्रेय श्रीलाल नथमल जोशी को है। १९५६ ई. में प्रकाशित इनके "आभै पटकी" उपन्यास ने राजस्थानी भाषा के सुप्त उपन्यास-साहित्य को जागृत कर दिया। तदनन्तर १९६६ ई. में प्रकाशित

अन्नाराम 'सुदामा' का "मैकती काया मुलकती धरती", १९६८ ई मे प्रकाशित श्रीलाल नथमल जोशी का "धोरा रो धोरी" तथा १९७० ई मे प्रकाशित यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का "हू गोरी किण पीव री" जैसे सामाजिक जीवन पर आधारित उपन्यास प्रकाश मे आए। दूसरी ओर लोक-वार्ताओ पर आधारित विजयदान देथा के "तीडोराव", "मारो बदलो" और "आठ राजकुवर" जैसे लोक-उपन्यास भी उभर पडे। स्वातंत्र्योत्तर काल मे ही यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का "जोग-सजोग", श्रीलाल नथमल जोशी का "एक बीनणी दोय बीन", सत्येन जोशी का ऐतिहासिक उपन्यास "कवल-पूजा", छत्रपतिसिंह का "तिरसकू", रामनिवास शर्मा का "काल-भैरवी", अन्नाराम 'सुदामा' का "आँधी अर आस्था", नृसिंह राजपुरोहित का "भगवान महावीर", सीताराम महर्षि का "लालडी एक फेरु गमगी" और विजयदान देथा का "साच रो भरम" लोक, सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यासो ने राजस्थानी उपन्यास के विकास के क्षेत्र मे एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी। दीनदयाल कुन्दन का "गुवारपाठो", रामदत्त साकृत्य का "आभलदे", पारस अरोडा का "जाण्या अणजाण्या", लक्ष्मीनिवास बिडला का "पदमणी रो सराप" और किशोर कल्पनाकान्त का "धाडवी" उपन्यास ओलमो, हेलो, लाडेसर, हरावळ इत्यादि पाक्षिक मासिक पत्र-पत्रिकाओ मे आधे और पूरे रूप से प्रकाशित हो चुके है।

सूर्यशकर पारीक का "धोरा री धरती", दामोदरप्रसाद जलधारी का "माटी रा मिनख", रामप्रसाद चाकलान के "गली" और "मधुवती", हरमन चौहान का "ओयधन", किशोर कल्पनाकान्त का "भोलियो", अन्नाराम 'सुदामा' का "गाग मे मुलकै कमल", श्रीलाल नथमल जोशी का "शरणागत पाल", नारायणदत्त श्रीमाली का "धर्मी राजा" तथा सुमेरसिंह शेखावत का "गवलै री गता" जैसे उपन्यास वित्तीय साधनो के अभाव मे अप्रकाशित अवस्था मे ही पडे है। स्पष्ट है राजस्थानी भाषा मे उपन्यासो की कमी नही है, कमी है मात्र वित्त की। वित्तीय समस्याओ के कारण राजस्थानी भाषा के असख्य उपन्यासो को केवल उपन्यासकारो की अलमारियो की शोभा बढाने का श्रेय दिया जा सकता है। इसका तात्पर्य यह नही कि राजस्थानी मे उपन्यास-लेखन और प्रकाशन की शृ खला टूट गई, भले ही इसकी गति मन्द हो। उपन्यासो की शृ खला अपने अविच्छिन्न स्वरूप के कारण दिनो दिन अधिक दृढ एव पुष्ट ही बनती चली जा रही है। वित्तीय साधनो की कठिनाई के कारण अधिकाश उपन्यास सरकारी प्रकाशन हो गए है जैसे "काल-भैरवी", "जोग-सजोग" "एक बीनणी दोय बीन" "धोरा रो धोरी" इत्यादि उपन्यासो का प्रकाशन राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, बीकानेर ने कराया तो 'आँधी अर आस्था' तथा "भगवान महावीर" उपन्यासो का प्रकाशन शिक्षा-विभाग राजस्थान बीकानेर ने। कुछ भी हो स्वातन्त्र्योत्तर कालावधि मे उपन्यासो के लेखन की गति एव स्फूर्ति मे ताजगी नजर आई है।

उपन्यासो के विषय-वस्तु के आधार पर किए गए विविध भेदो मे राजस्थानी उपन्यासो का क्षेत्र मुख्यत सामाजिक उपन्यासो तक ही सीमित रहा है। ऐतिहासिक मनोवैज्ञानिक, आँचलिक (भाषा-शैली एव विषय-वस्तु दोनो ही आधारो पर) तथा रोमांटिक तत्त्वो वाले उपन्यास राजस्थानी भाषा मे लिखे ही नहीं गए, ऐसी बात नही। हाँ, ऐसे उपन्यासो की सख्या अत्यन्त न्यून रही है। राजस्थानी उपन्यासकारो की प्रमुख प्रवृत्ति तो आदर्शवाद की स्थापना ही रही है किन्तु साथ ही उनमे वर्तमान जीवन का यथोचित अकन होने के कारण उभरे यथार्थवादी तत्त्व की उपेक्षा भी नही की जा सकती। स्वतन्त्र रूप से भी कुछ एक उपन्यासो मे आदर्श की अपेक्षा यथार्थ के महत्त्व पर अधिक बल दिया गया है अत उनकी प्रमुख प्रवृत्ति यथार्थवाद तथा गौरण प्रवृत्ति मुशी प्रेमचन्द के हिन्दी-उपन्यासो की तरह आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद की ओर रही है।

राजस्थानी का प्रथम उपन्यास "कनक-सुन्दर" पूर्णत एक आदर्शवादी उपन्यास है। इस उपन्यास मे उपन्यासकार ने जहा एक ओर तात्कालिक समाज की अनेक समस्याओ एव बुराइयो पर स्थान-स्थान पर स्वतन्त्र रूप से प्रकाश डाला है वहाँ दूसरी ओर उसने दो भिन्न आचार-विचार वाले परिवारो की कहानी के माध्यम से अपने आदर्शवादी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है। इसके बाद नारायण अग्रवाल ने अपने उपन्यास "चम्पा" मे विभिन्न सामाजिक समस्याओ को न उठाकर 'वृद्ध-विवाह' की समस्या को उठाई है जबकि उसका अभीष्ट भी समाज-सुधार ही है।

राजस्थानी उपन्यासो मे जहाँ क्रमश आदर्शवादी, आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी एव यथार्थवादी दृष्टिकोणो का प्राधान्य रहा है वहाँ राजस्थानी के लोक-उपन्यासो मे एक भिन्न ही प्रवृत्ति प्रस्फुट हुई है और वह है—व्यग्य की। "तीडो राव" और "मा रो बदलो" इस दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय है। औपन्यासिक तत्त्वो की दृष्टि से राजस्थानी मे चरित्र-प्रधान उपन्यासो का ही प्राधान्य रहा है। कही कही तो यह तत्त्व इतना अधिक उभर आया है कि घटना और उसके बीच सन्तुलन ही बिगड़ गया है और कई घटनाएँ अस्वाभाविक तथा अतिरंजनापूर्ण लगने लगती है। "ढोगा री ढोरी" मे टैम्पीटोरी की अध्ययन-प्रियता और कुशाग्र बुद्धि की ओर इंगित करने के लिए लेखक ने समुद्री तूफान की जिस घटना का सयोजन किया है—वह अपनी अस्वाभाविकता के कारण पूरे उपन्यास का मजा किरकिरा कर देती है। ऐसे भयकर तूफान मे—जबकि जहाज के डूबने की स्थिति आ गई हो—टैम्पीटोरी का स्थिर होकर अध्ययन मे लगा रहना, यात्रियो का जहाज को छोड कर नाविको के साथ उस तूफान से बचने का प्रयास करने को उद्यत होना और बाद मे टैम्पीटोरी द्वारा समझाए जाने पर अपने उस प्रयास की व्यर्थता का ज्ञान होना बिल्कुल अस्वाभाविक है। ऐसे तत्त्व राजस्थानी के अधिकाश उपन्यासो "आभै पटकी" "मा रो बदलो" 'राग-द्वेष' "हाड-नेगी" इत्यादि मे उभर पडे है।

पात्रो के चरित्राकन में मुख्यत दो शैलियो का उपयोग राजस्थानी के उपन्यासो मे मिलता है। एक ओर लेखक स्वय अपनी ओर से पात्र के चरित्र पर प्रकाश डालते हैं तो दूसरी ओर घटनायें स्वय उपन्यासो के पात्रो के चरित्र का निर्माण करती हैं। शैली की दृष्टि से अधिकाश उपन्यासो मे वर्णनात्मक शैली का ही आश्रय लिया गया है। "मैंकती काया मुलक्ती धरती" उपन्यास आत्मकथात्मक शैली का ज्वलन्त प्रमाण है। "तीडो राव" जैसे उपन्यास की प्रतीक शैली श्लाघ्य रही है।

स्वातन्त्र्योत्तर कालावधि के सम्पूर्ण उपन्यास–एक विस्तृत समीक्षात्मक विवरण:–काल-क्रमानुसार राजस्थानी के स्वातन्त्र्योत्तर काल मे सर्जित उपन्यासो का विशद और विस्तृत विवरण तथा उनकी समीक्षाएँ निम्नलिखित प्रकारेण हैं.—

आभै पटकी[1]

कथा-सार:–सेठ देवीदयाल अपनी बेटी किसना का विवाह अलवर-निवासी सेठ रामचन्द के बेटे हरिचन्द से करता है। हरिचन्द परदेश से आते वक्त हवाई-दुर्घटना मे मर जाता है। किसना विधवा हो जाती है। इस प्रकार किसना का जीवन जवानी मे ही दूभर हो जाता है।

रामचन्द के बडे भाई का लडका मोहन बम्बई से डाक्टरी पढकर आता है। मोहन की पत्नी तीजाँ बीमारी से मर जाती है। मोहन अलवर आकर किसना से विधवा-विवाह का प्रयास करता है परन्तु गाँव के पच, सरपच और प्रतिष्ठित लोग रोडे अटकाते है। मोहन भतमालजी के लडके किशनगोपाल के साथ किसना का विवाह कराना चाहता था। किशनगोपाल समाज-सुधारक था। किन्तु बात बढने के कारण किशनगोपाल बीमार पड जाता है। उसके बाद किसना का भाई श्रीवल्लभ मोहन से किसना के साथ विवाह की प्रार्थना करता है। मोहन के कहने पर सेठ रामचन्द भी हाँ भर लेते हैं। इधर बीमार रहने के कारण किशनगोपाल भी किसना की शादी किसी अन्य के साथ करने की बात मोहन से कह देता है। मोहन का किसना के साथ विवाह हो जाता है। प्रतिक्रियास्वरूप मोहन और उसके परिवार को न्याति के बाहर (समाज से बहिष्कृत) कर दिया जाता है। मोहन फर्स्ट पोजीसन मे डाक्टरी की परीक्षा उत्तीर्ण करता है। एक दिन सेठ रामचन्द चल बसते है। उनका मृत्यु-भोज (मौसर) किया जाता है परन्तु उसमे जाति का कोई भी व्यक्ति नही आता है किशनगोपाल को छोड कर। बाद मे सेठ साहब की स्मृति मे एक चिकित्सालय का निर्माण कराया जाता है जिसमे चिकित्सक के पद

---

1. सामाजिक उपन्यास, लेखक-श्रीलाल नथमल जोशी, १९५६ ई० मे सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित।

पर मोहन कार्य करता है। कुछ दिनो बाद सीखते-सीखते किसना भी चिकित्सिका बन जाती है। इसी चिकित्सालय मे पच रामनाथजी जो मोहन के विरोधी थे, के भयकर रोग का इलाज मोहन करता है। अन्त मे परिस्थितियो को देखते किसना एक नारी-शाला का निर्माण भी कराती है जिससे नारी-जीवन सुखी बन सके।

समीक्षा – (क) विशेषताएँ —किसना "आभै पटकी" है जो विधवा बनने पर ऐसी स्थिति को धारण करती है परन्तु इसी किसना को धरती ने झेल लिया अर्थात् मोहन जैसे कुशल डाक्टर ने सहारा दिया। उपन्यास का शीर्षक बड़ा मनोरम और सार्थक बन पड़ा है। विधवा-विवाह के द्वारा विधवा के जीवन को सुखी बनाना, नारी-शिक्षा, जाति-पाँति से बहिष्कृत की कुरीति को मिटाना, समाज-सेवा, कर्त्तव्य-परायणता, अनमेल-विवाह इत्यादि स्वरूपो का अकन किया गया है। इसमे पात्रो का 'सत्' और 'असत्' रूप मे ही चित्रण हुआ है। एक ओर मोहन और किसना जैसे पात्र हैं जिनके चरित्र मे लेखक ने हर अच्छाई को भरने का प्रयास किया है तो दूसरी ओर पूला और तीजा जैसे पात्र हैं जिनके चरित्र मे अच्छाई का एकान्तिक अभाव है। इसके अतिरिक्त अपनी सहज मानवीय कमजोरियो के साथ प्रकट होने वाले पात्रो को 'हृदय-परिवर्तन' वाली नीति का सम्बल ग्रहण कराते हुए उन्हे आदर्श पात्रो की श्रेणी मे खडा किया गया है। ऐसे पात्रो मे पचायत के प्रधान रामनाथजी तथा किसना के भाई श्रीवल्लभ आए हैं।

धोती ढीली हुय जावती, धूंच दी है जिको धूण आपेई देसी, माथ रो माथ धसीट लेय'र पीतो गिट जावती, म्हारी झोळी ठंडी राखे, टीको इवढल राखे, किसी मासर सूनी हुवै, दगो देयग्यो, जम रो तिलक निकलसी, अवार न कोई धवार, सूनो घर देखै जणै कबूतर आळनो लगणो चावै, कठै अमावस रो अधारो अर कठै पूनम री चानणी, काली धार डूब जासी, डूबतै नै घोचे रो सायरो लखावै, अरूंडी मायै सोवै अर मालां रा सिपना आवै, गोथली मे तो गुड भागीजै ही कोनी इत्यादि मुहावरे एव कहावतें भाषा मे रत्नो की तरह जडे हुए हैं।

धात्वात्मिक-सौष्ठव को प्रकट करने वाले ये शब्द-रूप भी उपन्यास मे यत्र तत्र [illegible] हुए हैं—थारै जिमा नैण, लाय पलीता हुयग्यो, सैंतान हुवै ज्यूं [illegible], [illegible] माथ नू मगीम निकल्यो, घाचो हुवै ज्यूं हुया है, आख्या [illegible] ज्यूं सुनी रैयगी, उण रो काळजो मैण दाई गळण लागग्यो, सडासड [illegible] लाग जावै।

[illegible], धोरो [illegible], नेवटनी, भानोमानो, टंगारो, त्रिदलप, [illegible], [illegible], [illegible], ढोरा, [illegible], छिनाल, धणियाप, हीडा, [illegible], [illegible], [illegible], म्याया, [illegible], [illegible], पारकै इत्यादि राजस्थानी [illegible] सौन्दर्य-वृद्धि के प्रतीक हैं।

उपन्यास मे लघु सवाद-विषयक मनोरमता द्रष्टव्य है[1]—

"किसना—थे देवणी चाहसो सो देय देसो, टरकावणी चाहसो तो नट जासो, म्हारो वडो भारी उपकार हुसी।

मोवन—जे थानै थोड़सोक भी फायदो हुवतो हुसी अर म्हारै वस री कोई चीज है तो हू पक्कायत देसू।

किसना—था वाचा देय दिया है।

मोवन—बरोबर।

किसना—था डाक्टरी री पढाई करी है। हूं... हूं एक इसी दवाई मागू जिण सू.......

मोवन—जिण सू काई हुवै ?

किसना—बिना कोई तकलीव रै म्हारो सास निकल् जावै।

मोवन—नइं, आ चीज नइं हूसकै।"

(ख) कमियाँ:—लघु कलेवर वाले उपन्यास मे भी लेखक ने २४ परिच्छेदो की सृष्टि की है।

बीमारी के बाद किशनगोपाल मोहन की डाक्टरी मे पास होने की खुशी मे दी जाने वाली गोष्ठी मे मिलता है, उसके बाद उसके दर्शन तक नही होते है। मोहन ने भी शादी से पूर्व किसना के साथ शादी का रहस्य नही खोला जबकि शादी का पक्का निश्चय हो चुका था। सेठजी ने भी स्वीकृति दे दी थी परन्तु रुग्णावस्था मे जब किशनगोपाल घर गया, तब भी वह रहस्य नही खोला गया।

किसना का बम्बई जाना कुछ अनुचित लगा। जब मोहन विवाहित था, पढ रहा था तो किसना 'ठाकर' नामक कुत्ते को लेकर वहाँ क्यो गई ? एक मास उसके पास रहकर (अलवर मे) फिर उसके साथ आई—यह निरुद्देश्य तथा अनुचित लगने वाली घटना है।

सीताराम तथा उसकी पत्नी तुलछी को लेखक अन्तिम अध्यायो मे भूल ही बैठा है। उनका क्या हुआ ? लेखक मौन रहा है।

संस्कृत और उर्दू के शब्दो के ज्यो के त्यो प्रयोग की लेखक को क्यो आवश्यकता पडी जबकि पूरे उपन्यास मे राजस्थानी भाषा का सरल और स्वाभाविक प्रयोग किया है। स्वावलम्बी, किंकर्त्तव्यविमूढ सहानुभूति, उद्देश्य, शिक्षा, असहाय, हद, मदरसा इत्यादि सस्कृत-उर्दू शब्द उपन्यास मे मिलते है। भले ही यह उपन्यास कुछ सदोष हो तथापि राजस्थानी भाषा के प्रेमचन्द श्रीलाल नथमल जोशी की विधवा-समस्या के समाधान की युक्ति एव इनके तर्क बडे ही श्लाघनीय रहे है।

1. आभै पटकी—पृष्ठ ९३-९४ पर

ऐसे अमोघ प्रयासो वाले उपन्यास से न केवल राजस्थानी भाषा का गौरव बढा है बल्कि राजस्थानी साहित्य और सस्कृति की भी गरिमा उच्च हुई है।

आठ राजकुंवर[1]

कथावस्तु—चिडी रा विचिया, राणी रौ इतकाल, नवी राणी, राणी छलगारी, देस निकालौ, सुगन चिडी, तपसी रौ आदेस, पैलो राजकवर, दूजो राजकवर, तीजो राजकवर, चौथो राजकवर, पाचवो राजकवर, छठो राजकवर, सातवो राजकवर, आठवो राजकवर और गिरस्ती रौ आस्रम—इन सोलह परिच्छेदो मे विभक्त इस उपन्यास का कथा-सार इस प्रकार से है—

किसी देश के राजा की प्रथम रानी के आठ कुमार थे। रानी मर गई। राजा ने दूसरी शादी की। दूसरी रानी के पुत्र हुआ। रानी ने ईर्ष्यावश आठो राजकुमारो पर आरोप लगा कर राजा से उन्हे देश-निकाला दिलवा दिया। आठो राजकुमार एक तपस्वी के आश्रम मे मिलते हुए उसके आदेशानुसार आठ अलग अलग दिशाओ मे गए। सभी ने अलग-अलग प्रकार के सघर्ष किए। कई दैत्यो, ठगो आदि को भी अपने अच्छे विचारो से प्रभावित किया। स्वय धर्मराज, इन्द्र आदि को भी अपने अच्छे विचारों और अच्छी भावनाओ से प्रभावित किया। अन्त मे विजयी बन कर अपनी अपनी नवीन परिणीता पत्नियो के साथ आगए।

इधर राजकुमारो के जाने के बाद रानी का हृदय बदला। उसने एक तपस्वी के आश्रम मे दासी सहित आकर राजा के आदेश से एक साल तक रहते हुए राजकुमारो की प्रतीक्षा की। वहां अपनी दासी के साथ तपस्वी की शादी करवा कर रानी ने उसे गृहस्थ-जीवन मे पदार्पण कराया। बाद मे आठो राजकुमार अपनी पत्नियों एव अन्य व्यक्तियो के साथ वहां आकर रानी से मिलकर अपने पिता से मिले। अन्त मे सानन्द दिन-यापन करते हुए विश्वबन्धुत्व की भावना मे डूब गये।

समीक्षा—(क) विशेषताएं—यह लोक-उपन्यास होते हुए इसमे लेखक की बहुत कुछ मौलिकता विद्यमान है। तपस्वी की दिनचर्या, उसके विचार और उसका हठात् गृहस्थ-जीवन मे प्रवेश, स्थान-स्थान पर लेखक की दार्शनिकता—ये सभी बातें मौलिकता के आधार को पुष्ट करने वाली हैं। कई स्थानो पर लेखक की रूप-वर्णन की दक्षता भी प्रकट होती है। वह रूप-वर्णन चाहे किसी दैत्य का हो किसी राजकन्या का हो या किसी ठगो के सरदार का हो। इस उपन्यास का उद्देश्य बहुत अच्छा है जिसे हम "वसुधैव कुटुम्बकम्" या विश्व-बन्धुत्व की भावना कह सकते है। लेखक ने उपन्यास के अन्त मे लिखा है[2]—"सगली दुनिया नैं ई

---

1 लोक उपन्यास, विजयदान देथा की "बाता री फुलवाड़ी भाग ३" मे उद्धृत, सवत २०१९ मे रूपायन सस्थान, बोरून्दा से प्रकाशित

2 "बाता री फुलवाड़ी भाग ३" पृष्ठ स [illegible] पर

आप रौ कुटम मंनणौ........अेक ऐडा राज री थापना करणी है जठै सगला कुटंमा रौ एक सरीखौ वधापौ व्है, कोई किणी रा कुटम नै हाण नी पुगावै, कोई किणी रा कुटम माथै राज नी करै। उण राज रौ वो सदेस दुनिया रा घर घर मे पूगै अर आखी दुनियां ई एक घर वण जावै।"

(पृष्ठ ४४६ पर "वाता री फुलवाडी भाग ३")

वैसे उपन्यासो मे एक नायक और एक नायिका ही हुआ करते हैं परन्तु इसमे आठ नायक और आठ ही नायिकाएँ हैं जो सभी उपन्यासो से पृथक्-सा दिखाई देता है। लेखक की यह नवीनता और सूझबूझ प्रशसनीय है। आठो ही राजकुमार सघर्षों और अपने कार्यो मे सतर्क हैं। अपने साहसी कार्यों, सुन्दर और उच्च भावो से सफलता पाकर फल के भोक्ता भी ये हैं। अपनी माँ के कथनानुसार ये कार्य करते हैं और अन्त तक उसी के आदर्श की सीमा मे ही रहते हैं। विना अपराध देश-निकाला देने पर भी वे कुछ नही कह कर राज्य से चले जाते हैं। रास्ते मे अपनी अच्छी भावनाओ से कठोर से कठोर क्रूर व्यक्तियो को द्रवित कर देते हैं।

मुहावरो, कहावतो एव अलङ्कारो इत्यादि से पूर्ण भाषागत सौष्ठव भी उपन्यास मे प्राप्त होता है। जैसे—जाणै बीजली पडगी, ऊभी आई नै पाछी आडी ई जावू ला, सास रै सायै जाणै वतूलिया ऊठण लागा, सापई मर जावै अर गेडी नी भागै, जाणै वालोडी कीडिया चेंटगी व्है, जूवा रै डर सू कठै ई धावलियो फेंकीजै, कीडिया कदेई मणावद वोझ झेल सकै, वाई रौ करम ई राछ्यौ तो कांई करै पाछ्यौ, जाणै कागलौ हसियौ, जाणै रीछ रा हाथा मे गुलाव रौ फूल, वास रै ज्यू पतलौ अर डीगौ, टीलोडी रै उनमान आप रा दातां, कालजौ फटका चटग्यौ, भूत नी उतर्‌यौ।

लेखक की नव शब्द-निर्माण-कला अत्यन्त मनोरम है। जैसे—इकलापो, 'गड्दोल, गतरासा, गैलोजग्यौ, झापलिया, भडभोल्या, गांगरत, लिसर लिसर, चापलयोडा, कोतःई, दिहावली, विटलिया, धुगधुगौ, खिल डिखल, मिचलाद।

उर्दू और सस्कृत के शब्दो को अपनाकर लेखक ने भाषा मे सहिष्णुता के भाव को दिखाने की चेष्टा की है—वाजिव, नासमझ, गुस्ताखी, माकूल, वदोवस्त, आवाद, वावत, तकलीफ, परम, कल्याण, अनादर, प्रवीण, प्रपन्च, विद्या आदि।

रूंगी, तोजी, आहुजौ, कोडायौ, ठीमर, वोवाडी, कूतौ, तपान, खयावल, सावता, कणाकलो, नींतर, कोजा, मोवी, उकरान, हूवोहूव, नेगम, पालू, केडी इत्यादि राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग उपन्यास मे हुआ है।

लघु वाक्यावलियो से युक्त रूप-वर्णन की शैली भी सराहनीय रही है[1]—

"नवी रांणी रौ सोस जाणै वागड़ियौ नारेल, वेणी वासक नाग।

---

1 "वाता री फुलवाडी भाग ३"—पृ. स ९१

भूंह जाणै इन्द्र-धनख। मिरग सा नैत्र, मीन जिसा चपल। रतनाला लोचन। नाक सूवा री चाच। दाडिम कुली सा दांत। बसत कोकिला सरीखी मधरी वाणी। आरीसा सरीखा कपोल। मुख पूनम रै चाद ज्यूं सांगोपांग सपूरण। ग्रीवा मोर-सी जाणै खेराद उतारी। बाह जाणै कवलनाल अर चपा री डाल। चवला फलीसी आंगलिया। उरस्थल कुंभात सरीखो। कुच जाणै पाकी नारगिया, सोवारी-साकठोर। पान सरीखो पेट। केसर लकी। नाभि जाणै गुलाब रो फूल। नितंब कटोरा सा।.........."

(ख) दोष —इस उपन्यास मे आठ राजकुमारो का वर्णन है। अत नायक किसे माना जाय? उपन्यासो मे आठदस नायक नहीं हुआ करते है। इसमे अस्वाभाविक तथा अलौकिक तत्त्वो की भरमार है। जैसे प्रत्येक राजकुमार का कमेडी, मोर, तोता, सिंह एव हिरण इत्यादि जीव-जन्तुओं, पक्षियो और पशुओ की भाषाओ को समझ लेना जैसे कोई सरल कार्य ही हो—लेखक ने बताया है। क्या ये सभी राजकुमार पशु-पक्षियो की भाषा को जानने मे पारगत थे? एकदम मेढक से हिरण तोता इत्यादि बनना, कमेडी का अप्सरा बनना, चिडिया द्वारा कटोरदान खोलकर लड्डुओ की अदला-बदली करना, राजकुमार का यमपुरी तथा इन्द्रपुरी जाना इत्यादि बाते अलौकिकता की चरम सीमा को लाघने वाली है। स्थान स्थान पर लेखक की दार्शनिकता कथा के मनोरजन मे रुकावट डालती है। उपन्यास का अन्तिम अध्याय 'गिरस्ती रो आस्रम" निरर्थक-सा है। राजकुमारो के मिलन-कार्य को दो-तीन पृष्ठो मे ही प्रकट किया जा सकता था। तपस्वी का तपोभग कर उसे गृहस्थी बनाने का क्या प्रयोजन रहा है, कुछ समझ मे नही आता है। जहा अन्यान्य भाषाओ के साहित्य मे लोक-उपन्यासो की कमी रही है वहा राजस्थानी-साहित्य मे इसके उपन्यासो की सख्या को देखते हुए पर्याप्त है। इस उपन्यास मे आठ राजकुमारो के नायकत्व की ही विशेष रूप से मौलिकता है। अन्य उपन्यासो की भांति इसमे मनोरजन-तत्त्व की कोई कमी नहीं है। इस प्रकार राजस्थानी-साहित्य की उपन्यास-विधा के भण्डार मे वृद्धि का श्रेय इस उपन्यास को भी दिया जाता है। इतने विशाल गद्य के समक्ष उसके अत्यल्प दोष कहीं छिप जाते है।

तोड़ो राव[1]

कथा-सार —तोडा परिहार का जन्म एक भांडी जाति में हुआ। वह बचपन से ही अपनी जाति के व्यवसाय को नहीं कर भजन आदि मे लीन रहा। पिता ने

1 लोक उपन्यास, विजयदान देथा द्वारा रचित "बाता री फुलवाड़ी भाग १" से उद्धृत, सवत् [illegible] मे रूपायन सस्थान बोरून्दा से प्रकाशित।

उसका ध्यान हटाने के लिए उसे ससुराल भेजा। रास्ते में वर्षा हुई। तीडा ने अपने कपडे एक मटके में डाले जिससे वे सूखे रहे तथा भीगने वाले गधो को एक बाडे में बाध दिया। सास द्वारा बनाई रोटियो की सख्या बराबर बता दी क्योकि उसने छिपकर सब देख लिया था। फिर भी अज्ञान होने के कारण तीडा का प्रभाव इन सभी बातो से बढ गया। वहा के ठाकुर ने परीक्षा ली जिसमें तीडा सफल रहा। राजा ने बुला कर उसकी परीक्षाएँ ली: राजा के खोए नौलखेहार का पता लगाया, जीवित सिंह को रस्से से बाँध दिया, सात भूतो को डराकर भगा दिया, चोरो से राज्य का धन वापिस ले लिया और दुश्मन राजा की फौज को बिना युद्ध किए आत्म-समर्पण के लिए विवश किया। दुश्मन राजा की कन्या के तीन सवालो के उत्तर दिए तथा पीजरे मे बद मोम के सिंह को बिना पीजरे का स्पर्श किए बाहर निकाला। अन्त में राजकुमारी से शादी कर वहाँ का राज्य ले लिया। इस प्रकार तीडा के सभी कार्य स्वत ही सफल होते गए जिससे निरन्तर उसका प्रभाव बढता ही गया।

कथावस्तु उडती माखी रौ निसाणौ, मुकलावा रौ मौको कुमारी रा गधा, तीडा थारी मौत, राजाजी रौ फरमाण, आजा ए निन्दरा आजा, भुज भुज रा लाख, जीवता नार नै पकडणौ, साता नै गटकाय जाऊँ, नूखा खालडा री बीजली, श्री कुण बडला भागता आवै, पीजडा रौ सिंघ और तीन सवाल—इन तेरह अध्यायो मे विभक्त है।

समीक्षा.—(क) विशेषताएँ—प्रतीक-शैली मे लिखे गए इस उपन्यास में वस्तुत तीडो राव से सम्बन्धित विभिन्न लोक-घटनाओ का ही समुच्चय नही है अपितु वह ऐसे लोगो का प्रतीक है जो बिना किसी प्रकार की योग्यता के केवल निवउग एवं सयोग के सोपानो के सहारे प्रतिष्ठा के सर्वोच्च शिखर पर जा पहुँचते है। प्रस्तुत कृति के माध्यम से लेखक ने ऐसे तत्त्वो को प्रोत्साहित करने वाली आज की सम्पूर्ण व्यवस्था पर ही तीखा व्यग्य-प्रहार किया है साथ ही साथ धार्मिक आडम्बरो, अलौकिक तत्त्वो की स्थिति तथा अफवाहो के बाजार पर भी तीव्राघात किया है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो में सस्कृत और उर्दू के शब्दो को अत्यल्प मात्रा मे लाना लेखक की अन्यान्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता की प्रवृत्ति का द्योतक चिह्न है—विपदा, इन्तजाम, माकूल, रैयत, हकनाक, नास्तिक, अनेक, करामात राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द—बिलू, इनार, ठिठोकडिया, काल्यायो, नेडला, अणखो, लारला, सरवरा, तगडती, अलन् द, अपल-गपल, मोलो, गलाऊँ, भाटोजियो, बला, तालकै, तवडकाया, हल्फलायो, ओलावा, जित्ता, स्वाया, आहजी, पातर। सारल्लाणिक भाषा, कहावतो और मुहावरो का प्रयोग श्लाघनीय है—

रग है थी जमनाँ, भगवान साच दी है तो कुणी है देवैगा, दही नै तेडा घोल्या दाता में, मन रा लाडू जानता, दगना देवैगा, चाल्या चौठी परसराम रहै नै

कूडी होय, स्यालिया री श्रोती श्रावै जद वो गाव सामी दौडे, दिन रा तारा दिखाय देवू ला, जाएँ घोडा वेचनै सूता व्है ज्यू, ततैया मनाय जावरणा, फीदी फीदी विखरगी, भाटा री पूतली रै भात, कुत्ता ई खीर नी खावैला, वकरी री भात मिमियावतौ, ऊट खीझै ज्यू खीभता, डीग नी हाकतौ, वत्तीसी जुडगी, फडको चढग्यौ, को मीन मेख नी।

भाषा-शैली का सौष्ठव दृष्टव्य है[1] —

"नवलखा हार रौ मते ई पत्तौ पड जांणौ, जीवता सिंघ नै गधेडा ज्यू कान पकडनै नीम्रडा रै वाधणौ, सात भूता रौ पलक मे वासौ छुडा-वरणौ, चोरा कना सू गियोडौ धन पाछौ लावरणौ अर वानै वावडी मे पटक नै माररणौ अर इण विध इत्ती लाठी फौज नै विना लडिया हार मनाय देणी—ग्रै कोई मामूली वाता है अवतार विना भला ग्रै कोई काम व्हैणा है ?"

(ख) दोष —भाषा को छोड कर इस उपन्याम में किसी भी प्रकार की मौलिकता नही है। अन्तिम अध्याय में पूछे गए तीन सवाल और उनके उत्तर विद्योत्तमा द्वारा कालिदास को पूछे गए तीन सवालो की तरह ही है, कोई नवीनता नही। दूसरे सवाल में कुछ भ्रमात्मक बातें बताई हैं। तीडो राव द्वारा नौलखे हार का पता लगाना, डरपोक तीडो राव द्वारा जीवित सिंह को बाघना, राक्षसो को राज्य की सीमा से भगाना, चोरो को मार कर राज्य का धन लाना, दुश्मन राजा की फौज को आत्म-समर्पण करवाना आदि अलौकिक घटनाओ की भरमार हैं। तीडो राव के मां-बाप, मास-ससुर और पूर्व वाली पत्नी का उपन्यासकार ने उपन्यास के अन्त में जिक्र तक नही किया—उनका क्या हुआ ? "मुखारविन्द" शब्द का उपन्याम मे असख्य बार प्रयोग हुआ है। निम्नवर्गीय कथावस्तु पर आधारित यह उपन्याम सदोष होते हुए भी राजस्थानी-साहित्य की वृद्धि मे अपेक्षित सहयोगी है। लघु कलेवर वाले इस उपन्यास ने गागर मे सागर भरने का कार्य किया है। उपन्यास के नायक तीडा राव को सभी कार्यो मे निरन्तर स्वत सफलता मिलना इस उपन्यास की मुख्य विशेषता है। इस दृष्टि से इसका राजस्थानी-साहित्य मे एक विशिष्ट स्थान है।

साच री भरम[1]

कथा-सार.—एक राजा था जिसे सत्य का भ्रम हो गया। इसलिए वह राजा स्वयं रानी, दीवान इत्यादि से घबराने लगा। राजा ने अपने ही दिवगत सामन्त के आठ पुत्रों को पत्र देकर अपने राज्य मे चुनवा लिया। आठ पुत्र मां की आज्ञा

---

1 लघु उपन्यास, विजयदान देथा द्वारा सर्जित 'बाता री फुलवाडी भाग ४" मे संगृहीत संवत् २०२१ मे रूपायन संस्थान, बोरुन्दा से प्रकाशित

पाकर राजा के दरवार में बारी बारी पहरा देने लगे। इधर वर्तमान दीवान रानी को वश में कर राजा से राज्य छीनना चाहता था परन्तु इन आठ भाइयों के आने पर दीवान की दाल नहीं गली।

एक दिन पहला भाई कुमार पहरा दे रहा था तो सोई हुई रानी के ऊपर से एक सांप गुजरा। कुमार ने उस सांप को मार डाला परन्तु सांप ने मरते-मरते विष की दो तीन बूंदें रानी के होठों पर टपका दी। कुमार ने इन बूंदों को पूंछ कर अपनी जीभ से रानी के होठ चाटे जिससे विष का प्रभाव समाप्त हो गया। रानी और राजा ने जग कर यह सब देख लिया। कुमार ने भी होठ चाटने की बात स्वीकार की परन्तु इसका कारण नहीं बताया। रानी के कहने पर राजा ने एक एक कर सभी भाइयों को कुमार का सिर काटने की आज्ञा दी लेकिन सभी भाइयों ने सत्य के भ्रम को स्पष्ट करने हेतु सात-आठ घटनाएँ सुनाई जिनमें व्यक्ति-विशेषों को सत्य के भ्रम के निवारण के पश्चात् पछतावा ही रहा है—(१) सत्य के भ्रम में लखी व्यापारी द्वारा अपने स्वामिभक्त और समझदार कुत्ते को मारना (२) एक राजा द्वारा अपने हितैषी शकर नामक बाज को मारना (३) एक बनिये द्वारा अपने ही निर्दोष जवान बेटे की हत्या (4) एक राजपूत द्वारा अपनी सती-साध्वी और रूपवती स्त्री का सिर काटना (५) एक विधवा ब्राह्मणी द्वारा एक नेवले की हत्या करना (६) एक अज्ञानी राजा द्वारा अमरफल देने वाले अपने ज्ञानी तोते वेद व्यास को मरवाना (७) एक राजा ने हवा की गति में दौडने वाले अपने अमूल्य और स्वामिभक्त किरण नामक घोडे को मरवाना।

इन घटनाओं से राजा और रानी का भ्रम खुला। तत्पश्चात् कुमार ने सारा रहस्य बताया कि रानी के होठ क्यों चाटे? फिर राजा ने दीवान का सिर काटने की आज्ञा दी। सत्य के भ्रम का निवारण होने पर सभी सानन्द रहने लगे।

समीक्षाः–(क) विशेषताएँ—सत्य के भ्रम को स्पष्ट करने के लिए लेखक ने औपन्यासिक ढंग से जो समझाने की चेष्टा की है, वह प्रशंसनीय है। वह कथा या घटना ही क्या जो सुनते या पढ़ते ही श्रोता या पाठक को भावों में सराबोर न कर दे। आठवें भाई ने ज्यों ही सत्य के भ्रम को स्पष्ट करने की बात पूरी की त्योंही रानी ने जैसे कोई उनकी आँखों देखी सच्ची घटना ही हो, जानकर कहा—'म्हारा वीर, म्हैं गणी होय थारैं पगां पडूं, कीकर ई विरमा नैं पाछो जीवतो कर दैं। उण नैं नाव साजो-सूगो कर दैं। राजकंवर उणरी टापां सुगण वास्तै कान लगायां बैठो व्हैला। म्हारा खजाना सूं एक हजार री टांट पाच हजार मोती भर दूं। वेला बीतता ई वैं हित्यारा उण री माथो कलम कर देवैला।[1]

इस लघु उपन्यास में राजपूतानी के आठों पुत्र ही नायक हैं जो लगभग सभी

1 सांच रो भरम पृ. स १०२

उपन्यासो मे नवीन प्रकार के उपन्यासो की श्रेणी मे रखा जा सकता है। सभी पुत्रो के अलग अलग कार्य है। सत्य के भ्रम को स्पष्ट करने हेतु सभी ने पृथक् पृथक् वाते कह कर राजा और रानी के भ्रम को स्पष्ट कर दिया। लेखक को सत्य का भ्रम खोलने मे पूर्ण सफलता मिली है। पृष्ठ ८१ पर सीता और शकुन्तला इत्यादि को लेखक ने बातो ही बातो मे याद किया है जो लेखक की स्वय की सूझबूझ है जिसने भारत के इन पौराणिक पात्रो को याद कर उदाहरण दिए हैं। भले ही इस उपन्यास की कथा मे मौलिकता न हो परन्तु भाषा-सौन्दर्य तो लेखक के मस्तिष्क की उपज है। स्थान स्थान पर आए मुहावरे, कहावतें एव अलङ्कार भाषा मे चार चांद लगाने के कार्य करते हैं—

आरत्य। मे सावरण भादवो माचग्यो, जाणै तारो टूटो, ओलिया री आखर आउर जाणै कालिदर री रूप धारण करै नै, आंखरा मे भेरू नाचता दीसै, डोका चगावै, मगरमच्छ वाला आसू, टोग फेकिया, जाणै पूनम रा चाद माथै गैण लागो, गीम नै तो जाणै कालिदर डस न्हाकी, कुजोग रो सूरज, अकल री ताग, सठ मर जावैला, जोग रूपी काल रो वस्त्र लागग्यो, लालरिया लेवतो।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो पर लेखक का अत्यधिक बल स्तुत्य है—अवली, तिगरण, नितारया, अटूली, निरणी-तिरमी, धेग, वोरगत, छैली, चापल्नै, बटीड, लातग्योडी, दल भाया, तौजी, संचग्रण, हेवा, रगदोल्जियोडी, स्यानी, पिदडकी, गटकायग्या, भू भाडी, अणछक, हलफलती, खिलपोडौं, ऐटो।

भाषा के क्षेत्र मे लेखक के सहिष्णुता के भाव को ही उपयुक्त कहेंगे। क्योकि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो मे उसे संस्कृत और उर्दू के किञ्चित् प्रयोग मे घृणा नही है। जैसे—घातक, अभाव, प्रचण्ड, विद्वान्, प्रवीण, आत्मा, प्रभाव, जवाब, वाजिब।

(ख) दोष.—यह एक लम्बी कथा हो सकती है, उपन्यास नही। उपन्यासो जैसी रचावस्तु, वैसे पात्रो के चरित्र-चित्रण, सवाद इत्यादि नही हैं। वैसे उपन्यास का नायक किसे माना जाय—यह भी अस्पष्ट सा है। फल के भोक्ता तो आठ भाई हैं जिनकी बातो का प्रभाव रानी और राजा पर पूर्णत पडता है। परन्तु एक ही उपन्यास मे आठ नायक कैसे हो सकते हैं?

पृष्ठ [illegible] से ८१-८२ तक राजा और तोते के सवाद बताए गए हैं। क्या राजा रानी और तोता राजा की भाषा आपस मे समझते थे? लेखक ने स्पष्ट नही किया है। कई स्थानो पर तो लेखक ने कुछ वाक्यो तक की पुनरावृत्ति कर दी है। [illegible] के होठ काटने का रहस्य नही खोलने का कारण यह बताया है जो अस्वाभाविक-सा है—"[illegible] हो वैनी तो म्हे उणी वगत [illegible] [illegible]। [illegible] नीद आयगी।"[1]

1 [illegible] पृष्ठ १०८

यह कैसे सम्भव है कि एक तरफ तो उसके सिर काटने की बात तन गई हो और दूसरी तरफ वह नींद ले रहा हो। वास्तविक तथ्य को उपन्यासकार ने छिपाने की चेष्टा की है। वह तथ्य यह है कि यदि बात वहीं स्पष्ट हो जाती तो सत्य के भ्रम को स्पष्ट करने के लिए न तो सात-आठ घटनायें सुनानी पडती और न यह कथा उपन्यास का स्वरूप धारण करती। रानी के कहने पर क्या दीवान का सिर काटा गया ? उपन्यासकार ने इसे स्पष्ट किए बिना ही कथा को इस सवाद के साथ ही समाप्त कर दी। तोते द्वारा अमरफल लाने तथा ब्राह्मणी द्वारा नेवले की हत्या करने वाली बाते तो बहुत ही प्रचलित बाते है जिन्हे इस उपन्यास मे स्थान दिया गया है। इससे लेखक की मौलिकता पर कुप्रभाव ही पडता है। सत्य के भ्रम के उद्घाटन के लिए लेखक को कई प्रभावोत्पादक कथाएँ सोचनी पडी जिनसे उपन्यास का समुचित विकास भी हुआ। इस प्रकार के उपन्यास राजस्थानी-साहित्य की अमूल्य निधि की वृद्धि मे सहायक हैं। भाषागत तो नही, कुछ भावगत दोष अवश्य है तथापि अपनी अन्य कतिपय विशेषताओ मे ये दोष स्वत ही छिप जाते है।

मां रौ बदलौ[1]

कथा-सार—लेखक को यह कथा बोरुन्दा-निवासी जगरामसिंहजी मेडतिया तथा शिवकरणजी मेहड़ ने सुनाई जिसे लेखक ने औपन्यासिक रूप दे दिया। इस उपन्यास को दो भागो मे बाँटा है। प्रथम भाग के अध्याय कवर को सिकार चढणो खेत री रुखाली, लाखीणी रात, सोनै रो सूरज, कवराणी सू महाराणी, लुगाई री जमारो लुगाई री मरजादा, मासी री सीख, महाराणी री विदाई, गूजरी री भेख, मोटा मिनखा री बाता, राजा री इदवाई, ब्याव अर प्रीत, नवी आदेस, प्रीत री लेखौ, राजाजी री प्रीत, नाच री भरम, प्रीत री बोलवा, प्रीत री रात, प्रीत री मरजादा, गूगी रा बोल, खवासजी री मगपण, गूगी री जाव्ती, गूगी री ब्याव, राजाजी रा थाट, प्रीत री नवो मोड, नगर रा वासी, राजदरबार कुल २९ अध्याय तथा द्वितीय भाग मे गाव रा वासी, जच्चा री पीड, जच्चा री मोद, ठमक ठमक पग धरै कन्हैया, मै नहि माखन खायो, पूछत स्याम कौन तू गोरी, प्रीत न करियो कोय, बिछोव री मोड सोमा री मार, धर कूचा धर मजला, ठगा री गुटो, करता सो भुगता, बीकाणे रै गोखै, राजाजी री न्याव, सोना रा सूरज, काला काला केस भवर, अकल सरीरा ऊपजै ढाई अच्छर प्रेम रा, दो पाटन के बीच मे, सांतविग री मेलो, बदला री घडी कुल २१ अध्याय है।

बीकानेर का राजकुमार सुअर के शिकार मे जैसलमेर की सीमा मे आ जाता है। सुअर को तो मार दिया परन्तु सुअर की पत्नी और उसके बच्चे जैसलमेर री

1 लोक उपन्यास, लेखक विजयदान देथा, "बाता री फुलवाडी भाग ६ और भाग ७" मे प्रकाशित, १९६६ ई० मे रूपायन सस्थान बोरुन्दा से प्रकाशित दो भागो मे विभक्त।

सीमा में स्थित एक भाटी के खेत में छिप जाते हैं। राजकुमार अपने व्यक्तियों के साथ खेत में आता है। खेत की रक्षिका भाटी सरदार की बेटी ने, राजकुमार के दो व्यक्तियों को बात नहीं सुनने पर, गोफन से मार डाला। कन्या के बाप को ज्ञात होने पर भयभीत पिता ने राजकुमार के साथ कन्या का विवाह कर दिया। राजकुमार बदले की आग में जल रहा था। कन्या (भटियाती) को उसी रात दुहाग देकर चला गया। भटियानी ने भी राजकुमार के न मानने पर अपना प्रण सुना दिया कि वह आपके ही बेटे के हाथों से आपके सिर पर जूते पटकायेगी।

कुछ दिनों बाद राजकुमार ने अपने भाइयों को देश-निकाला दे दिया और बाप की दुर्दशा कर उसे मरवा दिया। खुद राजा बन बैठा। इधर भटियानी को कोई लेने नहीं आया तो उसने काली मौसी से मिलकर सहायता प्राप्त की। काली मौसी तथा भटियानी गूजरी का वेष धारण कर बीकानेर गई। राजा को मोहित कर राजा के द्वारा भटियानी के गर्भ ठहराया। बाद में वे जैसलमेर आगई। बीकानेर में एक 'गूगी' नामक नाई की बेटी से परिचय किया। राजा के ही ज्यादा मानीता नाई ने उसका विवाह कर दिया। उसके एक लडकी तथा दो लडके पैदा हुए। नाई तथा गूगी ने भटियानी के लडके की काफी सहायता की।

भटियानी का लडका "बादल" अपनी माँ का बदला चुकाने हेतु बीकानेर पहुँचा। रास्ते में ठगों को ठगविद्या का मजा चखाया। बीकानेर का राजा और दीवान दोनों ही चरित्रहीन थे। राजा ने गूगी तथा भटियानी के साथ अवैध कार्य कर अन्याय किया ही था किन्तु नित्य नई औरतों के चरित्रों के साथ भी खिलवाड करने लगा। बादल ने नाई की सहायता से राजा, दीवान नगर के सेठ इत्यादि को दण्डित कर उनका अपमान किया। लक्खू वेश्या बन पैरों के तलवे चटाए और जूते भी सिर पर पटके। काफी समय के बाद भटियानी और काली मौसी भी वहाँ आ गई। राजा का घमण्ड खत्म हो गया। "मारो मारो" की आवाज से भयभीत होकर राजा काली मौसी के पैरों पड माफी माँगने लगा। वह सब कुछ समझ गया। गूजरी के रूप में भटियानी को भी महत्त्व देने लगा। इस प्रकार बादल ने बीकानेर के राजा से उसी के बेटे द्वारा सिर पर जूते लगवा कर अपनी माँ का बदला ले लिया। जूते खाने के बाद राजा का ऐसा कहना बदले की पूर्णता का ही सूचक है —"उण रा पग भाल बोल्या—बचा, गूजरी री मा म्हनै बचा, थारै सिवाय म्हनै किणी रो भरोसो कोनी। कठै, म्हारी गूजरी कठै? म्हारी प्रीत री कोडाई वा ई थारै साथै इन्दर लोक सू पाछी आई काई? म्हनै मौत री डर लाग रह्यो। बचा, गूजरी री मा म्हनै बचा।"[1]

समीक्षा— (क) विशेषताएँ —इसके सृजन का मुख्योद्देश्य सामन्ती-समाज की दुरवस्था में व्याप्त पहलू को निर्ममता से प्रकट करना रहा है। अत

---

1 मारी बदरो पृ स ३४८ (द्वितीय भाग)

लेखक उस व्यवस्था के किसी भी कमजोर विन्दु पर तीखा व्यंग्य-प्रहार करने से नही चूका है। कोमल कोठारी के अनुसार तो प्रस्तुत कृति "सामन्ती-व्यवस्था का एक व्यंग्यपूर्ण महाकाव्य है।" लेखक ने एक सुनी-सुनाई छोटी सी कथा को अपनी भाषा और अपने भावो से विस्तृत रूप देकर अत्यन्त प्रवीणता का कार्य किया है। "मा री वदलो" भाग १ के पृष्ठ ६१ पर कु वराणी का अन्तर्द्वन्द्व, पृष्ठ ८२-८३ पर काली मौसी का रूप-वर्णन, पृष्ठ १५६ पर आभूषणो से सज्जित गूजरी का रूप-वर्णन, पृष्ठ ३८७ पर भद्दी औरतो का रूप-वर्णन तथा कई आभूषणो का नाम गिनाना, पृश्ठ ३९४ पर कुरूप-वर्णन, द्वितीय भाग के पृष्ठ ६६ पर वादल का रूप-वर्णन, पृष्ठ ९१ पर गू गी की वेटी का रूप-वर्णन, पृष्ठ ९८ पर घोडे का रूप-वर्णन तथा कुरूपा स्त्रियो का रूप-वर्णन, पृष्ठ १८९ पर तथा ३४१ पर वेश्या के मनोभावो का वर्णन करने मे लेखक ने अपनी अपूर्व दक्षता दिखाई है। प्रथम भाग के पृष्ठ १५६ पर आभूषणो द्वारा सौन्दर्य-वर्णन, द्वितीय भाग के पृष्ठ १ तथा २७ पर सुन्दर प्राकृतिक-वर्णन, वीकानेर के राजा की स्थान स्थान पर विचित्र मूर्खता तथा काली मौसी का पूरे उपन्यास मे विचित्र स्वभाव, उपदेशात्मक प्रवृत्ति का जगह जगह जगह तुलना, भ्रष्ट सामन्तशाही की पूर्ण झलक, राजा और दीवान की नित्य नई नई औरतो की माग पूर्ण होना—इत्यादि तथ्यो का सुन्दर विश्लेषण इस उपन्यास मे मिलता है। लेखक की नई उपमाएँ सराहनीय हैं—

(१) जच्चा राँणी रा हाचल तौ जाणै इमरत भर्‌या सोना रा दो कला- मिया, जाणै केसर री भरी रेसम री दो पोटलिया।" [1]

(२) "उन्हाला रै तपतै दिना कासी रा ठाव मे खाटी छाछ कचवचै अर उगटै ज्यू वादल री मन ऐड़ी उगटियो के पाछो रसकस वैठी ई नी।" [2]

पाठको की उकताहट को रोकने हेतु लेखक ने कुछ हास्य-रश्मियाँ भी विखेरी है—

(१) "थर थर धूजता, सिसकारिया भरता नागा-तड ग रावला कांनी वहीर व्हिया।" [3]

(२) "इत्ता आदमी भेला होय थांनै नागा देख्या अर थांनै लाज नी आई?" [4]

---

1. माँ री वदलो पृ स. ५१-५२ (द्वितीय भाग)
2. " " " पृ. सं ११३ " "
3. " " " पृ स २१४ " "
4 " " " पृ सं. २६२ " "

(३) "राजाजी नै जूवा खावण लागी तौ ई कुचमादी ने मारण री खुशी मे की गिनरत नी करी । मैला गाभा री विधक सू माथौ फाटण लागौ ।"[1]

(४) "पैला पगथलिया चाटी जिणरा कुरला तौ कर लौ ।"[2]

उपन्यास के कुछ अध्यायो के नामकरण भी बडे आकर्षक रूप मे प्रकट हुए है —ठमक ठमक पग धरै कन्हैया, मैं नही माखन खायौ, पूछत स्याम कौन तू गोरी, प्रीत न करियौ कोय, घर कूचा घर मजला, करता सौ भुगन्ता, काला काला केस भवर, अकरा मगीग ऊपजै, ढाई अन्छर प्रेम रा, दो पाटन के बीच मे ।

आलङ्कारिक भाषा, कहावतों-मुहावरो आदि का प्रयोग भी दृष्टव्य है— सोना री कटार कालजै खावण सारू नी व्है, कतरणी हालै ज्यू जीभ हालती ही, ज्यू कीडिया माथै पमेरिया धमकावै, लाता रा भूत वाता सू नी मानै, जाणै दूध अर इमरत री भेली विरखा व्ही, मोटा बोल भगवान नै छाजै, मसोवा री पोखालो व्हैगो, लाठा री डोनी ई टाग फाडै, मू ढो थाप खायग्यौ, बाथेडो कर लौ, जाणै दो परभात वाथा भरनै गलै मिलया व्है, लूण गी पोवू अर पाछी भागू, ऊधरा रै बिल मे हाथी कीकर समावै, जाणै अणगिण बुग वडग्या, वलियोडा ठूठरी गलाई, मार मार दम काढ नाखियौ, जाणै अमावस री रात नै चाद मिलयौ, जाणै जूना गेजटा रा छोडा फाट्या, माथौ हथाली जैडो, कानां मे जाणै इमरत रा वादल ई फूटग्या, जाणै आखी कुदरत ई उण री गोद मे आयगी, बाडा रा वोदा काटा ई उगनै फूल ज्यू नखावण लागा, मीन मेखनी, रत पर वारी बीज धरती ई कद झेलै, मूए भाग पडी, मुलक रै गैण लागग्यौ ।

नव शब्द-निर्माण की कला, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ अन्यान्य उर्दू-संस्कृत भाषाओ के शब्दो के प्रयोग ने लेखक की निपुणता और विद्वता का बोध कराया है —

नव शब्द —[illegible], गिदलियोडी, गिटकीजगी, निट किलिया, पेंखडिजियोडी, [illegible], ग्रमटोना, ग्रोल्यिावटा, वतिगी, चिल्पटिया, गदावा, तावाडण, खाम-खोगगी, [illegible], भगभूग, अधगावगी, टणवागी, ग्रदाग्रोलिया, मातमपुरसी, गुडी ।

उर्दू शब्द — [illegible], कुदरत, [illegible], आवाज ।

संस्कृत शब्द —सन्यागत, उत्थान, प्रथा, श्री-मुख, पारगत, प्रचण्ड ।

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द —[illegible], मगमी, पानर, फिटली, निमटी, [illegible], मदूग, मोगनो, गाजग, नोनर, पोमीजग, कुरानग, [illegible], [illegible], फिटोडपणो, [illegible], डोनगो, लागत,

1 [illegible] पृष्ठ ३१३ (द्वितीय भाग)
2 [illegible] पृष्ठ [illegible] (द्वितीय भाग)

मोकला, होवन्डा, भिमरिया, गुटलका, सीरका, उगराम, नचकारणा, खपी।

प्रथम भाग के पृष्ठ २९ पर राजस्थान के हो पेडो के नामकरण से लेखक का राजस्थानी संस्कृति के प्रति अगाध ज्ञान और उसकी निष्ठा प्रकट होते हैं। लेखक की दार्शनिकता भी कई स्थानो पर प्रकट हुई है—

"फूल समझनै हाथ घाली जकी ई डसै।..........दूध तौ आकडा री ई धोलौ व्है गाय री ई धोलौ व्है। पछै धोला धोला री भरम क्यूं ?" [1]

लघु वाक्यावलि से नवनिहित भाषा-सौष्ठव भी स्थान स्थान पर निखरा है [2]—

"भवातडा री खूंडाली भेस्यां। काली भवर। हथणिया रै उनमान माच्योडी। सींग जाणै ईढाणिया। मूंडा हिरणिया ज्यूं। ओछी गोडिया। थण मूकिया। कवली अर लाम्बी पूंछा। पतली चाम। गलै वालला। सातूं भेस्या रै एक सरीखी रूपाली पाडिया।"

(ख) कमियाँ—इस उपन्यास की सृष्टि एक विशेष राजनीतिक विचार-धारा मार्क्सवाद से प्रेरित होकर की गई है। परिणामस्वरूप कई स्थलों पर वर्णन अतिवादी रूपो एव लेखक के विशेष राजनीतिक विचारो के आग्रह के कारण अस्वाभाविक-से बन गए है। विशेषत राजाओ की मूर्खता और चापलूसों की चाटुकारिता का जो वर्णन हुआ है, वह अत्यन्त अतिरंजनापूर्ण लगता है। क्षेत्र विशेष के लोक-विश्वासो एव मान्यताओं के साथ साथ उस अचल की परम्पराओं का भी विशेष प्रभाव आंचलिक उपन्यासो में मिलता है। इस दृष्टि से यह उपन्यास इस प्रवृत्ति से परे नही कहा जा सकता। राजस्थान के सामन्ती-समाज विशेष रूप से राज-दरबारो तथा सामन्तो से सम्बन्धित जीवन का प्रभावी चित्र तथा राजा के दैनन्दिन-जीवन के आचरण, प्रजा और उनके सम्बन्धो तथा राज्य-सचालन-विधि मे स्थानीयता का रग विशेषत उभर कर सामने आए है जो लेखक के एकाङ्गी दृष्टिकोण की पुष्टि ही है। उपन्यास के अन्त मे न तो बादल और बिरखा का विवाह बताया तथा न ही भटियानी तथा राजा से मिलन। राजा ने भटियानी (रूठारानी) से माफी क्यो नही मागी ? भटियानी उस समय वहाँ थी जब राजा ने माफी मागते हुए कालो मीनी के चरण पकडे ? "मा री बदलो" भाग १ के १५६-५७ तथा २९३ पृष्ठों पर किया गया रूप-वर्णन पुनरावृत्ति मात्र है। "आठ राजकुवर" उपन्यास मे दिए गए रूप-वर्णन की नकल मात्र है। "धागो से पिलाय छोड्या" वाक्यांश का स्थान स्थान पर प्रयोग बडा असगत-सा लगता है। प्रथम भाग के प्रारम्भ मे दिए गए कविताओं की निरर्थकता तो है ही साथ ही सरलता का अभाव भी। प्रथम भाग के पृष्ठ २२० से २२२ पर प्रेम के विषय मे कालो मीनी के अण्टसण्ट प्रश्न तथा पृष्ठ २७९ पर

---

1 मा री बदलो · पृष्ठ सख्या १६५ (दूसरा भाग)
2 वही पृ स १५५ (प्रथम भाग)

राजा के मुख से बेवकूफी की बातें प्रकट कराना अनुपयुक्त एव भद्दा है। प्रथम भाग के पृष्ठ २१८, २३१ और २३३ पर वर्णित काम-वासना का उग्र रूप तथा द्वितीय भाग के पृष्ठ २७९, २८० तथा २९१ पर वर्णित अश्लीलता के वाक्य उपन्यास की शोभा को न्यून करने मे सहायक हैं—

(i) "दीवाणजी नै आज ठा पडी के लुगाई रा निवास जैडी निवास वासदी रौ ई नीं है।" [1]

(ii) "दीवाणजी नै कदै ई गाला माथै कवला कवला केसा री चोवणी परस लखावती अर कदै ई कदै ई· ······" [2]

(iii) "दीवाणजी कह्यो—म्हनै नवी लुगाई री भावड है इज घणी।" [3]

कामवासना मे लिप्त राजा ने अपना मुकुट और नौलखा हार भी काली मौसी के कुत्ते को पहना दिए। अपना पूर्ण राज्य भी भटियानी (गूजरी) के सौन्दर्य को प्राप्त करने हेतु न्योछावर करने को तैयार होगया। अतिशयोक्तिपूर्ण वाक्यो से स्पष्ट है कि लेखक पर हिन्दी के रीतिकाल का पूर्ण प्रभाव है। अधिक मात्रा मे प्रयुक्त ये अतिशयोक्तियाँ अनुपयुक्त लगती है। कुछ अतिशयोक्ति-पूर्ण वाक्य ये हैं—

(i) भटियाणी सूरज साम्ही मू डो कर्‌यो, उण वेला सूरज री ई आख्या चू धीजगी। वो बादला मे आपरो मू डो ढक लियो।" [4]

(ii) "उण रै डील री सौरम सू फूला नै पैली बार महकती सौरम मिली।" [5]

(iii) "इन्दर लोक री अपछरा रै उनमान। रूप कमरा मे मावतो नी हो।" [6]

कुछ अध्यायो की अनावश्यक सृष्टि ने उपन्यास को अधिक लम्बा और नीरस-सा बना दिया है—

प्रथम भाग मे —सोनै री सूरज, लुगाई री जमारो, मामी री कालायो, लुगाई री मरजादा, मामी री सीख, प्रीत री लेखो, प्रीत री मरजादा, नगर रा वासी।

द्वितीय भाग मे —जच्चा री मोद, निछोर री मोड, सोना री सूरज, राजा राजा देस नगर इत्यादि। जिस प्रकार एक मातृभक्त बालक,

---

1 मा री बदलो पृ स २७९ (दूसरा भाग)
2 वही पृ स २८० (")
3 वही पृ स २९१ (")
4 वही पृ स ८९ (")
5 वही पृ स ५० (")
6 वही पृ स ३४३ (")

अपनी माँ का, पिता से प्रतिशोध लेता है—इस उपन्यास में विवरण मिलता है। दो भागों में विभक्त यह उपन्यास राजस्थानी-साहित्य को अनेक युक्तियाँ प्रदान करते हुये पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है, जिसमें अत्यन्त मनोरंजकता के साथ न्याय-अन्याय का समुचित दृश्य उपस्थित करने में लेखक ने रोचक और सरल भाषा का प्रयोग कर राजस्थानी-साहित्य की महिमा बढ़ाई है। इसमें इसके कतिपय दोष तो स्वत ही लुप्त हो जाते हैं।

मैकती काया : मुळकती धरती[1]

कथा-सारः—दस परिच्छेदों एव अन्त में "अणचीती ऊवर्योडी" शीर्षक के अन्य दो और परिच्छेदों में विभक्त इस उपन्यास की कथा का सार इस प्रकार है—

एक ब्राह्मणी के हरिया और गोरधन नामक दो लड़के थे। हरिया छोटा, चचल और कमजोर था परन्तु गोरधन बड़ा था। यह दफ्तर में काम भी करता था। एक दिन माँ के कहने पर गोरधन अपने गाँव के पास के जगल में रहने वाली एक सुथार जाति की बुढ़िया के पास कढ़ी और खिचड़ी लेकर गया। बुढ़िया बीमार थी। बुढ़िया से उसके पूर्व की कहानी पूछी। बुढ़िया ने इसे स्पष्ट भी किया।

बुढ़िया पास के ही एक छोटे-से गाँव में ब्याही हुई थी। उसका पति भोला-भाला था। बुढ़िया के विधवा देवरानी थी जिसका नाता (पुनर्विवाह) उसकी ननद बुढ़िया के पति के साथ करना चाहती थी। एक दिन ननद ने जाल रच कर बुढ़िया को उसके पीहर भेजा। बुढ़िया अपने तीन वर्ष के बच्चे को ननद के भरोसे छोड़ पीहर गई। भाई और भोजाई की तबियत स्वस्थ देख कर वह उसी दिन रात को घर आगई। रास्ते में एक राजपूत की साड (डाची) पर बैठ कर आने पर ननद ने झूठे आरोप लगाकर उसे घर से निकलवा दिया। उसका बच्चा वहीं रख लिया गया।

बुढ़िया ने उसी राजपूत को धर्म का बाप बना लिया। वह राजपूत बड़ा सीधा था जिसने एक विधवा ब्राह्मणी की बेटी की इज्जत लूटने को उतारू हुए गाँव के ठाकुर के लड़के तथा एक दरोगे को गोलियों से मारा और वेश्या बनने को तैयार उसकी माँ की हत्या कर डाली। उसी दिन उसने गिरफ्तारी के भय से गाँव छोड़ दिया था। वह तभी से ऊट पर फिरता रहता था। इसी ने रास्ते में मिलने वाले वन-बावरियों को मार कर सुथारी, जिसका नाम राजपूत ने सुगनी रख दिया था, की रक्षा की। बाद में वेश्यावृत्ति करने वाली एक नाइन तथा बच्चों को चुराने वाले एक दरोगे को राजपूत ने मारकर चौधरी के बच्चे को साथ लेकर चौधरी को सौंप दिया। सुथारी को एक प्याऊ पर रहने वाले वृद्ध-वृद्धा दम्पति के पास छोड़ कर जोधपुर के महाराज प्रतापसिंह द्वारा दिए गए गाँव में रहने लगा। वृद्ध ने भी सुथारी की इज्जत पर हाथ डाला परन्तु असफल रहा। एक दिन वृद्ध-वृद्धा दोनों चल बसे। इसके बाद एक थानेदार की बेटी से भी सुथारी

---

1. सामाजिक उपन्यास : लेखक-अन्नाराम 'सुदामा'-१९६६ ई० में धरती प्रकाशन, उदयरामसर (बीकानेर) से प्रकाशित।

की मुलाकात हुई। थानेदार द्वारा ली जाती हुई इज्जत से सुथारी उसकी बेटी द्वारा बच गई। तत्पश्चात् वे दोनो तीर्थों मे घूमी। कुछ समय के बाद सुथारी अकेली एक कुटिया मे रहने लगी। वहाँ इसे एक कोढी स्त्री द्वारा बहुत से चाँदी के रुपये मिले क्योंकि उसकी इसने बहुत सेवा की थी। वे रुपये और अपनी जमीन सुथारी ने गोरधन के नाम कर दिए। गोरधन ने इन सब को रक्षा-कोष मे दे दिया। सुथारी का बेटा गोरधन सुथार गोरधन ब्राह्मण के दफ्तर मे ही लिपिक बना। ज्ञात होने पर उसे उसकी माँ से मिलाया। इसके बेटे से ही ज्ञात हुआ कि उसकी बुआ, बाप आदि मर गए। सुथारी द्वारा पता पडा कि वह राजपूत (धर्म का बाप) भी मर गया। रुग्ण-शैय्या पर पडी माँ से मिलने हेतु गोरधन सुथार गया। सुथारी माँ आँखों से आँसू टपकाती बिना कुछ बोले ही मर गई। गोरधन सुथार रोता ही रह गया।

कीमा तेली तथा उसके द्वारा दिए गए कुत्ते की कथा द्वारा उपन्यास को निरर्थक रूपेण बढा दिया गया है। वैसे कथा १६९ पृष्ठ पर ही समाप्त हो जाती है।

समीक्षा :–(क) विशेषताएँ —इस उपन्यास मे लेखक का धरती के प्रति प्रेम और जातीय एकता का अमिट सन्देश प्रकट हुआ है। 'रोही रा भोमिया' की तरह अहर्निश जगलो मे घूमते बापू के जीवन-पृष्ठों को अङ्कित करने मे स्वत ही मरु-भू और मरु-प्रकृति का सुन्दर और विशद चित्रण लोक-मान्यताओ एव लोक-विश्वासो का अकन लेखक की आंचलिक-प्रवृत्ति को भी प्रकट कर देते है जिसका राजस्थानी उपन्यास-साहित्य मे अभाव-सा ही है। इसमे कथा का विकास ही इस ढग से हुआ है कि कीमा बाबा के प्रसग से पूर्व तो पाठक कहानी मे ही इस प्रकार खोया रहता है जिससे उसे कही भी यह प्रतीत नही होता है कि कोई कल्पित कहानी उसे कही जा रही है। घटनाएँ स्वाभाविक रूप से एक के बाद एक घटित होती रहती है।

लेखक ने सत् और असत् प्रवृत्तियो के प्रभावो को प्रमाणो द्वारा स्पष्ट करने की चेष्टा की है। जितने भी असत् प्रवृत्ति वाले पात्र आए हैं, उन सभी को सड सड कर मौत के शिकार बना कर ऐसे कार्यों मे जनसाधारण को विरत करने मे विशेष प्रयत्न लेखक का है। असत् प्रवृत्ति वाले पात्रो मे दुराचारी ठाकुर, उसके सहायक, वाममार्गी साधक और उसकी सहयोगिनी को तो रास्ता दिखला दिया। इसके अतिरिक्त जीवन भर विषय-विकारो मे फसे रहने वाले 'धा' वाले बाबा और विधवा ढांगिन जैसे पात्रो को अपने अन्त समय मे सड सड कर मरता हुआ चित्रित कर यह बताने की चेष्टा की है कि असत् कार्य करने वालो की मृत्यु सदैव दुरवस्था मे ही होती है। 'क्षतात् त्रायते इति क्षत्रिय' अपने क्षत्रिय धर्म का निभाने वाले राजपूत के चरित्र को उपन्यासकार ने बडा पावन एव सुन्दर बनाया है जो उपन्यास का एक प्रकार से केन्द्र बिन्दु है। यह राजपूत सदैव स्त्री-

जाति पर होने वाले अत्याचारो को नष्ट करने मे प्रतिपल तत्पर रहता नजर आता है। इसने उपन्यास की महत्त्वपूर्ण स्त्री-पात्रा सुथारी को जीवित रहने का मंत्र पढाया और इसी ने एक विधवा ब्राह्मणी की बेटी के लुटते सतीत्व की रक्षा की जिसके लिए इसे अपने घरतक को त्यागना पडा। राजपूत द्वारा विधवा ब्राह्मणी की बेटी की इज्जत बचाना, ससुराल से निकालने पर सुथारी द्वारा खेजडी के वृक्ष को दुःखपूर्ण बाते सुनाते हुए राम राम कर प्रस्थान करना, काम-वासना की बुराई करना, प्राकृतिक शोभा का वर्णन, कीमा बाबा के पोते और अरजन दादा की दोहती किसना की तुतली बोलियो का जिक्र, सुथारी की मृत्यु के वक्त उनके पुत्र गोरधन सुथार को वहाँ ले जाकर मिलाना तथा प्रारम्भिक पृष्ठो पर हठी और नटखट बच्चो पर माता की खीझ—इन सभी तथ्यो का लेखक ने सागोपाग वर्णन किया है जिसमे कृत्रिमता बिल्कुल भी न आ पाई है। सातवे, आठवें और नवें परिच्छेदो से उपन्यास के शीर्षक की सार्थकता पूर्णत. स्पष्ट हो जाती है। थानेदार की बेटी के साथयात्रा करने पर सुथारी को प्रकृति की शोभा एव सुन्दरता का सही ज्ञान होता है जिसका जिक्र, वह स्थान स्थान पर करती है। उपन्यास के प्रारम्भ का तरीका लेखक का अपना मौलिक ही है। सुथारी नानी अपनी सारी जीवन-गाथा ब्राह्मणी के बेटे गोरधन को सुनाती है। उपन्यास की कथा का तालमेल उपन्यासकार ने ग्रामीण वातावरण के साथ पूर्ण रूप से सही बिठाया है। प्रारम्भ से अन्त तक ग्रामीण वातावरण मे झूलती कथा राजस्थानी सस्कृति एवं सभ्यता की विशेषताओ की प्रतीक बन गई है। लेखक मे शब्द-निर्माण का कौशल भी विद्यमान है—मिजला, घोगाल, भिदलो घुरडको, अकूणी, भण्डणा, पोलाऊँ, दूघट, छोत, इचाँवडो, निमधा, धूणोधुवा, एढो, पल्लूरया, उधप, मीथली, सौंक, उकडबुकड, उपाली, ओखर, ओखरडै, ऊँलापण, अणमिणती, स्याणप नै।

पहावतो, मुहावरो एव उपमाओ के आधिक्य से उपन्यास की भाषा बडी सरस तथा सुन्दर बन गई है—

बाढी आगली पर ही को मूतैनी, अैठवाडै रो हूण्डो बामै ज्यूं, मगयोडी खीचडी दाता चढै, आख्या मैनी कोडी-सी माय बैन्योडी, तरवर सो सीधो अर जम सो ऊचो नाक, पाछो मचली खनै जाय बैठ्यो जाणै कोई एकानणी बूटो साधक होवै, कालजै रै किवाडा रै मजबारणै रो तालो लागग्यो, आ म्हारै म न मे बैठगी दमत्याल मे आवण आलै नवाल दाई, ईनै म्हारै मन में ही हू गवरली जिया नन्हो ओटयोडे बालनैनै, जू चालै ज्यू चालती ही, वो डावण रो इग्यो टर लागतो हो जिया सुवै छोरै नै हूटगिये मास्टर री, कालो मूटो लीला पग, भोलो मीन दुममरण री गरज पालै, खब म्यू कूरलो अर उदास दीसै हो जिका म्हारै दाई खाणो देर रोयोडो हुवै, तेली म्यू खल उतरणी गोधी आवो अर भला ही गधा, चिलक्या सो मोती, काल्यो कूत्यो दपाल हुव्याने, आभै म्यू कूलयोडी अणगिण अपसराया-सी

बाजरी खडी ही, पीछ्या पैंमसला-सी देखी, ठोडी दसैरी आम गी गुठली-सी निकलगी, ज्यारो पड्यो सभाव कै जामी जीव स्यू , छकडी कम हुगी, एकर हू चुप हुग्यो जिया वीजली गयोडो रेडियो, कबूतर नैं कुओई दीसै, एक खानी चांद रो मू ढो पीलियै रो रोगी रो-सो, आप कमाया कामडा कीनैं दीजै दोस, चोर री मां घडै मे मू ढो घाल परो रोवै, टीनापाल दियोडी-सी सपेत भक भेडा, बूकिया री नाडा चिलकै ही जिया सीता पर छोरा चालता ही कोयला स्यू लीका काढ दिया करै, सिर जाय लो मूलै री का'पी सो, ठोडी छाल्योडी कैरी-सी। कवर मा'व अर दरोगै रा माथा एक एक हाथ मे डया छेडै उछल पड्या जिया मुक्की री ठोवया खोपरै री चिट-वया, छोरा-छोरी औगुणा सू इया भऱ्या है जिया फूड रण्डार रो माथो लीख अर जु आ स्यू भऱ्यो हुवै।

लघु सवादो को स्थान देना भी उपन्यासकार नही भूला है —[1]

की गे है ओ ?
एक जाट रो।
काई नाम है वीरो ?
खेतो ।
गाव अठै स्यू ?
अधकोसेके उतराधो।
थारै कनै किया आयो हो ?
एक नायण ल्याई है ईनै।
कठै है वा ?
वारै ऊभी हुवैना।
क्या खातर ल्याई वा ?
वीरै टावर को होनी।

गिट्टण, टागल्यै, बिण्डी, मैणो, ढोर ई, मोरो, छेकडला बीसीजग्यो, मठार मटार, वमजमीजती, हियाली, इनला-मिला, बापरयोनी ओडी, फीटी, बरेपो, भाटीजग्या, गीत, गोटाळो, नीरी, हुणै, मिचाण, रली टोर इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों के प्रयोग पर भी लेखक का पूर्ण ध्यान है। पाठको को ऊबने से बचाने हेतु कुछ हास्य-व्यंग्यियाँ भी बिखरी हैं —

१ एक गोलरिणयो अ बेरै मे दौडग्यो, काणो होनी-चालाक मरै हो।[2]
२ मूरखाँ रो पाप न्यारो, बाल्मण जोगी घाट रे पगोथियै पर मीट-

1 मैली काया मुळकती धरती पृ सं ७८-७९
2 " " " " " पृ सं ५९

की-सी बैठी मरै । जच'र जुगत स्यू किमी'क बैठी है—टक्की-सी,
जाणू आमरण ई खातर ही है ।[1]

३ "नहीं नही, रोवण जोगा तू गाय-धाय को है नी-गोधो मरै ।"[2]

(ख) कमियाँ:—राष्ट्र-प्रेम एव साम्प्रदायिक एकता का आदर्श प्रस्तुत करने की दृष्टि से ही कीमा बाबा के लगभग ४० पृष्ठो के प्रसग का अनावश्यक विस्तार पाठको को उबाने (उकताने) का कार्य किया है । उर्दू और सस्कृत के शब्दो का खुलकर प्रयोग किया गया है जिससे राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता तथा सरलता पर आघात पहुँचा है —

उर्दू शब्द —मौजूद, आबरू, बख्शी, कुदरत, जरूरत, अन्दाज

सस्कृत शब्द·—निधि, हत्या, सन्तोष, समाधान, प्रेम, व्यथा, प्राण, अवस्था, सम्बन्ध, अन्त करण, उद्धार, जगदम्बा, ब्रह्मानन्द, अखण्ड, पुष्ट, अभ्यागत, शान्ति, निमित्त, रमणीक, कष्ट, पीताम्बर, अनादर, मनोकामना, सद्गति, अबोध, आराधना ।

'ष' और 'श' का प्रयोग भी उपन्यास मे किया गया है क्योकि राजस्थानी मे ये वर्ण नही है—

शास्त्रार्थ, विश, सन्तोष, विष्णु, शालग्राम, हमेशा, परवश, शरण, दोष, निर्दोष, कष्ट, पुष्टि, बख्शी, शूलाँ ।

"मैं" सर्वनाम का अनेक स्थलो पर प्रयोग अनुपयुक्त है । इसके स्थान पर "म्हू" या "हू" का प्रयोग होना चाहिए था ।

विधवा ब्राह्मणी की बेटी तो राजपूत के घर मे धर्म की बेटी बनकर सदा के लिए रह गई । परन्तु ठाकुर के पुत्र तथा दरोगे की हत्या करने पर ठाकुर आदि ने उस हत्यारे राजपूत को पकडवाने हेतु प्रयास क्यो नही किए ? क्या पुलिस से कोई व्यक्ति छिपा रह सकता है ? उपन्यासकार इसमे मौन है । घर से सुथारी को लिए हुए निकले राजपूत के पास बनजावरियो को मारने हेतु पिस्तौल कहाँ से आई ? हाँ, चलते समय बन्दूक और तलवार का तो जिक्र अवश्य किया गया था परन्तु पिस्तौल का नही । राजपूत द्वारा सुथारी सुगनी को "सोने मे सुग ध ' कहावत को चरितार्थ करने वाली कथा कहने तथा कीमा बाबा और कुत्ते का वर्णन करने के कार्य उपन्यासकार ने व्यर्थ मे ही किए हैं । उपन्यास की मूल कथा पृष्ठ १६९ पर ही समाप्त हो जाती है फिर भी लेखक उसे व्यर्थ मे ही २१४ पृष्ठो तक घसीट ले गया है । जिसमे उपन्यास अनावश्यक रूप मे बडा बन गया है । भाषा पर क्षेत्रीयता (बीकानेरी प्रभाव) लक्षित है । यह एकागी दृष्टिकोण अनुचित है ।

---

1 मैकती काया मुलकती धरती—पृ स ६६
2 " " : " " पृ. स १०७

पृष्ठ १४४ पर गोरधन द्वारा पूछी बातो का रहस्य सुथारी नानी ने क्यो नही बताया ? कुछ बातें तो वह बता चुकी थी परन्तु कुछ रह गई थी। ये शेष बातें शायद सुथारी के बेटे गोरधन सुथार द्वारा सुनानी लेखक को इष्ट होगी। इसी के मुख से इनमे से अधिकाश बातें प्रकट हुई हैं। राजपूत द्वारा सतीत्व की रक्षा की गई वह विधवा ब्राह्मणी की बेटी पूरे जीवन उसकी बहू के पास ही रही क्या ? लेखक ने तो एक ही बार उसका जिक्र कर चुप्पी साध ली। गोरधन ब्राह्मण के पूछने पर भी सुथारी ने अपना नाम क्यो नही बताया ? सभवत लेखक भूल गया होगा। रक्षार्थ वचनबद्ध उस राजपूत ने सुथारी को धर्म की बेटी बनाकर प्याऊ मे रहने वाले वृद्ध-वृद्धा के पास रहने के लिए छोड दी। काफी समय के बाद भी राजपूत ने हत्या का अपराध जोधपुर-नरेश द्वारा माफ करने पर भी न तो अपने घर की सुधि ली और न ही उस सुथारी की। क्यो ? उपन्यासकार इस बात को भूल ही गया है। उपन्यास के प्रारम्भिक पृष्ठो मे गोरधन ब्राह्मण के छोटे भाई हरिया तथा सुथारी के ससुराल मे रहते वक्त उसकी देवरानी को उपन्यासकार ने याद किया। इसके बाद तो लेखक को जैसे इनकी कोई आवश्यकता ही नही रही हो—इन्हे याद तक नही किया। यदि वे अनावश्यक पात्र थे तो उपन्यासकार ने इन्हे एक बार ही याद क्यो किया ? उपन्यासकार इन्हे निर्धारित एव निश्चित स्थान देना भूल ही गया है। उपन्यास के नामकरण की सार्थकता उपन्यास की समाप्ति तक भी नही हो पाती है। खींचातानी कर भले ही इसकी सार्थकता को सिद्ध कर लो। इस उपन्यास का नायकत्व भी झमेले मे पडा हुआ है। नायक कौन ? यह बताना या पता लगाना मुश्किल है। नायकत्व का भार या सौभाग्य न तो सुथारी नानी को मिला और न ही गोरधन ब्राह्मण को। फिर किसे ? उपन्यास की क्या मौन है। कुछ बाते बडी अटपटी है। जैसे —

१ 'मरने के लिए खीचडी खायेगी'' [1] मुहावरे का प्रयोग अनुपयुक्त है।

२ "थी चेन्ना पढी-लिखी लुगाई नै गावा मे लोग कोकला सामतर भण्योडी कैवता।" [2] यह कैसे ?

३ 'लुगाई री अकल एडी मे हुवै आ भी कर दिखाई।" [3] इसे भी कौन स्त्री स्वीकार करेगी ?

शुद्ध ग्रामीण वातावरण मे ओतप्रोत यह उपन्यास लेखक का एक नया प्रयोग है। आकर्षक नाम और आदि-अन्त का प्रस्तुतीकरण उपन्यास के सौन्दर्य-वृद्धि मे सहायक है। सोरठो गुण-समृद्ध वाला यह उपन्यास राजस्थानी-साहित्य की

---

1 मैरनी नाना सुथारी धन्नो पृ स ८२
2 " " " " पृ स [illegible]
3 " " " " पृ स १०८

अक्षुण्ण निधि की पूर्ति करने वाला तो है ही साथ ही इसमे निहित किञ्चित् दोषो के प्रदर्शन की क्षमता भी यह रखता है। दोषागमन एक दिखावा है परन्तु गुणा-गमन वास्तविकता।

धोरां री धोरी[1]

कथा-सार:—इटली निवासी डा. लुइजी पिओ टैसीटोरी की जीवनी पर आधारित यह उपन्यास २१ परिच्छेदो मे विभक्त है। टैसीटोरी को राजस्थान से विशेषत: बीकानेर मे मोह था। बीकानेर मे ही इनका निधन हुआ। वहाँ इनकी कब्र भी है। राजस्थानी भाषा का अध्ययन भी टैसीटोरी ने किया। २१-२२ वर्ष की उम्र मे "रामचरितमानस पर वाल्मीकि रामायण का प्रभाव" पर पीएच॰ डी॰ की।

टैसीटोरी के पिता जर्मनी मे रहते हैं। दो बहिनो मे एक अविवाहिता तथा दूसरी विवाहिता हैं। छोटा भाई एम॰ ए॰ का छात्र है। मां इटली के यूटीना नामक कस्बे मे रहती है। डा॰ ग्रियर्सन की सिफारिश से फ्लोरेंस विश्वविद्यालय से पीएच॰ डी॰ करने के बाद भारत आने का सौभाग्य मिला। यूटीना निवासी धनी बाप की बेटी डोरोथी ने अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति टैसीटोरी के चरणो मे रख कर भारत जाने से रोकना चाहा परन्तु टैसीटोरी नही रुके। वापिस आने पर डोरोथी से शादी करने का वादा कर मां-बाप से स्वीकृति लेकर डोरोथी से अंगूठी (निशानी) लेकर जहाज से बम्बई आते हैं। बाप की इकलौती बेटी डोरोथी टैसी-टोरी की सहपाठिनी थी। टैसीटोरी ने कलकत्ते जाकर एशियाटिक सोसायटी मे सम्पर्क किया। जोधपुर मे लोगो की ईर्ष्या के कारण अधिक नहीं रुक कर बीकानेर आए। यहाँ गंगासिंहजी का काफी सहारा मिला। बीकानेर किशोरदान बारहठ सहयोगी रहे। टैसीटोरी ने देशनोक मे करणी माता के दर्शन कर "वेलि क्रिसन रुकमणी री" पर राजस्थानी मे चर्चा की। जागलू गांव के एक चारण के साथ जाकर राब और रोटी का स्वाद चखा। टैसीटोरी ने राजस्थानी व्याकरण भी लिखा।

बीकानेर मे धन्नेसिंह दरोगा का लड़का पन्ना टैसीटोरी के लिए खाना बनाता था। पन्ना की शादी होने पर उसकी मां तथा बहिन रतन ने खाना बनाने का कार्य किया। टैसीटोरी रतन तथा पन्ना की मां से लोकगीत सुन सुन कर लिखते रहते थे। टैसीटोरी सूमल की ट्यून, जीणमाता का गीत को बहुत पसन्द करते थे। पन्ना के पिता के मरने पर इनके परिवार पर टैसीटोरी की कृपा थी। रुपए भी उधार दिए तथा रतन के अन्तर्जातीय विवाह पर होने वाले झगड़े को शान्त

---

1. सामाजिक उपन्यास, लेखक श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर द्वारा १९६८ मे प्रकाशित।

किया। टैसीटोरी ने आस-पास मे घूम-घाम कर मूर्तियाँ इत्यादि एकत्र कर सग्रहालय बनाया तथा स्वय का पुस्तकालय भी बनाया। बीकानेर मे लगभग ५ वर्षों तक रह कर राजस्थानी पर काफी कार्य किया। पाँच वर्षों की अवधि मे इसकी बहिन मेरिया की शादी, छोटे भाई तथा माँ की मृत्यु और विरह मे जल जल कर डोरोथी का मरना इत्यादि दुर्घटनाएँ घटित हुई।

इधर शादी होने पर पन्ना पढाई छोड देता है। पन्ना की माँ मर जाती है। मरते वक्त रतन की शादी का वादा टैसीटोरी से ले लेती है। पाँच साल बाद टैसीटोरी इटली जाते है। माँ तथा डोरोथी की मृत्यु से दु खी होते हैं। बाद मे वापिस भारत आते हैं। रास्ते मे बीमार पड जाते हैं। रुग्णावस्था मे ही रतन की शादी हेतु २०००) रुपयो की सहायता देते हैं। टैसीटोरी ठीक न हो सके। १९१९ नवम्बर मे टैसीटोरी का देहान्त हो चुकता है। इटली के साथ स्वय राजस्थान भी इसकी मृत्यु से रो पडा। मृत्यु के वक्त १५-१५ वर्ष के तीन बच्चो ने इनके अपूर्ण कार्यो को पूर्ण करने का प्रण किया।

समीक्षा.– (क) विशेषताए —इटली जाने पर इटली तथा भारत आने पर भारत की मिट्टी को सिर से लगाने से टैसीटोरी की मातृ-भूमि के प्रति अगाध आस्था तथा "वसुधैव कुटुम्बकम्" की भावना प्रकट होती है। अपनी माँ के प्रति आदर का भाव तो उपन्यास की प्रारम्भिक पक्तियो मे ही प्रकट हो जाता है —

"माँ मनै आसीस दै, तू मुलक, अर मनै थारी छाती सूं लगा। काल हू नेपल्स ज सू अर भारत खातर वईर हुनू।" [1]

पृष्ठ ३६ पर डोरोथी द्वारा पैसो का महत्त्व, पृष्ठ ४५ पर प्रेम का महत्त्व, पृष्ठ ५० पर जीवन मे चरित्र का मूल्य, पृष्ठ ५४ पर टैसीटोरी का भारत-भूमि के प्रति आदर-भाव और उसकी निष्ठा, पृष्ठ ८२ पर टैसीटोरी का राजस्थानी संस्कृति का ज्ञान, उसका सस्कृत, शास्त्रीय विधियो, वैवाहिक सामग्री तथा लोक-गीतो का ज्ञान सराहनीय रहे है। लेखक द्वारा आदर्शवादी दृष्टिकोण रखने के कारण टैसीटोरी न तो अपनी प्रेयसी डोरोथी को आलिंगन-पाश मे लेता है और न ही उससे शादी। यूरोपीय सस्कृति मे पली धनी माँ-बाप की बेटी डोरोथी अपनी करोडो की सम्पत्ति टैसीटोरी के चरणो मे न्योछावर कर अन्त मे उसके वियोग मे प्राण भी दे देती है। यदि लेखक का आदर्श काम नहीं करता तो डोरोथी किसी अन्य से विवाह कर लेती और टैसीटोरी भी उसे आलिंगन-पाश मे जकड लेता। पृष्ठ ८३ और ८४ पर हास्यात्मक वाक्य पाठको की उकताहट को रोकने के प्रयास करते है —

१ "पिताजी ब्याव तो करायो पण घणा सा'क स्यम्ति मन्या नै ई

1 धोरां रा धोरी पृ स १

घडी घडी वार घोटता हा। उच्चारण भी खरो नईं हो, जिण में थोडो कसूर तो दाता रो हो जिका बुढापै मे दगो देयग्या, बाकी कसूर पिंडतजी रै माईता रो हुवैलो जिका पिंडतजी नै सावल पढाया नईं हुसी अथवा पिंडतजी टाबरपणै मे कोई उछाछला टाबर हुवैला।............वै झट बोल्यो ई—"आ देववाणी है, थे कांई समझो साव! एक सौ बावन मन्तर कठै याद है, ठेट इन्दर ताई पूगूं हूं।" [1]

२. 'मोथै नै रीस आयगी। वी छाती माथै इतो जोर सूं घमीड़ चेप्यो कै डाक्टर नै तीन दिना ताई तेल मालस करावणी पडी।" [2]

उपन्यासकार ने वैवाहिक अवसर पर मार्मिक गीत का बडी शान से उल्लेख किया है '—

लेग्यो टोली माय सू टाल, कोयलडी हद बोली ए।
इतरो बाबा सारो लाड, म्हारी बाई सिध चालीए?
रमती साएल्यारै साथ, छोड'र बाई सिध चालीए? [3]

पृष्ठ ९६ पर राजपूतो की जिद्द प्रवृत्ति तथा पृष्ठ ९७ पर टैसीटोरी का राजस्थान और राजस्थानियो के प्रति घनिष्ट आत्मीयता दिखलाने मे उपन्यासकार ने अपनी पूर्ण कुशलता का परिचय दिया है। टैसीटोरी की ईश्वर के प्रति स्थान स्थान पर आस्था प्रकट की गई है जो भौतिकवादी देशो को देखते हुए श्लाघ्य है।

उपन्यास के शीर्षक की सार्थकता सिद्ध करने वाला सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अध्याय १३ वां है जिसमे टैसीटोरी अपनी विषय-सामग्री हेतु धोरो धोरो (टीवों) पर विचरण करता रहा है। मां सरस्वती का सच्चा पुजारी ऊँट पर सवार होकर टीवो पर राजस्थानियो की अपेक्षा पुर्ती और कुशलता से घूम सका था। ऐसे शुष्क प्रदेश मे उसने घबराने और हिम्मत हारने का नाम तक नही लिया। अपनी अमर-साधना मे जुटा रहा, तल्लीन रहा तब कैसे हम उस टैसीटोरी को "धोरा रो धोरी" नही कहे। टैसीटोरी की आत्मा मे समय समय पर लेखक ने ये विचार प्रगट कराये है —

"राजस्थान रै धोरा री धरती मे ऊर्योडै अमोलक रतनां नै बारै काढर परकास मे लावणियो तू है, तू है, तू दिन रात काम कर। जे तै ओ काम अधूरो छोड दियो तो फेर पाछो कद सरू कर्‌यो जासी, अनिस्चित

1. धोरा रो धोरी पृ स ८३
2. वही पृ स ८५
3 वही पृ स. ८५

है। तू राजस्थान रै धोरां रो धोरी है, तू धोरां रो धोरी है।" 1

भाषा-विज्ञान के अनूठे विद्वान्, अपनी जन्मभूमि इटली के एक पुस्तकालय मे बिना गुरु की सहायता के केवल पुस्तको और अपनी विलक्षण प्रतिभा के सहारे विश्व की अनेक भाषाओ का अल्पावस्था मे ही अच्छा ज्ञान प्राप्त करने वाले, राजस्थानी को सर्वाधिक प्यार करने वाले, राजस्थान-भारती और वाङ्मय को सागोपाग जानने-समझने की भयकर भूख लिए, भारत की धोरो वाली धरती राजस्थान के विशेषत बीकानेर को अपना कर्मक्षेत्र बनाने वाले, विरल विद्याभ्यासी और राजस्थानी के दुलारे कर्मयोगी की जीवन-गाथा को विस्तृत रूप देकर उपन्यास साधुवाद के पात्र हो गए हैं। जोशीजी के लेखन मे गभीरता, सरसता और स्पष्टता की त्रिवेणी है। किसी वस्तु, घटना अथवा दृश्य को यथावत् शब्दो मे बाँधने की उनमे क्षमता है। उपन्यास की भाषा है सुरगी राजस्थानी जिसका प्रधान गुण है सरलता। उसमे मुहावरो की मिठास तो सर्वत्र है ही, कहावतो और लोकोक्तियो की मधुर भीनी महक भी पाठको की तबियत हरी कर देती है। चुटीले व्यग्य की एक निराली अदा देखिए—

"तू देखै कोनी, ऐ बडी बडी सभावा हुवै जिका मे सभापति फलाणचन्दजी, पूछडचन्दजी, ठीकडचन्दजी, पत्थरचन्दजी, भाटाचन्दजी। क्यू, आ मे इसी काई बात है? ऐ कोई भण्योडा घणा? का आरो चरित कोई ऊजलो घणो? नई। पण एक बल आ रै कनै है—पइसो। जे पइसो कनै नई हुवै तो आनै कुत्तोजी ई पूछै कोनी।" 2

मुहावरो, कहावतो एव अलङ्कारो की छटा भी कोई कम नही है—

पूत रा पग पालणै ई दीस जावै, सी पी रा आसू खटको उटाया मसीन बध हुवै ज्यू एकदम बद हुयग्या, लुगाई पळटती ताल को लगावैनी, तू चौपडयो घडो है, हथाळी मे आवळो दीसै ज्यू, रोग गुग्गी सू ऊभी हुयगी जाणै खुग्गी डोग नै उछाळ दी हुवै, हिरदै-भवन, कपट-गाठडी, गवर स्ठमी तो सुवाग लेसी, थारी मोडै हिमाळी गाडी है, चैरो इसो दीसै जाणै चूल्हैरी आंच सू तपर रसोइयै रो हुवै; रोग तमासा देखै अर टक्का गिणै, थारै वियोग मे सूखर मच्छी ज्यू हुयोडी, मौत रा समाचार सुणती मे नाय दई फैलग्या, राजपूता रो नाक कट जासी, लोग कैवे सीना रै रात हुवै, रोग हथियार न्हाख दिया, फूटरापो अर सुग्घडताई सागै सागै चालै, इसोरी तीन तीन राग उछरण लागगी, बीरै माथै धूड फिरगी, माथै मे घर करगी, राई परवत रा नाग तोड लायो। कुछ राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग दर्शनीय है —

---

1 धोरां रो धोरी पृष्ठ संख्या १०५

2 वही पृ स ३६

मीरको, पिताणी, जोला, वालगोठियो, अबोट, मत, एकलपी, फुरणनील, कोभो, फीसर, आघा, सैंधो, ईनको, ठालसा, डगठगाट, दोरी, रलै, ओलै, अण-तेड्यो, पाला पथरणो, अडकमोथो, सातरै, वायक, टापतो, धारागर।

लघु सवादो की लघु वाक्यावलि भी बडी मनोरम वन पडी है[1]—

खुमाणो—दूध आप हुकम करो जित्तो।

डाक्टर—क्यूं मालसी, कित्तो दूध चाईजै ?

मालसी—घणै री कारण कोनी, घर मे है जित्तो लिग्रावो।

खुमाणो—सेर भर ?

मालसी—हा, है जित्तो ई लिग्रावो।

खुमाणो—दो सेर ?

(ख) दोष:—कुछ भाषागत कमियाँ विचारणीय है—

१ "मोटियार रा नैण मीच्योडा अर वांरै माय सूं पाणी री एक एक धार वीरै दोनूं गोरै गाला माथै चमकती ही।[2]

इसमे "पाणी री धार" के स्थान पर "आसुओ री धार" शब्दो का प्रयोग ठीक रहता।

२. टैसी नमरता सूं वोल्यो"[3]—

इसमे "नमरता" के स्थान पर "नुलताई" शब्द ठीक रहता।

३. सस्कृत रै आदि कवि वालमीक री रामायण........"[4]

इसमे "आदि" के स्थान पर "पैलडा" शब्द का प्रयोग ठीक रहता।

४ स्थान स्थान पर 'दरोगी' शब्द के प्रयोग की बजाय "पन्ने री माँ" का प्रयोग होता तो सुन्दर लगता।

५ पन्नै री मा तथा मालसी के लिए 'डाक्टर' शब्द का शुद्धोच्चारण कठिन था। लेखक को इसके स्थान पर "दाक्दर" शब्द का प्रयोग करना चाहिए था।

६ पृष्ठ ११६ पर अशिक्षित दरोगी के मुख से 'इस्टेट' शब्द का उच्चारण करवाना अस्वाभाविक है।

७ "......ईमानदारी सूं पेट भरणियै कगाल नै हू एक वईमान....."[5]

यहा 'कगाल' शब्द के स्थान पर 'मगना शब्द का प्रयोग उचित था।

---

1. धोरा गे धोरी . पृ. स १०६
2. यही : पृ. सं. १
3. यही . पृ. सं. १७
4. यही . पृ नं २४
5. यही . पृ स. ३९

८ दरोगी के मुख से टैसीटोरी के लिए इन शब्दो का प्रयोग अनुचित है—
"थासू वडो म्हारो कोई मिन्तर अर हेतूलो भी कोनी ।"[1]

९ एल पी टैसीटोरी के भाई सी पी टैसीटोरी के लिए एक ही बात को समझाने हेतु दो अलग अलग ढग से कहने मे उपन्यासकार ने कैसी भूल की है —

(अ) 'सी पी लुगाया दई नैण झारण लागग्यो ।"[2]
(ब) 'सी पी छोरी दई रोवण लाग्यो ।"[3]

१० डोरोथी का पृष्ठ ३९ पर टैसीटोरी को 'लुई साव' कह कर एकदम 'डाक्टर' कह देना कितना अस्वाभाविक लगता है ।

अध्याय ४ तथा पृष्ठ ३३ पर डोरोथी के चरणो मे सेवा अर्पित करने वाला लडका कौन है ? इसकी क्या आवश्यकता थी ? लेखक ने कही स्पष्ट नही किया है । डोरोथी तथा दरोगी आदि के मुखो से बार बार 'डाक्टर' शब्द के सम्बोधन की बजाय "टैसी" शब्द का सम्बोधन अधिक स्वाभाविक रहता ।

पृष्ठ ३७ एव ३९ पर पू जीपतियो के महत्त्व पर प्रकाश डालने वाली डोरोथी को यह भ्रम कैसे हो गया कि वह पू जीपतियो की आलोचना कर रही है । वह स्वय कहती है—

"म्हारी बात सू तू आ ना समझै कै मनै पूजीपत्या सू विरोध है, वारै धन सू कोई जलण है ।"

पृष्ठ ४४ पर डोरोथी भारत-यात्रा के लिए रवाना हुए टैसीटोरी से बाते कर रात्रि मे घर चली जाती है । किन्तु प्रात ५ बजे उसी पृष्ठ पर डोरोथी टैसीटोरी की होटल मे प्रकट होती है ऐसा जादूगरी-सा दृश्य आश्चर्य एव अस्वाभाविकता को प्रकट करने वाला है । पृष्ठ ४८ पर डोरोथी के मुख से यह कहलाना उपयुक्त नही है—

"हे भगवान !—कैयर टोरा तुम्सी सू ऊभी हुयगी ।" "हे भगवान्" के स्थान पर 'ओ माई गॉड' या अन्य ईश्वरीय नाम उच्चरित होते तो ठीक रहता । पृष्ठ ४९ पर टैसीटोरी ने जहाज के प्रस्थान का समय अत्यन्त ही निकट बताया तब डोरोथी से उस समय के बाद भी इतनी बातें कैसे हुई ? इतनी बाते करने के बावजूद टैसीटोरी समय पर कैसे पहुंचा ? "धोरा रो धोरी" राजस्थानी मे ऊँट के लिए प्रयुक्त होता है । अत उपन्यास का नामकरण भी भ्रमात्मक है । डोरोथी के पक्ष मे इटालियन या अग्रेजी भाषा का प्रयोग स्वाभाविक था परन्तु उसमे राजस्थानी

---

1 धोरा रो धोरी पृ स ९८
2 " " पृ स ७८
3 " " पृ स २९

भाषा का ही प्रयोग किया गया है। अंग्रेजी या इटालियन भाषा के एक भी शब्द का प्रयोग नहीं किया गया है। डोरोथी को तो राजस्थानी भाषा का ज्ञान ही नहीं था। हाँ, टैमी को अवश्य था। टैसीटोरी ने भारत-यात्रा के लिए रवाना होते समय डोरोथी को साथ नहीं ले जाने का कारण नहीं बताया जबकि उस बात की पुष्टि भारत आने पर की गई। डोरोथी ने टैमी को साथ ले जाने को कहा परन्तु टैमी ने उनका प्रत्युत्तर न देते हुए जिज्ञासा शान्त नहीं की। ऐसा क्यों ?

जब रतन और उसकी माँ आदि खाना बनाने हेतु थी तो फिर टैसीटोरी ने मालमी को क्यों रखा ?

पन्ना के अध्ययन के प्रभाव को स्पष्ट नहीं किया गया है। भविष्य में पन्ना ने क्या किया ? वह क्या बना ? विवाह तो अध्ययन-काल में ही हो गया था। अध्याय १ तथा पृष्ठ १ पर टैसीटोरी की आयु भारत जाने से पूर्व २७ वर्ष की बताई गई है। पाँच वर्षों तक भारत में रहने पर ३२ वर्ष का हो जाता है। इटली जाकर भारत फिर आता है तो आयु ३२ से ऊपर चली जाती है जबकि भूमिका में लेखक ने उसकी मृत्यु ३१ वर्ष में होनी लिखी है—

"........इकतीस वरसा री ओछी आरवल में ई बीकाणे री धरा में सरीर छोड़ने डा टैसीटोरी आपरै अथक परिश्रम सूं अरज्योडी कीरत कारण सदा सरवदा सारू अमर बणग्या।"[1]

टैसीटोरी इटली से २७ सितम्बर को रवाना होकर ५ नवम्बर तक बीकानेर पहुँचता है। बीच का इतना समय वह कहाँ व्यतीत करता है—उपन्यास-लेखक ने स्पष्ट नहीं किया है। यात्रा में उसे इतना समय नहीं लगना चाहिए था। टैसीटोरी का पिता जर्मनी में रहता है—यह बात लेखक ने प्रारम्भिक पृष्ठों में स्पष्ट कर दी थी। परन्तु इसके बाद उसे याद तक नहीं किया गया। टैसीटोरी वापस इटली गए तो उसके पिता कहाँ थे ? वे जीवित थे या मर गए—लेखक ने कुछ भी नहीं बताया है। टैसीटोरी की मृत्यु के समय राजस्थानी भाषा की सेवा करने का सकल्प करने वाले १५-१५ वर्षों के वे तीन बच्चे कौन थे ? लेखक ने तो सिर्फ इतना ही कहा—

"इण मौके माथै १५-१५ वरसा रा तीन टाबर हाजर हा। वै एक दूजै रै सामा झाक्या।"[2]

पृष्ठ ४३ पर उपन्यासकार को ऐसी उपमा कैसे सूझी ?—

"मसाणा जिसी सांति कमरै में छायगी।"[3]

---

1 धोरा रो धोरी . पृ न. (भूमिका या "घर विध री")
2 वही : पृ सं १४२
3. वही : पृ स. ४३

सस्कृत तथा उर्दू के शब्दो के ज्यो के त्यो प्रयोग से राजस्थानी भाषा के ज्ञान को क्षति पहुँचाने का कार्य लेखक ने किया है —

उर्दू शब्द —कगाल, हिमायती, अजायबघर, आबहवा, गमगीन, अफसोस जरूरत ।

सस्कृत शब्द —विख्यात, आदि, लोकप्रिय, उपरान्त, साहित्यिक, अपलक, प्रोत्साहन, विवेचन, अतिशयोक्ति, जिज्ञासा, वामाङ्गिनी, स्वस्ति, सक्रिय, पारगत, स्त्रीलिंग, पुल्लिंग, अकारान्त, उत्कृष्टता, अलौकिक, उद्विग्नता, प्राकृतिक, आकर्षण, असाधारण, प्रतिज्ञा, सान्त्वना, असमर्थ, अभ्यास, धार्मिक ।

'श' तथा 'ष' का प्रयोग राजस्थानी भाषा मे नहीं हुआ करता है फिर भी लेखक ने कई स्थानो पर किया है । कई स्थानो पर लेखक की आँचलिक प्रवृत्ति भी झलकती है । भाषा के क्षेत्र के अतिरिक्त भावो के क्षेत्र मे भी यह प्रवृत्ति मिलती है । पन्ना के विवाह के वक्त इसके ज्वलन्त प्रमाण मिलते हैं । कतिपय भाव और भाषागत कमियाँ इस उपन्यास मे है तथापि एक पश्चिमी विद्वान् के राजस्थान और राजस्थान-वासियो के प्रति अटूट प्रेम का सागोपाग वर्णन औपन्यासिक रूप मे प्राप्त हुआ है, वह राजस्थानी-साहित्य के लिए बडी गौरवमयी बात है । उपन्यास को पढने से ज्ञात होता है कि नायक टैसीटोरी इटली निवासी नही अपितु राजस्थान-निवासी (विशेषत बीकानेर का) ही हैं । राजस्थानी-सस्कृति को अत्यन्त बारीकी से देखने वाला टैसीटोरी के अतिरिक्त अन्य कोई पश्चिमी विद्वान् नही मिलता है । ऐसे व्यक्ति पर उपन्यास लिखकर लेखक ने राजस्थानी-साहित्य की शोभा बढाई है ।

आभल्दे[1]

समीक्षा –(क) विशेषताएँ —यह राजस्थानी के दसवी शताब्दी के सास्कृतिक जीवन के परिप्रेक्ष्य मे लिखा गया एक ऐतिहासिक उपन्यास है किन्तु इसमें लेखक ने एक अचल विशेष की प्राकृतिक स्थिति एव वहाँ के लोक-जीवन के अकन मे जो विशेष रुचि ली है, वह इसे आचलिक उपन्यासो के धरातल पर ला खडा करता है । उपन्यास की मूल कथा से पूर्व जहाँ उपन्यासकार ने "आचलिकता एव इतिहास" शीर्षक के अन्तर्गत वहाँ की भौगोलिक स्थिति का विस्तार से परिचय दिया है वहाँ उपन्यास मे होली जैसे उत्सव को भी आचलिक रग मे रग कर प्रस्तुत किया गया है । राजस्थानी भाषा मे आचलिक उपन्यासो के अत्यन्त अभाव की पूर्ति मात्र मे सहायक है । आभल्दे का अचानक अपहरण, 'वीरमदे' शीर्षक अध्याय मे वर्णित घटनाएँ अत्यन्त ही मार्मिक बन पडी है । कई स्थानो के प्राचीन नामो का

1 ऐतिहासिक उपन्यास, लेखक—रामदत्त सांकृत्य, 'हरो' पाक्षिक पत्र मे [illegible] ई मे धारावाहिक रूप मे प्रकाशित ।

विवरण भी इस उपन्यास में मिलता है —

घाघू (चुरू तहसील), फोगा (सरदारशहर तहसील), द्रोणपुरी (गोपालपुरा-सुजानगढ तहसील), मालासी (सुजानगढ तहसील), रणधीसर (रतनगढ तहसील) लाखाऊ (चुरू तहसील), ब्रह्मसर (बिरमसर), स्यानण (सुजानगढ तहसील), चदेरी (लाडनू), भृतनेर (हनुमानगढ), रणपल्ली (राणोली) आदि।

बीच बीच में सुन्दर गीतो की रचना ने राजस्थानी भाषा के गौरव को बढाते हुए पाठको की अभिरुचि मे वृद्धि की है साथ ही आचलिकता की नीव को दृढ भी। उदाहरणार्थ गीत—

(1) जीरण मेरी बाई ए। [1]
मरती-घिरती जामण यू कह्यो
अटक्यो छै गार र माय जीव
जीरण री चिंत्या हरसा, कुण करै।
कुण तो गू थैलो बाई रो सीस,
कुण तो मांडैलो हाथा राचणी,
किण नै कैवेंली बाई मा
किण सूं रूसैली जीवण रूसणा।

(2) ओ कुण होली मे खाडो गेरै। [2]
ओ कुण देवै मुघरी मुघरी दाण।
ए रामा री होली।
लू ग टोडा होली रा सेवरा।
ओ कुण खेलै ल्यो गींड,
ओ कुण लाल दडी
बीरा टोगे दयो गिगनार
जमना मे जाय पडी।

उण री, ईंज, उण रै, बिणी नै, इनरी, कितरो, ब्रेगे, जे, वा इत्यादि शब्दो के प्रयोग से स्पष्ट है कि लेखक को राजस्थानी भाषा की अन्य बोलियो मारवाडी, मेवाड़ी इत्यादि का ज्ञान है जिनके प्रति सहिष्णुता का भाव भी है।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्द-प्रयोग मे लेखक पटु है—

अजेन, गासिया, मोकला, मोट्यार, दस्यो'क, एडँ-नेडँ, माटी, ग्रानाई, टैवट, अवकालै, ताई, मोसा, मागीटो, नसपण, पड्नर, सिगागी, बुतरया, चमग्या, उगमणी, टर-गोर, चौफेरा, ठालो, धिनावरो, चागनुकै, जावक, खिडग्यो, वपगाल्यू

1. 'हेलो' पाक्षिक पत्र २५ जनवरी १९६९ का अक
2. वही — वही — वही —

अगूण, अगूंच, वडग्यो, भाठा, लुल-लुल ।

नव शब्द-निर्माण का कौशल भी लेखक मे है:—

जोरको, ओलो, दोरप, सैंमगैम, ओठा, वरपीजग्यो, खिणाया, ठा, गिरासियै, हियाव, नावड, नक्की, धाको, कनै, वुतग्या ।

मुहावरो, कहावतो एव आलङ्कारिक छटा के भी दर्शन लेखक ने कराए है—

भौचूक होयग्या, सूख'र सुग्रो होयग्यो, आख्या सू अगन-झल वरसण लागी । सास माम रा भगूलिया, स्याणप कानी कीडी-नगरै ज्यू उमड्या जाय रैया हा, मिनखा रा टोल नदी रै वेग ज्यू वैवता, आभलदे अकास री वीजली-सी नाजुक अर तरवार-सी धार जिसी कटीली, विचार ज्यू अकल नै च्यारू मेर घेर राखै, गोपिया ज्यू राधा रै चौफेरा होवे, आख्या ऊघडी, लाव पगा तलै सू नीसरगी ही, वीतियोडी वात नै घोडा ईज कोनी नावडै, इस्यो सज्योडो जिया कोई रसियो मुकलावै ताई पैलीपोत आपरै सासरै जावतो होवै ।

(ख) कमियाँ —कई स्थानो पर 'श' और 'प' का प्रयोग विद्वान् लेखक ने किया है जो अनुचित ह । जैसे—शिव-रात्रि, शिवालय, लकुलीश, शख, शक्ति, परमेश्वर, प्रदोप, हर्प, होलकाप्टक ।

सस्कृत के शब्दो का अत्यधिक मात्रा मे प्रयोग करना राजस्थानी भाषा के सौन्दर्य पर कुठाराघात-सा ही है—ब्रह्म, प्रकृति, उन्मुक्त, सम्भोग, कालीन, ज्योति, वन्दना, मत्रोच्चारण, प्रणाम, दीक्षा, सस्कार, वैदिक, स्थिति, गोत्र, पथ, अपहरण, ब्राह्म, प्रभावित, मीनाक्षी, काम-क्रीडा, सहार, पद्मासन, वादन, सग्राम, युद्ध, स्वामी भेद-नीति, स्वीकार, स्वागत, दुग्ध, सप्ताह, मदनोत्सव, सूत्रधार, चरणामृत, नर-मुण्ड ।

मैं, भी, तो, कोई, है, मत इत्यादि हिन्दी-शब्दो को ज्यो की त्यो स्थिति मे रखना अनुपयुक्त है जबकि राजस्थानी भाषा मे इनके अलग रूप मिलते हैं ।

वेगो, सू, नखरा, चोफेर, घोडे-सो इत्यादि शब्दो से भाषा के क्षेत्र मे प्रान्तियता या क्षेत्रीयता का प्रभाव लक्षित होता है ।

राजस्थानी-साहित्य मे ऐतिहासिक उपन्यासो की कमी का पूरक यह उपन्यास पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होकर ही रह गया है । इसमे भाषागत त्रुटियाँ अधिक है, [illegible] । फिर भी लेखक की, इतिहास के क्षेत्र मे सम्बन्ध रखने वाले इस उपन्यास की सृष्टि सराहनीय लक्ष्य का स्पर्श करने वाली है । इस प्रकार लेखक ने भावी उपन्यासकारो के लिए ऐतिहासिक उपन्यास-लेखन के पथ का निर्माण किया है । राजस्थानी साहित्य मे इतिहास-तत्त्व का समावेश यह पहला कदम है ।

हूं गोरी किण पीव री[1]

कथा-सार:—१८ परिच्छेदों मे विभक्त कथा को लेखक ने बडे नए ढग से प्रस्तुत की है। हरद्वार गए लेखक को उसका मित्र गौरीशकर मिलता है। वही पर्वत पर स्वामी ज्ञानाचन्द उन्हे कथा सुनाते हैं —

बीकानेर-निवासी शरावी कमियो कुम्हार के भानो और माधो दो पुत्र थे। मजदूरी का कार्य था। सारी कमाई शराव मे फूक दी जाती रहती थी। न्यायोचित वात कहने पर भी कसियो ने भानो को बुरी तरह पीटा। भानो माधो को बावू वनाना चाहता था। उसकी मृता माँ की भी यही इच्छा थी। पास मे रहने वाली मूलकी मौसी को भानो एव माधो से वडी सहानुभूति थी। भानो की सूरजडी नाम की सुन्दरी से शादी हो गई। शादी के वाद पिता की अधिक शराव पीने के कारण मृत्यु हो गई। माधो अध्ययन-काल मे ही शराव पीना सीख गया, जुए की लत मे फस गया, गिरि जैसे गुण्डे साथियो मे फस गया। मटकी नाम की वेश्या के चक्कर मे आगया। ये वातें माधो और मूलकी को ज्ञात हो गई।

कुछ दिनो के वाद अधिक कर्जा हो जाने पर एकाएक रात्रि मे भानो घर छोडकर कलकत्ते चला गया। माधो का भार अपनी पत्नी सूरजडी पर छोड गया। एक पत्र मे लिखे हुए पते का पता गिरि जैसे गुण्डो को हो जाने पर भानो ने अपनी मृत्यु का तार दिलवा दिया ताकि वहाँ माधो को कोई परेशान नही करे।

मैट्रिक पास कर व वा नामक व्यक्ति द्वारा माधो शिक्षा विभाग मे क्लर्क वन गया। भानो की कमाई तथा सूरजडी की मजदूरी से माधो वावू वना। भानो के न आने पर सूरजडी अपने पीहर रहने लगी। इसका भाई चपले नामक शरावी एव दुष्ट व्यक्ति को २०००) रुपयो मे वेचना चाहता था। सूरजडी भयभीत होकर वहाँ से भाग कर ससुराल आगई। वावा और मूलकी के समझाने पर माधो ने सूरजडी से नाता (पुनर्विवाह) कर लिया। कालान्तर मे तीन बच्चे भी पैदा हो गए। एक दिन भानो वहुत-सा माल लेकर कलकत्ते से अपने घर आया। इसी समय से सूरजडी, भानो और माधो मे अन्तर्द्वन्द्व चला कि दोषी कौन है। अन्त मे भानो ने स्वय को दोषी मानते हुए सदा के लिए घर छोड दिया। इस प्रकार माधो के लिए वडे भाई का सर्वदा के लिए विछोह एक वहुत वडा दण्ड था माधो ने कहा भी है—"ओ भी एक डड है, करडो डड है भाई।" विदाई के समय माधो, भानो और सूरजडी की आंखो मे आंसू थे। लेखक द्वारा पूरी कथा कहने के वाद स्वामी ज्ञानानन्द आंखो से ओझल हो गए। सभवत ये स्वामीजी भानो ही था।

---

1. सामाजिक उपन्यास लेखक-यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' राजस्थानी भाषा प्रचार सभा, जयपुर से १९७० मे प्रकाशित

समीक्षा.– (अ) विशेषताएं —

"हू गोरी किण पीवरी" शीर्षक उपयुक्त है। सूरजडी की ही यह स्थिति होती है जब अपने पति भानो के बहुत समय के बाद नही आने पर देवर माधो से नाता (पुनर्विवाह) कर लेती है। मृत्यु का तार भिजवाने वाला भानो एक दिन कलकत्ते से आ जाता है तब सूरजडी पशोपेश मे पड जाती है कि वह किस पति की गोरी है ? पृष्ठ ७ पर "लूणा घाटी" खेल की झलक दिखलाते हुए लेखक ने राजस्थानी सस्कृति का ज्ञान प्रकट किया है। पृष्ठ २७ पर सूरजडी द्वारा बाल-विवाह का विरोध करना एक सामाजिक समस्या का निराकरण करना ही है जो उपन्यास की एक विशेषता है। पृष्ठ २-३ पर स्वामी ज्ञानानन्द द्वारा कुदरत और आत्मशक्ति, पृष्ठ ६६ पर मृत्यु, पृष्ठ ६७ पर पैसो का महत्व तथा पृष्ठ ८३ पर जीवन को एक नाटक बताना—इत्यादि तथ्यो का विश्लेषण उपन्यास का विशिष्ट गुण है। ऐडा, सैंग, हावल, ईज, उणी इत्यादि मारवाडी-मेवाडी शब्दो का प्रयोग कर आचलिकता की भाषा से दूर रहने की लेखक की चेष्ठा है।

लघु वाक्यावलि मे युक्त भाषा मे भानो का अन्तर्द्वन्द्व पाठको को अत्यन्त ही प्रभावित कर डालने वाला है —

अं लोग कित्ता कमीणा अर सुवारथी है। ओ म्हारो भाई, जिकै नै म्हैं दफतर रो बाबू बणायो। कित्तो कृतघण है ? आ लुगाई, साली लुगाई जात हुवै अंडी है ? छलकारी अर छिनाल ! पण ओ तो म्हारो भाई हो ! सागी भाई ! दोना रो लोई एक। ··· · · ऐ दोनू जणा पापी है, नीच है ! · · ओ अर्ठ आथो ईज क्यू ? वै कित्ता अरमाना सू सुपना सजाया हा। वो झूठमूठ रो मरचो जिकै सू लोग इणा नै तकादा सू तग नी करै। धक्का खावतो रैयो। कलकत्तं सू आसाम ! आसाम रै चाय-बगाना मे हाडफोड मैनत। ····· · रुपिया रै खातिर इण एक साथी रो खून कर नाख्यो।[1]

उपन्यास मे सवादो री सजीवता, सरसता एव सरलता भी द्रष्टव्य है —[2]

"सूरजडी टलरा-टलरा रोवण लागी—"वै सगला दुस्ट थोडी ताल मे अठै ढूक रैया है।"

क्यू ?

मनै लेवण वास्तै ?

क्यू ?

---

1 हू गोरी किण पीव री पृ स ७२-७३
2 " " " पृ स ६०-६१

वै मनै परस्यू चपलै रै घर मे घालसी ।

"उरण री ऐसी की तैसी"—माधो एक दम लाल होय नै खारै जैर सुर मे बोल्यो—कमीरण के समझ राख्यो है ? एक एक री नसडी बाट नाखूला ।"

उरण रै जीव माय एक वासनै-सी लागगी ही ।

वै घरणा सारा लोग है ।... ... . उरण रै सागै गिरी भी है ।

गिरी हुवो चाये गिरी रो बाप, हू एक एक नै देख लूला ।"

उपमाओ, उत्प्रेक्षाओ, कहावतो-मुहावरो आदि ने उपन्यास के भाषा-सौन्दर्य मे वृद्धि की है —

उगियारो सूरज रै तेज ज्यू चिमकै, कसिया रो पारो सातवै असमान मे चढग्यो, ऊन्दरै रा जायोडा बिल नी खोदैला तो के करैला, टाकरण ज्यू तीखी बोली, तावडै मगरूँ घर नै उजास री चानणी ओढा दी ही, पवरो घाघरै रो ढेरो बरण जावैलो, भाग रो तो मू डो ऐडो उतरग्यो जाणै किरणीई बीरै मू डैनै कालस सू पोत नाख्यो हुवै, मूलको फाट्योडै ढोल ज्यू बोली, मटकी साप ज्यू सरकगी, गुद अनाथियै गोधै ज्यू फिरै, भोभरो फोड देला, माधै माथै ज्यू हेमालो टूटग्यो हुवै, बकरी री मा कित्ता दिन खैर मनावैली, चमगूंगो हुयग्यो, मन तो दाल मे कालो दीखै, वो एक डोकै ज्यू उडै है, भूतरणी ज्यू फिरती रैवती, गाडी सागीडी चीलै चालरण लागगी, जोबन तो समन्दर री जुवार आई छोला ज्यू जोरा चढ्यो है, सूरजडो जैडी गव्ह नै निम्बोली ज्यू चून नै बगाय देवैलो, उल्टो चोर कोतवाल नै डाटै, उरणमादियै सावरण मे वो ऊनालै रै डूबसै ज्यू अमूजग्यो, अकल नै तो उदई चाटगी ।

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो ने भाषा का सौन्दर्य अधिक निखर गया है—

रमझोल, फर्राबाज, मितरापो, चिल्लैंसीक, ग्राटी-वाडी, रिंदरोही, बिसू जिया, अच्चाचूक, ओझरो, उलै, हल्लर-फल्लर, चोलना, भायप्या, नीरी, डाफर, नापनेक, बोरसी, डायर नैरणा, आगोतर, टाफाचूक, हाऊजूजा, थाकेलो ।

उपन्यास मे प्रच्छन्न रूप से ईश्वर के अस्तित्व एव उसकी सर्वशक्तिमत्ता की वकालत की गई है । उपन्यास का यथार्थवादी स्वरूप और पात्रो की चारित्रिक अच्छाइयाँ-बुराइयाँ पाठको को बरबस आकर्षित करने वाले है । उपन्यास के सभी पात्र अपनी मानवीय कमजोरियो के बावजूद एकदम पाठको की घृणा के पात्र नही बनते है । माधो जैसे पात्र के चारित्रिक पतन को भी परिस्थितियो का कारण बताया है जिसके कारण ही पाठको की उसके प्रति सहानुभूति रहती है ।

(ब) दोष—लेखक स्वामी ज्ञानानन्द की बात मे इतना उलझ गया कि साथ मे चलने वाले मित्र गौरीशंकर को पृष्ठ २ पर याद किया जिसे बाद में बिल्कुल ही भूल गया । स्वामीजी की कथा-समाप्ति पर भी गौरीशंकर याद तक नही आया ।

अच्छा तो यही था कि गौरीशकर को उपन्यास मे स्थान ही देता और जब उसे स्थान देकर लेखक ने साथ लिया है तो कम से कम उपन्यास के अन्त मे तो उसे याद कर लेते। भानो तथा सूरजडी स्थान स्थान पर माधो को मन्नालाल की तरह बाबू बनाने के लिए कहते रहते हैं। परन्तु यह पन्नालाल कौन है—इसका परिचय उपन्यासकार ने बिल्कुल ही नही दिया। कुछ गलत तथ्यो का अकन किया गया है —

(क) पृष्ठ ४ पर ससुर केसियो द्वारा पुत्रवधू सूरजडी की मुँह दिखाई के ५ रु थमाना बहू का मुख सास द्वारा देखे जाने की प्रथा तो राजस्थानी सस्कृति मे है परन्तु उक्त प्रथा की जानकारी मेरी बुद्धि से परे है। हाँ, 'पैर पकडने" की प्रथा अवश्य है।

(ख) पृष्ठ ६ पर प्याज की चटनी का उल्लेख किया गया है जो सभवत इस प्रान्त मे कही नही खाई जाती है और कम से कम बीकानेर मे तो नही।

(ग) पृष्ठ ८ पर "आ लीना देखतां ई वैरा देवता कूच करग्या" का प्रयोग किया गया है जो सभवत बुरी घटना या मरने पर होता है। जबकि लेखक ने ऐसी स्थिति मे इसका प्रयोग नही किया है।

(घ) पृष्ठ १० पर "बोली भी मिसरी ज्यू मीठी नै कवली ही" का प्रयोग किया गया है। किन्तु मिसरी कवली (कोमल) नही होती है, मीठी अवश्य होती है।

(च) पृष्ठ १५ पर अनपढ और अशिक्षित भानो के मुख से "बाइस्कोप" शब्द का प्रयोग अस्वाभाविक है।

(छ) सूरजडी द्वारा पति और देवर के लिए "तू" सर्वनाम का प्रयोग भी अनुचित है। ऐसा प्रयोग तो अशिक्षित और बिल्कुल अनपढ ग्रामीण औरतें भी नही किया करती है। अत स्पष्ट होता है कि उपन्यासकार राजस्थान-निवासी होते हुए भी राजस्थानी सस्कृति से अनभिज्ञ रहा है। लेखक के ऐसे प्रयोग का उदाहरण-
सूरजडी भानो से कहती है—
"तू दारू क्यूं पीवै है? जूवो क्यू रमै है?[1]
माधो से सूरजडी कहती है—
"जद तू जाणतो हो कै आज रोट्या पकावण आली आयगी है, फेर—[2]

(ज) पृष्ठ २८ पर पाश्चात्य संस्कृति की अश्लीलता उल्लेख मिलता है —
"भानो बीनें चिपाय नें चूमो ले लियो। दोनुवा रा सरीर एकमेक होय रैया है।"
ऐसा प्रयोग सूरजडी तथा भानो जैसे ग्रामीण भोले-भाले युवक-युवतियो के लिए उपयुक्त नहीं है।

(झ) पृष्ठ २५ पर देवर के रूप मे माधो का सूरजडी को ऐसा कहना

---

1. [illegible] पृ स १९
2. वही पृ स ६८

अनुचित है—
"जद हू दफ्तर रो बाबू हो जावूंला तद थारा सगला कस्ट हर लूंला। तनै राणी ज्यूं राखूंला। तू चिंता-फिकर मती कर।"

(ञ) "बरमाळी चानणै सू भरी" वाक्य का अनेक बार प्रयोग अनुपयुक्त है।

(ट) पृष्ठ ६८ पर और अश्लीलता का प्रयोग करना उपयुक्त नही है—
"इण तरियां गडक भुसणै सू सूरजडी रा रूवां-रूवां ऊभा हो जावता। वा माधै रै काठी चिप जावती।"

(ठ) "भानो माईत मर्योडै ज्यू आय नै बरमाली मे बैठग्यो" पृष्ठ ७० पर ऐसी भद्दी उपमा का प्रयोग करना अनुचित है।

पृष्ठ ५०-५१ पर सूरजडी पीहर से ससुराल आती है। माधो से कुछ बातें भी करती है फिर माधो एकदम वहाँ से उठकर धोरे (टीबे) पर चला जाता है। वापिस आने पर सूरजडी गायब हो जाती है। वह क्यो और कहाँ गई? माधो एकदम पागलों की तरह उठकर टीबे पर क्यों गया? इस पर लेखक मौन है। सूरजडी का एकाएक आकर माधो से बातचीत करना फिर माधो का सूरजडी को बिना कहे टीबे पर चला जाना—एक सपना-सा लगता है।

संस्कृत के शब्दो को ज्यो का त्यो रख देना राजस्थानी भाषा के सौन्दर्य को नष्ट कर देना है—यान्त्रिक, अनास्था, नास्तिकता, अस्तित्व, स्थिति, विद्रोहिणी, विपदा, भावुकता, वैज्ञानिक, अबोध, अनुभव, मर्मान्तिध, विरक्ति, निरुत्तर, निर्मम, गभीरता, सार्थकता, परमात्मा, सघर्ष।

मूर्धन्य 'ष' का प्रयोग करना भी अनुपयुक्त है। क्योंकि यह 'ष' राजस्थानी मे नही है। राजस्थानी भाषा साहित्य सगम द्वारा पुरस्कृत इस रचना मे शहरी वातावरण का आशिक पुट चढा होने पर भी ग्रामीण निम्न निर्धन परिवार की सम्पूर्ण कथा अत्यन्त रोचक और आकर्षक बन पडी है। अन्य लेखकों की भाँति इसमे भी कुछ भाषागत तथा भावगत दोष उभर पडे हैं परन्तु लेखक के वर्ण्य विषय और उसकी भाषा-शैली के सामने वे दोष कई दूर जा पडते हैं। निश्चय ही यह रचना राजस्थानी-साहित्य की अमूल्य निधि का एक जगमगाता हीरा है। हिन्दी की तरह लेखक का राजस्थानी भाषा पर भी पूरा अधिकार-कौशल है। राजस्थानी भाषा के क्षेत्र मे लेखक का प्रथम प्रयास अमोघ एव श्लाध्य रहा है।

गुवारपाठो [1]

कथा-सार:—जग्गी (जगजीवनदास) भगती पूरणी का बेटा है। पूरणी का एक अच्छे घराने के व्यक्ति से व्यभिचार का रिश्ता रहता है। जग्गी उसी व्यक्ति

1. सामाजिक उपन्यास, लेखक दीनदयाल 'कुन्दन', बम्बई मे प्रकाशित 'हरावल' पत्रिका के १९७० के अको से धारावाहिक रूप मे प्रकाशित ११ अको मे समाप्त।

का अंश है। भिक्षुक परिवार मे पूरणी का विवाह किसी भिक्षुक से ही होता है। जग्गी का बाप प्राय बाहर ही रहता है। कभी कभी घर आ जाता है। जग्गी के समाज के लोग व्यभिचार करवाते हैं, शराब पीते हैं, ठगते हैं, लडते-झगडते हैं और वेश्यावृत्ति करते हैं परन्तु जग्गी इनसे भिन्न होता है। जग्गी की माँ भी जग्गी के बडे होने पर अपने चरित्र को सुधारती है। जग्गी को स्कूल मे पढ़ने भेजती है। वहाँ और उसके स्कूल मे जग्गी को ताने कसे जाते हैं। इसी के समाज का भैरूदास इसे गाकर माँगने की सलाह देता है। परन्तु जग्गी अपने उद्देश्य से विचलित नही होता है। जग्गी की दोस्ती स्कूल मे पढने वाले एक अच्छे घराने के लडके मोहन से हो जाती है। जग्गी उसके घर खाना भी खाता है। एक दिन अपनी माँ को उसका घर दिखाने ले जाता है। माँ मोहन के बाप की तस्वीर देख कर रो पडती है। इधर भिक्षुक-परिवार मे राधोदास, हीरादास, बिदामी, बिट्टूडी आदि की मौतें हो जाती हैं। हीरादास की माँ पागल हो जाती है। जग्गी की माँ भी एक दिन मर जाती है। मरने से पूर्व जग्गी को उसके असली बाप के विषय मे बता देती है। मोहन का बाप ही उसका असली बाप था। किन्तु वह गुजर चुका था। पूरणी का उससे व्यभिचारी-सम्बन्ध किसी समय मे रहा था। मोहन ही जग्गी का भाई होता है। इस रहस्योद्घाटन के साथ ही कथा समाप्त हो जाती है।

समीक्षाः–(अ) विशेषताएँ —राजस्थानी संस्कृति और ग्रामीण वातावरण के वास्तविक रूप को प्रकट करने मे लेखक ने पूर्णत सफलता पाई है। फलस्वरूप इस उपन्यास मे ये प्रसग अत्यन्त ही हृदयस्पर्शी बन पडे हैं—

(१) लोहागर के मेले का प्रसग (२) वर्षा के समय बच्चों के खेलो की झलक (३) पढाई के विषय मे भिक्षुक जग्गी के विचार (४) बिसायती का प्रसग (५) हीरादास के मरने पर उसकी माँ के अपनी मौत के प्रति सवाद (६) जग्गी की माँ की मृत्यु की घडियो का प्रसग।

'ग्वारपाठा' एक खारा और कडवा पौधा होता है जो दवाओ तथा सब्जी बनाने मे उपयोगी है। उपन्यास मे भिक्षुक-परिवार के विशेषत जग्गी और उसकी माँ पूरणी के जीवन के कड़ प्रसगो को उपस्थित किया गया है। इसके अतिरिक्त बीच बीच मे भिक्षुक-परिवार मे होने वाली मौतें और हीरादास की माँ के पागल होने के कड़ प्रसग भी पढने को मिले हैं। व्यभिचार की कडवी घूँटें तो पूरा का पूरा भिक्षुक-समाज ही पीता है। इन सभी प्रसगो मे गुवारपाठो (ग्वारपाठा) की तरह कड़वापन है, खारापन है अत इसका शीर्षक "गुवारपाठो" रखा गया है जो उचित और सार्थक है। कई स्थानो पर जग्गी के हृदय के अन्तर्द्वन्द्व का अत्यन्त ही सुन्दर विश्लेषण मिलता है। वह अपने परिवार के वीभत्स दृश्यो को देख कर कभी कभी घर छोड़ने का विचार रखता है तो कभी कुछ हल्के दार्शनिक विचारों मे

खो जाता है। जायकाव्या, भाण का चीन्या, माराण्ट, सुल्डपघी, मोल्या, मादरावणा भोतर, कीलवा इत्यादि शब्दों के प्रयोग में लेखक का राजस्थानी भाषा के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण झलकता है। भाषा-शैली के सौन्दर्य में तो लेखक ने कमाल ही कर दिया है—

"मा कठै है……………। आ धरती पर पसरी पडी आ जग्गी की मा है कै…… …? अत्ती ठडी बरफ स्यारसी…………। अत्ती ठडी तो सिरफ माटी ही हो सकै है…………। माटी बरफ से ज्यादा ठडी होवै है, हर चीज से ज्यादा ठडी …… …। आ पसरी पडी है, आ तो माटी है, ओ तो रेत को एक छोटो सो-कण है, स्यात् पाछो रेत मे रलगो है।"[1]

कुछ राजस्थानी खाद्य-पदार्थों की जानकारी भी लेखक ने दी है—अनार-दाणा की पाचक, रावडी, सुवाली, वाडाथोर को साग, मणाकली।

बीच बीच मे कई स्थानो पर सुन्दर गीतो की रचनाएँ भी पढने को मिलती हैं—

"उठी ही म्है बीर मिलन नै
काटो गड गयो कैर को जी
काटा रै वैरी तू मेरो कद को
रै वैरी तो कद का वैर बसाया जी ?
तू जलवी मे ऊगण लाग्यो तो जद का वैर बसायाजी………।"[2]

उर्दू, हिन्दी और सस्कृत के शब्दो के किञ्चित् प्रयोग से लेखक की अन्य भाषाओं के प्रति सहिष्णुता प्रकट होती है जैसे—

उर्दू शब्द—जिन्दगी, अजीब, करामात, गाफिल, अन्दाज, खैर, जामनी, नसीब, अपाहिज, औकात, जमात, इज्जत, जवाब, हिम्मत, चैन।

हिन्दी शब्द—आपका, दूसरा, तू, और, सब, कुछ, हालाकि, घटाटोप, इच्छा।

सस्कृत शब्द—असम्भव, सम्बन्धी, निरन्तर, उपभोग, ज्योति, दम्भ, अत्याचार, अन्तरग, कातरता, तन्मय, उक्ति, उत्तेजना, आवेग, अवहेलना, अदृश्य वाचाल, षड्यन्त्र, रक्तबीज, तल्लीनता, क्रिया, प्रतिभा, ममतामयी।

लेखक मे शब्द-निर्माण की कला भी विद्यमान है—

हेल (तरह), गोट-मोट, गरणाचक्री, टम्मर टम्मर, टवूग, घेतियो, सान्या-वातो, बवूरघा, ढूब्या, ऊभचूभ, लपफड लपफड, चीठडो, फागड़दा, तलगू-मलगू, भावरभोल, रजो, घुटला, खोनाम, हदर, भोभा, टमीटो, उमराचील।

---

1 "हरावल" के अन्तिम फाल मे पृ स १६ (उपन्यास का अन्तिम अनुच्छेद)

2. "हरावल" अंक ५ वर्ष १९७०, पृष्ठ १४

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो की भरमार भी इसमे है—

रीस, तावडा, गूदडा, सिया, उकडू, गीगलो भभको, उवार, सुवारै, टापरो, तिवारी, व्यावतार, जत्ता, गोजी, रहणास, आगडा, चील्डा, परिण्डा, अणचाई, अवस, आरघो, अगवोट, डूलरा, हलावोल, खरोल्या, फीतरा, धीणा, गादिम, लीतरा, चलू, गास्या, टाङ, ठिया वधेरोपण, नाग्डमी, असा, मूगतपरचा, आरस्या, आनलो बूणी, रामारोल, ऊराव, अल्डाती, सुरगापत, मोल्या, ललपल, डूजा, विफर, रिगस, लीतरेडो, आपसरी, भीर, हराल, विराणा। मृत्यु और जन्म पर दार्शनिक विचार, हास्यात्मकता, निम्न स्थिति के प्राणियो की दयनीयता इत्यादि प्रसगो का सागोपाग वर्णन स्तुत्य है।

मुहावरो, कहावतो एव आलकारिक-सौन्दर्य यत्र-तत्र मिलता है—

नारा का मूडा भी कदै धुप्या करै, दाया सै भी पेट लुख्या करै है, गुमेडी बीटी की जैया साघोदास ल्हादगो, पीजरा को सूवो, जाणता-बूझता ऊखली मे क्यू सिर दियो जाय, सिकुड कर छोरो छुहारो-सो होयग्यो, भूखी गाय की निजरा सू देखवा लागगो, पूरो प्लेटफार्म मसाण-भूमि की जैया भाय-भाय करै हो, स्टेशन-मास्टर मेज पर सिर टेक्या मरेडो रेगडी की जैया पडयो हो, घी ढूलयो तो भी मूगा मे ही, दवड दवड खाय है धवड धवड भागे है, ई धधा को मूडो बल देस्यू, मेरे तो नाक मे दम आयग्यो हो, प्हाड बलती दीखै पग बलती कोनी दीखै, काला पनै बैठ्या काठ लागै, आख्या मे गगाजी-जमनाजी उफण्याई, पढ गया पूत कुम्हार का सोला दूणी आठ, अठीनै पडै तो कूवो अर बठीनै पडै तो खाई, वजर-कालजा, मरम सै पाणी पाणी, लट्टू होयगी, वो ही कुल्हाडो अर वो ही बैसो।

• नई और सुन्दर उपमाओ की भरमार लेखक की सभी लेखको से भिन्न एक विशेषता है जो इस उपन्यास के सौन्दर्य मे वृद्धि का कार्य करती है—

लीली वरदी हालो बारामास्यो रावण स्यारसो दीखै हो, बिच्छू का डक स्यारसी, दोन्या कानी मरोड दियेडी लम्बी लम्बी मूछ्या, धोली धोली बत्तीसी दोफारी का तावडा की जैया चिलकी, मूडो सूई-सो अर पेट कूई-सो, ओढणी को एक तारो दिस्यो अर दूसरो जैपर कानी जारयो हो, चौथ को चांद होरयो हो, आवाज पतली लकीर-सी निकली, मन मे गादडो-सो बडगो, चील की जैया जवान रो झपट्टो मार, सा अैया चमकी जाणै बीनै आपका पल्ला मे बिच्छू को स्यास लागो हुवै, जगी सटघो है, हरसनाथ का डूगर की जैया, सारो उत्साह धूल-काकरा बनगो, जाणै सा का रूठ, चेहरा पर नई नई कूपला जलम्याई, आस्या दिया की जैया रागी, नई छोरया बछेरी की जैया उछले, नई उठती हुई कूपल-सी भोजाई, बारला रा नरघा रोग स्यारसी सुगाई, दही-सो रस्तो पडघो, पाणी भीज्या पत्थर री जैया डिमावती, इन्दरधान के साथ अैया धुलगो जैया घी मे खीचडी, सारो स्याही रा टोपा स्यारसा चोग्या, मूफली-सा होठ, सौत आई कागली-सी,

भीत की जैया मूनी, मू डी धोला़ कपडा स्यारसी, कटखाणी लू कडी की जैया, साफ नीतरेडा गाय का दूध स्यारसी धवल ग्रास्या, मौत ग्रावै तो वा प्राणीमात्र नै ग्रैया गिट जावै जैया ऊदरा नै साप।

(ख) कमियाँ —राघोदास को रामदास ग्रक्टूबर १९७० के "हरावल" अक के पृष्ठ २१ मर मावसी दाखी का वेटा वता चुका था तव जग्गी के समक्ष फिर इमी अक के पृष्ठ २३ पर इसी वात की ग्रावृत्ति की क्या ग्रावश्यता पडी ? जग्गी के वाप को कई स्थानो पर वाहर भागा हुग्रा वताया जाता है परन्तु वह भागा हुग्रा व्यक्ति ग्रनेक स्थानो पर भगवान् के ग्रवतार की भांति प्रकठ होता रहता है। इस ग्रस्पष्ट वात को उपन्यासकार स्पष्ट नही कर पाया है। "हरावल" जनवरी १९७१ अक के पृष्ठ १९ पर भैंरूदास ग्रादि के माथ राघोदाम को तो वताया गया है। उसी समय उनकी वातो पर हसने वाला वह जग्गी कहाँ से ग्रा गया ? यदि जग्गी उस ममय इनके माथ था तो फिर इमी अक के पृष्ठ २२ पर भैंरूदास के ग्रन्य साथियो को यह कहने की क्या ग्रावश्यकता पडी —"ल्यो जग्गीदासजी भी पधारग्याया, जलम का व्रह्मचारी—ग्राग्रो व्रह्मचारीजी।" (पृष्ठ-२२) उपन्यास के ग्रन्तिम चरण मे जग्गी की माँ की मृत्यु हो जाती है। उस समय जग्गी का वाप कहाँ था ? क्या वाद मे वह वहाँ ग्राया ? जग्गी ने इसके वाद ग्रपने जीवन को किस साँचे मे ढाला ? उपन्यासकार ने स्पष्ट नही किया।शेक्सपियर की भाँति उसे इस उपन्यास को दुखान्त वनाना ही इप्ट था जो वना दिया। भैंरदास, ईमरदास, इन्दरदास ग्रादि का क्या हुग्रा? इनको एकाध स्थान पर प्रकट कर उपन्यासकार ने वाद मे तो विल्कुल ही छिपा दिया। कम से कम उपन्यास के ग्रन्त मे तो याद कर लिया जाता। दमवें फाल के पृष्ठ १६ पर लेखक ने जग्गी के द्वारा यह कहलाने की ग्रावश्यकता क्यो समझी— "माँ, वापू ग्रासी के कदै………… ? वापू भी ग्रापा नै याद करतो होसी के ?" जग्गी का वाप तो कमा कमा कर प्राय घर ग्राता-जाता रहता था फिर यह कैसे कहा गया ? दसवें फाल के पृष्ठ १५ पर माँ पूरणी ने जग्गी को 'जगदीश' सम्वोधित किया है। क्या जग्गी का नाम जगदीश भी था ? लेखक ने तो इसे स्थान-स्यान पर जगजीवनदास या जग्गी के रूप मे ही प्रकट किया है फिर पूरणी का यह कहना कहाँ तक स्वाभाविक है ?—"जगदीस वेटा, तू रुकै तो रुक सकै है ?" उपन्यास मे राघोदास ग्रौर भैंरूदास पात्रो की कोई ग्रावश्यकता ही नही थी। किसी भी इच्छित व्यक्ति को एकदम प्रकट करना उपन्यासकार ने ग्रपनी एक विशेपता-मी वना ली है। इस कारण कही तो वह जग्गी के वाप को प्रकट करता है तो कही भैंरूदास को। जैसे दसवें फाल मे जग्गी के वाप को महसा प्रकट करना ग्रस्वाभाविक-सा लगता है। उपन्यास का शीर्पक कुछ ग्रस्वाभाविक-मा है। वैसे तोड-मरोड कर मन ही इसे विठा लें परन्तु जनसाधारण इसके शीर्पक से भ्रम मे पड जाते हैं। 'गुनार-पाठा' एक खारा ग्रौर कडवा पौधा होता है जिसका प्रसंग समूचे उपन्यास मे कही नही ग्राया है ग्रौर न ही इसका नाम। निम्न परिवार की कथा पर ग्राधारित

जनसाधारण के लिए लिखे गए इस उपन्यास का नामकरण सरल और सीधा-सादा होना चाहिए था परन्तु शीर्षक के क्षेत्र मे लेखक ने तनिक भी सावधानी नही वरती है। अनेक स्थानो पर तो पूरे के पूरे वाक्य ही हिन्दी के रख दिए हैं। जैसे—"दुख का खारा सागर के कारण, आपका मन का भाव दवा कर कह रही है।" जिन शब्दो के राजस्थानी रूप विद्यमान हैं, उन्हे भी लेखक ने ज्यो के त्यो हिन्दी के रख दिए हैं— और, आपका, मे, भी, का, की, ही, नही, मैं, है इत्यादि। कई स्थानो पर 'प' का प्रयोग भी देखा गया है। जैसे "हरावल" अक्टूबर १९७० के अक के पृष्ठ २१ तथा "हरावल" के छठे फाल के पृष्ठ १४ पर इसके प्रयोग की भरमार है। लेखक की भापा पर शेखावाटी या क्षेत्रीय वोली का जवरदस्त प्रभाव देखा गया है।

इस प्रकार कुछ भाव और भावागत त्रुटियाँ होने पर भी निम्नवर्गीय पारिवारिक गाथा पर आधारित इस उपन्यास का राजस्थानी साहित्य मे एक विशेप महत्त्व है तथा इसकी मौलिकता पर साहित्य को गर्व है।

जोग-सजोग[1]

कथावस्तु —दिल्ली मे लाला वटुकप्रसाद परचून की दुकान करते हैं। पत्नी अहिल्या शिक्षिता, सीधी और पतिव्रता नारी है। पुत्र गणेश ९-दसवी कक्षा पास है। माँ और वेटे वटुक से वहुत डरते है। सोहन नामक व्यक्ति से नाजायाज सम्वन्ध के वहम के कारण वटुक अपनी पत्नी का सम्मान नही करता है। इच्छा होने पर भी गणेश की पढ़ाई छुडवा कर उसे दुकान पर लगा दिया जाता है। वटुक शराव के नशे मे पत्नी और वेटे को पीटता है। गणेश दुकान से पैसे चुरा कर होटलो एव सिनेमा मे खर्च करता रहता है। गणेश को वेवाप पजावी लडकी सुरजीत से प्रेम हो जाता है। गरीव-अमीर तथा जाति के चक्कर के कारण गणेश की सुरजीत के साथ विवाह की इच्छा पूरी नही हो पाती है। सुरजीत अध्यापिका है तथा उसके शरीर पर कोढ का थोडा-सा दाग रहता है।

पैसो के लोभ से वटुक सेठ गोकुलप्रसाद की वेटी रतन, जो कुरूपा थी, से गणेश की शादी कर देता है। इधर सुरजीत का सम्वन्ध भी उसका मामा कर देता है किन्तु शरीर पर कोढ होने के कारण सुरजीत की वारात विना शादी के चली जाती है। गणेश और सुरजीत के विवाहो की एक ही तिथि के कारण दोनो एक दूसरे के विवाह मे नही आ पाते है। घर के दूषित वातावरण तथा कुरूपा पत्नी से परेशान होकर एक दिन रात मे गणेश रतन के गहनो और हजार-वारह सौ रुपयो के साथ कलकत्ते चला जाता है। गणेश मूलत वगाली क्रिश्चियन लडकी रीना से

1 सामाजिक उपन्यास लेखक—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' राजस्थानी भापा साहित्य सगम वीकानेर से १९७३ मे प्रकाशित।

शादी कर लेता है। रीना की माँ बीमार रहती है तथा भाई जेकब बेरोजगार रहता है। समय समय पर स्मगलर इब्राहिम रीना की सहायता करता रहता है। गणेश रीना के घर किरायेदार के रूप मे रहता हुआ दुकान खोलता है। उधर हैजे की बीमारी मे बटुक, रतन और सुरजीत की माँ मर जाते हैं। कोढ अधिक फैलने के कारण सुरजीत स्कूल से लम्बी छुट्टी लेकर गणेश के घर रहने लगती है गणेश कलकत्ते मे बसन्त के नाम से प्रसिद्ध होता है। गणेश के घर पर तार तथा पत्र द्वारा कलकत्ते मे रहने की सूचना देता है। रीना की माँ के मरने पर घर से दिल्ली आने की सूचना मिलने के बाद दुकान इब्राहिम को सौंप कर दिल्ली रवाना हो जाता है। गणेश और रीना दोनो एक दूसरे की बीती कहानी से परिचित हो जाते हैं। पिता और पत्नी की मृत्यु के समाचार गणेश को कलकत्ते मे ही मिल जाते हैं। घर पहुँच कर माँ से मिलते हुए रीना के साथ शादी की बात कहता है। बाद मे सुरजीत के कमरे मे मरी हुई सुरजीत को देखता है। गणेश से ऐसी कुरूप स्थिति में नही मिलने की इच्छा होने के कारण सुरजीत आत्महत्या कर लेती है। उसके हाथो मे जहर की शीशी तथा एक पत्र रहते हैं। पत्र से सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। सुरजीत का दाह-संस्कार कर दिया जाता है। इस प्रकार उपन्यास का अन्त दुःखद स्थिति मे होता है।

समीक्षा:- (क) विशेषताएं —उपन्यास का शीर्षक या नाम कई जोग-संजोग के कारणो या तथ्यो से बड़ा रोचक तथा उपयुक्त बन पडा है—गणेश का बटुक जैसे कसाई बनिये के घर जन्म लेना, बटुक को अहिल्या जैसी सुशीला, शिक्षिता तथा चरित्रवती पत्नी का मिलना, मारवाड़ी गणेश का पंजाबिन सुरजीत से प्रेम, कालान्तर मे सुरजीत और गणेश का विवाह न होना, दोनो के विवाहों के मुहूर्त एक ही तिथि को तय होना, सुरजीत के घर आई बारात का बिना विवाह के जाना, गणेश का विवाह भद्दी लडकी रतन के साथ होना, सुरजीत की माँ के दूसरे पति का अधिक जीवित न रहना और सुरजीत द्वारा आत्महत्या, गणेश का रीना के साथ शादी करना तथा गणेश की माँ अहिल्या की दुर्दशा होना इत्यादि। पृष्ठ १२ पर भाग्य की महिमा, पृष्ठ १३ पर बेकारी की झलक और शिक्षा की निन्द्यता, पृष्ठ ४६ पर स्त्रियो के अनेक आभूषणो के नामों, पृष्ठ ८७ पर परिवार-नियोजन के महत्त्व, धार्मिक-सहिष्णुता तथा इब्राहिम द्वारा जन्मभूमि के आदर का वर्णन इत्यादि नवीन या मौलिक तथ्यो की सूझ के लिए लेखक प्रशसा का पात्र है। कई स्थानो पर छोटे छोटे वाक्यो से युक्त सवाद बड़े प्रभावोत्पादक बन पडे हैं —[1]

"वै कंयो "अंधारो, वो भी टीकै री रात नै।"
"चानणो मती करया।"

1. जोग-संजोग . पृ. सं. ४७

"क्यूं ?"
"मनै लाज आवै ।"
"चोखो !" वो उणरै कनै गयो ।
"थारी मुह-दिखाई रो हार है, पैर ले ।"
"पैगाण दो ।"
"घूंघटो तो हटाव ।"

स्थान-स्थान पर उपमाओ, उत्प्रेक्षाओ और मुहावरो-कहावतो ने भाषा-सौन्दर्य की वृद्धि मे बडा सहयोग दिया है—

खल्ला सू कूटयोडा जैडा मूडा, लोई बरसण लाग जावै, मारो उणियारो पत्थर जैडो हुयग्यो, मिस्री बणग्यो, न हाल्यो न डूल्यो, आख्या ई दिख सी, आली थेपडया ज्यू धुखणो, काचर रो बीज है, मनरा लाडू खाय नै रैय जावै, कीडी रै पाखा आवण लागगी दीसै, लुगाई नै खीचडै ज्यू कूटो, कान मे कवो लियो, डाकी ज्यू उणरी मा नै खाय जावैलो, एक बात पेर उण रै सामैं आग री पुतली ज्यू ऊभी हुयगी, गणेस बाण ज्यू निसरग्यो, गाभा सू वारै आ जावतो,थूक मुट्ठी मे पार हुयो, वटुक बलर राख हुयग्यो, जाणै इन्दर री अपसरा, बावलियै री सूला जैडा बोल, जाणै सरप सूघग्यो, सुख काच रै चिलकै ज्यू, उणरै हिवडै मे सुरजीत री छिब सास ज्यू वस्योडी ही, तू वी फैसन री छोरया टोरडी ज्यू फुदक रैयी ही, पोत चौडै हुयग्या, मोती जैडा आसूडा, जमी माथै ऊभा हुयनै आकाम रा सपना, मिलाप तूफाण री तरिया, रगरूप रो नमो दारू रै नसै ज्यू हुवै, तिल रो ताड ना बणावै, सैनाई रो सुर दुखरी चानणी ज्यू पसरग्यो हो, मगता देव मिरडा पुजारी, म्हारा ई टुकडा खायनै मन्नै ई आख दिखावै, वटुक चवया खावतो मो टूट्यो खीरा ज्यू तपती आदया थभै ज्यू ऊभो रैयी, भूत दीखै तो गणेम दीखै, मूडै राम वगल मे छुरी, नैण सीप ज्यू, जाणै अमराणै री मूमल हुवै, मोतिया जैडी पलपलाती बत्तीसी, पगा हेठली जमीन सरनगी, चाय आधुनिक सैली रै चितराम ज्यू खिडगी, चोर री मा कित्ता दिन खैर मनासी, मिया बीबी राजी तो के करैगो काजी, सिम्फा हलवा-हलवा टीवै री गत मे वहगी, उणियारो दिनूगै रै पवित्र सूरज ज्यू लागै, ऊपर सू पत्थर ज्यू मग्टा अर मायनै सू माखण ज्यू कवला, गणेश दार्शनिक ज्यू बोल्यो ।
उपन्यासकार मे भाषा-सहिष्णुता तथा नव शब्द-निर्माण की कला भी विद्यमान है। ऐडा, जैडा, मैग, त्या, विया, जिको, वणे, हणे इत्यादि मारवाडी और मेवाडी शब्दो का प्रयोग उपन्यास मे है । छाई-माई, फाटफीटा, निरायती, रली, रोलो रप्पो, रेलापेल, हटैरणी, रराट, टोरीवम, अनटप्पाऊ, रार्ईट, रिगचू-रिगचू, मडदे इत्यादि नए शब्दो का प्रयोग प्रशस्य रहा है । राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग से भी उपन्यास परे नहीं है—रियाटी, वकया-चूमिया, जबरजिन्ना, जियामोत, मोखिया, टूनियो, भाखरवे, अनवनरै, पाछोनर, आगोनर, छिणकरिणया, वेगोमीक, नागोनियै,

सातरी घिराण, चौनिजर, गुभगी, रीसाणी, डोला, श्रणसेटा, पाधरो, तईडो, सिरावण, लाबू -जाबू , वेरो, रूलपट, श्रऊत, गईश्राल । संस्कृत श्रौर उर्दू के शब्द भी श्राए हैं—महत्त्वपूर्ण, जरूर, दुखदायी, श्रसभव, विद्रोही, याचना, स्थितिया, नभ-गगा, भावात्मक, व्यक्तित्व, मजहब, स्तुति, दीन-हीन । कुछ अंग्रेजी शब्द—क्रिटिकल पोजीसन, ट्रैजेडी, श्रापरेशन, लाइन, स्मगलिंग, टाइप । भाषा-शैली का सौष्ठव भी द्रष्टव्य है :—[1]

"रीना श्राकल-वाकल-सी पुरजो खोल परी वांच्यो—गणेस ! मन्नै वेरो हो कै तू श्रावैलो...... पक्कायत श्रावैलो श्रर मन्नै देखैलो..........श्रर थारी सुरजीत तो जीवती ई मरगी है।........उण रो खोखो है........जिकै रा हसा उड नी रैया है।....... ... हूं सगला कस्ट सैय सकूं पण थारै सामै श्रावण रो श्रो कस्ट नई सह सकूं, कदे भी नई सह सकू .... ऐडै जीवणै मे भदरक भी के है।........एक दीन-हीन जीवण....मन्नै छिमा करिये.... श्रातमहत्या करणो पाप है, पण हूं ईश्वर रै हुकम सूं श्रो पाप कर रैयी हू।... थै सगला जणा मन्नै छिमा कर दिया....हू म्हारी खुसी सूं श्रातम हत्या कर रैयी हू ।... मा नै घणाई परणाम । एक श्रभागण—सुरजीत....। रीना रोवण लागगी । श्रहिल्या रा श्रासूडा थम नी रैया हा । गणेस रो कालजो फाट रैयो हो । बसकां भरतो-भरतो वो उण माथै चादरो ढक दियो ।"

(ब) दोष —पृष्ठ १५ पर श्रहिल्या सामने रखी शराब की बोतल को लाने हेतु गणेश को कहती है । किन्तु श्रहिल्या ने 'गुलाब' शब्द के रूप मे प्रचलित शराब को "सोडा" कहा है जो श्रनुपयुक्त है । समझदार गणेश को बच्चे के समान भुलावा देना भी श्रस्वाभाविक है क्योंकि गणेश जानता था कि पिताजी शराब पीते हैं । इसके श्रतिरिक्त श्रहिल्या का कांच की बोतल को कांच की शीशी कहना कितना भद्दा लगता है—"जा नाठर एक शीशी सोडै री ले श्राव ।" मृत व्यक्ति की राख को गगा मे बहाने की परिपाटी तो सर्वप्रचलित है परन्तु पृष्ठ १८ पर वटुक का यह कहना कुछ श्रनुचित-सा लगता है—"हू था दोनूं जणां नै कदेई बामने लगायनै बाल न्हाखूं ला श्रर राखडी नै जमनाजी मे बहा दूं ला ।" सभवत दिल्ली मे यमुना नदी होने के कारण ऐसा कहा होगा । लेखक ने "मादरफ़ाट" श्रपशब्द का प्रयोग वटुक के मुख से श्रनेक बार कराया है जो श्रशोभनीय है । इसके साथ ही ये श्रश्लील वाक्य कितने श्ररुचिकर हैं—(१) जाणै उण रै मन्नै श्रायनै वाथा पडन लागगो है........चूमामाटी करण लागगी है ।" (पृष्ठ ८३) (२) ऐ तो लुगाई नै जूनी जाणै है ।........टायर जराणै री मसीन....। (पृष्ठ ३७) पृष्ठ ५२ पर गणेश की पत्नी का ऐसा कहना जहां

1. जोग सजोग : पृ. स. १००

नक न्यायपूर्ण है—"ओ म्हारै हाथरी चाय पीवै कोनी ओ म्हारो मूडो नी देखणो चावै······ " वैसे अशिक्षित ग्रामीण परिवार मे भी पति को पत्नी "तू" सर्वनाम से सम्बोधित नही किया करती है तब वनिया परिवार से सम्बन्ध रखने वाले गणेश को उसकी पत्नी रतन द्वारा 'तू' का प्रयोग करना क्या ठीक है ? अविवाहित प्रेमिका सुरजीत द्वारा गणेश को यह पूछना भी क्या उचित है—"कैडी टीकै री रात कटी।······ के·········" पृष्ठ ५८ पर वटुक ने रतन के रोने पर गणेश को पीटा। पीटने के वाद तुरन्त गणेश कहाँ चला गया—उपन्यासकार ने नही वताया। गाडी में तो वह चोगे कर रात्रि मे वैठा था। पृष्ठ ६१ पर वटुक से मार खा गणेश सवसे पहले जाने वाली गाडी मे वैठ कर चला गया—कहाँ या किस स्थान पर ? सभवत उपन्यासकार ने पूर्व मे तय नहीं किया होगा कि गणेश को कहाँ भेजा जाय ? आगे जाने पर कलकत्ता स्थान तय किया गया। पृष्ठ ६६ पर सुरजीत को अहिल्या से वरावर मिलना ही वताया है—"सुरजीत वरोवर अहिल्या सू मिलती रैवती।"—उपन्यासकार भूल वैठा है। पृष्ठ ६५ पर हैजे के प्रकोप से वटुक, सुरजीत की माँ तथा रतन को उपन्यासकार ने मरवा दिया तव पृष्ठ ६६ पर हैजे का और प्रकोप वताने की क्या आवश्यकता पडी ? पृष्ठ ६७ पर लेखक ने गणेश के प्रति सुरजीत की याद को समाप्त कर दी—"गणेस री ओलू धीमै धीमै विना पाणी रै तलाव रै पगोथिया री काई सूकै ज्यू सूकगी।" परन्तु पृष्ठ ६८ पर ऐसा लिखते वक्त उपन्यासकार अपनी कला-कुशलता को भूल ही वैठा—"सुरजीत फेर भी गणेस नै एकदम नी विसरी।" गीता ने पृष्ठ ९३ तथा शादी के वाद गीता को साडी की भेंट देने वाले मदिरालय के शरावी ने पृष्ठ ९१ पर गणेश को "वसन्त" (छद्म नाम) नाम से नही पुकारा—ऐसा क्यो ? इन्हे गणेश ने अपना असली नाम कव वताया जवकि इब्राहिम तो अन्त तक 'वसन्त' नाम से पुकारता रहा।—उपन्यासकार यहाँ भी भूल कर वैठा। पृष्ठ ८९ पर गणेश अपना पूरा विवरण इब्राहिम को देने से क्यो हिचकिचाता है ? सभवत उसे भय होगा कि इब्राहिम को उसका पूर्व मे विवाहित होना वुरा लगेगा। किन्तु रतन की मृत्यु के समाचार पाने के वाद भी वह परिचय दे सकता था। उस समय भी ऐसा नहीं किया गया। पृष्ठ १० पर वस मे गणेश के पास वैठी एक लडकी के विषय मे केवल इतना ही लिख कर लेखक की चुप्पी साधना कुछ असमजस-सा लगता है—"उण रै कनै एक छोरी वैठी ही।" पृष्ठ ३७, ३९ तथा ६८ पर उपन्यासकार ने राजस्थानी औरतो की दुर्दशा के चित्र खीचे। परन्तु यह दुर्दशा न केवल राजस्थानी औरतो की है अपितु देश की अशिक्षित और असहाय सभी औरतो की है। अत इस विषय मे लेखक का दृष्टिकोण सीमित रहा है। पृष्ठ २६ पर "गणेस उठनै धुधकारो धारयो" के स्थान पर "गणेस उठनै धुधकारो नाखरा" रा प्रयोग ठीक रहता। पृष्ठ ६० पर "तंग चित्त हुयोडा हा" का प्रयोग

सोने के अर्थ मे भाषाई दृष्टि से गलत है। क्योकि ऐसा प्रयोग मृत्यु के अर्थ मे ही होता है। कुछ अप्रचलित और भद्दी उपमाओ का प्रयोग किया गया है—

(क) गैला कुत्ता ई हिरण लारै भागै।[1]
(ख) दोनू एक दूजै सू मर्‌योडी-सी विदाई ली।[2]
(ग) दिल्ली नगर ऊंघतो सो सूत्यो हो।[3]
(घ) गणेस नै उण री वाता वास जैडी लागी।[4]
(च) आख्या खाडा ज्यू दीखण लागगीही।[5]
(छ) घणी सू इत्ती डरै जित्ती मिन्नी गडक सू।[6]
(ज) रीना लाज सू ताम्बै रै रग ज्यू हुयगी।[7]

उपन्यास मे भले ही कुछ भाषा और भावगत त्रुटियाँ रही हो फिर भी राजस्थानी-साहित्य मे उपन्यास-विधा की न्यूनता की सागोपाग पूर्त्ति उपन्यासकार ने की है। अनेक विशेषताओ के समूह मे त्रुटियाँ छिप जाती है।

एक बीनणी दो बीन[8]

कथा-सार.—अग्रेजी के कवि टेनीसन की ९११ पक्तियो की लम्बी कविता "ईनक आर्डन" के कथानक को २६ परिच्छेदो मे विभक्त कर इस उपन्यास की सृष्टि की है। टाबरा री रमत, जवानी रो सूरज, नवो घर, हेजल-वन मे, ढील रो नकीटो अमोलख वचन, ऐनी रो व्याव, सुख रा सात वरस, सपनो, कमावण खातर, अनासुग्ती मोकाण, अरज, स्याणा टाबर, फिलिप बापू, टाबरा री रळी, फेर हेजल-वन मे, एक वरस बीतग्यो, पाटा गजट, ईनक कठै रैयग्यो, पाछोघरे, सराय मे डेरो, आपरा भी आपरा कोनी, फेर मजूरी, आखरी सनेसो और जाज आयग्यो—इन २६ परिच्छेदो मे विभाजित कथानक का सार इस प्रकार है —

ईनक आर्डन, फिलिप रे तथा ऐनी तीनो बचपन के साथी इग्लैण्ड के समुद्री बन्दरगाह के पास खेला करते थे। ईनक नाविक का लडका था, गरीब था। इसके माँ-बाप बचपन मे ही मर गये थे। फिलिप रे धनी बाप का लडका था तथा ऐनी विधवा माँ की लडकी थी। युवावस्था मे ऐनी ने ईनक से शादी कर ली। इस घटना से हृदय-परिवर्तन होने के कारण फिलिप मे प्रतिशोध की भावना नही रही। फिलिप ने दम्पति को हीरो का हार पहनाया। कुछ समय के बाद ईनक के वाल्टर

---

1 से 7 जोग सजोग क्रमश
पृ स २९, ३१, ४३, ५८, ७९, ११ एव ८४

8. सामाजिक उपन्यास, लेखक—श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, बीकानेर से १९७२ मे प्रकाशित

नामक लडका, मेरी नामक लडकी तथा एक सतमासिया लडका हुए। अब ईनक नाव चलाने और मछली पकडने से सन्तुष्ट नहीं था। एक दिन एक धनी व्यक्ति के निमन्त्रण पर ईनक चीन चला गया। जाते वक्त उसने ऐनी के लिए सारी व्यवस्था ठीक कर दी थी और निशानी के रूप मे वाल्टर के कुछ बाल काट कर ले गया। चीन मे ईनक ने बहुत पैसा एकत्र किया परन्तु दस-ग्यारह वर्ष बीतने पर भी ऐनी के पास इसके किसी प्रकार के समाचार नही पहुचे। सभी ने ईनक को मृत समझ लिया। इस बीच ऐनी की दशा भिक्षुणी जैसी हो गई। उसका सतमासिया लडका भी मर गया। इस सकट-काल मे फिलिप ने ऐनी के दोनो बच्चो की पढाई की व्यवस्था कर दी। काफी समय बाद ईनक के समाचार न मिलने पर ऐनी की माँ के अधिक आग्रह से ऐनी ने फिलिप से शादी कर ली। फिलिप के एक सन्तान भी हुई। फिलिप ने वाल्टर और मेरी को अपने बच्चे की भाँति प्यार दिया। ईनक का मकान बिक्री हेतु छोड दिया गया। ऐनी के मन मे ईनक के वापिस आने का पूरा भय था।

कालान्तर मे ईनक अपने देश को रवाना हुआ। तूफान से जहाज के नष्ट होने पर ईनक ने समुद्री टापू की शरण ली। काफी समय तक एकाकी रहने के कारण अपनी मातृ-भाषा भूल गया तथा भूतो जैसे स्वरूप मे आ गया था। सयोग-वश एक "बटभागण" नामक जहाज पर, यात्रियो की चन्दे की राशि के आधार पर बैठ कर इगलैण्ड पहुँचा। रास्ते मे यात्रियो ने उसे बोलना सिखाया। घर जाने पर ऐनी नही मिली तथा ज्ञात हुआ कि उसका घर बिक्री हेतु पडा है। वह बन्दरगाह के पास की सराय मे ठहरा। सराय की सचालिका मरियम लेन ने ईनक की घटना सुनाई। मरियम ने ईनक को पहचाना तक नही। ईनक ने अपना नाम 'नेटिव' बताया। ईनक फिलिप के घर ऐनी से मिलने की इच्छा होते हुए भी नहीं मिल सका। वह ऐनी के जीवन को दूभर नही करना चाहता था। ईनक बीमार हो गया। ईनक ने मरियम को सारी घटना कही परन्तु यह रहस्य किसी से नही कहने के लिए बाइबिल की सौगन्ध दिला दी। ईनक ने मरियम को अपने बच्चे के काटे बाल दिखाए। मरियम, ऐनी तथा बच्चो को सन्देश देते हुए एकाएक ईनक इस दुनिया से चल बसा। उसके मरने के बाद, मरियम ने, ईनक के रहस्य को ऐनी के समक्ष प्रकट किया।

समीक्षा:-(अ) विशेषताएं —उपन्यास का आरम्भ और अन्त बडे रोचक ढग से किया है। ईनक को मारना जरूरी था क्योंकि उसके रहने पर सभवत ऐनी का जीवन दुखमय हो जाता। उपन्यास का शीर्षक उपयुक्त ही है। बचपन मे भी ऐनी ने ईनक और फिलिप को पति बनाये और उपन्यास के मध्य मे ईनक की पत्नी होती हुई भी ऐनी ने फिलिप को पति बनाया। पाश्चात्य-कथा पर राजस्थानी

भाषा में उपन्यास लिख कर लेखक प्रशंसा का पात्र बन गया है। अंग्रेजी सभ्यता पर राजस्थानी सभ्यता एवं संस्कृति का आवरण बड़े नैपुण्य से चढ़ाया गया है। पृष्ठ २७ पर उपन्यासकार ने ऐनी के मुख से "हाल" शब्द के प्रयोग में गहनता और समझदारी दिखाई है। पात्रों के अंग्रेजी नाम, उनकी वेश-भूषा का वर्णन, पृष्ठ ४३ पर अल्प वचत योजना की झलक, पृष्ठ ४८ पर स्त्री-जाति के स्वभाव का चित्रण और पुस्तकीय ज्ञान का महत्त्व, पृष्ठ ५२ तथा ५७ पर ईश्वर-महिमा का वर्णन, अधिकांश स्थलों पर अंग्रेजी सभ्यता एवं संस्कृति का ध्यान, "ईनक कठै रैयग्यो" अध्याय में भाषागत और प्राकृतिक-सौन्दर्य को प्रस्तुत करना—उपन्यासकार की विलक्षण बुद्धि के परिचायक तो हैं ही साथ ही उपन्यास की कथा में चार चांद लगाने वाले तत्त्व भी हैं। असंख्य उपमाओं तथा मुहावरों-कहावतों आदि ने उपन्यास की भाषा का सौन्दर्य बढ़ाया है—

कालजै में लाय लागती ही, आकास-पताल रो आतरो, बाथेड़ो करै, ढकणी में नाक डुबोयर मर, टाबरपणै रो झाकरको, जवानी रै सूरज, गुफारा दिन जाणै एक सपनो हो, बापड़ै नै ठोकै भाग राख दियो, केई तेतीसा मनायग्या, उण रो रातो मूं डो कस्मीरी सेव जिसो रातो हुयग्यो, सैंत मिरसा मीठा सपना जाणै तू वै रै रस में डुबोईजग्या, निरासा रूपी मगरमच्छणी, वा डरू-फरू हिरणी ज्यूं, टप्पा खावै, सराबी रै दांई फिलिप री जबान लटखडावण लागगी, तू क्या गुडकणै लोटै दई किया करै, चलारा रै नाक में दम आयग्यो, ज्यू बूढो आदमी आपरी जवान मदमाती घण नै देख देखर माथै में तडीड लिया करै, भाठै री मूरत ज्यू ईनक बैठ्यो रैवतो, बासण सोनै-चांदी ज्यू चमकै, वा घर री रैमी न घाट री, डील धाण धुवैं ज्यू धुखण लागग्यो, डाटी बध्योडी पण सवारघोडी नई जगली घास हुवै ज्यूं, आख्या में इत्तो भोलास जाणै कैण ई हिरणी री आख्या चेप दी हुवै, साभी गे छोरो मीर मारग्यो, एक सागै दो-दो घोडा री असवारी करै, सीरख देकर पग पसारणा, कबूतर जाल सूं टरै ज्यूं तू अठै आवतो डरै, वीण बाजै जिसा मीठा सुर, आपरै मारग टुरग्यो जाणै धरमसाला नै छोडर बटाऊ निरमोही ज्यूं टुर जाया करै, धरती नै सको आवै कै इसी कवल-पगी खातर म्हैं मारग में पुसव क्यू नी बिछाया, स्याल री मौत आवै जद वो गाव में जाया करै। कुछ संस्कृत हिन्दी तथा उर्दू आदि भाषाओं के शब्द-प्रयोग से लेखक की भाषा-सहिष्णुता प्रकट होती है—मुद्रा, तानरता, सत्याग्रह, वय सन्धि, अलौकिक, सावधान, विख्यात, प्रतिद्वन्द्वी, सच्चरित्र, कृतघ्नता, प्रार्थना, अशिक्षा, विद्वान्, सांत्वना, व्यस्त, निराहार, प्रेयसी, अविराम, परम धाम, सर्वेसर्वा, संग्राम, अपलक, अमोघ, रजत-जयन्ती, मूर्तिमान, खुदगरजी, बेधड़क, इमान्त, कबूल, गैरहाजिरी, माफी, तमीद, करामात, कुदरत, खरीद-फरोख्त इत्यादि। इसके अतिरिक्त राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दों के प्रयोग

तथा नव शब्द-निर्माण के कार्य मे लेखक की दक्षता प्रकट होती है—गलवाखडी, फुरण्या, लजखाणो, माडाणी, घणियाप, विसावरा, घर-घोलिया, कदम-काल, चराक-मराक, आलखो, छेवट, नाटर, हेड री हेड, भळको, सुसतादरा, अडफवाऊ, घेसला, एढा, अलगला, तेवडली, सासो, कूतर, बुक्का, परवार, दालद, नीठ-निरावल, सागरा, बोदा, भायला, मूडामूड, खटाव, चचेडियो आगूच, खखीदर, उरला, एकलपो, मीट, पोछडी, दोघड चिन्त्या, आसग, चूचकी, बिलाईजगी, डलकीज्योडै ।

यथोचित मात्रा मे प्रयुक्त सवादो से उपन्यास की शोभा बढी है —[1]

"तूं रीस कर लेसी ।"

"रीस करण री बात कैवै क्यू ?"

"रीस करण री बात तो कोनी ।"

"तो फेर हू तनै गैली लागी जिको रीस कर लेसू ।"

"हू भी ऊभो-ऊभो थकग्यो ।"

"ई मे रीस री काई बात है ?"

"तू कैवै तो बैठ जावू ?"

"म्है किपी तनै ऊभो रैवरा री सजा दी ही ।"

कही कही पर दीर्घ वाक्यावलि का प्रयोग कर सस्कृत के उपन्यासकार बाणभट्ट की "कादम्बरी" की स्मृति पाठकों के समक्ष जागृति के रूप मे खडी कर दी गई है—[2]

"भोर मे उगूण दिस ऊगते भाण रो किरण-जाल ताड रै पत्ता माय सू अणगिणत तीरा ज्यू ईनक री झूपडी मे बिखर नै बीनै सैचन्नण कर नाखतो । उण री झूपडी मे आया पछै सूरज री किरणा सागर-जल सू रमण नै आवती, अर बानै देखता-देखता ई जल आपरो रातआलो कालो चोलो उतारनै चमचमाट करतो आवरण धारण कर लेवतो । देखता-देखता ऊगण आलो भाण ठीक सिर माथै ऊपर घणो टिकतो कोनी, ज्यू जगती थिर नई रैया करै । आथूण कानी सूरज इत्तो वैगो पूग जावतो ज्यू जवानी ढलता झट बूढापो घेरा घालण लाग जावै ।"

(ख) कमियां .—पृष्ठ ७४ पर ईनक को बिठाने हेतु ऐनी द्वारा पीढा खींचना, पृष्ठ ६८ पर ऐनी के मुख से ईश्वर के लिए "ठाकुरजी" शब्द का उच्चारण कराना, फिलिप के लिए वाल्टर और मेरी द्वारा बापू तथा बापजी और ऐनी के लिए 'मा' शब्दों के उच्चारण कराना (पृष्ठ ६९ से ७६ तक), पृष्ठ ८७

1 एक बीनणी दो बीन, पृ स ३२-३३

2 वही, पृ स १०६

पर ऐनी का अपनी माँ को 'मा' कहना, पृष्ठ ८८ पर कुर्सी के स्थान पर मूढे का प्रयोग, पृष्ठ २३ पर "पाव भर" और "पीमा" शब्दों के प्रयोग तथा पृष्ठ ४७ पर पलग से नीचे उतर कर ईनक के पैरो मे बैठ कर आदर दिखाना इत्यादि बातें अंग्रेजी सभ्यता एवं संस्कृति के विपरीत हैं, जिन्हे उपन्यासकार ने राजस्थानी सभ्यता एव संस्कृति का रूप देने का प्रयास किया है। कुछ स्थानो मे अश्लीलता के नगे चित्र अंकित किए गए हैं जो भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल हैं :—

(१) ईनक अर ऐनी एक बीजं री भुजावा मे कसीजियोडा आपस मे चूमो ले रिया है।[1]

(२) पाच सात मिट मे आपा घरे धूग जासा, जित्तै थारै सू खटाव राखीजै कोनी ?[2]

(३) ऐनी नै आपरी लूंठी भुजावां मे घालर उण रा होंट चूम लिया।"[3]

पृष्ठ ६० पर "इण छोटै टाबर री निरदोस आतमा निकलगी ज्यूं पीजरै माय सू पछी उड जाया करै।" कह कर आत्मा और प्राण को एक ही समझ बैठना, पृष्ठ ७५ पर "सैंतमाखी" के स्थान पर गोमाखी का प्रयोग न करना अनुपयुक्त है। पृष्ठ १०१ पर लेखक के इस वाक्य की पुष्टि नही हो सकी है—

"बीरी आख्यां सू टलै-टलै बिरखा बरसण लागगी।"

किसकी वर्षा ? पश्चिमी देशो मे प्रेमी-प्रेमिकाओ के मिलन मे लोक-लाज नही हुआ करती है। बलात्कार करने वाला अपराधी होता है। अपनी भूतपूर्व प्रेमिका से बाते करने वालो पर पडोसी तूफान नही उठाया करते हैं परन्तु उपन्यासकार ने पृष्ठ ७२ पर लोक-लाज तथा ९२ से ९५ तक के पृष्ठों मे ऐनी और फिलिप के विषय मे लोगो द्वारा कुचर्चाओ का तूफान उठाने की बात की है जो पश्चिमी संस्कृति के प्रतिकूल है। पृष्ठ ८४ के अन्तिम अनुच्छेद तथा ८५ के सभी अनुच्छेदो का पुनरावृत्ति के रूप मे निरर्थक प्रयोग किया गया है। पृष्ठ ८७ पर ऐनी की माँ को एकदम याद करना ऐसा लगता है कि वह यही से जीवित होकर आई है। इससे पूर्व भी लेखक इसे उपस्थित कर सकता था। ईनक के समाचार पूछने आ सकती थी या ऐनी के साथ भी ईनक की चीन-यात्रा के दौरान रह सकती थी। किन्तु उपन्यासकार ऐसे स्थलों पर इसे भूल ही बैठा। "पाटा गजट" अध्याय मे ऐनी की माँ की पूरी आवश्यकता थी परन्तु लेखक ने उसे इस समय भी छिपा कर रखा। लोगो री कुचर्चाओ के वक्त आत्मीय व्यक्ति दूर नही रहा करते हैं परन्तु ऐनी की कुचर्चा के तूफान मे उसकी माँ का पता नही पडा। पृष्ठ १०६ पर ईनक ने टापू-निवास के

1 एक बीनणी दो बीन पृ. स ३६
2. वही : पृ. सं ४३
3. वही : पृ स. ४८

समय पूरे परिवार को एक एक सदस्य का नाम लेकर याद किया परन्तु सतमासिया बच्चे को याद नहीं किया। जबकि वह बच्चा चीन-यात्रा के बाद भी काफी समय तक जीवित था, और बाद मे उसके मरने की सूचना भी ईनक को नही मिली थी। चीन-यात्रा मे लौट कर ईनक सीधा अपने घर के बाहर टगे बोर्ड पर "बिकाऊ" शब्द को देख कर वापिस सराय मे आ गया। दूसरे दिन भी उसने ऐनी आदि का पता लगाने का प्रयास नही किया—उपन्यासकार को यह क्या सूझी? पृष्ठ १३० पर ईनक के मुख से ऐसा कहलाना बिल्कुल गलत है—" म्हैं बी लुगाई सू ब्याव करयो, जिकी दो बार आपरो नाव पलट्यो है।" ऐनी ने अपना नाम कब बदला? उपन्यासकार भूल गया है। ऐनी की माँ का क्या हुआ? वह कहाँ गई? उपन्यास-लेखक मौन रहा है, क्यो? जब ईनक के माँ-बाप बचपन मे ही मर चुके थे तो उसका पालन-पोषण किसने और कैसे किया? क्या ईनक वृक्षो की तरह बिना पालन-पोषण के ही बडा हो गया? फिलिप रे के बाप के विषय मे तो उपन्यास-लेखक ने कुछ कहा है परन्तु उसकी माँ को छोड दिया। क्यो? कुछ अप्रचलित और भद्दी उपमाओ के प्रयोग भी उपन्यास मे यत्र-तत्र मिलते हैं—

(१) "मगलो समान ठसाठस जचायर इया धर दियो ज्यू मटर री फली मे मटर हुवै अथवा ज्यू बीज रै माय कुदरत रै हाथ सू पौधो, पेड, फल-फूल सगला भरयोडा हुवै।[1]

(२) "वा रोवती-कलपती घरे आयगी जाणै ईनक नै दफणाय आई हुवै।"[2]

(३) उणनै इत्तो आनन्द हुवतो जित्तो करमकाण्डी नै होम करया हुवै।"[3]

सस्कृत के क्लिष्ट शब्दो के ज्यो के त्यो प्रयोग से भी राजस्थानी भाषा की अनभिज्ञता प्रकट होती है या राजस्थानी शब्द-कोश की कमी।

पश्चिमी सस्कृति और सभ्यता पर आधारित कथानक वाले इस उपन्यास पर, लेखक को उसे राजस्थानी सस्कृति और सभ्यता का आवरण चढाने के प्रयास मे भले ही आंशिक सफलता मिली हो। ऐसे उपन्यासो के लेखन का प्रयास सर्वप्रथम जोशीजी का ही रहा है जिसके लिए बधाई के पात्र हैं। छोटी-सी कथा को बृहत् रूप देना कोई सरल कार्य नही है। राजस्थानी मे इस प्रकार के उपन्यासो का सर्वथा ही अभाव है जिसकी पूर्ति का श्रेय जोशीजी को है। इस दृष्टि से इस उपन्यास का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है।

---

1 एक बीनणी दो बीन, पृ स ५६
2 वही, पृ स ५८
3 वही, पृ स ८३

आँधी अर आस्था[1]

कथा-सार:—राजस्थान के ही मोटास गांव मे जगन्नाथ, उसकी बूढी मां, पत्नी यशोदा, शिवदयाल और सूरजिया नाम के दो बच्चे, शारदा और पार्वती नाम की दो बच्चियां रहते है। जगन्नाथ के पिता का देहान्त हो चुकता है। जगन्नाथ राजस्थान नहर पर चलने वाले फेमिन के कार्य मे मेट के पद पर है। वहां से छुट्टी लेकर गांव आता है। गाव के सरपंच को जगन्नाथ से ईर्ष्या है। वह उसके खेत मे से पेड़ भी छुपके से कटवा लेता है तथा जगन्नाथ के स्नेहियो को भी परेशान करता रहता है।

एक दिन जगन्नाथ चारा खरीदने हेतु रात्रि मे सेठ प्रतापजी के घर जाता है। वहां अपनी विधवा पुत्रवधू के साथ सोए दुश्चरित्र सेठ को देख कर लौट आता है। सेठ प्रताप जगन्नाथ द्वारा इस व्यभिचार-काण्ड को देख लेने के भय से घबरा कर आत्महत्या कर लेता है। सरपच की जालसाजी और सेठ प्रताप के आत्महत्या के आरोप से जगन्नाथ को कैद की सजा मिलती है। इधर गांव मे व्यग्यो तथा सरपच की ज्यादती से तग आकर यशोदा आदि मोटास को छोड कर बीकानेर चले आते है। वहां पूर्व के हाली (मजदूर विशेष) रामो जाट इनकी सहायता करता है। यशोदा बीकानेर के ही एक सेठ के यहां खाना बनाती है। मन का पापी सेठ बुरी नीयत से यशोदा को सौ रुपए और सोने की अगूठी देना चाहता है। यशोदा उसे फटकार कर सेठानी से और फटकार दिलाती है। सेठ मर जाता है। इधर जगन्नाथ की बेटी पार्वती भी मोतीझरे से मर जाती है। एक रामस्नेही बाबा द्वारा बेचे गए शिवदयाल को रामो जाट थानेदार धोकलसिंह की सहायता से मुक्त करा कर घर ले आता है। बीकानेर से रवाना होते वक्त यशोदा को उसकी नौकरी के रुपयो से एक गाय खरीद कर सेठानी देती है। कुछ समय के बाद जगन्नाथ भी अपने प्रभाव से जेल से छूट कर पांच सौ रुपयो के साथ घर आता है। सबसे मिल कर खुश होता है।

इस प्रकार जगन्नाथ की राहो मे एक प्रकार से कष्टो की आंधी आती है परन्तु वह इस भयकर आंधी मे भी परिवार और जमीन के प्रति अपनी आस्था नही छोड़ता है।

समीक्षा:— (क) विशेषताएं—जगन्नाथ की मां, माणकसरवाली इसाई धर्म की मौसी और मीरां दादी के मुखो से स्थान-स्थान पर भजन बुलवाये गए है जो लेखक की एक मौलिक सूझ है। उपन्यास के मुख्य पात्र नायक जगन्नाथ के जीवन मे कष्टो की एक भयकर आंधी आई जो उसे जेल ले गई। परन्तु उसकी धर्म, सच्चाई और भलाई मे आस्था ने उसे सुखी जीवन बिताने को फिर से तैयार कर

1. सामाजिक उपन्यास लेखक-अन्नाराम 'सुदामा' शिक्षा विभाग बीकानेर (राजस्थान) द्वारा १९७४ मे प्रकाशित, ११ परिच्छेदो मे विभक्त

दिया। खेतो के हजारो मन अनाज ने आंधी से उजडे जीवन मे सुखो की आस्था और वहार ला दी। उपन्यास मे गाँवो की गरीवी, वहाँ का तग और जटिल जीवन, वहाँ की कम से कम अभिलापायें, वहाँ का भोलापन, वहाँ के सरपचो आदि के अत्याचारो का सागोपाग वर्णन है। शुद्ध ग्रामीण जीवन की झाँकी के दर्शन इस उपन्यास मे होते हैं। कई पात्रो का रूप-वर्णन भी वडा मनोरम वन पडा है। उपन्यासकार ने उपन्यास के अनेक स्थान अपने आसपास के ही चुने हैं जिनसे वह भलीभाँति परिचित भी है। उपन्यास यथार्थवाद के अधिक निकट है।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ सस्कृत, हिन्दी, उर्दू और पजावी भाषाओ के शब्दो का भी यथोचित मात्रा मे प्रयोग कर अन्यान्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव भी लेखक ने प्रकट किया है—

हिन्दी के शब्द—विना, असमजस, त्योहार, चोरी, न्यारी, ससार, मत।

उर्दू के शब्द—इन्तजाम, फालतू, नसीव, तजवीज, मजूर, वरकत, हवालात, इज्जत, जामनी, चश्मदीद, खतरनाक, खानदानी।

पजावी के शब्द—"पुत्त झडा, एकदफै त्वाडा मुख वेन्नू, थ्वाडी सौवा वरसा दिया उम्र, थ्वाडे पैरा विच असि जेल मे ही मौजा कर दे है, वाहे गुरू दी मेर नाल जवाणी वणी रहे।"

सस्कृत के शब्द—दिशाशूल, चेष्टा देशव्यापी, कुपात्र, नियोजन, निरादर, श्रद्धा, प्रकृति, अस्थि, मांसभक्षी, विष्ठा, सस्कार, समागम, निष्काम, आत्मविश्वास, इष्ट, शक्ति विक्षेप, अर्धाङ्गिनी, क्रान्ति।

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द—गेडलो, वुरछ्योडा, अनासुरति, रोही, किचरीज्योडा वोकरसी, तूटै, इवयातरै, घिगाणै, खावी, दावै, अमला-मसला, वेजका, वुगलिया, गिदावण, चफर्योडा, पलगोड, टंगचाकरी, ईनै-वीनै, ढचरकावै, वि रियावर, अणजीमण, राफडलीला, मासवागी, वचवचीजतै, दवट्योडा, तसियो, विसाई, गोईपैमू मनेग्यानै, वारवाम, साव छडो, ऊणायत, डोटलीजगी, सोराई, वेलीपी, कानलो, गोभी, न्यायो, वमवसीजती, दूजियाण।

इनमे लेखक की नूतन शब्द-निर्माण-कला के दर्शन भी हो जाते है। लघु सवाद भी यत्र-तत्र विकीर्ण हैं—[1]

"वावो वोल्यो—"माटी मे सोरम हुवैनी रे?"
"हा वावा।"
"लोगा नै आणी चाईजे या नही?"
"हा वावा आणी चाइजे"

1 आंधी अर आस्था पृ स ३७

"जद नाक ई रो'लो हुवै तो वा किया आवै रे ?"

"को आवै नी ना'।"

लेखक का आलंकारिक, मुहावरों और कहावतो का ज्ञान श्लाघ्य रहा है—जैसे लागसी, की री रावगी न की री देवगी, ढूंढ़धागी अर राव छाणी, डोलर हिंडै ज्यू फिरै, करन्ता सो भुगन्ता, रावण रै तो वा ही भावण, समदर मे रैणो अर मगरमच्छ सू वैर कद पोसावै, को मिया मरै न को रोजा घटै, मीता किसना ही को बोलू नी काणती नै किसो काजल मारणो है, नगद दाणा वीन परणीजै काणा, बामण रो कोई जजमान अर लापसी रो कोई पकवान, खावण नै सूर अर कुटीजण नै पाडा जाट जवाई भाणजा कीनै न्याल करै, वोरै सटै वोरो, वीमै वयारो नोरो, गाय न वाछी नीद आवै आछी, आख्या घिया कोख्या-सी पीली, बावो आवै न ताली वाजै होइ बूढी गधी र'-सा किया, कीड़ी मचै ती र खाय, ऊठ चढै न कुत्तो खायो सैतरो-वैतरो हुग्यो वो, कली वली नुलसी, न कोम वर्ण न नाव, ब्रह्म मे मुगति माथै जावै जीव-सो आपगो आपो खोवै है। लेखक ने पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग मे भी सावधानी रखी है। पृष्ठ ७४ पर कैदी भण्डासिंह और उसकी माँ के पजाबी भाषा के सवाद लेखक के पजाबी भाषा के ज्ञान के सूचक हैं।

(ख) दोष —पति के जेल चले जाने पर जसोदा का अचानक मोटास गाँव से बीकानेर आ जाना तथा जगन्नाथ की खैर खबर तथा पूछताछ भी नही रखना एक विलक्षण एव अस्वाभाविक बात है। प्रथम परिच्छेद मे याद किए जगन्नाथ के के छोटे बेटे सूरजिया को उपन्यासकार अन्त तक कैसे भूल गया ? उसका कोई अस्तित्व और काम यदि नही था तो उसे प्रथम परिच्छेद मे भी याद करने की क्या आवश्यकता थी ? उपन्यास मे सेठानी का अपने पति को भयकर अपशब्दो का कहना भारतीय सस्कृति के विपरीत है—[1]

"राड जायोडा, तैमै ही जे मउर हुतो तो बेटा बहू तनै को राखता नी। एक बीनणी तो थारै सिर मे गिलास री दीनी ही—फेर पूठ्या थारा, पण चिड़ाल, ई तुलछी कानी तै मूढो करयो जीसू पैला थारी जीभ खिर'र नीचै कोनी पडी। मनै चाहै कुम्भीपाक भोगणो पडै चाहै जेल, तनै हू आज जीसू मार'र ही बारै निकलस्यू।.... का तो तू मरसी दिनूगै सू पैला पैला अर का फेर हू फासी खास्यू, हू धायगी।"

उपन्यास के शीर्षक की पूर्ण सार्थकता प्रकट करने वाले तथ्य कही नजर नही आए है। पृष्ठ ८७ पर अन्तिम पक्ति मे "आस्था" शब्द से युक्त एक वाक्य अवश्य आया है जो निरर्थक-सा ही है। इसके अतिरिक्त यह है कि राजस्थान नहर पर चल रहे फैमिन के कार्यो मे चार-पाँच दिनो की छुट्टी जगन्नाथ ने ली और

1 आंधी अर आस्था, पृ स ५६

इसके वाद वह वहाँ कभी नही गया। काफी समय के वाद उसकी सेवा का क्या हुआ ? क्या उसे कभी नौकरी से हटाने की सूचना भी मिली ? लेखक ने इस घटना को एकदम भुला ही दिया। पृष्ठ ७२ तथा ८२ पर लेखक जगन्नाथ की दार्शनिकता मे खो गया है। उपन्यास के अन्तिम परिच्छेदो मे जगन्नाथ जेल से मुक्त होकर अपनी माँ से ही मिलता है। पत्नी और वच्चो से वाद मे न तो मिलता है और न ही उनके विषय मे कुछ पूछता है। पत्नी और वच्चे उस समय कहाँ थे ? उनकी उत्कण्ठा को उपन्यासकार ने स्थान क्यो नही दिया ? जगन्नाथ की वेटी शारदा का जिक्र भी नही के समान रहा है। जगन्नाथ के जेल से छूटकर आने पर रामो जाट कहाँ था ? उस समय रामो जाट के विषय मे भी लेखक मौन रहा है। जगन्नाथ की माँ, वहू आदि को सरक्षण देने वाली वीकानेर की उस सेठानी से क्या जगन्नाथ मिला ? यदि नही तो क्यो ? अपनी मृता पुत्री पार्वती के विषय मे भी जगन्नाथ मौन-सा रहा है। न तो उसके वारे मे उसने पूछा और न ही उसके विषय मे किसी ने उसे कुछ वताया। क्यो ? उपन्यास के कुछ पृष्ठ निरर्थक और अनावश्यक हैं। पृष्ठ ७९ पर जगन्नाथ पजावी भाषा के वाक्य वोलता है। जगन्नाथ पजावी भाषा कव सीख गया ?

स्थान स्थान पर मौत के लिए "हसलो उडग्यो" इस एक ही वाक्याश का प्रयोग किया गया है। उपन्यास मे कई स्थनो पर 'श' तथा 'ष' का प्रयोग अनेक वार किया गया है जो राजस्थानी भाषा के विज्ञ लेखक के लिए वडी लज्जाजनक वात है। देशव्यापी, शान्ति, परेशान, विश्वास, इष्ट, चश्मदाद, शक्ति, विष्ठा और निष्काम इत्यादि शब्द इसके द्योतक हैं।

उपन्यास मे अनेक विशेषताओ के साथ कई कमियाँ है परन्तु गुणो के समूह मे वे कमियाँ छिप जाती है। तदुपरान्त ग्रामीण भोली-भाली सस्कृति पर आधारित इस उपन्यास की सृष्टि का द्वितीय प्रयास राजस्थानी साहित्य की न्यूनता की पूर्ति के लिए सराहनीय है। सुदामाजी की परिमार्जित और सरल राजस्थानी भाषा के सौष्ठव ने शब्द-भण्डार मे वृद्धि की है साथ ही आलकारिकता और मुहावरो-कहावतो के सौन्दर्य मे भी।

भगवान महावीर[1]

कथा-सार—महावीर कालीन देस-दसा, जनम, बालपण री बाता, ब्याव अर वैराग, चण्डकौसिक रो उद्धार, महासती चन्दनबाला, गोसालक, बलदा री रुखाली, इन्द्रभूति रो मान, राजगृही रो श्रेणिक राजा, वैसाली रो विकट युद्ध,

1 पौराणिक एवं ऐतिहासिक उपन्यास, लेखक—नृसिंह राजपुरोहित, शिक्षा विभाग बीकानेर (राजस्थान) द्वारा १९७८ मे प्रकाशित।

महावीर री धर्म-परिवार, रोचक प्रसग, जोत मे जोत मिली—इन १४ परिच्छेदो मे विभक्त उपन्यास की कथा का सार इस प्रकार से है—

महावीर के जन्म से पूर्व देश की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति अत्यन्त खराव थी। उच्चवर्ग का सवल होना तथा निम्न वर्ग का निर्वल होना ही उस समय की विशेषता थी। कुण्डनपुर के राजा शुद्धोदन की रानी त्रिशला की कोख से महावीर का जन्म हुआ। बचपन मे खेलते समय इन्होंने एक भयंकर काले नाग को निष्क्रिय बनाया जिससे इनका वर्धमान से महावीर नाम हो गया। शादी वसन्तपुर के महासामन्त की पुत्री यशोदा के साथ हुई। माँ-बाप के मरने पर ये भाई नंदिवर्धन को राज्य सौंप कर सन्यासी बन गए। वाद मे साधनामय जीवन विताने लगे।

महावीर ने शापग्रस्त चण्डकौशिक को सर्प-योनि से मुक्त कराया। अपनी सबसे छोटी मौसी चन्दनवाला से भिक्षा-ग्रहण की। मखली-पुत्र गोसालक के गर्व को नष्ट कर उसे शिष्य बनाया। रक्षा हेतु सौंपे बैलों के मालिक किसान द्वारा महावीर को दण्ड दिया गया। कानो मे ठोकी गई खीलें पावानगरी के सेठ के मित्र वैद्य ने निकाली और घाव ठीक किया। बाद मे एक श्रमण द्वारा विद्वान् सुमति के पुत्र इन्द्रभूति को प्रश्न पूछ कर उसका गर्व नष्ट किया। महावीर से प्रभावित होकर इन्द्रभूति उनका शिष्य बन गया। जैन धर्म के विरोधी राजा श्रेणिक ने भी इनका शिष्यत्व ग्रहण किया। श्रेणिक की मौत उसके बेटे कूणिक के कारण हुई। वाद मे कूणिक और उसके मामा चेटक मे वैशाली का भयंकर युद्ध हुआ। चेटक वन मे भाग गया और कूणिक महावीर का अनुयायी बन गया। इन्द्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति आदि ग्यारह गण इनके प्रधान रूप थे। श्रेणिक का पुत्र वारिसेन भी इनका शिष्य बन गया। इस प्रकार महावीर के अनेक शिष्य बन गये। ४२ चौमासो के बाद ७२ वर्ष की उम्र मे विहार मे स्थित पावानगरी (अपापगरी) मे महावीर ने महानिर्वाण प्राप्त किया।

समीक्षाः—(क) विशेषताएँ—महासती चन्दनवाला, बलदा री रुखाली, इन्द्रभूति रो यज्ञ, राजगृही रो श्रेणिक राजा, वैशाली रो विकट युद्ध और रोचक प्रसंग—ये अध्याय बडे रोचक बन पडे है भले ही इनसे कथा प्रवाह मे बाधा पडी हो। लेखक ने प्रत्येक अध्याय को सुन्दर और आकर्षक शीर्षक से सुसज्जित किया है। अन्तिम अध्याय का नाम तो अत्यन्त ही मनोरम बन पड़ा है—"जोत मे जोत मिली"। पृष्ठ १०-१५ पर बच्चो के खेल सम्बन्धी सवाद, पृष्ठ १४ पर महावीर और उनकी माँ के सवाद, पृष्ठ २९, ३२ और ६२ पर महामती चन्दनवाला और भीलो के सवाद और पृष्ठ ७९ पर राजगृह के नामी चोर विद्युत् और नगर-वधु सुन्दरी के सवाद बडे सुन्दर बन पडे हैं। लघुवाक्यावलिपूर्ण एक सवाद का उदाहरण—[1]

1 भगवान महावीर · पृ स. ७९

"सुंदरी !"
"थू म्हासू अणू तौ हेत राखै ?"
"क्यू काई बात है ?"
"म्हनै एक चीज लाय नै दे ।"
"जावण दे, थू वा चीज लाय नी सकैला ।"
"अरे थूं बोल तो खरी ।"
"ना, ना, रे ! जावण दे ।"
"थूं कैवै तो म्हू प्राण देय सकू ।"
"म्हनै भरोसौ है ।"

लेखक की शब्द-निर्माण कला भी द्रष्टव्य है—च्यारू मेर, सैसू, नेखम, आथमणी, आकमणी, लवाजमा, हूमरडाई, लाटू-पाटू और धरामूल । हिन्दी, उर्दू और संस्कृत आदि भाषाओं के शब्दो का प्रयोग लेखक की भाषा-सहिष्णुता की विशेषता को प्रकट करता है—

हिन्दी शब्द—उदाहरण, साझ, पछी, पखेरु आदि ।

उर्दू शब्द—अजायबघर, बेखबर, तकदीर, उम्मीद, मजूर, अमुक, खैर, फिजूल, कुदरत, मदद, और जरूर आदि ।

संस्कृत शब्द—सूत्रपात, संस्थापक, अग्तेय, ज्ञातपुत्र, महोत्सव, मथर, विरक्ति, अलिप्त, ज्ञानचक्षु, ध्यानावस्थित कटाक्ष, आकाक्षा ।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग भी स्तुत्य रहा है—एकरण, पोतारा, अवखाड्या, छतापरण, अखाई, खैगाल, कलीजगो, आडखो, गोटोज'र, टणकेल, निगी, छेटी, तेवड, बुई, छिनाल, सेडत, घू बोई, आवकारो, सम्पात, भमरोली, ओगाल, भाठा और ठीमर आदि ।
आलंकारिक-सौन्दर्य, मुहावरो एव कहावतो का यत्र-तत्र आवश्यकतानुसार प्रयोग श्लाघ्य रहा है—

रस्सी री दाई पकड'र तेतीसा मनाया, गो री मौत आवै जद भीला रै झूप नटै, थाँग ज्यू धुखती आख्या, मसाण हुवै ज्यू सून्याड पडी, काटी रो जोर बोचिया तांई, बीनी ताहि विमार दै अर आगै री सुध लेय, नाग रो भाठै जिमो टरटो ढिवटो गड'र पाणी बणगो, करम गति टाली नाहि टलै, आख्या फाड्या गेलै रै ज्यू, ऊखल मे माथौ आया पछै धम्मीडा सू काई डरणो, भील-सरदार राक्षस रै ज्यू ऊभो हो, निघणी कुत्ता सू घरवास कर सकै, सियालू पवन तीर रै ज्यू, पाणी निरखणो, चोट रा चणा चाबणा हा, अपणी करणी पार उतरणी, धारा पडता, पू दा लैवना, उठै वागना बोलै हा ।

(ब) दोष —उपन्यास की-सी स्वाभाविकता इसमे नही दिखाई देती है। इसे तो जीवनी का रूप दिया जाना चाहिए था। औपन्यासिक कथावस्तु से यह अत्यन्त दूर है। उपन्यास मे बहुत से स्थलो पर इतिहास और सामाजिक ज्ञान की तरह बिन्दु दिए हैं—पृष्ठ ७ पर महारानी के स्वप्न की १६ वस्तुएँ, पृष्ठ १६ से १७ पर महावीर के पाँच महाव्रत सहित २८ मूल गुण, पृष्ठ ५० पर महावीर की तपस्या का १६ बिन्दुओं मे वर्णन, पृष्ठ ५५ पर सात तत्त्व, जीव की ४ गतियाँ, चार कषाय, पृष्ठ ५६ से ५८ पर ८ कर्म, ५ पंचास्ति तथा महावीर के ११ शिष्यो का परिचय, पृष्ठ ७४ से ७६ पर महावीर के ११ शिष्यों का विवरण। महावीर की कठोर साधना, विवाह का प्रसग, बचपन की क्रियाओ, राज्य मे विलासी-जीवन तथा गृहस्थ के आनन्दो और निर्वाण आदि प्रसगो का विस्तार करना चाहिए था जिससे उपन्यास मे रोचकता आ जाती। बाल्य-काल और विवाह का वर्णन अत्यन्त ही सूक्ष्म रूप मे किया है। ब्याव और वैराग, इन्द्रभूति री यज्ञ, महावीर री धर्म-परिवार, जोत मे जोत मिली—इन प्रसगो के विस्तार और मौलिकता के प्रयास की कमी रह गई है। महासती चन्दनबाला, राजगृही रो श्रेणिक राजा, वैसाली रो विकट युद्ध और रोचक प्रसग—इन अध्यायो की तनिक भी आवश्यकता नही थी। "बालपणा री बाता" परिच्छेद मे अन्य कई मौलिक घटनाओ से उपन्यास के सौन्दर्य मे वृद्धि की आवश्यकता थी। "महावीर री धर्म-परिवार" प्रसग मे महावीर के ११ गणधरो के नाम देकर सभी का पृथक् पृथक् सूक्ष्मत परिचय दिया है जो इतिहास की विशेषता के निकट है। उपन्यास मे ऐसी शैली नही अपनाई जाती है। पृष्ठ ६, ८ और ९ पर महावीर के पिता के दो नाम बताएँ हैं—सिद्धार्थ और शुद्धोदन। इन दोनो नामो के विषय मे स्पष्ट नही करते हुए लेखक ने पाठकों को भ्रम मे डालने का प्रयास किया है। उपन्यास को पढने से ऐसा ज्ञात होता है कि यह उपन्यास लेखक ने अत्यन्त ही शीघ्रता से लिखा है। सभवत जैन ग्रन्थो और इतिहास आदि की समुचित सहायता नही ली होगी और कल्पना का घोड़ा भी यथोचित मात्रा मे नही दौडाया होगा। उपन्यास के बीच बीच मे जैन शास्त्रो, संस्कृत और प्राकृत के ज्यो के त्यो उद्धरण निरर्थक एव अनावश्यक रूप से दिए हैं। इनका राजस्थानी भाषा मे विश्लेषण भी नहीं किया गया है। श्रमण, श्रम, श्रद्धा, कषाया इत्यादि शब्दो मे 'श' और 'ष' का प्रयोग अनुचित है। उपन्यास की भाषा मे संस्कृत शब्दो की भरमार ने राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता पर तीखा प्रहार किया है—

अज्ञान, संस्कृति, निर्माण, संस्थापक, अपरिग्रह, लोकनायक उच्च, प्राकृतिक, समर्पन, सांसारिक, दीक्षा, ग्रहण, उद्धार, अभिनंदन, उद्यान, परिस्थिति, प्रसिद्धि, विनीत, सात्विक, अनुयायी, प्रासाद, पट्टाभ, आकांक्षी, अविस्मरणीय, धार्मिक, नैतिक, ललित, नियमानुसार।

भाव और भाषागत कुछ कमियाँ होते हुए भी यह पौराणिक या ऐतिहासिक उपन्यास राजस्थानी साहित्य की अनुपम कृति है। एक ओर जहाँ उपन्यास मे कई विशेषताएँ समाविष्ट हैं, दुसरी ओर वहाँ राजपुरोहितजी का इस क्षेत्र मे प्रथम प्रयास सरल और प्रवाहमय राजस्थानी भाषा के साथ राजस्थानी साहित्य की श्री-वृद्धि करने मे अग्रणी है। अत्यन्त ही वृहद् कथा को एक छोटे से कथानक मे आवद्ध कर राजस्थानी साहित्य की उपन्यास-विधा को गौरवान्वित करने का कार्य कोई कम महत्त्व का नही है। ऐसी पौराणिक या ऐतिहासिक कथा का समावेश राजस्थानी उपन्यास-विधा मे प्रथम ही सफल प्रयास है। इस दृष्टि से इस कृति का अपना एक विशिष्ट महत्त्व है।

कंवल-पूजा[1]

कथा-सार—महमूद गजनवी के आक्रमण के समय राजस्थान में भाटी राजाओ के राज्य की राजधानी तन्नोट थी। तन्नोट जैसलमेर के पास था। इस गढ का निर्माण भाटी राजा केहर ने अपनी कुल देवी तन्नोराय के नाम पर करवाया। तन्नोट गढ के निर्माण-कार्य के पूर्ण होने से पूर्व ही राजा केहर मर गया था। वाद मे केहर के पुत्र राव तन्नो ने इस गढ को पूर्ण कराया। तन्नो के वाद इसका पुत्र विजयराज भाटी राजा वना। तन्नोट के चारो तरफ वाराहो लगाओ तथा वूटाओ के राज्य थे जो राव विजयराज के विपरीत थे। इनमें सीमा-सम्वन्धी सघर्ष चलते रहते थे। विजयराज की रानी वूटा वश की थी। मुल्तान की राजकुमारी का सम्वन्ध विजयराज ने अस्वीकृत कर दिया था। तव मुल्तान की राजकुमारी यशोधरा तन्नोट की देवी के मन्दिर मे स्वामी श्री की देखरेख मे देवदासी वन जाती है।

महमूद अपनी वीस हजार सैनिको वाली सेना लेकर आता है परन्तु तन्नोट गढ के दरवाजे और दीवारें नहीं तोड पाता है। महमूद के सैनिक प्यासे मर जाते हैं। किले पर तैनात सैनिक कई यवनो को यमलोक भेजते हैं। इस युद्ध मे विजयराज के सभी विरोधी राजपूत राजा महमूद की सहायता करते हैं। इधर जैतसी गाँव का राजपूत पूनम, जो डाकू था, विजयराज की काफी सहायता करता है। महमूद के सैनिको द्वारा कई वन्दिनी राजपूत-कन्याओं को मुक्त कराता है। कई यवनों को मौत के घाट भी उतारता है। अन्त मे गजनी के सैनिक सुरंग द्वारा गढ के अन्दर जाकर गढ के दुर्भेद्य दरवाजों को खोलने मे सफल हो जाते हैं। युद्ध मे भाटी हार जाते हैं। इधर महमूद की सेना पानी और भूख मे त्रस्त होकर वापिस चलने का निश्चय करती है। महमूद को उसी समय उसके राज्य पर इलेक खां के हमले के समाचार मिलते हैं। तब इस्लाम धर्म के प्रचार और खजाने की प्राप्ति के अभि-

1 ऐतिहासिक उपन्यास, लेखक—सत्येन जोशी, १९७८ ई. मे प्रकाशित, ३२ भागों म विभक्त

लापी महमूद को खाली हाथ लौटना पडता है। जाते समय कटार के अलावा उसके पास कुछ नही था। इधर तन्नोट मे प्रविष्ट कुछ यवन-सैनिको को विजयराज मार देता है। यवन-सैनिक देवी के मन्दिर के पुजारी स्वामी-श्री की हत्या कर देते हैं। साथ ही यशोधरा की एक भुजा और उसके एक स्तन को काट देते है। ठीक उसी समय विजयराज अपना मस्तक काट कर देवी को अर्पित कर "कवल-पूजा" करना चाहता है परन्तु यशोधरा की तर्कपूर्ण बातो से प्रभावित होकर वह ऐसा नही कर पाता है। यशोधरा उसे जीवित रहने की बात कहती हुई समाप्त हो जाती है। जैतसी का पूनम भी मर जाता है। विजयराज ने आगे क्या किया ? क्या यशोधरा के माध्यम से "कवल-पूजा" सम्पन्न हुई ?—उपन्यास की कथा मौन है।

समीक्षा:– (अ) विशेषताएं —उपन्यास मे देश-काल का ध्यान रखा गया है। सोगरा, घाटमा, नौली सोने का टका तथा पचदारी आदि का प्रयोग किया गया है। सोगरा और घाटमा राजस्थान के भोज्य पदार्थ हैं। विशाल रेतीले टीबों का सौन्दर्य, अनेक प्रकार के घोडो, महमूद की सेना, विजयराज के दुर्गम गढ तन्नोट, यवनो की अत्याचारिता (स्त्रियो के सतीत्व को भंग करना), मूर्तियों को नष्ट करने, इस्लाम धर्म के प्रचार, शराब के नशे मे नर्तकियो के साथ रंगरेलियाँ मनाने, रण-बांकुरे राजपूतो के अनुपम शौर्य एवं इन वीरो की युद्धकला आदि के वर्णन श्लाघनीय बन पडे हैं। अफीम खाने की प्रचलित राजस्थानी-परम्परा को भी नहीं भूलना उपन्यासकार ने अपना कर्तव्य समझा है। जैसलमेर की तरफ वास्तव मे अब भी पानी का अत्यधिक अभाव है। रेतीले टीलो मे पानी का अभाव महमूद के सैनिको को परेशान कर वापिस जाने को बाध्य कर देता है। केसरी नामक वीर को तो पानी के अभाव मे अपने पेशाब तक को पीना पडता है।

सुल्तान महमूद के मुख से उर्दू के शब्दो का प्रयोग अधिकाधिक मात्रा मे कराया है जो स्वाभाविक है। उपन्यास मे जैसलमेरी बोली के आधिक्य के साथ जोधपुरी एव नागौरी बोलियो के मिश्रित रूप का भी सहारा लिया गया है। उपन्यास मे यथास्थान गीतो की सृष्टि भी हुई है—[1]

"हिरणी म्हारो नांव
करूं, सौ कोसा पर विसराम
बिछवें पडिया मनड़ा री म्हे दरद मिटावूं,
पाणी वण साजन नै हेरू·· ···मिलण करावूं,
मत मारो, ओ पूनम राजा,
म्हे छूं नार कंवारी
म्हैं चम्पापुर री नारी·······"

---

1 कवल-पूजा पृ. स. ४३

उपन्यास कई सरल और छोटे-छोटे सवादो से भरा पडा है। विजयराज और यशोधरा, महारानी और विजयराज, महारानी और पूनम, विजयराज और पूनम, गुलाब और महारानी, पूनम और गुलाब, केसरी और मूमल, केसरी और जैतसी के ठाकुर, पूनम और पूनमी, महमूद तथा अन्यान्य ग्रामीणो के सवादो मे से यशोधरा और विजयराज के सवाद सर्वोत्तम बन पडे है। छोटे वाक्यो से युक्त एक सवाद का उदाहरण—[1]

"हूँ फूटरी औंई"
"औंई"
"म्हूँ जवान हो"
"ह्वै"
"पछै काई कसर औंई म्यारलै मे ?"
"पूनम नै रीझावणरी"
"कै सू रीझो ?"
"व्याए सू"
"भूख लागो काई ?"
"ह्वै"
"कैरी ?"
"पेट माय"
'वीजी"
"वीजी, तीजी, काई नी, टुकर निकाल"
!"टुकर तो नी पचदारी औंई, महाराणी सा खास कर घताई"

भापा मे सस्कृत और उर्दू शब्द भी उचित मात्रा मे आए हैं जो अन्यान्य भाषाओं के प्रति सहिष्णुता का भाव प्रकट करते हैं—

सस्कृत के शब्द—व्याख्या, क्रिया, महाराज, अनैतिक, पीताम्बर राजनीतिक तपस्या, देवदासी, समाचार, देवी, कायरता, ज्वाला, स्वामी।

उर्दू के शब्द—इमदाद, आलमपनाह, सुभान अल्लाह, सलामत, तकरीर, खुदा-हाफिज, परवरदिगार, खुदावन्द, बुतपरस्ती, सुर्खी, तमाम, आमदनी, मिन्नत, कामयाबी, बदनाम, तवायफ, हमीनावा।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग का कौशल भी उपन्यास मे दर्शित होता है—आडग, वांनू, माव अजू, थाकै, घनी, त्यारलै, अधगावली, म्हारै, म्हारीयिया, मास, नेवजी, धान्दो, तेडावण, वगारा, खिनिया, ताडवा, गोरी, थप, मोय, औंई, सोनजी, वापरगो, हुटो, आगनी-पागनी, दयाली-डवाली,

1. [illegible] पृ स ६८

थोरा, तिरणा, सापडतै, नैनी, चिणगट, हमैं, लगै-टगै, इया-उवा, इतरगी, वंतल, ढुंकर, मींडी, ढुरग्यो, डागलै, खाता, निठग्यौ, ऐनाण, साकलैई, गचीडा. चितवगना। जैसलमेर-निवासी होने के कारण लेखक की भाषा पर स्थानीय प्रभाव अधिक है। सुन्दर कहावतें और उपमाएँ हीरो-पन्नों की तरह जडी हुई हैं—

मारै जीनै मल्लो मारै मल्लै नै कुण मारै, नी वावल री रैयी नी वाथिया आवणियै री, तारीफा रा पुल वाधै है, चीकणै घडै दाई रैणो पड़सी, सामै पगा मौत रै मुण्डै जावैई, सौ सोनार री व्है तो एक तो एक लोवार री व्हिया करै। उपमाओं का सौष्ठव इस प्रकार का है—

नैनी सुई रै नाकै मे मूं निकलतोडै पतलै डोरे ज्यूं झीणी राग मे गावणै रो सुर, गू थियोडी केसा री चोटी साप ज्यूं आटा खायोडी, एक मडद कालो भैंसे जेडो डील, तलवारा री कट कट यू लागतो जाणै सिव रै ताण्डव निरत मै ताल लाग रैयी है, होट ऐडा राता जाणै रगत थेयटियो, मुखमण्डल माथै पसीनै रा टोपा ऐडा ओपता जाणै मोती झडियोडा है, जाणै करुणारस साक्षात् प्रकट व्हियो है, दिन रै चानणै मे ई ऊजला बुर्राक तम्बू ऐडा लगता जाणै वरफ रा टीवा खडचा व्है, पेमली वोर री गुठली जितरो अमल रो एक डलो, मलेछरी लोथ नै कबूतर री दाई लुटती देख, दुसमण रै माथै भूखे सेर दाई टूट पडचा, जागां जागा हाड़कारा किरचा चोर दाई लुक छिपनै वन्तल करता हा।

छोटे छोटे वाक्यों से युक्त भाषा के प्रवाह ने अपनी अनुपम शैली के कारण अन्य उपन्यासकारों की भाषा-शैलियों से अपना पृथक् ही स्थान वना रखा है—[1]

"कान खडा व्हेग्य। नैण काना मे घुमग्या। सुरता, श्रवण रै सरणै पड़गी। पग, काना रै हलाया हालण लागगा।.........रात आभै सूं उतरण लागी। अन्धारो पग पसारण लागो। चन्दरमा आभैनूं मुलकण लागो।... ..मिस्या धीमै धीमै पग पसारण लागी।... ..दिन अडोली व्हेगो। सूरज मान्दो लागण लागो।......तड तड, तिड धिम, तड़ तड़ तिड़ धिम।.........ढम ढम ढम ढम, धड धड धड धड धड, धडाधड़, धड़ाधड, धम धड़, धडाधड, धडधड धम। ढूं पू अं, पू पूं पू पू पू अ, धड़ धम, धड धम, रुक रुक'र थोडी थोडी ताल सूं च्यार'मेर गूंजडी।.... ...लोटियो लवार, रैवतो राइको, वीरमो भावो, सावतो सोनार, नेवलो नाई, भूगियो भाट, चूनियो चारण, दिरदियो वाणियो, कोडियो कुमार, वादरो वढियो, खीमडो खाती, ओमो भील, मुकनो मीणो, पेमियो पंवार, रुघियो रावत, झिननो कलाल, देयो दरजी, करणो, करसो, किरपू किराड़,

1. वचन-पूजा : पृ स. ६७

मंगलू मागणयार, आमजी आचारज, भोमजी भाटी, तेजाजी तोमर परतापजी परमार, जव्हारजी जैन, धीगणाजी धाडेत, मैंग गढ मे भेला व्हिया।

(ख) कमियाँ —महमूद के गजनी जाने से पूर्व ही राव "कवल-पूजा" की तैयारी क्यों करने लगा जबकि महमूद के अपने देश लौटने पर ऐसी पूजा की जानी थी। क्या विजयराज भाटी अन्त मे मारा गया, यदि नही तो, "कवल-पूजा" कैसे हुई? इस उपन्यास का नाम "कवल-पूजा" सार्थक नही है। हाँ, एक दो वार 'कवल-पूजा' का नाम विजयराज और यशोधरा के मुखो से अवश्य लिया गया था परन्तु वह 'पूजा' हुई या नहीं—अस्पष्ट है। न तो विजयराज ने अपना सिर दिया और न ही यशोधरा ने और न महारानी ने जौहर का कृत्य दिखाया। जैतसी का धाडेत पूनम उपन्यास के अन्तिम अध्याय मे पागलो की तरह अभिनय क्यों करने लगा? अन्त मे पूनम को यशोधरा से यह कहने की क्या जरूरत पडी कि वह पूनमी है, चम्पा है। यशोधरा ने स्वयं को छिपाने का प्रयास क्यो किया? क्या पूनम इतना विक्षिप्त हो गया था कि यशोधरा को पहचान ही नही सका? यशोधरा का क्या हुआ? वह मर गई या जिन्दा रही। आहत यशोधरा तथा विजयराज मे गर्भ-गृह मे हुई प्रेम-वार्त्तायें अस्वाभाविक हैं। क्योंकि इससे पूर्व कभी उनमे ऐसी बातें नहीं हुई। यशोधरा पहले भी तो राव के मन्दिर मे देवदासी थी। उसके साथ आए सम्बन्ध को राव ने ठुकरा दिया था। बाद मे यशोधरा देवदासी बन गई परन्तु दासी पर राव कभी मोहित नही हुआ था तब अन्त मे यह गहन प्रेम कैसे जगा? क्या उसकी तर्क शक्ति को देखकर, क्या उसके सौन्दर्य को या चरित्र को देख कर? महारानी और पूनम का अन्त मे क्या हुआ? ये मर गए या जीवित रहे। महारानी के पुत्र देवराज को लेकर उसके मैके जाने वाली गुलाब का क्या हुआ? उस समय के बाद गुलाब के दर्शन तक नहीं हुए। क्या पूनम के साथ की गई प्रेम-वार्ता गुलाब का एक नाटक था? महारानी का पूनम के साथ गुलाब को भेजने का क्या तात्पर्य था? गजनी के भेद को जानने हेतु जाते समय पूनम को महारानी ने निशानी के रूप मे अंगूठी क्यो दी? क्या उसके साथ महारानी का प्रेम था? यदि प्रेम था तो वापिस आने के बाद उसके साथ महारानी का व्यवहार बहुत मधुर क्यो नहीं था? पूनम का किससे प्रेम था?—गुलाब से? चम्पा से? पूनमी से? यशोधरा से?—अस्पष्ट है। गुलाब और पूनम के प्रेम की परिपक्वता बता कर भी इन दोनो मे विवाह होना नहीं बताया गया है। पूनम की बहिन मूमल का तो केसरी के साथ छोडने के बाद पता ही नहीं चला। वह वहां से कहां गई और उसका क्या हुआ? मूमल को पूनम ने हृदय दिया था पर बाद मे वही पूनम उसे भूल गया। जिस केसरी को मा'ण्ट (मार्ग) से [illegible] कर [illegible] कर लाने वाले पूनम का मूमल की गोदी मे केसरी

के सिर को देख कर भी दूसरी तरफ मुंख फेर कर खड़ा होना तथा इन दोनों को साथ मे छोड कर पिता सहित पूनम का वहाँ से चला जाना क्या अस्वाभाविक नही है? गुलाब के साथ रवाना हुए पूनम का डाची से नीचे उतर कर वेहोशी का वेहूदा अभिनय दिखाना कुछ अनुपयुक्त-सा लगता है। उपन्याम का प्रथम अध्याय निरर्थक है। यह अध्याय पूनम को जैसे कोई स्वर्गीय या मायावी दृश्य दिखा रहा हो—ऐसा लगता है। जैतसी के केमरी का क्या हुआ? चलचित्र के चित्र की भांति उसे दिखाना मात्र ही पर्याप्त था क्या? अन्त मे मन्दिर से देवी की मूर्त्ति अदृश्य हो गई—यह कैमी वात है? देवी मे शक्ति थी तो स्वामीश्री को यवनों मे वचाना था। पूनमी का पूर्ण परिचय नहीं दिया गया है। मूमल के प्रेमी जैतसी के केसरी का अत्यधिक प्यास के कारण अपने पेशाव तक को पीना कुछ विलक्षण वात है। अध्याय १३ मे कुरजा और हरू (स्त्रियाँ) के सवाद अनावश्यक है। आंचलिकता का प्रभाव भी लेखक की एक कमी रही है। भाषा मे सस्कृत के शुद्ध शव्दो का अधिक प्रयोग भी राजस्थानी भाषा के सौन्दर्य और उसकी स्वाभाविकता पर तीव्राघात है। कुछ स्थलों पर लम्वे लम्वे सवाद भी नीरसता को प्रकट करने मे सहायक सिद्ध हुए हैं।

मनोरजन के साथ साथ ऐतिहासिक तथ्यो को सामने लाते हुए राजस्थानी भाषा और साहित्य की उन्नति करना इस उपन्यास का उद्देश्य रहा है। राजस्थानी सस्कृति का यथार्थ चित्रण इस उपन्यास मे प्रचुर मात्रा मे मिलता है। टीवो की मनोरमता एव विशालता के स्वरूप इम उपन्यास मे प्रकट होते हैं। इस दृष्टि मे यह उपन्यास राजस्थानी साहित्य मे कुछ कमियाँ रखते हुए भी एक अद्भुत और महत्त्व-पूर्ण स्थान रखता है। सर्वप्रथम का इनका यह प्रयास मफल और मराहनीय रहा है। वास्तव मे राजस्थानी साहित्य मे ऐतिहासिक उपन्यास इससे पूर्व कोई था ही नहीं। इसके पदार्पण से साहित्य का एक अभाव समाप्त हो जाता है।

लालड़ी एक फेरूं गमगी [1]

कथा-सार:—रतनगढ-निवासी एक कवि सूरज की पत्नी उमके अन्तम् या हृदय के भावो को समझने वाली नही है अत सूरज दुखी रहता है। वह शिमला इसी दुख को भुलाने जाता रहता है। रतनगढ मे वनी अध्यापिका दिल्ली-निवामी एम ए पास रेणु से उसके अन्तस् के भावो को ममझने वाली होने के कारण सूरज प्रेम करता है जो सूरज की पत्नी गोमती को अच्छा नही लगता है। जाति-भीरु तथा दहेज-अभिलाषी दो प्रेमियो से धोखा खाकर रेणु गोमती और ममाज के भय मे अन्य व्यक्ति से शादी कर रतनगढ़ मे चली जाती है जिमसे सूरज व्यथित हो जाता है।

---

1. सामाजिक उपन्यास, लेखक—सीताराम महर्षि, "राष्ट्र-दूत" साप्ताहिक पत्रिका मे पूरा उपन्यास प्रकाशित, प्र स्थान—रतनगढ

एम ए पास दिल्ली-निवासिन नन्दा दिल्ली मे अध्यापिका है। यह अपने प्रेमी गायक जयगोपाल से धोखा खाने के कारण अत्यन्त दु खी है। रुपयों का लोभी जयगोपाल देहरादून के एक वकील की लडकी से शादी कर लेता है। दु ख को हल्का करने हेतु शिमला गई नन्दा से सूरज की भेंट होती है। दोनों ही अपनी पूर्व की घटनाओ से आपस मे परिचित होते हैं। अपने अन्तस् के भावो को समझने वाली होने के कारण सूरज नन्दा को चाहने लगता है। दोनो ही आसपास के स्थानो को देखते हुए दिल्ली जाते हैं। वहाँ नन्दा के माँ-बाप के वात्सल्य से सूरज बडा प्रभावित होता है। सूरज अपने मित्र चेतन से मिलता है।

सूरज नन्दा को रतनगढ मे अध्यापिका बनवा देता है। वहाँ दोनो एक दूसरे से मिलते रहते हैं। दिल्ली से नन्दा की माँ की तबियत खराब होने का तार आने पर नन्दा दिल्ली जाती है और वहाँ अपने माँ-बाप की इच्छा से इच्छित लडके से शादी कर लेती है जिसकी स्वीकृति उसे सूरज से पूर्व ही मिल चुकती है। शादी के बाद नन्दा के दो और चेतन का एक पत्र आते हैं। सूरज उस समय बम्बई आदि की तरफ घूमने गया हुआ था। इधर नन्दा अपने पति के साथ घूमने शिमला जाती है। मसूरी की घाटी मे बस के गिरने से दोनो की मृत्यु हो जाती है जिसकी सूचना चेतन के पत्र द्वारा सूरज को मिलती है। रेणु और नन्दा के रूप मे प्रीत की दो लालो(लालडियो)के खोने के कारण सूरज बहुत दु खी होता है क्योकि दोनो ही सूरज के अन्तस् के भावो को समझने वाली थी। बाद मे शिमला जाकर रास्ते मे नन्दा के सभी कृत्यो को याद करता हुआ बहुत व्यथित होता रहता है।

समीक्षा – (क) विशेषताएं —उपन्यास के इस उद्देश्य को बडे सुन्दर ढग से अभिव्यक्त किया गया है कि किसी भी स्त्री या पुरुष को जीवन-साथी बनाते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए जो एक दूसरे के अन्तस् या हृदय के भावो को समझे और उसी के अनुरूप अपना जीवन ढाले। ऐसा करने पर ही दोनो का जीवन सुखमय हो सकता है अन्यथा नही। उपन्यास के नायक सूरज की पत्नी गोमती उसके अन्तस् के भावो को समझने वाली नही होने के कारण ही सूरज पहले रेणु के पीछे फिरता रहा और बाद मे उसने नन्दा की ओट ली। रेणु की अन्य से शादी होने पर सूरज ने अपनी प्रीत की एक लालडी (लाल) गुम होने की बात प्रकट की। बाद मे नन्दा के मरने पर प्रीत की एक और लालडी (लाल) गुम होने की बात कही। उपन्यास का शीर्षक इस दृष्टि से बडा सार्थक है। नन्दा की मृत्यु से सूरज प्रीत की एक और लालडी (लाल) गमा चुकता है, पहली लालडी रेणु के रूप मे पहले गमा चुका था। धैर्य, पुनर्जन्म, विवाह, दु ख-सुख, पुरुषो की निर्दयता, स्त्रियो के हृदय की कोमलता, मानव के चरित्र, प्रेम, स्वार्थ, धन-लोलुपता, इत्यादि पर उपन्यास के पात्रो सूरज, नन्दा, रेणु आदि द्वारा विचार व्यक्त करवाए गए हैं जो प्रमुख हैं। उपन्यास मे कथा का इतना महत्त्व नही जितना कि उक्त भावो के

विश्लेषण का। स्थान-स्थान पर उपन्यासकार अपने दार्शनिक विचारों को कभी तो उपन्यास के पात्र सूरज और कभी नन्दा के द्वारा प्रकट करता है। उपन्यास का अन्त कैसी विह्वल या दुःखान्त स्थिति में होता है जिसमें पाठकों की जिज्ञासा को अग्रसर होने का अवसर मिलता है—[1]

"· · ·लारली वार जद ओ दरद ऊठ्यो हो, जणा नन्दा उण रै कनै ही। सदेह उण रै नेड़ै बैठी ही। आज वा एक आकार-विहूण रूप माय उण री आख्यां माय है। उण री देह कठै चली गई ·· ·· ·कठै चली गई ?

नन्दा सामली घाटी मांय जाणै कई ढूंढ रैयी · · ·। वा कांई ढूंढ रैयी है·······। स्यात् वा आप री प्रीत री लालडी नै ढूंढती होसी·······।

सूरज आपरा दोनूं हाथा नै जोया। वै खुला पड़्या हा। उण मांय भी उण री वा प्रीत री लालडी कोनी ही।"

महर्षिजी ने "ताई" प्रत्यय जोड कर कई शब्द निर्मित किये हैं—तन्मैताई, सुफलताई, मौलिकताई, सुभाविकताई' सहजताई, उत्सुकताई, औपचारिकताई, भावुकताई, नाटकीयताई, निछलताई, सार्थकताई, कायरताई, निस्कपटताई, पवित्रताई, चचलताई, गम्भीरताई और विकलताई। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के नव शब्द-निर्माण का कौशल भी इनमें है—वगतो, धल्योडी, ढूंगो, मोय, मोरपा, मिलावण, चितार, भिजोक, गुरभुरीज्योड़ा, उपन्यायो, चास्या, सरजासी, गोपो, सापड, मगारथ, दावणो, लवक-भवक, अणमेधा, निवणो, भालाफाला, दरदावतें, वत्तो, वोल्यारो, रातारल्यिो, मीकारनै, गलगलायीजग्यो, ढमढेला। राजस्थानी भाषा, के स्वाभाविक शब्दों के प्रयोग में भी कोई कसर नहीं उठा रखी है—रैवास, पटपड्या, इस्यो, टाफर, सावल, अडै-गडै, जोडायत, पाग्रती, वितराक, जेज, गरमछूवणी, कदसीक, केठा, मदीव, वियाँ, सागीडी, जावक, कूली कदे कदांस, वटको, अजेस, वेसी, मादगी, लारला, छिणेक, इकलाण, ऊधलो, गमतियो, अवगाई, कूंत, अपणेस, अडकाम, ओखो, रिगलो, मगन्यिा, गोछरटी, मागो, माव, पाधरो, हेटै, कवीजणा, म्हाटी, अदीन्यो, ईग्या, चावना। जोधपुरी, अजमेरी और जैसलमेरी बोलियों का प्रभाव भी लेखक पर है। सैग, आईज, ईज, वाईज, म्हारली, इतरीक और इनरैक इत्यादि शब्द इसके द्योतक हैं। संस्कृत-उर्दू शब्दों के प्रयोग में लेखक की भाषा-सहिष्णुता प्रकट होती है—

उर्दू शब्द—वाव्रत, मजबूर, औकात, मजूर, नाराज, कुदरत, जरूर, नरदोर और जबरदस्ती।

सस्कृत शब्द—सम्मरण, साधन, निरादर, अकल्पनीय, उपेक्षा, साकार,

1. "राष्ट्र-पूजा" वर्ष १९०४ का अक. पृ. स. २०५

उपलब्धि, सहानुभूति, उपरान्त, सुसंस्कृत, आत्मघात, अप्रत्यासित, निर्विकार, स्वागतम्, व्याख्या, परीक्षा, परमात्मा।

अलंकारों, मुहावरों एवं कहावतों की छटा भी प्रशंसनीय है—
काना माय जाणैं इमरत सो बरसग्यो, कल्पना रा घोडा, दूर रा ढोल सुहावणा लागै, गुणगान भाटा री ज्यूं गाया करै, भावारी एक आंधी, कल्पनावा डील मरोडण लागी, जिण रो न सींग अर न पूंछ, कल्पना रै सूंवटियै, कालजै रै पींजर माय पीड री पछी, दरद रै समंदर माय, सूरज सैमगैम री ज्यूं होयग्यो, आसा री सोनल तावडी रो सुख, गड्या मुडदा उखाड्या के हाथ आवै, ओस नै चाट्या तिरसा को बुझैनी, भावा रै पांख्या लागगी, उण रो पारो तो सातवें आभै मैं पूग्योडो हो, कालजै उपरां ऐ मूंग दलीज रैया है, सर करग्यो, मन माय तो नन्दा आसण जमाय लीन्यो है, टाबर री ज्यूं रोवण लागी, प्रीत रो गलो घोट नाख्यो हो, जाणैं म्हारो तो सत ई निसरग्यो होवै, भेडा री ज्यूं भरयोडा हो, वैम रा भूत लाग्योडा, कंवल री ज्यूं फूल उठ्यो, लेखक री जिनगानी फूला री सेज कोनी कांटा रो बिछावणो है, सून्याड पग पीट रैयी है, वा कल्पना रै आभै माय सुपना री पांख्या नै फडफडायी।
सरल, सुन्दर और प्रवाहमयी लघु वाक्यावलिपूर्ण भाषा के प्रयोग मे भी लेखक सिद्धहस्त है—[1]

"सिंझ्या पडी वै दोनूं जणा घूमण नै गया। ठंडी बायरियो चाल रैयो। माल उपरां घणी चैल पैल ही। लाग्योक जाणै अठै सुख ईज सुख होवै। सैंग जणा बायरियै माय तिरता-सा लखायीज रैया। वै दोनूं जणा एक ठौड बेंच उपरां बैठग्या। अब अंधारो धरती उपरां उतरतो जाय रैया। आजू-बाजू बीजली रा लोटिया चिलकण लाग रैया। जेज-लग दोनूं जणा स्यास्ट मेरलै वातावरण रो आणंद लेवता रैया।

स्थान-स्थान पर लघु संवादों की सृष्टि भी की गई है—[2]

"आ बात तो चेतन ई बताय दीनी होवैला। सूरज कैयो।"

"मैं थारै मूंडै सूं सुणणी चावूं। नन्दा कैयो।"

"हां, म्हारै रेणु सूं इस्यो हेत हो क मैं बतावण नी सकूं।"

"रेणु भी थारै सूं बिस्यो ई हेत राखती के? नन्दा बूझ्यो।"

"हां—सूरज कैयो।"

"पछै वा क्यूं थारै सूं मूंडो मोड लीन्यो?

(ग) कमियां—लेखक ने उपन्यास के प्रत्येक पात्र को दार्शनिकता की गहराई में धकेला है। सूरज, रेणु, नन्दा और नन्दा के पिता ये पात्र स्थान स्थान

1 "मरु-प्रजा" वर्ष १०७८ का अंक पृ. स. १६५-६६
2 वही पृ. स. ११३

पर पुनंजन्म, जीवन, सुख-दु ख, स्वार्थ, धन-लोभ, धैर्य और विवाह के विषय में सोचते या विचार प्रकट करते हुए नजर आते हैं जिससे उपन्यास की कथा का मनोरजक तत्त्व बोभिल-सा बनता गया है तथा पाठकों की ऊब बढती गई है। दार्शनिकता में खोये रहने के कारण ऐसे वैषम्यपूर्ण विचार कहाँ तक सार्थक हो सकते हैं ?—[1]

"आप काई काम करो ?—सूरज"
"भणावण रो काम करू हूं।"—नन्दा
फिर ऐसा कहना क्या न्यायोचित है ? [2]

(अ) "एम ए माय थारै चोखा नम्बर आयग्या है। लारलै दिना री पीड सू मुगट पावण सारू कठैई नौकरी कर लेवणी चायीजै।"

(ब) मैं थारै वास्तै रतनगढ माय कंई काम देखू ला। वठै म्हारी आछी जाण-पिछाण है। किणी स्कूल माय कोई जगां लाधगी तो तनै बुलाय लेवूं ला।" [3]

सूरज के द्वारा रेणु के विषय मे ऐसे विचार प्रकट करना क्या उचित है ?[4]—

(अ) "रेणु रै सामै एक सुवाल आयो हो। एक कानी तो उणरै जीवण रो आधार उण री नौकरी ही अर दूजै कानी म्हारो हेत। हेत राखै तो नौकरा जावै अर नौकरी राखै तो हेतरी बलि चढावणी पडै।"

(ब) ·········अबै हैवाल ओ है क उणनै कोई म्हारै सू बेसी हेत देवणियो मिल गयो जणा वा उणरै मागै बधीजगी है।" [5]

परन्तु रेणु को अन्य से शादी करने हेतु समाज और सूरज की पत्नी गोमती की खीभ ने ही बाध्य किया था जिसे उपन्यासकार ने सूरज के मुख मे सच्चाई के रूप मे कहलाना पसन्द नहीं किया है। महर्षिजी ने इस वास्तविकता को छिपाने का सरासर प्रयास किया है। रेणु ने सूरज के दिल को तोड कर अन्य व्यक्ति से शादी क्यो की ?—सूरज की पत्नी गोमती तथा समाज के भय से—सूरज की निर्धनता से घृणा के कारण ? इस रहस्य को लेखक प्रकट करने मे असमर्थ रहा है। इसके अतिरिक्त कहीं रेणु सूरज को "सूरजजी" कहती है तो कहीं "सूरज"। ऐसा क्यों ? "तत्तापाणी" नामक परिचित स्थान पर जाकर नन्दा या सूरज से यह पूछना अस्वाभाविक है—"अठै कोई बजार भी है के ?" जबकि नन्दा तो इस

1. 'राष्ट्र-पूजा" वर्ष १९७४ पा अंक . पृ म. १०५
2. वही : पृ. म. १९३
3. वही : पृ सं. १९४
4. वही : पृ म १०५
5. वही : पृ. स. १९२

स्थान का भली-भाँति ज्ञान और ध्यान था। पृष्ठ १५२ पर नन्दा को एम ए फाइनल की छात्रा बताया गया है। पृष्ठ १५६ और १५७ पर एम ए मे हिन्दी और अंग्रेजी के कालाशो का जिक्र किया है। एम ए मे एक ही विषय हुआ करता है, वह चाहे हिन्दी हो चाहे अंग्रेजी या अन्य कोई विषय। लेखक ने यह भी स्पष्ट नहीं किया कि नन्दा किस विषय मे एम ए कर रही थी। सभवत लेखक को इसका ज्ञान नही रहा होगा। नन्दा की मृत्यु के बाद सूरज के एकाएक शिमला चले जाने पर गोमती की प्रतिक्रिया के विषय मे लेखक मौन है। लेखक के इन वाक्यो से पाठक भ्रमात्मक स्थिति मे आते हैं—[1]

" · · · रेणु आपरै धणी रै सागै मसूरी जाय रैयी क बा बस हेटै घाटी माय पड'र चकनाचूर ई होयगी ही।"

बस चूर चूर होगयी।
नन्दा चूर चूर होयगी।
नन्दा रा सुपना चूर चूर होयग्या।"

इस बस मे रेणु थी तो फिर नन्दा कैसे चूर चूर हो गई? यदि नन्दा थी तो फिर रेणु कहाँ से आ गई? वैसे नन्दा के पत्र द्वारा तो स्पष्ट है कि वह अपने पति के साथ शिमला जा रही थी। फिर इस मसूरी की घाटी का जिक्र कैसे किया गया? लेखक के उक्त वाक्यो से अस्पष्टता की स्थिति आती है कि रेणु मरी या नन्दा मरी। आगे तो हालाकि इस भ्रम का निवारण हो गया है। इतने बडे उपन्यास को लेखक परिच्छेदो या अध्यायो मे विभक्त करना भूल गया है। इसके अभाव मे पाठको की जिज्ञासा-शक्ति मन्द होती जाती है। मैं, तो, भी और हूँ इत्यादि शब्दो के राजस्थानी रूप मिलते हुए भी लेखक ने इन्हे ज्यो की त्यो स्थिति मे प्रयुक्त किया है। 'ष' और 'श' वर्णों का, राजस्थानी भाषा मे अभाव होने पर भी, प्रयोग किया है— आकर्षण, चेष्टा, सतोष, दोषी, विष, भाषा, आदर्श, शिक्षा, कैलाश, अमानुषी, घोषणा, भविष्य और परिभाषा। रतनगढ का निवासी होने के कारण ही सभवत लेखक की भाषा पर उस तरफ का प्रभाव लक्षित हो रहा है। 'जहर' के लिए लेखक ने "झैर" शब्द का जो प्रयोग किया है, वह नितान्त अशुद्ध है। इसके अतिरिक्त संस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य भी देखा गया है जिससे राजस्थानी भाषा की रोचकता नष्ट होती है।

उपन्यास मे अनेक विशेषताओं के साथ कुछ भाव और भाषागत त्रुटियां रही है फिर भी श्रीमहर्षि ने अपनी मातृभाषा के शब्द और साहित्य-भण्डार मे कुछ न कुछ वृद्धि की है, इसके लिए ये प्रशंसा के पात्र हैं। इन्होंने हिन्दी-कविताओं तथा उपन्यासों के लेखन-कार्य मे दक्षता प्राप्त की है परन्तु राजस्थानी उपन्यास-

1. "चान्द्र-नन्दा" १९७८ सा अर पृ म २०३

लेखन का इनका प्रथम प्रयास सफल रहा है। अपनी मातृभाषा मे उपन्यास-विधा की कमी की पूर्ति के लिए भी इनका प्रथम प्रयास श्लाघ्य है। वित्तीय काठिन्य के कारण यह उपन्यास हमे "ओळमो" पत्र के वार्षिक पत्र "राष्ट्र-पूजा" मे ही पढने को मिल सका है।

तिरसंकू [1]

कथा-सार:—नन्द गाँव के छोटे-से जमीदार ठाकुर का बेटा पवनकुमार बी. ए मे पढता है। पिता को समरगढ के ठाकुर की सेवा मे नन्द गाँव मे एक विशाल महल पुरस्कार के रूप मे मिलता है। समरगढ के ठाकुर का लड़का ब्रजेन्द्रसिंह (बैंजू) लीना नाम की लडकी को एक लाख रुपयो मे खरीदता है जिसे अठवारी गाँव का सरदार भी खरीदना चाहता था। इस बात पर सरदार मे बैंजू से बदले की भावना जागृत हो जाती है। कई अवसरो पर बैंजू सरदार के हाथो मे बचता रहता है। लीना न तो सरदार को चाहती है और न ही बैंजू को। बैंजू भी लीना को स्वतन्त्र-सा छोड देता है। पवन एक बार बैंजू तथा लीना को पास के सरोवर मे छिप कर नग्नावस्था मे जल-क्रीडा करते देख लेता है। कुछ समय के बाद बैंजू और लीना पवन के घर जाते हैं। रात मे पवन लीना के विषय मे कुछ विचार कर रहा था कि लीना उसके कमरे मे उस वक्त आ जाती है। पवन के होठों को चूम कर कई बातें करती है। सरदार और बैंजू को नामर्द और कायर बताती है। घर आए बैंजू को पवन द्वारा नमस्कार नही करने पर पवन के पिता नाराज और क्रुद्ध होकर उसकी पढ़ाई छुडवाने की बात करते हैं।

एक दिन बैंजू, लीना और पवन शिकार के लिए जाते हैं। रात पड जाती है। लीना और पवन साथ रहते हैं। बैंजू सरदार के चंगुल मे फंस जाता है। लीना के कहने पर पवन साहस के साथ बैंजू को छुडा कर सरदार से सन्धि करता है। सरदार लीना के लिए ५ लाख रुपयो से भी अधिक कीमत का सोना तथा एक घोडा भेंट के रूप मे भेजता है जिसे लीना स्वीकार नहीं करती है। पवन के पिता और बैंजू उस भेंट के सोने को वितरण हेतु समरगढ ले जाते है जिसकी सूचना पवन को बूढा नौकर मनहर देता है। पवन सरदार को क्या उत्तर देगा—विचार करते करते त्रिशंकु की-सी स्थिति मे होकर दिल्ली मैनेजमेन्ट के पाठ्यक्रम मे प्रवेश हेतु चला जाता है। वहाँ किसी सिनेमा हाल का गेटकीपर (द्वारपाल) बनता है। उस समय पुलिस के भय से भागी शैलकुमारी (मातगी नाम था) को बचाता है। शैल के आर्थिक और सामाजिक क्रान्ति, देश की गरीबी एवं वर्गहीन समाज की स्थापना

1. सामाजिक उपन्यास, लेखक—छत्रपतिसिंह, राजस्थानी भाषा प्रचार सभा जयपुर द्वारा १९७५ मे प्रकाशित। पुरस्कृत रचना।

आदि विचारो से पवन बडा प्रभावित होता है। कक्षा मे बदमाश तथा पत्नी-त्यागी सहपाठी अभय से सम्पर्क होता है जो शैल को धोखा देने का प्रयास करता था। एक दिन शैल के समक्ष पवन अभय की सारी पोल खोल देता है तथा शैल को पत्र लिख कर अपने गाँव चला जाता है। नौकर मनहर और उसके पिता मर जाते हैं। वैंजू को कोई गोली मार देता है। वैंजू के मरने पर लीना सरदार से सम्बन्ध जोड लेती है। पवन के एक और पत्र मिलने पर शैलकुमारी पवन के घर आ जाती है। पवन अपने सिद्धान्तो को मूर्त्त रूप देने हेतु अपनी सारी जमीन गरीब कृपको तथा मजदूरो को बाट कर शैल के साथ बडे आनन्द से रहता है।

समीक्षा – (अ) विशेषताएँ —उपन्यास के सभी पात्रो मे सर्वाधिक विचित्र स्वभाव लीना और वैंजू का है। लीना वैंजू के रहते पवन को चूमती है, पवन मे होठों का चुम्बन दिलवाती है, पवन के साथ सोकर रात मे सम्भोग कराती है जिसे हृदय से जानता हुआ भी वैंजू सहन करता जाता है। वैंजू कायर तो था परन्तु नपुसक नही। ऐसे विचित्र स्वभाव वाले पात्रों मे सुधा का पति अभय भी है। उपन्यास का उद्देश्य अत्यन्त ही उत्कृष्ट है—(क) वर्गहीन समाज की स्थापना—इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पवन गरीब लडकी शैल से शादी करता है।—(ख) आर्थिक एव सामाजिक क्रान्ति का क्रियान्वयन—जिसे शैल के सहयोग और उसके विचारो से प्रभावित होकर पवन करता है। (ग) देश की गरीब स्थिति का विश्लेपण स्थान-स्थान पर पवन और शैल करते रहते है। उपन्यास की कथावस्तु तथा उसके शीर्षक को समझाने हेतु लेखक के ये विचार स्पष्ट हैं—[1]

(य) "पण पवन, तू सगला काम ईज पराया खतरा माथै करै। खुद री कोई "रिस्क" कोनी। पराई लुगाई, पराई वन्दूक और पराया दुसमण।"

(र) "... घुडला रै सवारां रो सरदार उण गोरडी रो प्रेमी हो। म्हारै मामी हथियार नाम्ब देवण रै पछै उण पाच लाख रुपिया बरोबर सोनै री गाठडी म्हनै सूप दी अर गाठडी उण गोरडी नै सूपण री वादो म्हारै कनै सू लेलियो अर आपरा साथ्या रै सागै ओटा पगा रवाना होयग्यो। पण उण छोरी गाठडी कोनी ली। छूणै सू ई इनकार करगी। म्हे वा गाठडी सरदार नै पाछी सभला'र आवू इण सू पैली म्हारै वापू अर इण छोरी रै वीन्द गाठडी गायव कर दी।"[2]

"म्हे इण सब घटनावा रै वीच तिरसकू ज्यू वेबस वण जी रयो हू शैल। ....."[3]

---

1 तिरसकू पृ स ६१
2 वही पृ स ६१
3 वही पृ स ९३

(ल) "........म्हारै मन माय और भी पीड वढगी। वापू म्हारै दुखडै माय चल वस्या, शैल रूस'र चली गई, वूढो मनहर सुरगां सिधाग्यो, कुंवर रै गोली मार दी अर लीना अठवारी रै सरदार रै सागै चली गई।"[1]

उपन्यास का नाम पौराणिक राजा त्रिशकु की स्थिति को ध्यान मे रखते हुए उचित ही रखा गया है। उपन्यास के नायक पवन की स्थिति कई स्थानो पर त्रिशकु-सी हो जाती है—जैसे त्रिशंकु न तो स्वर्ग मे प्रवेश कर सका और न ही वापिस धरती पर आ सका—वीच मे ही लटका रहा। ठीक ऐसी ही उलझनपूर्ण और लक्ष्यहीन स्थिति मे पवन अधिक समय तक रहता है। उदाहरणतया—

(क) लीना से प्रेम करना चाहते हुए भी पवन प्रेम नही कर पा रहा है। अत कई वार लीना की अतृप्त वासना की पूर्त्ति के अभाव मे पवन को लीना से कई कटु शब्द सुनने पडते हैं।

(ख) शैल से मुलाकात होने पर भी पवन धर्म-सकट मे पड जाता है।

(ग) सिनेमा के मैनेजर की लडकी नीरू द्वारा भी पवन प्रेम के मामले में अयोग्य सिद्ध कर दिया जाता है।

(घ) लीना द्वारा सरदार की दी हुई भेंट को अस्वीकृत कर देने पर पवन की त्रिशकु वाली स्थिति चरम सीमा की तरफ वढती है।

(च) पिता द्वारा पढाई छुडाने की वात पर भी पवन की दशा त्रिशकु-सी होती है।

(छ) सरदार की दी हुई भेंट को वापू और वैजू द्वारा समरगढ ले जाकर वितरण करने की वात सुनने पर तो पवन की त्रिशकु-सी स्थिति सीमा को भी लाघ जाती है जिससे उसे अपना गांव छोड़कर जाना पड जाता है।

फ्रायड के यौन-सिद्धान्त, न्यूटन, आइन्स्टाइन तथा याज्ञवल्क्य के सिद्धान्तो और विचारो को अभिव्यक्त कर उपन्यास की श्री-वृद्धि की है। फ्रायड के यौन-सिद्धान्त को समझाने के लिए लीना का वार-वार चुम्वन लेना, दोनो का आपसी वाहो मे कसना, पवन द्वारा लीना का चुम्वन लेना तथा दोनो की सम्भोग प्रक्रिया ही पर्याप्त सिद्ध होते हैं। पृष्ठ ५८ पर पवन द्वारा वृद्धावस्था और मानव के नश्वर शरीर पर प्रकट किए गए विचार वडे मनोरम वन पडे हैं। प्राकृतिक-सौन्दर्य पर लेखक अत्यधिक मुग्ध रहा है। उपन्यास के नायक को झरने, सरोवर और घाटियां इत्यादि प्रकृति के उपादान अधिक आकर्षित करते हैं।

सैंग, धाईज, भाभर्कै, पाधरी, तरिया, वर, ग्रातावल, इसा, उसा, पठीनै और उठीनै इत्यादि शब्दो द्वारा जोधपुरी तथा वीकानेरी वोलियो का पुट चढाने

1 निरसक, पृ. न. १३१

का प्रयास श्लाघ्य रहा है। संस्कृत और उर्दू-शब्दो के किञ्चत् प्रयोग से लेखक ने अन्यान्य भापाओ के प्रति समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाने का कार्य किया है—

संस्कृत शब्द —अभिव्यक्ति, सापेक्षता, इन्दीवर, औपचारिकता, सर्वस्व, एकाधिकार, अपहरण, सिद्धान्त, तिरस्कार, विडम्बना, निर्मल, चित्त, प्रेम, उमग।

उर्दू-शब्द —बकवास, तारीफ, बुजदिली, बगावत, एतराज, बाइज्जत, बेचैन, मुलाकात, वफादारी, बदनामी, नामर्द, मुसीबत, दरकार, तहजीब, बगावत।

इसके अतिरिक्त राजस्थानी भापा के स्वाभाविक शब्दो की प्रचुरता तो इसमे है ही—ताणी, वापरगी, अबार, आधो, बर-बर, चिन्ही-सी, सोरी, डागलै, चूतरो, खुवरयो, उणमणो, रीस, खिनावो, हिमलाल, मोसो, मधरी, सैंचन्दण, धमीडा, निमलाई, रागडाई, सरी, उरलाई, कदास, सिध, हम्बै उलझाड, उवा, जिसोई, जोरावर, रोलो, एडै-छेडै, तनै।

मुहावरो, कहावतो तथा आलकारिक छटा भी उपन्यास मे यत्र-तत्र देखने को मिलती है—

तरवार री धार ज्यू बहता नाला, सरवर री लहरा ज्यू इतराती साडी रो पल्लो, चाद सो मुखडो, भौ तीर ज्यू बडग्यो, चीर-हरण सू घूमर खाती उघाडी होती कचन-सी काया, राखस रा-सा सीग, आकास-पाताल एक कर दू ला, बावा माय सू मछली री ज्यू फिसल नै भाग छूटी, फूल ज्यू खिल्योडी पातली काया, हरी-भरी झाडया माय धोला फूल जाणै नई-नवेली बीनणी री माग सजा मेली है, जल भुण जावैलो, खुसी सू फूल्या कोनी समाय रैया, डीग हाकी, सगलो घर पालतू बिल्ली री नाई, लुच्चाई रा बल, म्हारै डावै हाथ रो खेल है चलू भर पाणी माय नाक डुबो'र मरणै री बात है, जान बची तो लाखू पावै बुद्ध आपरी जान गुमावै, सगली हेकडी भूल जावैलो, रेलगाडी री काछवै जिमी धीमी चाल।

भापा की सरलता, प्रवाहमयता और सजीवता को स्पष्ट करने वाले लघु वाक्यावलिपूर्ण संवाद उपन्यास मे स्थल-स्थल पर बिखरे पडे है—[1]

म्हें पूछ्यो—ब्याव कद हुयो ?
तीन साल पैला।
कितरा दिन साथ रैंया ?
दो साल।
दिल्ली साथ ई रैंता हो ?
नई, इलाहाबाद।
अठै कद आया ?

1 निगर, पृ स ११८

दो साल हुया।

क्यूं आयो ?

पूरे उपन्यास की भाषा सरल, सरस, प्रवाहमय तथा बोधगम्य है।

(ख) कमियाँ :—पृष्ठ २४ पर आधी रात के समय सुन्दरी लीना का पवन के कमरे मे एकाएक आना अस्वाभाविक-सा है। उस समय कुंवर ब्रजेन्द्रसिंह कहाँ था ? उसे छोड़कर वह वहाँ कैसे आगई ? पृष्ठ २० पर लीना अचानक आकर अपने हाथो से पवन की आँखे मूंद देती है। बाद मे वह हाथो को हटा भी देती है फिर भी पवन उसकी तरफ काफी समय तक पीछे मुड़कर नही देखता है कि वह आँखे मूंदने वाली क्या वास्तव मे लीना ही है ? पृष्ठ २७ पर कमरे मे बात करने वाले पवन और लीना अचानक पर्वतो की घाटियो मे कैसे पहुंच गए ? बूढे नौकर मनहर द्वारा वैजू की पत्नी लीना के स्वागत और उत्सव का सकेत मिलता है परन्तु उपन्यास मे कही भी स्वागत और उत्सव नही प्रकट किया गया है। लेखक सभवत भूल गया है। लीना का पृष्ठ ३७ पर पवन को यह कहना गलत है—

"……उठीनै चट्टान माथै आपसरी मे एक दूजै रै हाथ मे हाथ थाम्या वैजू आपा नै देखलो तो जल-भुण जावैलो।" क्या लीना और पवन की हरकतें वैजू से छिपी हुई थी ? सरोवर तथा जीप मे हुई हरकतो से वैजू ने तनिक भी क्रोध नही किया। दूसरी बात यह भी है कि वैजू लीना को पवन के भरोसे सड़क पर छोड़कर स्वय शिकार हेतु पर्वतो या जगल मे चला गया था पृष्ठ ३८ पर वैजू को अवतारी पुरुष के समान एकदम उपस्थित कर उनके मुख से यह कहलाना अस्वाभाविक-सा लगता है—'वैजू म्हारै मूंडै सू तारीफ सुणणै रै चाव सूं बोल्यो—" लीना और पवन की बातचीत मे बाहर गए वैजू का एकाएक आ टपकना स्वाभाविक नही लगता है। वैजू ने इन्हे कैसे ढूंढा ? शिकार के समय जीप मे वैजू, लीना, पवन, एक ड्राइवर तथा गाइड पाँच व्यक्ति रहते हैं। ड्राइवर तथा गाइड की जीप मे कोई आवश्यकता ही नही थी क्योकि इनके कुछ भी कार्य नही बताए गए है। ये दीवाल पर टगी तस्वीरो के समान ही रहते है। वैजू शिकार के लिए चला जाता है और लीना तथा पवन दोनो सड़क पर साथ बैठे रहते है। उस समय ड्राइवर और गाइड क्या करते है—लेखक बताना भूल गया है। ये ड्राइवर और गाइड लेखक को पृष्ठ ५३ पर याद आते है जिनके बारे मे केवल इतना ही कहा है—

"सरदार गोली मार'र टायर फोड नाख्यो। ड्राइवर अर गाइड जंगल मे भाजग्या।…… "(पृष्ठ ५३) लीना स्थान-स्थान पर कुंवर ब्रजेन्द्रसिंह को "दैजू" कहते हुए [illegible]-सा देती रहती है। परन्तु राजघरानो मे तो बड़ी ऊंची बोली और आदर-सूचक शब्दो का प्रयोग होता है। फिर लेखक से ऐसी भूल कैसे हुई ? लीना के चरित्र को बड़ा कमजोर बनाया गया है। वह किसी की ओर

प्यार किसी से। अन्त मे वह सरदार के घर मे घुस जाती है। इस प्रकार यह तो एक सभ्य और शरीफ वेश्या ही कही जा सकती है। लीना पवन से तो सम्भोग तक कराती है। पृष्ठ ८९ पर शैलकुमारी को जव पवन ने अपना नाम बताया ही नही तव उसे पवन का नाम कैसे ज्ञात हुआ? लेखक ने शैल के मुख से यह कहला कर भूल-सी की है—

(1) किण ठाकुर नै पवन?

(2) · पवन! उण सारं 'वरग' री जडा काटणी पडंली · "

जव अभय ने इस मातगी (शैलकुमारी) के इलाहावाद जाने की वात पवन को पृष्ठ ११७ पर ही वता दी तो उस वात को सिनेमा-मैनेजर की वेटी नीरू को पृष्ठ ११९-१२० पर पूछने की क्या आवश्यकता पडी? पृष्ठ १२७ के इस कथन को लेखक स्पष्ट नही कर सका है—"म्हैं वोल्यो—'शैल, अव तनै दिल्ली माय किण सू भी डरपणै री जरूरत कोनी।............" पवन ने शैल को यह वात कैसे कही? क्या शैल का तीन व्यक्तियो की हत्या का अपराध घुल चुका था? क्या थानेदार के मरने के कारण ऐसी वात कही? क्या अभय की टाँगें टूटने के कारण यह वात कही? पवन का मैनेजमेण्ट का कोर्स पूरा हुआ या नही—अस्पष्ट है। पवन के घर से अचानक भागने पर पवन के पिता ने उसे ढूंढने के प्रयास क्यों नहीं किए जवकि पवन बूढे नौकर मनहर को सव कुछ वता कर घर से निकला था। उपन्यास का शीर्षक पूर्णत सार्थक नही है। क्योकि उपन्यास के नायक पवन की स्थिति पौराणिक राजा त्रिशकु की तरह कुछ समय के लिए ही रहती है। वाद मे तो वह अपना रास्ता भी तय कर लेता है। उसका लक्ष्य लटका हुआ तथा सन्देह मे नहीं रहता है। लेखक ने अश्लील-वर्णन मे तो सीमा का ही उल्लघन कर दिया है। लीना और पवन की वार-वार चुम्वन लेने की प्रक्रिया को लेखक शान से प्रकट करता रहता है। सभवत लेखक ने वात्स्यायन के कामसूत्र तथा फ्रायट के यौन-सिद्धान्तो का गहरा अध्ययन किया हो। किन्तु साहित्य की स्तर की पुस्तकों मे चुम्वनादि का अत्यधिक वर्णन अनुचित और अस्वाभाविक ही हुआ करता है। यह वर्णन लेखक ने कितने ही स्थानो पर किया है —

(क) "उणरी कुवली छातिया रा उठाव म्हारै कान्धै सू भिडग्या है।"[1]

(ख) "उण रा गुलावी-गुलावी होठा अचाणचक म्हारै होठा माथै वावो वोल दियो।· ···"[2]

(ग) "लीना म्हारै मन री दुविध्या विना समझ्या म्हनै वाथा माय भर

---

1 तिरसकू पृ स ३५

2 वही पृ स २५

लियो हो अर म्हारै अणसाव्या ढीला होठा रा कसनै चुम्बा लेवण लागगी ही ....।"[1]

(घ) "... ...... म्हारै होठा नै वार वार चूम्या अर चूमती चूमती अचाण-चुकी रूस'र उठगी—"थारै सागै हेत वढाणो गैलाई है।"[2]

(च) "म्हे अणजाणै मे उण नै म्हारी बाथा माय भर ली अर म्हारा होठ उण रा होठा माथै इण तरिया टूटनै पड्या जाणै कोई तिरसै नै इमरत री तलाई मिलगी हुवै।"[3]

(छ) "..........गाला सू गाल चिपका दिया। उण रा कवला लचकीला होठ म्हारै होठा माथै आनै ठैरग्या।.........."[4]

(ज) "..........ओफ, म्हे तनै सगला रै सामी ई चूम लू ली।"[5]

(झ) "उण म्हनै ओर कनै खीच लियो अर घणा सारा चूम्दा ले'र म्हारा होठ ओजू घायल कर दिया।"[6]

(ञ) "... ......उण मौके झट आपरै हाथ माय ले लियो अर उणारा होठ म्हारै ढीला होठा माथै अणचूक्या हमलो वोल दियो।"[7]

(ट) "..............उणरा कु.वला होठ छूताई सगलो डील झणझणा उठ्यो।"[8]

"..........म्हे आराम कुर्सी माथै ढेर हुयनै पडग्यो" पृष्ठ २० पर प्रयुक्त इस मुहावरे मे मरने का भाव ही व्यक्त होता है, बैठने का नहीं। मैं, मे, भी, हूँ, अब, और बिना इत्यादि शब्दो के राजस्थानी रूप मिलते हुए भी लेखक ने इन्हे ज्यो की त्यो स्थिति मे रखा है जो अनुचित है। 'श' और 'ष' के प्रयोग प्रचुर मात्रा मे मिलते हैं—दर्शक, उद्देश्य, अर्थशास्त्री, प्रशासनिक, शैल, अन्तर्राष्ट्रीय और विश्लेषण इत्यादि। सिनेमा-मैनेजर की बेटी के मुख से अंग्रेजी शब्दो को बुलवाने की क्या आवश्यकता पडी ? इग्लैण्ड तथा अमेरिका की महिला की तरह उसके मुख से ये शब्द उच्चरित करवाए हैं—सब्जेक्ट, डिफीकल्टी, स्टडी, मेट, कम्प्लीमेन्ट्री,

1 तिरसकू पृ स. ३९
2 यही . पृ. स. ४०
3. यही : पृ स ४३
4. यही : पृ स. ४२
5. यही : पृ स ५१
6. यही : पृ स. ६०
7. यही . पृ. स. ६९
8. यही . पृ स. ७८

गाइडेंस, टोप-लैम, फारवर्ड, स्टैण्डर्ड, ग्राब्लाइजिंग, इल्लीगल, ट्रैफिक, रिक्वेस्ट, प्लानिंग, गेट अप और नेचर इत्यादि ।

निष्कर्षत उपन्यास मे कुछ दोषो का पदार्पण हुआ है । तदुपरान्त वात्स्यायन के कामसूत्र और फ्रायड के यौन-सिद्धान्त की प्राथमिकता को अपने कलेवर मे लिए यह उपन्यास राजस्थानी-साहित्य मे अपनी विलक्षण शक्ति के साथ प्रकट हुआ है । उपन्यास तो सामाजिक है परन्तु ऐसे वैशिष्ट्य से युक्त उपन्यास राजस्थानी-साहित्य मे इससे पूर्व नही लिखा गया था । लेखक का यह प्रयास सराहनीय है जिसने अपनी मातृभाषा के साहित्य मे वृद्धि करने की शक्ति अपने अन्दर सजोई है । प्रेरणा या आदर्श की अवश्य कमी रही है परन्तु मनोरंजन की तनिक भी न्यूनता इस उपन्यास मे नही रही है । यही कारण है कि यह रचना राजस्थानी भाषा साहित्य संगम द्वारा पुरस्कृत है ।

काल-भैरवी [1]

कथा-सार –धन्नू पटवारी पर मेडता के पास प्रकट हुए भैरू तथा भैरवी का प्रभाव छाया रहता है जिसके कारण कभी कभी उसकी नींद ही हराम हो जाती है । पटवारी का गाव के चौधरी पेमै की बेटी से प्रेम रहता है । भैरू-भैरवी के दर्शन पटवारी को कई बार होते रहते है तथा अनेक बार आपसी बातचीत भी हो जाती है । एकाध बार तो पटवारी को उसके हलके (कार्य-स्थल) का रास्ता बताने के लिए भैरू-भैरवी चलते है । एकदा नग्नावस्था मे भैरवी के दर्शन पर भैरू के प्रति पटवारी की भक्ति होने के कारण भस्म होने से पटवारी बच जाता है । भैरवी स्वय को पटवारी की धर्म की मां तथा भैरू को धर्म का बाप स्वीकार करती है । इसलिए पटवारी के मुख मे अपने स्तनो के दूध की दो बूंदें भी डालती है ।

एक साल भैरू तथा भैरवी की दया से पटवारी के हलके मे पडने वाला अकाल जमाने मे बदल जाता है । कुछ समय बाद पेमै जाट की सुन्दर बेटी को भैरू की पत्नी बना दी जाती है । योनि की पूजा के साथ उसकी दीक्षा होती है । उसके बाद पेमै जाट की बेटी को मानव-योनि से सम्बन्ध तोडना पडता है । कालान्तर मे पेमै जाट की बेटी भैरवी के पद को प्राप्त कर लेती है । अन्त मे दोनो भैरवियाँ दीवाली की रात्रि मे पटवारी को आशीर्वाद देती है । तदनन्तर ही पटवारी का भैरू-भैरवी से मिलने का नशा सदा सदा के लिए समाप्त हो जाता है । भैरू भी अपने प्राचीन स्थल को छोड कर अन्य स्थान पर चला जाता है ।

---

1 मनोवैज्ञानिकता से युक्त सामाजिक उपन्यास, लेखक- रामनिवास शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर से १९७५ मे प्रकाशित, १६ परिच्छेदो मे विभक्त ।

समीक्षाः– (अ) विशेषताएँ :—उपन्यासकार का लक्ष्य सभवतः राजस्थान मे देवी-देवताओ की योनि से पृथक् भैरू-भैरवी की योनि के महत्त्व को उजागर करने का रहा होगा। लेखक ने भैरवी को महाशक्ति का रूप माना है जिसके सम्मुख भैरू का प्रभाव भी कम रहता है। परन्तु उपन्यास के नायक धन्नू पटवारी पर भैरू-भैरवी के माया-जाल का पर्दा अन्त तक रहता है। तान्त्रिक और खेचर-विद्या का ज्ञान, राजस्थान के ग्रामो मे फैले अन्धविश्वासो पर तीक्ष्ण प्रहार, राजस्थान प्रदेश के गाँवो के निम्न वर्ग की भैरू और भैरवी की योनि के प्रति अटूट श्रद्धा, ग्रामीणो के भोलेपन तथा स्वच्छ और निश्चित ग्रामीण वातावरण की झलक इस उपन्यास मे पर्याप्त मात्रा मे है।

उर्दू और सस्कृत के किञ्चित् शब्द-प्रयोग मे लेखक का अन्य भाषाओ के प्रति समन्वयात्मक दृष्टिकोण प्रकट होता है। जैसे—इतमीनान, उत्सुकता, अभ्यास, प्रश्नोत्तर, परमानन्द, अज्ञानता, सहोदर ऊर्ध्वागमन, मुद्रा, अनागत, नारीश्वर, मातृत्व, प्रतीक्षा, शक्ति-चालन। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ नव शब्द-निर्माण की कला लेखक मे विद्यमान है—

सागीडा, वारणू, मोकी, चिडमिडाटी, दृमटाम, छातीवाणी सांमर, रवणी, गदगावरी, गौर, झपधरो टोचाही, हुवमाड। भाषा पर नागौरी तथा बीकानेरी क्षेत्रो की बोलियो का प्रभाव भी लक्षित होता है—चेताचूक, चकरीयम-सो, राफट-रोल, निडाल, अठीनली-उठीनली इत्यादि। मुहावरो-कहावतो तथा अलकारो का प्रभाव भी भाषा मे यत्र-तत्र दिखाई देता है—जिया तेल मे छिया रो पटै, हू नकरी चढ्योडो-सो, छाई-माई हुयगी, बावो आवै न ताली बाजै, चूंहावरण-सो लिलाट, सिन्दूर खीरा-सो भबका मारै हो, सून्याउ भभको मारै हो, रात घटै न तिल बधै, पगा रो जिवा राम ही निकल्यो, हू टोडियो-सो मूं टो फाड्या, सगली छाडी भूल ज्यावै, आभो तो विधवा री आस्या री दाई साफ हो, बाबोजी री टाट सो माफ, नीद जाणी डागलै नटगी, तारा लुगडी माय नू भाकता भूखी आंख्या-सा दीखै हा, राट स्याणी होसी पण समम मरिया पछै, नीद तो डूगरी चढगी ही, आभो सूनी सारण-सो पडियो रैयो। उपन्यास का प्रारम्भ और अन्त बडे प्रभावशाली ढग मे प्रस्तुत किया गया है। भाषा की सरलता, स्पष्टता, रोचकता, सजीवता एव प्रवाहमयता इन लघु वाक्यावलि पूर्ण अनुच्छेद से स्पष्ट है —[1]

"दिन ढलवा लागग्यो पण हाल्साई तावडो सागीडो पडै हो। डील बलवा लागग्यो। अलाया तावडतोड चिरमिरावण लागगी। एकाएक हुमसाड उठियो के नाडी कानी हुयने चालू। नाडी कानली डगर पर चाल पडियो। होलै होलै धरती री ढलान आवा लागगी। धूप कम पडवा

1. काल-भैरवी पृ. स ४०

लागगी । ताल ग्रावा लागग्या । कैरिया खेजडी गूदी रा पेड सामै ग्रावा लागग्या । धरती री ढलात सू ठडी हवा रो झोको ग्रावा लाग्यो ।"

रमणी के ग्रनुपम सौन्दर्य का वर्णन करने मे लेखक सिद्धहस्त है—

"... ......वारै नीचै घडा-सा उठ्योडा बोबा री बीटल्या फाटती ही । गलै मे पैरियोडी लड बोबा पर झूलती ही । टूसी मे पोयोडी चीडा कठा पर चमकती ही । दाडम-सा ग्रोठा पर मुलकता मोती-सा दात चिमकता हा । तीखो नाक, कजरारी ग्राख्या, कान कनै जावती भू ग्रा, ऊचो चौडो लिलाट, कामरा-सो मीठो लागतो हो । एक हाथ सू ग्राचल ढकती, दूसरै हाथ सू पल्लो फटकारती जरा मालम पडतो कै मीन केतु रो झडो फराती ही । मधरी चाल जादू-सी लागती ही ।"[1]

(व) दोष —उपन्यास मे कुछ ग्रस्वाभाविक प्रसग भी है । जैसे पृष्ठ ७ पर पटवारी धन्नू से भैरू का वार्त्तालाप, पृष्ठ ८ पर पटवारी को भैरवी के दर्शन होना, पेमै चौधरी की वेटी को भैरवी वनाना तथा कई स्थानो पर भैरू तथा भैरवी का एकदम प्रकट होना । स्थान स्थान पर तान्त्रिकता का चमत्कारी रूप प्रकट किया गया है । जैसे—पृष्ठ १२ से १६ पर भैरू द्वारा ग्रपनी पूर्व-गाथा ग्रौर साधना का वृत्तान्त सुनाना । पूरा उपन्यास ग्रस्वाभाविक घटनाग्रो से पूर्ण है । ऐसे उपन्यास को ऐतिहासिक उपन्यास नही ऐन्द्रजालिक या तिलस्मी उपन्यास ही कहा जाय तो ठीक होगा । कुछ ग्रध्यायो को ग्रनावश्यक ही स्थान दिया गया है । लेखक को तान्त्रिक विद्या का काफी ज्ञान तो है परन्तु कुछ स्थानो पर वह सामने नही ग्राने पर दवा-सा ही रह गया है । 'खेचर-विद्या' का स्थान स्थान पर जिक्र किया है परन्तु लेखक ने इसका विश्लेपण कहीं नही किया है । पृष्ठ१७पर साट(डाची)को'झाडखी'के वांधने का लेखक ने सकेत दिया है जो ग्रनुचित एव हास्यास्पद है । डाची को पेड के वाधा जाता है न कि छोटे-छोटे पौधो (झाडखो) के । उपन्यास का प्रारम्भ ग्रौर उसका ग्रन्त कुछ भ्रमात्मक-सा है । प्रारम्भ मे तो व्यासजी ग्रपनी वहियो के पन्ने पलट या उलट रहे थे ग्रौर ग्रन्त मे पटवारीजी मिश्रजी की वहियो के पन्ने पलट रहे थे । इस प्रकार की वैषम्यपूर्ण वात क्यो ? पेमै जाट की विवाहिता वेटी से पटवारी ने कभी वात तक नही की थी फिर काफी समय के वाद दोनो मे इतनी गम्भीर वातें एकदम कैसे करा दी गई ? पेमै की वेटी ने स्वय के भैरवी वनने की पूर्ण घटना पटवारी को कही ग्रौर यह भी वताया कि वह ग्रव ग्रादमी के भोग के ग्रयोग्य हो गई है—कैसी विचित्र वात लेखक के मस्तिष्क की उपज है ? उपन्यास का शीर्षक "काल-भैरवी" भी ग्रस्पष्ट है । लेखक ने पुस्तक की भूमिका मे "काल" का ग्रर्थ "सन्देश" वताया

1 काल-भैरवी पृ स ८७

है परन्तु राजस्थानी मे इसका वास्तविक अर्थ 'मौत' या "दुर्भिक्ष" है फिर कैसा अजीब शीर्षक दिया गया है ? कुछ स्थानो पर लेखक मे अश्लीलता का आधिक्य आ गया है । जैसे—[1]

(अ) "हूं तो थारो गिदरो हूं ।"
"सांचै ही म्हारो गिदरो आज गूदडो वणतो जावै हो ।"

(ब) "पछै म्हारी तथा भैरवी री भग-मालिनी री पूजा करी ।"[2]

(स) "हू जणा-कणां ही उलटो-सुलटो पग राखतो तो वा कैवती कै ईंया के करो हो । काचली माय सू बोबा फाटवा लागग्या । वीरी काचली ऊची उठियोडी सी दीखै ही । ....वा म्हारै गलबाथ घालती जणॉ थोडी देर मे ही ढीली पड ज्यावती ।............"[3]

लघु सवादो की अत्यल्पता तथा 'श' और 'ष' का प्रयोगाधिक्य भाषा-शैली की मनोरमता बढाने मे बाधक बने हैं । कुछ नई उपमाएँ भी कृत्रिमता लिए प्रकट हुई हैं । कारक-विषयक दोष भी उपन्यास मे देखने को मिले हैं ।

आदि और अन्त की अनुपम प्रस्तुति, मनोविज्ञान की सौष्ठवता तथा तान्त्रिकता के दिव्यालोक से पूर्ण उपन्यास का राजस्थानी साहित्य मे किञ्चित् सदोष होते हुए भी, एक अलौकिक स्थान है । इस प्रकार की कृति की सृष्टि लेखक की एक विशिष्ट मौलिकता की परिचायक है साथ ही राजस्थानी-साहित्य मे ऐसे नूतन मौलिक विचारो की प्रविष्टि भी कोई कम उल्लेखनीय नही है । परम्परागत लीक से परे हटकर लेखक ने एक नए चमत्कार का सर्जन करते हुए राजस्थानी उपन्यास-विधा के भण्डार की शोभा बढा कर उसके अभाव की विलक्षण पूर्ति की है ।

निष्कर्ष :—इस प्रकार एक ओर आभै पटकी, मैकती काया मुळकती, धरती, धोरा रो धोरी, गुवारपाठो, हू गोरी किण पीव री, जोग-सजोग, एक बीनणी दो बीन, आंधी अर आस्था, लालटी एक फेरू जमगी और तिरसकू उपन्यास सामाजिक जीवन के धरातल को पुष्ट करने वाले हैं तो दूसरी ओर आठ राजकुंवर, तीटो राव, सांच री भरम और मा रो बदलो लोक-जीवन की नीव को । ऐतिहासिक तत्त्व को रग-रग मे समेटने वाले आभलदे और कदल-पूजा भी राजस्थानी भाषा की शोभा मे चार चाँद लगाने वाले सिद्ध हुए है । मनोवैज्ञानिकता के फव्वारे छोडने वाला "काल-भैरवी" उपन्यास भी कोई कम महत्त्वपूर्ण नही है । इधर नृसिंह राज-पुरोहित ने "भगवान महावीर" उपन्यास के माध्यम से अपनी पौराणिक भावना

---

1. काल-भैरवी . पृ स. २४
2. वही . पृ. स ५५
3. वही : पृ स ६३

को प्रकट करने मे कोई कसर नही उठा रखी है। निष्कर्षत राजस्थानी भाषा मे विषयवस्तु की दृष्टि से सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक एव राजनीतिक उपन्यासो मे से सामाजिक उपन्यासो का प्राधान्य तथा शेष मे न्यूनता देखने को मिलती है। इन उपन्यासो मे लोक-जीवन की विशेषताएँ, व्यग्य, प्रतीकात्मकता, आदर्श, यथार्थ, यथार्थोन्मुख आदर्श, आचलिकता, सामयिक समस्याओ तथा अतिमानवीय तत्त्व इत्यादि प्रवृत्तियो के दर्शन सहज रूप मे हो जाते है। राजस्थानी उपन्यास के सीमित कलेवर को देखकर यह अनुमान नही लगाना चाहिए कि राजस्थानी गद्य-लेखक जीवन की युगानुकूल व्याख्या करने एव उसके बदलते मानदण्डो को व्यापक धरातल पर प्रस्तुत करने की स्थिति तक नही पहुँच पाए हैं। वस्तुत प्रकाशन की सीमा एव वित्तीय कठिनाई ही राजस्थानी उपन्यासो की सीमा एव न्यूनता का कारण है। यही कारण है कि आज राजस्थानी के सैंकडो उपन्यास अप्रकाशित अवस्था मे पडे राजस्थानी उपन्यासकारो की आलमारियो की शोभा बढा रहे हैं।



अध्याय ३

कहानी-साहित्य

पृष्ठभूमि : सामान्य परिचय :–

सत्रहवीं शताब्दी से लिखा जाने वाला राजस्थानी कथा-साहित्य, जिसे वात-साहित्य की संज्ञा मे अभिहित किया गया है, पर्याप्त समृद्ध रहा है। ये वार्तें गद्य, पद्य तथा मिश्रित रूप मे अधिक मात्रा मे प्राप्त होती हैं। शिल्पगत विशेषताओं के कारण ये कहानी कहे जाने वाले साहित्य से अपना पृथक् अस्तित्व ही रखती है। कहानी का जो स्वरूप आज हमारे सामने है, उसका सीधा सम्बन्ध पाश्चात्य साहित्य की "शार्ट स्टोरी" मे है न कि प्राचीन राजस्थानी वात मे। किरण नाहटा के अनुसार राजस्थानी में कहानी-लेखन का सूत्रपात, बगला, मराठी एवं हिन्दी-साहित्य से प्रेरित होकर, लेखकों ने किया। क्योंकि आधुनिक राजस्थानी-साहित्य के प्रारम्भिक चरण के प्राय सभी गद्यकार प्रवासी राजस्थानी बगाल तथा महाराष्ट्र मे फैले हुए थे।

राजस्थानी भाषा मे पश्चिमी शैली की कहानी लिखने का सर्वप्रथम प्रयास शिवचन्द्र भरतिया ने ही किया। इनकी प्रथम कहानी "विश्रान्त प्रवासी"[1] विक्रम सवत् १९६१ मे प्रकाशित हुई। तत्पश्चात् "माहेश्वरी" तथा "पचराज" मे प्रकाशित गुलाबचन्द नागोरी की "बड़ी तीज" एवं "बेटी की बिक्री" और "बहू की गरीबी" तथा "पचराज" मे ही प्रकाशित शिवनारायण तोषणीवाल की "विद्या पर दैवतग्" तथा "स्त्री शिक्षण को ओनामा" कथाएँ उपदेश और सुधारवादी प्रवृत्तियों के साथ पाठकों के समक्ष प्रकट हुई। अपने लघु कलेवर, सजीव वातावरण, पात्रों के स्वाभाविक चरित्राकन तथा बोलचाल की भाषा के प्रयोग आदि के कारण ये कथाएँ आधुनिक कहानी-साहित्य के अधिक निकट सिद्ध होती हैं। कतिपय विद्वानों ने वि. स. १९७२ में प्रकाशित भगवतीप्रसाद दारूका की हिन्दी कहानी को, जिसमें राजस्थानी पात्रों के पूरे वार्त्तालाप राजस्थानी भाषा मे होने के कारण, राजस्थानी कथा-साहित्य मे एक नया मोड़ प्रदान करने वाली बताया है। इसके अतिरिक्त दारूका से काफी समय पूर्व "वैश्योपकारक" पत्र मे प्रकाशित प. माधव-प्रसाद मिश्र की "लच्छी री बहादुरी" कहानी मे भी ठीक ऐसा ही प्रयोग मिलता है। निष्कर्षत राजस्थानी मे स्वतन्त्र रूप से आधुनिक शैली की कहानियाँ स्वाधीनता के कुछ समय बाद ही पत्र-पत्रिकाओं मे नजर आने लगी। केवल पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकट होने के कारण कतिपय कहानीकारों

1. वैश्योपकारक : हिन्दी मासिक प्रकाशन-स्थान, कलकत्ता

द्वारा एक लम्बी समयावधि तक राजस्थानी कथा-साहित्य के अवरुद्ध की बात जो कही गई है, वह नितान्त गलत है। १९५७ मे मूलचन्द 'प्राणेश' [1] १९५८ मे रानी लक्ष्मीकुमारी चूडावत [2] तथा १९५९ मे नानूराम सस्कर्त्ता [3] की रचनाये पुस्तककारो मे, राजस्थानी की अनेक कथाओ के लिए, पाठको के समक्ष प्रकट हुई। तभी से निरन्तर पत्र-पत्रिकाओ के साथ-साथ समय-समय पर राजस्थानी कहानीकारो के अनेक कथा-सग्रह भी निकलते रहे हैं। यही कारण है कि आज राजस्थानी कहानीकारो की सख्या २०-२५ से बढ कर लगभग ६०० तक पहुँच गई हैं। इन्ही के प्रयासो से आज राजस्थानी मे सभी प्रकार की शैलियो, अनेक आदर्शो तथा नवीन प्रवृत्तियो की कथाएँ प्राप्त हो जाती हैं।

आधुनिक राजस्थानी कहानियो की परिस्थितियाँ तथा उनका विकास-क्रम हिन्दी से भिन्न रहा है अत न तो हिन्दी की तरह इसे प्रेमचन्द-युग, जैनेन्द्र-युग तथा अज्ञेय-युग का शीर्षक देकर व्यक्ति विशेष के प्रभाव को इस क्षेत्र मे स्वीकार करते हुए विभाजित कर सकते हैं और न ही प्रवृत्तियो की प्रवलता के आधार पर यथार्थवादी-युग, मनोविश्लेषणवादी-युग आदि के रूप मे। अभी तक राजस्थानी में ऐसा कोई समर्थ कहानीकार नही हुआ है जो प्रेमचन्द की तरह अपने सम्पूर्ण युग पर छाया रहा हो और न ही कोई प्रवृत्ति विशेष ही इतनी प्रभावी हो पाई है कि वह अन्यान्य प्रवृत्तियो पर पूर्णत छा गई हो। इसके विपरीत राजस्थानी मे एक ही समय मे भिन्न भिन्न प्रवृत्तियो तथा स्तरो की कहानियाँ साथ साथ लिखी जाती रही हैं। इसलिए ऐसी स्थिति मे राजस्थानी कहानी को युगो की सीमा मे विभक्त कर अथवा प्रवृत्ति विशेष को समय विशेष मे सर्वोपरि मान कर मूल्याकन नही किया जा सकता। स्वातन्त्र्योत्तर-काल का राजस्थानी कहानी-साहित्य हमारे सामने इन रूपों मे प्रकट हुआ है —

(१) सामाजिक कहानियाँ
(२) ऐतिहासिक "
(३) प्रतीकात्मक "
(४) हास्य एव व्यग्यात्मक कहानियाँ
(५) मनोवैज्ञानिक कहानियाँ
(६) लोक-कथाएँ
(७) शिशु या बाल कथायें
(८) नीति या बोध कथायें
(९) पौराणिक कहानियाँ
(१०) आँचलिक कहानियाँ

आधुनिक राजस्थानी कहानी-साहित्य मे सामाजिक कहानियो की प्रधानता रही है जिनमे आदर्शवादी, आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी तथा यथार्थवादी तथ्यो का चित्रण हुआ है। इस और सुधारवादी भावना से प्रेरित होकर लिखी गई कहा-

1 परदेशी री गोरडी एक प्रलम्ब कथा
2 मूमल लोककथा सग्रह
3 ग्योरी . " "

नियाँ हैं तो दूसरी ओर सामाजिक या पारिवारिक जीवन के किसी एक पहलू को यथार्थ रूप में अंकित करने वाली कहानियाँ सामने आई हैं तथा आ भी रही हैं।

राजस्थानी कथा-साहित्य : एक गहन विवेचन :–

आदर्शवादी तथा आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी कहानियों में मुरलीधर व्यास की "पलमैं रो मोल" "नर मेध या समाज रो नीरो" नानूराम संस्कर्ता की "दूध गिलोडो" "दायजो" "डाकरण स्यारी" और "चेडो" नृसिंह राजपुरोहित की "घरण वूठा करण हारण" "रूपाली बीनणी" और "कुए भाग पडी" अन्नाराम 'सुदामा' की "ढलै डूगर फलै चट्टान" तथा "रोग रो निदान" बैजनाथ पवार की "मूरी" "दूजवर" "छातीकूटो" मूलचन्द 'प्राणेश' की "कोयलडी ए गिध चाली" तथा "थू थीजियोडो सिट्टो" मनोहर शर्मा की "गरुजी" तथा "जवान रो मोल" भवर-लाल सुथार 'भ्रमर' की "टोग" दामोदरप्रसाद की "एक म्यान अर दो तलवार" और "विसदन्त रो बलिदान" श्रीलाल नथमल जोशी की "प्रेम री मनवार" "कथनी अर करणी" "धरणी अर भरणी" "प्रेम रो सौदो" तथा "मोलायोडी लाडी" आदि सैकडो कहानियाँ हैं। यथार्थवादी तथ्यो का विश्लेषण करने वाली कहानियों मे नृसिंह राजपुरोहित की "उतर भीखा म्हारी बारी" "कुअै भाग पडी" "भारत भाग विधाता" बैजनाथ पवार की "कातिग महातम" तथा "पासो" नानूराम संस्कर्ता की "मिरचा री कुडछी" और "माटी री हाडी" श्रीलाल नथमल जोशी की "काळ ले जाये" अन्नाराम 'सुदामा' की "फेट मे आयोडो" रामनिवास शर्मा की "सुहागरण-भागरण" "आतमबोध" तथा "लैम्प पोस्ट" रामेश्वरदयाल श्रीमाली की "मळवटा" यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की "बाप अर बेटो" इत्यादि कहानियाँ उल्लेखनीय बन पडी हैं।

आधुनिक राजस्थानी सामाजिक कहानियों के मुख्य आधार बिन्दु रहे हैं—पूंजीपति और सामन्ती वर्ग के शोषण से बने दीन-हीन कृषक-मजदूर वर्ग के प्राणी, सामाजिक कुरीतियों और रूढ परम्पराओं के चक्र में पिसते हुए निम्न मध्यमवर्गीय लोग और प्रति वर्ष अनपेक्षित अतिथि की तरह आ टपकने वाले अकाल से भयभीत तथा अभावों से संघर्ष करते हुए मानवी कंकालों के समूह। जहाँ मुरलीधर व्यास की "बरसगांठ" नृसिंह राजपुरोहित की "कलम री मार" तथा "उतर भीखा म्हारी बारी" करणीदान बारहठ की "पोळ्या री मौर" रामदत्त सांकृत्य की "गगरी" आदि कहानियों में समाज के शोषकों का ताण्डव नृत्य है वहाँ मनोहर शर्मा की "चिलको" तथा "कन्यादान" नृसिंह राजपुरोहित की "भोमजी ठाकर" "अमर-चूनडी" और "पेट री आग" तथा मुन्नालाल राजपुरोहित की "ऊँट रो भाठो" में इसी वर्ग की शरणागत-वत्सलता, प्रण-पालन और शूर-वीरता का प्रभावी चित्रांकन उभर आया है। राजस्थानी जन-जीवन को डावांडोल करने वाले अकाल की भीष-

णता के वीभत्स रूप दिखाने वाली कहानियो मे मुरलीधर व्यास की "मेह मामो" श्रौर "पेट रो पाप" नृसिंह राजपुरोहित की "गाव री हथाई" बैजनाथ पवार की "धापी भूवा" तथा पुरुषोत्तम छगाणी की "पूरब-पच्छिम" प्रमुख है। इनके अतिरिक्त समाज की अनेकानेक समस्याश्रो, बुराइयो तथा कुरीतियो एव कई श्रादर्शो का सूक्ष्मत विश्लेपण करने वाली सैकडो कहानीकारो की कहानियाँ उनके कहानी-सग्रहो श्रौर राजस्थानी पत्र-पत्रिकाश्रो के माध्यम से प्रकट हुई हैं।

राजस्थानी कहानीकारो ने सामाजिक कहानियो के साथ-साथ ऐतिहासिक एव अर्द्ध-ऐतिहासिक कहानियो के लेखन मे भी बडी रुचि दिखाई है जिनसे राजस्थान का गौरवपूर्ण इतिहास तथा यहाँ की गरिमामयी सास्कृतिक परम्पराएँ बडी शान से प्रकट हुए है। लक्ष्मीकुमारी चूडावत की "डूगजी जवारजी री वात" "रजपूताणी" "पिउसधी" "हुकार री कलगी" श्रौर "हाडी राणी" सौभाग्यसिह शेखावत की "मनाणा रा धणी अमरसिंह-धीरतसिंघ" "किला रा धणी" "चण्डावल रो धणी-गोरधनसिंघ" "लोहियाणा रो कु वर" श्रौर "खाटू रो सेटो" सवाईसिंह धमोरा की "नकली श्रामेर असली कच्छावा" तथा "मरदानी लुगाई-पेमा बाई' नृसिंह राजपुरोहित की "अमरचूनडी" बालकृष्ण थोलम्बिया की "हार-जीत" जमदीश माथुर 'कमल' की 'रायजी राज बचायो" गोपाल राजस्थानी की 'कुणाल' मोतीसिंह राठौड की "राजा भोज री पदरवी विद्या" देवनारायण श्रासोपा की "यादगार' छगनलाल गयपाल की "ढोला मारू" श्रीलाल मिश्र की "अलूजी हाडै री पगडी" भूरसिंह राठौड की " जैतमाल री राडधडा-विजय" पन्नालाल शर्मा 'पन्नन' की "मोनलदे सोढी' श्रौर "रतनी भीलणी" भैरवसिंह की "देव द्रुम" तथा "नांवत वाजी' नरेन्द्रसिंह खीची की "पीपाड री तीजणिया-घुडलै री वात" तथा "भीला नै फीरगिया रै झगडै री वात" मोहनलाल गुप्त की "प्यासो प्रेम" बद्रीदान गाडण की "श्रावै री डाल सरवर री पाल' शिवसिंह चोयल की "खरी चाकरी" मुरलीधर व्यास की 'पत्र' तथा 'जगलधर वादशाह" श्रीलाल नथमल जोशी की "फासी रो हुकम टल्यो" दामोदरप्रसाद की "प्रेम री पाती' "दो भाई श्रर दो चिराग' "नट श्रायो गाव रूणीचै रो' "पद्धीडा रा बोल" "मीरा श्रौर भोजराज' एव "बागी ठाकर गढ सिघगवट रो" यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की "तानो" सुमेरसिंह शेखावत री रायमलजी दरबारी' ब्रजमोहन जावलिया की "श्राल-जजाल" रामनिवास शर्मा की "मूमल" कहानियाँ ऐतिहासिक तथा अर्द्ध ऐतिहासिक तथ्यो से श्रोतप्रोत बन पडी है। इनके श्रलावा रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत के कुछ रेखा-चित्र[1] भी ऐतिहासिक तथ्यो से पूर्ण है। इनका समीक्षात्मक विवरण इस प्रकार से है :—

1 [illegible] बाता, [illegible], [illegible], मूमल, पाबूजी री बात, [illegible] री बात [illegible]।

अमोलक वातां

समीक्षा :—एक सौ छप्पन पृष्ठीय इस पुस्तक मे चार ऐतिहासिक कथाये है। "डूगजी जवारजी" मे बठोठ के राजपूत वीर डूगजी और जवारजी के शस्त्र शौर्य, उनकी देशभक्ति और उनका मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष, "सैणी वीझाणद" कथा मे धनी वेदो चारण की रूपवती पुत्री सैणी तथा गरीब और भद्दा परन्तु अच्छा गायक एव वादक वीझाणद के अनन्य प्रेम की चरम सीमा "वाघो भारमली" मे वाघोजी और भारमली के अटूट दाम्पत्य-प्रेम को देख कर आसाजी चारण का हतप्रभ रह जाना तथा इनकी मृत्यु के बाद चिन्ताग्रस्त होकर आसाजी का मर जाना तथा "रिडमल खावडिया री बात" मे घोडो के विक्रेता वणजारा और खावड के स्वामी भारमल के छोटे भाई रिडमल की अनुपम मैत्री तथा अलौकिक सुन्दरी सोढी नारगदे और रिडमल का अनन्य प्रेम इत्यादि की विलक्षण झाँकी मिलती है। "सैणी वीझाणद" को छोड शेष सभी कहानियाँ ऐतिहासिक तथ्यो पर आधारित लक्षित होती हैं। लेखिका की कल्पना-शक्ति की मौलिकता के साथ साथ भाषा-शैली का सौष्ठव भी देखने को मिलता है। सभी कथाओ के बीच बीच मे दोहो और पद्याशो का प्रयोग किया गया है जो कथाओ मे भावो की वृद्धि करते हैं—

(१) मान रखे तो पीव तज, पीव रखे तज मान।
  दो दो गयंद न बंध ही, एके खभू ठाण ॥[1]
(२) जह तरवर तह मोरिया, जह सरवर तह हंस।
  जह वाघो तह भारमलि, जहं दारू तह मंस ॥[2]
(३) वर करु तो रिडमलो, भारमल म्हारो वीर।[3]
(४) वरसण लागी वादली, चमकण लागी बीज।
  ज्यारा साहिव चाकरी, वे क्यूं खेले तीज ॥[4]

पत्नी, पतिव्रता, वीरगति, देही, कल्पना, चित्त, प्राण, इत्यादि संस्कृत के तथा आबरू, हिफाजत, तावेदार, मायूसी इत्यादि उर्दू के शब्दो का प्रयोग कर लेखिका ने भाषा-सहिष्णुता का भाव प्रकट किया है। हल्लाबोल, गुलीडा, गोटी लल्लवली, आडवार, विटदाय, कापडो, छदगाली, वलवली, गमेला, नान्द, रमझट, लताओ, दीड, मोट, नटाइट इत्यादि नव शब्दो के निर्माण-कार्य तथा गुजा नेग, दोरा, फेटोक, मैंतो, ऐंज आदि मारवाड़ी बोली के शब्दो के प्रयोग से लेखिका ने

---

1. अमोलक वाता : ले. लक्ष्मीकुमारी चूडावत, पृ. सं ८२
2. वही पृ सं ९६
3. वही पृ. सं. १२६
4. वही पृ. सं. १२३

अत्यन्त ही सावधानी बरती है। लघु वाक्यावलि से युक्त भाषा तथा संवाद-युक्त शैली के दर्शन भी पुस्तक मे पर्याप्त मात्रा मे होते हैं। राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ मुहावरो-कहावतो तथा आलंकारिक छटा की रश्मियाँ भी यत्र-तत्र विकीर्ण की हैं—

चन्दरमा री नाई बधती, गावड कुरभ रा बच्चा री नाई लाबी, साथळा केळ रा थावा नाई, पग दैत री नाई, पिस्तो ठढो कग, जे सुख चावे जीव रो तो धण भटियाणी लाव, पत्थर माक्खण जैडा मुलायम, पगा नीचली धरती हालगी, आखिया फाटी री फाटी रैयगी, हट्ट कीधी न भट्ट, तेली सू खळ ऊनरी व्ही वळोता जोग, जूवा रे दुख धावलो थोडोई फैंकणी आवै, लूणा जैडी चरपरी, पाना जैडी पातळी, तावा वरणी देही, गोडा नाळेर रा जैडा, माथो घूण लीधो, काळजा मे लूण लागै, छाती माथै साप लोटै, मुडो धोळो पड गियो, जाणै कचळ रो पूल पगा चाल रियो है, कूकडा सरीखा खाधा, पीडा जाणै चाक।

अलग से पुस्तको और पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित कथाओ को इस पुस्तक मे स्थान देकर लेखिका ने पुनरावृत्ति का ही प्रयास किया है। "डूगजी जवारजी री वात" पुस्तक मे "डूगजी जवारजी" तथा "सैणी बीझाणद" और "वाघो भारमली" मे "वाघो भारमली" तथा "रिडमल खावडिया री वात" कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। इससे पूर्व पत्र-पत्रिकाओ मे भी इन्हे स्थान दिया गया था।

वाघो भारमली

समीक्षा :—इस पुस्तक मे दो ऐतिहासिक कथाओ को स्थान दिया गया है। "वाघो भारमली" मे वाघोजी और दासी भारमली के अटूट दाम्पत्य-प्रेम तथा "रिडमल खावडिया री वात" मे रिडमल खावडिया और चन्दन वणजारे की अलौकिक मित्रता तथा रिडमल और नारगदे के अनन्य प्रेम का वर्णन है। "अमोलक वाता" सग्रह मे इस पुस्तक की दोनो कहानियो को स्थान देने के कारण यह पुस्तक केवल पुनरावृत्ति के रूप मे ही प्रकाशित हुई है। इस पुस्तक मे दोहो एव पद्य के साथ सवाद-शैली की मनोरमता भी दिखाई देती है—[1]

"आदमी मुळकियो, कोई गामा माय नू आयोडा दीसे 'अरे मोहल्लो बता तो बतावू।"

चावा कुम्हार रो घर सा।
अठै घणाई चावा है।
वो चावो जठै भारमलजी टैग्वी करै।
अठै घणा ई भारमल आवे जावे। यू कैय चालतो व्हियो।

[1] वाघो भारमली रे नर्मदाकुमारी प्रस्तावन, पृ स ७१

केसो बोलियो या अच्छी न्ही रे। ये एडा काई है अठा रा मिनख। बोलता ई वाडा बोले। अबै कठे पूछा ?"

सांझल रात

समीक्षा :—एक सौ अठानवे पृष्ठीय इस चौदह कथाओ के सग्रह मे पाबूजी, पिउसधी, हूंकार री कलगी, हाडी राणी और जसमल ओडण को पूर्ण ऐतिहासिक कथाओ मे रखा जा सकता है। शेष कथाएँ अर्ध-ऐतिहासिक या लोककथाएँ हैं जैसे रजपूताणी, उगो भाणेज, डाढाळो सूर, लालजी पेमजी, ऊजली, ढोला मारू, लाला मेवाडी सोरठ और जलो। हूकार री कलगी, हाडी राणी और लालजी पेमजी—इन कथाओ को छोड शेष सभी कथाओ मे दूहो या लोकगीतो या कविताओ का प्रयोग किया गया है जो कथाओ को रोचकता प्रदान करते हैं। जलो, सोरठ, लाला मेवाडी, ढोलामारू और ऊजली आदि कथाओ मे शुद्ध प्रेम का सागोपाग चित्रण है तथा पाबूजी, रजपूताणी, पिउसधी, हूकार री कलगी, उगो भाणेज, डाढाळो सूर, लालजी पेमजी और जसमल ओडण मे अत्यधिक साहस, चतुरता तथा वीरता के दर्शन होते हैं। कुछ पद्यांशो का चमत्कार द्रष्टव्य है—

(१) माग्या लाभै नव चणा, मागी लभै जुवार।
माग्या साजन किम मिलै, गहली मूढ गंवार ॥[1]

(२) कंवै तो मरा दू घर धणी ए, जसमल ! कंवै तो मरा दू देवर जेठ।
ऊजलदती ओडणी ए जसमल, था पर रीझ्यो राव खगार ॥[2]

पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग मे सफलता मिली है। जैसे "पिउसंधी" कहानी मे अफगानो की भाषा का प्रयोग किया गया है। भाषा-शैली का सौष्ठव[3] दर्शनीय है—

"आसमान री उतरी इन्दर री अपसरा। सरोवर रो हस। सरद रो कमल। अमात री मीजर। भादवै रो बादळ। असाढ री बीज। इम री छच्ची। लिछमी रो अवतार। परभात रो सूरज। पूनम रो चाद। गुण रो प्रवाह। रूप रो भडार। बाह जाणे चढयो धनुस, पातला हाथ। नान्हा नख। दात जाणे अनार रा बीज। अधर जाणे अबोली। हसगी गत चालै। चावल रो चौथो हिस्सो खावै। फूक री मारी आकास उड जावै।"

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ उर्दू और सस्कृत के शब्दो के प्रयोग मे लेखिका का अन्यान्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव स्पष्ट होता है—

1. सांझल रात : ले. लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, कहानी—लाला मेवाडी, पृ. सं. १५०
2. — वही — कहानी—जसमल ओडण, पृ. सं. १०९
3. — वही — कहानी-लाला मेवाडी, पृ. सं. १३८-१३९

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द—परणेतू, चळू अस्त्री, हकाळी, एकी वेकी मनरळी, केयरी, रिसाळू, उगेरया, ताणनै, वीनै, वाजोला, विलूमगी, गळडब्बै, चोसरा, तिवाळो, वावणिया, नैनपण, गवोडा, ईरो, वीभणी, गाळमो, सोरो, ठिमरास, आगतो, मोसो, ठलोकळी, डकरनै खडकी, भगावोळ, सातरो, खात, भणखण, अतरी कूत, मोडो, आजस, ढूल्या।

उर्दू के शब्द—खवर, मजबूत, कुदरत, इज्जत, हद, तारीफ, इन्तज़ाम, गळत, ताल्लुक, नालायक, दीदार, परवरदिगार, गुनाह, माफ, जवरदस्ती।

सस्कृत के शब्द—साक्षी, रौद्र, गम्भीर, अद्भुत, पराधीन अगीकार, निधि, आवेग, कुरूप, आज्ञा, क्षीर, रुदन, कामोत्तेजक, दृष्टि, अनिष्टकारक, पक्ष, उन्मत्त, इच्छा, लक्षण, विधाता, स्त्री, तृप्ति, दिया, प्रेम।

सग्रह, मे मुहावरो कहावतो एव आलकारिक-सौन्दर्य के दर्शन भी होते है—वळवळता खीरा री नाई आख्या, काची केळ ज्यू कापगी, जाणै बीजळी पडी, हरणी जमी आस्या, जाणै पाखाण री पूतली व्हे, जाणै चाद धरती पै टूट पड्यो व्हे, कूकडा री नाई खिच्योडी गावड, ढोल व्हेग्या, जाणै सावण री काकडी कटी व्हे, जाणै दूजो सूरज उग्यो व्हे, जाणै फोजा रो माभी घूमतो, जमी री जमी रैगी, मूरती ज्यू बैठी, कूमळायोडा फूल री नाई होठ सूखग्या, आसूडा कायर मोरणी नाई ढळकाय री, जाणै काचो माट फूट्यो, तरवर काळी नागण ज्यू, वाणिया रो पत माटा री चट्टाण ज्यू, घूवाळा घालैला।

पुस्तक का नामकरण "माभल रात" उपयुक्त नही है। न तो इस शीर्षक वाली कोई कथा इसमे है और न इस वातावरण से घनिष्ट सम्बन्ध रखने वाली कथाएँ। पृष्ठ सख्या और समय को देखते पुस्तक की कीमत चार रुपए अधिक है। भाषा को छोड इस पुस्तक मे कोई मौलिकता नही है अत लेखिका का पुस्तक के प्रारम्भ मे यह लिखना युक्तिसगत नहीं है—

"राजस्थानी री मौलिक वाता रो सग्रह"

"सोरठ" कहानी मे सोरठ का विवाह मात्रोर के व्यापारी रूड के साथ हुआ। बाद मे बींझा के मामा राव खगार ने उसे जुए मे जीत कर अपने महल मे रखा तथा उसके बाद सोरठ ने बींझा से विवाह कर उसके साथ सम्भोग किया। यहा सोरठ वेश्या थी जो इतनो के पास रही। अश्लीलता की झलक भी लेखिका ने दी है—[1]

"थारा कपडा उतार, थारा डील री गरमी ई री देह मे साथै मोर नै दे।"

---

1 माझल रात - कहाणी, सोरठ पृष्ठ ११५

पुस्तक सदोष होते हुए भी राजस्थानी के आधुनिक कथा-साहित्य मे एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

मूमल

समीक्षा —एक सौ बावन पृष्ठो के इस कथा-सग्रह मे छ ऐतिहासिक कहानियो को स्थान दिया गया है। इनमे वीरता, प्रेम की गहनता, भाषा की सरलता तथा सरसता कूट कूट कर भरी हुई है जो पाठको की जिज्ञासा को बढाने मे सहायक है। नागजी, मूमल तथा आभळ खीवजी—ये तीन कहानियाँ उत्कृष्ट कहानियो की श्रेणी मे आती है। "आभळ खीवजी" का प्रस्तुतीकरण का ढग बडा रोचक है। "केहर" मे केहरसिह की वीरता एव वेश्या कवळ और केहरसिह के अटूट प्रेम, "भोजा खपावण जेळ" मे भोजा गूजर की शूर-वीरता तथा "आसो डाभी" मे आसो डाभी और बाघेली के अनन्य प्रेम का जिक्र किया गया है। सभी कहानियो के सौन्दर्य बढाने के लिए बीच बीच मे डिगळ के दूहो का प्रयोग भी किया है जिनके भाव पाठक के सरलता से ही समझ मे आ जाते है। अत्यन्त सुन्दर और मधुर गीत के प्रयोग को देखिए[1] —

म्हारी जग मीठी ए मूमल, हा हा ए म्हारी हरियाली ए मूमल
हाले तो ले चालू म्हारे देस, म्हारी नाजुकटी ए मूमल
म्हारी अमरत भर ए मूमल, हाले नी रसिया रे देस
म्हारी माढे री ए मूमल, हाले नी ए अमराणे रे देस

लघु वाक्यावलि मे युक्त भाषागत सौष्ठव स्तुत्य है[2] —

"घोडी तो सावण री मोरणी ज्यू नाचे। थाली मे ठमका करे। पवन सू वाता करे। तारा सू चोटा करे। बावली रे पगा मे बाजणिया नेवर। सोना री गुगताल। केसवाली मे मोती। गला मे नौसर हार। लाल लाल रा पागडा। हरियो बनाती जीण। डुमची रे पाट रा फूदा। घोडी खूब सूब बणी।"

सवाद-शैली का चमत्कार भी विद्यमान है[3] —

"बखाणू तो साचा कहू। देखो तो खबर पडै।
खबर काई पडै। काले ई ज जावल थारी बैन नै देखू।
म्हारी बैन नै अर थाने कोई देखवा दे सपना देखो सपना, देवरजी!
सपना काई देखू। आभल सू जाये दो बात कर न आव काले।

1 मूमल : ले लक्ष्मीकुमारी चूंडावत कहानी-"मूमल" पृ स १२९-१३०
२ — वही — कहानी-'भोजा खपावण जेळ' पृ स, ४१
३. — वही — कहानी-'आसो डाभी' पृ स १००-१०२

कीधा वात। म्हारी आभल रो सुभाव तेज है। बात करवा रे फेर मे कठै ई धक्का खायन मत आवजो।

या वात है? तो लो यो चालियो।"

आलकारिक भाषा तथा कहावतो-मुहावरो की छटा भी है—

जाणै दो मगरमच्छ भिडिया, रस्सी वळगी पण वळ नी गियो, लूणी पै मिनखी लपके ज्यू केहर रेती लीधी, चोर ज्यू छिपियो, जाणै भीम अर जरासध भिडिया, तसाला पड गिया, कोई कु वारी तो राड नी व्हेला, पैल पडवा गाजै तो दिन वहत्तर वाजै, घसक मारी, भूत री नाई काम रै लाग जावै, चूणिया देवल ढह पड नी रै जमी पै नाम, वादळ ज्यू माया मिली परवाई ज्यू जाय, पोईज गिया जो मोती, लिखीज गिया जो लेख, काकडी री नाई काट फेकियो, कबूतरी ज्यू लोटै, दूखे पेट न बतावै माथो, मोगरी जस्या पग, डील रै जाणै कीडिया लागगी, दाते आगळी देय दीधी, केरी री फाक जसी पलका, रेसमिया तार जस्या कवळा होठ।

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ उर्दू और हिन्दी के शब्दो का प्रयोग भी किया गया है—डवूमा, वैडी, चैवचो, अखटेत, कठाजरा, चोघ्या, खल्लो, वठीलो, साता सू, अम्यो, अहनाण, दाण टह्टाट, डावर, चौसरा, अमरोम, अगथीज, जतरे, डीगा, माजना, जाजो, सूरी, पूरी, इजाजत, कायल, शौकीन, ताज्जुव, स्तुति, नमस्कार, सम्बन्ध, प्राण, पामर, साक्षी, आवास, आमत्रण, परीक्षा।

सग्रह मे भाषा की मौलिकता भले ही हो परन्तु भावगत मौलिकता का अभाव है। "भोजाखपावण जेळ" तथा "आभळ खीवजी" कथाओ का अधिक विस्तार किया गया है। कहानी तो लघु कलेवर वाली ही होनी चाहिए। "आभळ खीवजी" कथा के प्रारम्भिक अश या प्रसग जो सिह और सुअर की लडाई का है—की कोई आवश्यकता नही थी। लेखिका ने अनावश्यक कहानी का विस्तार किया है। लेखिका महिला होते हुए भी अश्लील शृगार-वर्णन मे तनिक भी नही हिचकी। "मेहर" मे कवळ, "नागजी" मे नागवती, "आसो टाभी" मे बाघेली, "आभळ खीवजी" मे आभळदे तथा "मूमल" मे मूमल के कपोलो, इनके गौर वर्ण एव जवानी का अत्यधिक वर्णन स्थान-स्थान पर किया है। ऐसा वर्णन करते समय लेखिका ने महिलोचित लज्जा को एक तरफ उतार कर रख दी है। जबकि स्त्रियो का भूषण लज्जा है। ऐसे वर्णन का एक उदाहरण—[1]

'खीवजी आभल ने बाथ मे घाल गाढा मिलिया। लागो छाती रो जोर। खीवजी री कांचली रा भरडक देणी रा खोपरा भागा।"

नायिकाओ के रूप-वर्णन मे अतिशयोक्तियाँ चरम सीमा को छू गई है।

---

1 मूमल कहाणी-"आभळ खीवजी" पृ स 111

जैसे पीपल के पत्ते के समान मूमल का पेट, मूमल के अंधेरे में चलने से पूर्णिमा के समान प्रकाश फेंकना इत्यादि ।

किंचित् दोषो के उपरान्त भी लेखिका की भाषागत मौलिकता राजस्थानी साहित्य मे एक विशेष प्रभाव डालने वाली है ।

पाबूजी री वात[1]

समीक्षा —बरानवे पृष्ठीय आठ कथाओ के इस सकलन की सभी कथाएँ लेखिका के "माझल रात" कथा-सग्रह मे चार वर्षो पूर्व ही प्रकाशित हो चुकी है । पुस्तक का नामकरण बदला गया है किन्तु कथाएँ वे की वे है जो "माझल रात" मे प्रविष्ट की गई है । सग्रह मे पाबूजी, रजपूताणी, पिउसधी, हजार री कलगी, हाडी राणी, उगो भाणेज, डाढाळो सूर तथा लालजी पेमजी को स्थान दिया गया है । यहाँ इनकी समीक्षा केवल पुनरावृत्ति मात्र होगी ।

डूंगजी जवारजी री वात[2]

समीक्षा —चौसठ पृष्ठो वाले इस सग्रह मे केवल दो कहानियो को ही स्थान दिया गया है । पुस्तक मे शृंगार और वीर रस का अद्भुत मिश्रण है । एक तरफ "डूंगजी जवारजी" की कहानी वीर रस पैदा करने वाली है तो दूसरी तरफ "सैणी बीझाणद" की कथा शृंगार से ओतप्रोत होने के कारण प्रेम की गहनता को प्रकट करती है । "डूंगजी जवारजी" मे युद्ध-वर्णन, डूंगजी की पत्नी के भावो तथा इनके शौर्य और 'सैणी बीझाणद" कहानी मे पानी भरने जाती हुई स्त्रियो की साज-सज्जा, उनके हाव-भावो और सैणी के अन्तर्द्वन्द्व का वर्णन बडे कौशल से किया गया है । इतिहास के प्रसिद्ध विषय को लेकर भी लेखिका ने अपनी सुन्दर भाषा और कल्पनाधिक्य से नवीनताएँ लाकर इतिहास पर मानो पर्दा डाल दिया है । दोनो ही कथाओ मे यथार्थवाद के दर्शन होते है भले ही "सैणी बीझाणद" जैसी कथा वास्तविक रूप मे न घटी हो । कुछ स्थलो पर हास्यात्मकता भी लाने का प्रयास किया गया है—

(१) "हाटी जैडा मूंडा वाळो म्हारे आडो फिरै ।"[3]
(२) 'बीद रा सगा मामा सीटासिंघ सरदार है ।"[4]

मुहावरो, कहावतो, अलकारो, छोटे-छोटे वाक्यो, पद्यांशो के रूप मे सरल तथा स्वाभाविक भाषा का प्रयोग श्लाघ्य रहा है—

---

1 तथा 2 — लेखिका-लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

3 डूंगजी जवारजी री वात पृ. स. ४३ ले. लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

4. — वही — पृ. स. ३१

गचर घाण काढ दे, सूधी आगळी धी कढिया करै है के, घर मे घुग्घू बोल जावेला घुग्घू, मूं डे पाणी आय गियो, थू थू करवा लागिया, आग पळीता व्हेगी, नार ज्यू धड़ूकियो, भतूळिया ज्यू आया, फिरगिया री नाक मसळ हड़मान ज्यू लका मे लाय लगाय न आय गियो, आभै पटक्यो धरती झेल्यो, हाथी जेडा मूं डा वाळो, हसणी जेडी सैणी ने ई कागला ने सूं प दे, हस कागला री जोडी व्हे जावती, काठ री हाडी दूजी दाण थोडी चढे।

आठ पहर देवे ऊजा सारा ई दाद ससार।
इल जनम्या माटी ऊभै, जबरा डूं ग जवार ॥[1]
सैणल बेटी लाडली, छीलर देख डराह।
कोई बतावे बीझानद ने साम्ही तीर तराह ॥[2]

"पानडा री हालणो रुक गियो, पवन चालतो थम गियो, झाड थिर ऊभा हा, म्रिग पखाण रा व्हिया थिर ऊभा। सैणी थिर व्हिया ऊभी। बीझाणद का जतर पै बिळखती गोपिया कान्हुडा ने हेला पाडवा लागी। विलाप रा सुर जतर काढवा लागियो। ...... चौथेपल लागतो जतर रो तार तार कान्हा रा विजोग मे झूर रियो। कोयला रो साद गला मे अटक गियो, नाचता मोरिया रा पग रुक गिया, पाखडा पसरिया रैय गिया।"[3]

कतरीक, अतराक, राघडा, ताळ, पासग, बिडदाया, आखो, बुझबुझाकडा, रोई, आडी, वळै वळै, अमूजतो, वराळा, अबखा, खोडिला, डोरे डोरे इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग श्लाघनीय रहा है।

पुस्तक मे केवल दो ही कथाओ का सग्रह है जिस पर पुस्तक का शीर्षक या नाम "डूंगजी जवारजी री वात" रखा गया है जो अनुचित है। क्योकि सग्रह की दूसरी कहानी भी बहुत सुन्दर और महत्त्वपूर्ण है। दो कहानियां होते हुए भी दोनो रस-विरोध को प्रकट करने वाली है। क्योकि वीर तथा शृ गार एक दूसरे के विरोधी रस है। "डूंगजी जवारजी री वात" कथा मे जवारजी का कार्य अत्यल्प रहा है। इसमे अधिक महत्त्वपूर्ण और भारी कार्य लोटियो जाट का रहा है। फिर भी डूंगजी के साथ जवारजी का नाम बडे शान से जोडा गया है जो अनुचित और अस्वाभाविक है। गरीब बीझाणद को नवचद की भैंसें कौन दे सकता था ? उसके पास तो पैसा भी नही था। व्यग मे ही उसे चराते हुए उसने भी भैंसे प्राप्त कर ली जो अस्वाभाविक है। देवो द्वारा अपनी लाडली इकलौती पुत्री सैणी को हिमालय पर शरीर

---

1 डूंगजी जवारजी री वात पृ. स. २९
2 सैणी बीझाणद — पृ. स. ५५
3 — वही — पृ. स. ८८

को गाळने की स्वीकृति या आज्ञा देना कुछ अस्वाभाविक है। भाषा पर क्षेत्रीयता या आंचलिकता का प्रभाव भाषा के विकास में बाधक है। लघु कलेवर वाली पुस्तक की कीमत भी अधिक है।

इतना होने के बावजूद इस पुस्तक का राजस्थानी गद्य-साहित्य में अद्भुत स्थान है क्योंकि इसमें ऐतिहासिकता के तथ्य को प्रकट किया गया है।

गिर ऊँचा ऊँचा गढ़ा[1]

समीक्षा :—एक सौ बरानवे पृष्ठों की इस पुस्तक में तीस ऐतिहासिक कथाओं या आख्यानों का संग्रह है। सभी आख्यान या कहानियाँ ऐतिहासिकता से पूर्ण और सत्यता पर आधारित हैं। सरसता लाने के लिए लगभग सभी आख्यानों में पद्यांशों का प्रयोग किया गया है। इन आख्यानों में दास-प्रथा, बलिदान का महत्त्व, जातिवाद की कट्टरता, भूमि की महत्ता और स्त्री के चरित्र आदि पर बड़ा ही अद्भुत प्रकाश डाला गया है। जग ककण जडियाह, अरि घोडो पेरण किम आवै, नग नग पैंडी दीना नाग, ममदर पूछै नपफरा, आभ डिगंता ईंदडा थै दीधो सुभ थभ, चापावत नै चूकरी जै पड जाती जाण, चवर ज भल्लै माह रा, परतापनी तख्तेसरा लारे घटे न्खोट, लखणसेन तिय नीव भवर लैंगो रग भीनी, मेर मनूणो चून ले सीस करे वखमीन आख्यान पद्यांशों पर आधारित हैं। सभी पद्यांश डिंगळ भाषा के ही हैं। माथो जावै पण मान नी जावे, बाका पग बाई पदमा रा, हू ढाड रा धणी भलो सिरोपाव दीधो, जुगां जुग तपस्या साथ कीधा जुदै, रिडमला थापिया जिकै राजा, अस्या कै तो म्हारा बाप कै म्हारा खाविंद, बडा बडा री धण गई, चाद बाई चाल्ने नी आदि आख्यान कहावतों तथा आदर्श वाक्यों पर आधारित हैं। अनारा बेगम, जीवतो भूत, जैसलमेर रो जस, रामप्यारी रो रिसालो, जबान रो धणी, मरणाई माधार, नागिया तोप खैंची, राणो सागो, कवित्त री करामात, बत्तीस लक्षणी, त्रियाचरित्र अस्वमेध रो साग, पूगतो जवाब, नदिराज री नाकरी में इत्यादि आख्यान छोटे छोटे शीर्षकों से युक्त बडे सुन्दर भाव लिए हुए हैं। जग कंकण जडियाह, बाका पग बाई पदमा रा, जीवतो भूत, जबान रो धणी, जर जमीन री खातर, बत्तीस लक्षणी, मिनखमार राजा रो बध, त्रियाचरित्र, बडा बडा री धण गई इत्यादि आख्यान अत्यन्त ही रोचक और सुमधुर भावों से पूर्ण बन पडे हैं। पुस्तक में मुहावरों, कहावतों एवं अलंकारपूर्ण शैली का चमत्कार भी है—

गणाजी रै आगै दिखट इन मारियो, आगै घी पी लियो है, रूगना लोट पोट व्है जाता, नायो मेमना, भूंडो धाड़ो पट गियो, अक्त दंदि न गत्त, मैल ग्र् घटक दिया है, नावो नींद सोय गियो, गगेळो गाधो, नागै गाय री पूंछ पे पग

1 रेविता—लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

पड गियो, भेठी व्हेगी, पाप रो दडो गू थियो, आखिया तरणगी, बकरा रा रेवड मे नाहर वळे ज्यू छाती ताणिया।

पुस्तक मे राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ सस्कृत और उर्दू के शब्दो का भी उचित मात्रा मे प्रयोग किया गया है—

राजस्थानी शब्द—सटी, आळखो, रोळ, ऊरमा, बेरो, ओळ, अवेर, अठीली वठीली, एटक भेटक, अमरोस, थिवाय, मोखतर, उदरावो, गवोळो, अमूजणी, रळेट, कादो।

सस्कृत शब्द—रौद्र, अनर्थ, ग्लानि, कुकृत्य, उमग, दृढ, पत्नीव्रत, कालान्तर, स्मारक, राजनीतिज्ञ, साहित्यिक, सन्धि, विद्वान्, प्रतिभा, मनोवैज्ञानिक, रुद्राक्ष, ग्राही, गृह, द्योतक, अभीष्ट, देहान्त, प्रेयसी, सौरभ, आपत्ति, अनुभूति, साक्षी, सिद्धान्त, सग्रह, श्रद्धा, समस्या।

उर्दू शब्द—खिलाफ, ताजीमी, हजामत, माकूल, तरकीब, वाकायदा, फरेब, दर अमल, जिन्दगी, नामुमकिन, वेखबर, हरामखोरी।

भाषा-सौष्ठव का उदाहरण दर्शनीय है[1] —

"भादवा री अधारी रात। रैय रैय नै बिजली चमकै। राणाजी अर राणीजी गोखडा मे बिराजिया। राणीजी आप री एक डावडी नै जामनगर सू आयोडो सिरोपाव पैराय, वीनै समभाय दीधी। वा डावडी मौको देखने चाह कर ने छिपती, धीरे धीरे छानै छानै आवा रो नाटक करती, वा कुमानैतरण राणीजी रा रैवास माय सू निकली। निकलती रो पलको पडियो। राणीजी कनै वैठिया राणाजी रो हाथ दबायो, "वे देखो, कवरजी जाय रिया है।"

अधिकाश आख्यान चारणो और राजपूतो के प्रशस्ति-गान से युक्त हैं। कहानियों की श्रेणी मे तो जस ककरण जडियाह, वाका पग बाई पदमा रा, अनारा बेगम, जीवतो भूत, जवान रो धणी, जर जमीन री खातर, राणो मागो, सिनख मार राजा रो वध, बत्तीस लक्षणी, स्त्रियाम्चरित्र, वडा वडा री धरा गई आते हैं, शेष छोटे छोटे रोचक प्रसगो मे ही गिने जा सकते हैं। इनमे से कुछ तो अत्यन्त ही नीरस आख्यान है जो केवल पुस्तक के आकार को बढाने मे सहायक हैं जैसे—रिसमना थापिया जद राजा, चवर ज भल्लै माहू रा, कवित्त री करामात, पूगतो जवाब, गाळिया री एवज मे जागीर, कविराज री चाकरी मे। पुस्तक के नामकरण की सार्थकता हेतु न तो लेखिका ऐसा कोई आख्यान दे सकी और न ही इसका स्पष्टीकरण कर सकी। लेखिका ने कुछ आख्यानो मे पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करने का दुस्साहस किया है परन्तु सफलता नहीं मिल सकी है। उर्दू मिश्रित हिन्दी

1 सिर ऊंचा ऊंचा गढा स्त्रियाम्चरित्र—पृ स १८३

का प्रयोग करने वाले मुस्लिम बादशाहो द्वारा शुद्ध राजस्थानी भाषा का प्रयोग कराया है। उर्दू और संस्कृत के शब्दो का प्रयोग अत्यधिक मात्रा मे किया गया है जबकि सरल और स्वाभाविक राजस्थानी भाषा के शब्दो का प्रयोग होना चाहिए। "सेर नलूणो चून ले मीर करै बकसीस" कथा कुछ ही अन्तर के साथ नृसिंह राजपुरोहित की पुस्तक "अमर चूनडी" मे अन्य शीर्षक को लिए छपी है। अत्यन्त कम विषय-सामग्री एव पृष्ठो को देखते पुस्तक की कीमत चार रुपए अधिक है।

ऐतिहासिक कहानियो की अपेक्षा पौराणिक प्रसगो को लेकर लिखी गई कहानियो की सख्या अत्यल्प रही हैं। सत्यनारायण गगादास व्यास की "देवी सुभद्रा" "अबा" तथा "कच देवयानी" नृसिंह राजपुरोहित की "जोजनगधा" श्रीलाल नथमल जोशी की "सनुघरण नाव री सार्थकता" शिवसिंह चोयल की "म्हरिसी व्यासजी रो जाबालि नै उपदेस मा री मैं'गा" तथा "पतिवरता लुगाई'र कौशिक बिरामण री कथा" भूपतिराम साकरिया की "च्यवन सुकन्या" अगरचन्द नाहटा की "काजळी तीज" "प्राचीन राजस्थानी रा हस्तलिखित ग्रन्था मे श्री महालिछमी जी री कथा" "चोथ माता री काणी" तथा "बेटी आप करमी का बाप करमी" भावरमल शर्मा की "सूरज भगवान के डोरा की कहाणी" भागीरथ कानोडिया की "कळजुग" चादमल दामाणी की "पापीमोचन" जगदीश माथुर 'कमल' की "गीता के अठारह अध्यायो का माहात्म्य" रामदत्त साकृत्य की "सुपनो", मुनिश्री महेन्द्र कुमार 'प्रथम' की "इलापूत" कुमार हरि मूधडा की "सतजुग रा भगवान री हस्ती" पी आर व्यास की "लिछमी रो अपमान" श्रीचन्द राय की "लक्ष्मी माता रो वरदान" तथा "सर्वगुणसम्पन्न" किशोर कल्पनाकान्त की "दुरवासा रो निरोध" अमृत शर्मा की "मगलागोर" तथा दामोदरप्रसाद की 'तीन पैड" कहानियाँ ही पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से पाठको के समक्ष आई हैं। इनमे कहानीकारो की कल्पना शक्ति तथा पात्रो के चरित्र-चित्रण मे मनोवैज्ञानिक नूतन व्याख्या का मनोरम परिचय मिलता है।

क्या भाव और क्या भाषा इन दोनो ही दृष्टियो से अधिकाश राजस्थानी कथाकारो पर अचल विशेष का अधिक प्रभाव लक्षित हो रहा है। नानूराम संस्कर्ता, मनोहर शर्मा, मूलचन्द 'प्राणेश' नृसिंह राजपुरोहित, कान्ह महर्षि, कुंजबिहारी शर्मा, बैजनाथ पंवार, मुरलीधर व्यास, लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, अक्षयराज? कुमार, श्रीलाल नथमल जोशी, दामोदरप्रसाद शर्मा, अगरचन्द नाहटा, करणीदान बारहठ, सांवर दईया, रामेश्वरदयाल श्रीमाली, रामनिवास शर्मा, अन्नाराम 'सुदामा' [illegible] टाटिया, विजयदान देथा इत्यादि कथाकार आचलिक प्रणाली से परे नही रह सके हैं। अधिकाश रचनाओ मे यह प्रवृत्ति क्षेत्र विशेष के निवासी होने से स्वतः ही आई है। फलस्वरूप कुछ कहानीकार इसके प्रभाव से बचना चाहते हुए भी [illegible] नहीं बचा सके है। मनोहर शर्मा, नानूराम संस्कर्ता, सांवर दईया, अन्नाराम 'सुदामा'

इत्यादि कहानीकारो की तो समस्त कहानियाँ भाषा और भावो की दृष्टि से आंचलिकता से ओतप्रोत हैं।

राजस्थानी के सम्पूर्ण कहानी-साहित्य की मात्रा को देखते हुए हास्य-व्यग्य प्रधान कहानियो की सख्या सीमित नही कही जा सकती है। इस क्षेत्र मे नृसिह राजपुरोहित[1], मुरलीधर व्यास[2], मूलचन्द 'प्राणेश'[3] एव भवरलाल नाहटा[4] के कथा-सग्रह विशेष उल्लेखनीय बन पड़े हैं। इनमे उच्चस्तरीय हास्य के दर्शन होते हैं। नानूराम सस्कर्ता की भी कुछ कहानियाँ इस दृष्टि से सशक्त बन पडी हैं। पाठक इनकी कथाओ को पढ कर हसी से लोट-पोट हो जाता है। उक्त कथा-सग्रहो की समीक्षाएँ प्रस्तुत है —

हाल्यां हरि मिलै

समीक्षा :—एक सौ बावन पृष्ठीय इस पुस्तक मे एक सौ इकसठ हास्य-कथायें हैं। इन कथाओ मे राखी, बाटो ठाकर, चवरी, बारहठजी न्याय मे, गगाजी री टेटकी, ममखरो, बाईसिकल, राड अर रडुओ, साहब रो कुत्तो फेरा, गप्पी रा गपोडा, डोकरी रो रोज, कविया नै ईनाम, बेगार कढी, भल कूदिया, बावो अर भगत, एक्सीडेन्ट, चाटौकडो नौकर, अस्तर अर सस्तर, मगळाई भाठा, पण म्हू किया नट्टू ?, मादो ऊट, वाली लूणीजगी, मिल्योडी घडी, फोटू मे कुनपू, घडी रो ड्राईवर, टेमफूल, साहू वाली कीमत, तागै रो भाडो, लुगाई व्हैली थारी, रामरस, भाभी वाली भैस, खम्भा धणी, पेट आईजे, एक कोस रो गवीड, चोरा नै जीकारो, नेता रो स्वागत, म्हू कुण हू, छुट्टी रो दिन, पेनल्टी रो डड, गधै सागै व्याव इत्यादि अत्यन्त रोचक हैं। अधिकाश चुटकलो से पूर्ण कथाएँ केवल पुस्तक के कलेवर को बढाने मे ही सिद्ध हो सकी हैं। ऐसी कथाओ मे नीरसता तथा कृत्रिम हास्य झलकते हैं। ऐसी कथाओ की श्रेणी मे असर्ली- रो डेर, भूखै घर की जाई, जोधो यहू कै राव, हलवाणी, सूगी चाकरी, भूठी साढ, मिताईयत, मौसर, खरो रसियो, गोळी नागी, डाक्टर री राम, थोळो ठीकरो, बोली रो फरक, कतारिया, गऊ-दान, पावली पुण लेसी काळा मन, थारै जिसो म्हू ई हू, डरपोक ड्राईवर, [illegible], [illegible] रो डर, मरनै री चतुराई, भागियो नै वाणियो, माकूल जवाब, [illegible], चमारी आटो जुटो, कमाई अर बकरो, लखपति रो वारिसदार, [illegible] राम मे माड, [illegible] आटो फिरग्यो, अदाता री हवेली, महाराजा री हसी, [illegible] री दुस्मन, धदरा वाल काळा वाल, नाहुवामे जावो, चादी बाई चालै

1 हाल्यां हरि मिलै — राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, बीकानेर
2 [illegible] — १९६३ ई० मे प्रकाशित
3 [illegible] — राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर
4 [illegible] — राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

नी, मायड भासा, म्हावी महाभारत, गाडै जितरो बोझ, पाकी राग, ठोट माटसाब, मारग वाळी टाग, वसीयतनामो, बारहठजी वाळी आगनी, पापड ताणी लावो, नाप, गूवा नै मूवा ई नी, अटीनै क्यू वळो, सागरै तो बाई रै देहरै, चोखी तरकीब, जनो फोटू, अरज ऊधी सुणी, मनोवैज्ञानिक इलाज, तनै कुण बणायो, अधारै मे देख्यो कोनी, चोखी सलाह, ईनाम, दान री कीमत, त्यागी छोरी, बोलै कुण है, हिम्मत री कीमत, फेरा फेरी मू ई गई, मावळ लगाय दू, परदेसी अर मूजरो, वतन, मम्मी दे देनी, ठडी चाय, मनोज री मुर्गीवत, जै सीताराम कहसी, मुर्गावत, खीर री चिन्ता, हारट फेल, सभा मे नीद, दो वेग किया दोसै, अकसीर इलाज, गप्पी चित्रकार, नातरो मूद, नवमो, फेरा पाछा खायला, खातण वाळो दीवो, आछी सीख और खिसक गयो सुमाण कथाएँ ही आती हैं। फेलणो-काठो, सुरग नरक रो झगडो, तेली रो बनद, दाल मे चू वाची, गोमनी बखर्मान, वकील वणू ला, नेताजी री पैठ, पावडी भैस खायगी, जादूगर, जैगोपाल जैगोपाल और कवि-सम्मेलन व्यग्यात्मक हास्यमूलक लघुकथाएँ है। जमाई के जग, बोल्या नो मरैला, वकील रै घर मे चोरी, दो गप्पी, थारी यू जाणै बाई, अमरती वाळी ब्याज, मतै ई फस जावैळा, कायम रो मारग, उपासरै मे कुत्तो, भैरू री पूजा, बारठजी वाली कोथळी, चालबाज मगतो, पेट मे लोटो, सिवजी वाळो सख, गामठी री चतुराई, पैसन्री रुळगी, भू कार्ड पहरू, अंग्रेजी मे पडूतर, नौकरी मे खलल, पोलिस अफसर, मुलजिम अर वकील, बाई काई छोटोला, लेना भूंजो, गार्ड आफ स्टाफ, बोलती वद और गायन मनोरजक लघुकथाओं की श्रेणी मे आती है। कुछ हास्यात्मक उद्धरण दर्शनीय है—

"एक गामठी आदमी पोतारी बेटी ने सहर मे परणाई। जमाई सुसरै नखै एक बाईसिकल री माग कीवी। ससुरै जमाई री बात सुणी नी पाछो जवाब भेज्यो—जमाई सा नै अरज कीज्यो कै बाई तो एकाएक ही सो आपनै परणाय दी अर सिकल तो जिसी भगवान दीवी जिकी है, घरां जायनै नेहचै सू देख लीजो।"[1]

"गैहरी छिया अर ठडो पवन, थोडी ताळ मे ऊज उगानै ऊप आयगी अर वो बाको फाडनै घोर नाचण लागो। इतरै मे एक कुत्तो आयो नै टागडी ऊची करनै उण रै मूडै मे मूत दियो। [illegible] विहया आगर सुनी तो टीकाजी रो मू [illegible]। म्हारी मोतरो रास-रस [illegible] इज होवतो कैना। उणनै रवाणगु माथे [illegible] आई।"[2]

1 हास्य हरि [illegible] राजपुरोहित पृ. स [illegible]
2. — वही — : पृ. स ८१

कुछ कथाएँ अत्यन्त ही छोटे स्वरूप मे तथा कुछ वृहदाकार मे प्रकट हुई हैं। कुछ कथाएँ गद्यगीतो की तरह दिखाई देती है। काव्यत्व के प्रयोग को देखिए—

भंवर रै बाबा भव्वर, माथो जाणै नव्वर।
डाढी जाणै खरहण, भूंडा थारा दरहण ॥[1]

बाईसिकल, एक्सीडेंट, टेमफूल, पेनल्टी रो डंड, आउट आफ स्टाक, हार्ट फेल, पोलिंग अफसर इत्यादि कथाये अंग्रेजी शीर्षकों के कारण मनाकर्षक-सी लगती है। पृष्ठ ४० तथा पृष्ठ ७४ पर "माकूल जवाब" इस एक ही शीर्षक से युक्त दो भिन्न कथाएँ है। "गऊदान" कथा तो लेखक की एक अन्य प्रकाशित कथा का ही लघुरूप है। भूंडो, अणुती, अपरोखो, ठेठर, लीचड, दूधाळ, अगाई, बोछरडो, निराई, बोवाड, बोफो, छेली, तासकियो, चीकलवा, तितना, लीगनरा, खटरो इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग भी हुआ है। हैरान, गतागम, कुचमाद, विवेक, निद्रा, अदालत, सागोपाग, लापरवाह, मरीज, प्रसग, हकीकत, उपवास, फालतू, नमस्कार, मुलजिम, चित्रकार, हिम्मत, मुसीबत, मर्रियम, लेवल, रिसीवर, एक्सीडेंट, ड्राईवर इत्यादि संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग मे लेखक की अन्यान्य भाषाओं के प्रति सहिष्णुता प्रकट होती है। कुछ कहावतो, मुहावरो एव अलकारो का सौन्दर्य भी छिटक पडा है—तेतीसा मनाया, कोरडी जामै आय जावैला, भैंस जिसो सरीर, एक घर तो डाकण ही टाळै, हाथा कीधा कामडा सो किण नैं दीजै दोस, पेट नी मटतो, गतागत मे पजग्यो, भाठै री मूरत ज्यू ऊभो, लाडू मे रहसी तो जै सीताराम कहसी।

सवाद-प्रधान शैली का प्रयोग भी मिलता है—[2]

'थे म्हारै वास्तै काई काई त्याग कर सको ?
तू म्हासू काई काई त्याग करावणो चावै ?
जे म्हू थारै माथै दबाव करू तो थे दारु पीवणो छोड दोला ?
छोड दूला।
बीडी सिगरेट पीवणो छोड दोला ?
छोड दूला।"

कुछ हास्यात्मक वाक्यावलि इस रूप मे प्रस्तुत की जा रही है—[3]

(१) पाडै री काई ? पाडै'र पाडै, नी पाडै'र नी पाडै।
(२) रासी रो काई ? रासी'र रासी, नी रासी'र नी रासी।
(३) कोई दसा नै कोई बीसा—म्हे तो हा तेबीसा।
(४) मा फेरा हाडी मे घाल नै राख दीजै। म्हू आस्यू जरै ई साथ लेस्यू।

1 हास्या हरि मिर्चे, नृसिंह राजपुरोहित, पृ स १८
2 हास्या हरि मिर्चे, पृ स १३३
3 हास्या हरि मिर्चे, लेखक नृसिंह राजपुरोहित

(५) पण म्हू इण गनागम में पजग्यो हू कै बाप कुत्तो अर मा गधेड़ी, तो पछै म्हू कुण हू ?
(६) काई बनाऊ बाई, म्हा रै तो उण रै माथै मे बाळ ई कोनी । म्हू अबै किसे रग री साडी पहरू ?

"फेरा पाछा खावन्ना" कथा मे चोर क्या इतना बेवकूफ था जो सेठ-सेठानी के फेरे मे ही बंध गया । लेखक ने "वारिस" के स्थान पर "वारिसदार" शब्द का अशुद्ध प्रयोग किया है ।

इक्कै वाळौ

समीक्षा :—दो सौ साठ पृष्ठों मे बद्ध पुस्तक मे ७२ हास्यात्मक कथायें सकलित की गई है । सभी का विषय हास्यरस है । ऊधी पायली, ओळखाण, चोर री चोरी, खानदानी रजपूत, चौबेजी रै नैणो, पगरखी, ओझाजी, गवैयो, गुळ रो न्याव, पागडी गई भैस रै पेट मे, परचावणी, नेतो, जिनावर, जाट, सतनडो लधणै, मिछाजी, झूठो झमेलो, भूत रो भाई जमदूत, नाथ नाद, मिस्तु टैक्स, चोर अर सेठजी इत्यादि कथाओ मे लेखक ने मनोरम ढग से लौकिक कथासूत्र का प्रयोग किया है । अदब री मूळी, इक्कै वाळो, मिस्तु टैक्स, गुमाया रा लटका, काळी माई, गद्दा री माग, कळूट वाबो कथाओ को छोड शेष कथाएँ एक पृष्ठ से लेकर चार-पाँच पृष्ठों मे बधी हुई है जिन्हे चुटकलो की सज्ञा नही दे सकते है । ठाकुरसा'ब, पोलन री सुधार, सूटो देख'र टीको, टोट सैणो, मेम साब रो पादर, गुरु घटाल, भूत रो भाई जमदूत, जीवतो भूत—शीर्षक तो अत्यन्त ही अच्छे बन पडे है । साधु-सेवा, कमाई री भटाळ, हड़ताळ दाजी ऊपर टैक्स सोभो डोकरो, मास्टरजी, गुरुघटाल, बन्नन और इक्कै वाळो कथाओ मे समाज की अनेक विषमताओ के चित्र प्रस्तुत है । अनेक स्थानो पर तो घटना-क्रम भी हास्यमय है । पुस्तक का नाम "इक्कै वाळो" कथा के आधार पर रखा गया है । कमा रोग, सिवदान भाटी, डिमडै रै सिनडो, भाटै री लोगी, कमाई री सिद्ध मिनख, सिनख गाटजी, रोगी, हकीमजी, नर हाथी, हाजरियो, मैमानदारी, जीव-जोधा री, जमघट, भादरा, चौठी भलै भाग री हाँसीनी, बाबो राधीदास, सिनको सिवजोधार, न्यायी ठाकरजी, परथी, ढोल ऊपरलो मारग, रुमाँयो चपरासी, पाँचवो वेद सिख्या नू मन री ज्ञान कथा, सूम रै घरे सूम, पुनर्जन्मी, गोठ, ब्याव, तलाक, चौबेजी ओझाजी—इनमे से तीन चार तो कल्पना पर आधारित हास्य कथाएँ सार्थक शीर्षक से साथ अवतरित हुई है जो लघु कलेवर के दोष से भी दूर है । लेखक हास्यात्मकता से पूर्ण भाव-सौंदर्य का उदाहरण—[1]

"बावै सूटो खोलियो, अठीनै तबूरो ना असामेल सुर तो उठीनै

1. इक्कै वाळो मुरलीधर व्यास : पृ स ३७

फाटोड़ै बास दाई बावै रो कठ। दोया रै मेळ सू अपूरब समो बणग्यो। सुर कै परभाव सूं पखेरू उडग्या, कुत्ता भू करण लागग्या।"

भाषा मे आलकारिक छटा के साथ साथ राजस्थानी भाषा का स्वाभाविक रूप भी उभर पडा है। व्यासजी की भाषा पर बीकानेर के निवासी होने के कारण बीकानेरी बोली का अधिक प्रभाव लक्षित होता है। वैसे इनमे अन्य भाषाओं के प्रति सहिष्णुता का भाव भी है।

बानगी

समीक्षा :—एक सौ अडतालीस पृष्ठीय इस सग्रह मे रेखाचित्र, सस्मरण, नीति और हास्यकथाएँ हैं। लघु हास्य कथाएँ इस पुस्तक मे २५ हैं। लाडू री पुकार, पैलवाना री गप्प, जळेबीनाथ, गोड मैं ई फोड, नान्हा भाया हू ही, घी दी तो गल्लाई है, भीयाणियो ताऊ, मूछ वाला चावळ, माल माल चावै, खरलै री मिजवानी, खुदा री खुदाई, सिरदार सै'र रो सै'रो इत्यादि हास्यकथाये अपने चरमोत्कर्ष के हास्य तक पु'ची हुई हैं। गोपजी रो गद्य, विरमाजी खनै डेपुटेशन, नई देदयो जैपरियो तो कुळ मे आय'र के करियो, जैपरिया, चौगी गू ट खडो छू, ईजतदार री ईजत आ राड छाछ टुळवा जोगी ई ही, सुमर ऊठ भैंस के पोटै मान, कविराज री खरी कविता—इनके शीर्षक अत्यन्त ही आकर्षक एव रोचक हैं। जिनावर-जाता, च्यार भायला, राजा रायसिघजी रो न्याव कथाएँ आगे पृष्ठो के कलेवर वाली होने के कारण सजीवता तथा सरसता से दूर-सी हो गई है। तीन-चार कथाओ को छोड शेष को चुटकलो की श्रेणी मे रखा जाना चाहिए। कुछ कथाओ मे घटिया कोटि का हास्य है। भाषा मे जयपुर तथा अजमेर की तरफ की राजस्थानी बोली को लेखक ने ससम्मान अपनाई है तथा सस्कृत और उर्दू के शब्दो को भी उचित मात्रा मे स्थान दिया गया है। इनकी भाषा सरल, स्पष्ट, सजीव, प्रवाहमय, रोचक एव आकर्षक है। हास्य मे पूर्ण भाषा-शैली का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—[1]

"मरुथल रा कोई बटाउ मारग वैवतो हो। दुपारै रो धू तावडो तपै। रस्तै मे ताल री जाग्या ही ऊठै गयो मूतर गयो हो। बटाऊ छाछरी तरै सपेद झाग देख'र कैयो—हे छाछनाना! नने किण ढोली? मिनखा नै तो पीवण नै ई को मिलै नी? कैयर एक चळू भर मूडै मे लियो, चरको लागताई थूक'र कैयो—आ राड छाछ तो टुळवा जोगी ई ही।"

छलकती या राजस्थानी री प्रतिनिधि हास्यकथावां

समीक्षा :—एक सौ सात पृष्ठो मे बद्ध इस पुस्तक मे अस्सी हास्य-कथाये है। मानाजी मढ मे बैठी बैठी मटका करिया है, मनजी अर तिनजी, हत्त ठठ देवी,

1 बानगी भवरलाल नाहटा पृ स ११८

कुण पन्यिो, कायो पींज्यो कपास, त्रिफला री करामात, उडग भक्खणी, ऐ कुण आवै दोय जणा, बड़ै रै माय वडनो तो सोरो है पण......., धान लेनो'क आटो, किसी अतीत को ह्या लेते होंगे, जाजरू का देव, घर ही घोटो अर पीवो, गलतो हो थई, सतलडी लधनै मांटी, तू मैं आला तो याद राखी, मेघो म्हारो भाई, भला माटी ! चाखा, अद्धम अद्धा स्वाहा, म्हारै मिलिया थारे कई को हुवैनी, मा रा लखण, देख मरद री फेरी, तू नटण आळी कुण, ठकराणी मा थारो मूसल भीजै ओ, जूतरी देवण आळा मरग्या, जैरामजी की भाई आटो घालो, कोयल क्यों तू उणमणी, रावळै मे पोल कटै, घर री तो आ आगली है, मारग खोटो पडग्यो, राया री भाव रातैं गयो, भाया ! ठडो थूकै जठै जा, बारठजी मूसल लेता जाईजो, उलटा फेरा, जवाई आळो कागद, मा बिल्ली अर बाप बिल्लो, उमर भत्तो री है, जाट आळो हूँ हो पागडी गई भैंस री, फोरफांर टायी आळ माथै, होको चित्त अर चिळम कहाँ है, नेफा बाई राम राम, क्यू जावती मिण मिणावती, का बटियो अर ना घटनी, माव एक ही देय दे, चमक बीजळी भूक माता, चूल्है मे तो राड हू पडग्यो, निद्रर्म नै आऊकार, घोडो ढालण रे भी हाथ पेरिया, थे दोन्यू जण्या राडा हुयगी नी, दोकणियो रोग, भियैजी रो रमोडो और गोड मे भी भौंड—कथायें आकर्षक शीर्षकों के साथ साथ अत्यन्त ही हास्यवर्धक, मनोरजक एवं कुछ शिक्षाप्रद भी हैं। इन कथाओं मे कुछ कथाऐं आवृत्ति के रूप मे आई है जो भवरलाल नाहटा की "बातनी" प्राणेशजी की "हियै तणो उपाय" तथा राजपुरोहितजी की " हाम्या हरि मिलै" पुस्तकों मे प्रकाशित हो चुकी है। अत्यन्त ही लघु कलेवर की होने के कारण कुछ कथाओं को चुटकलों की श्रेणी मे रखा जाना चाहिए। विवाण रो टाटो, आगामी जगबीती अर भागी, आप बीती, बिच्छू रो झाडो, ऐ बाता ब्योहारगा, समझी बीरा समझी, बाणियो अर चोर, हिन्दो छुट्टी, चौधरी रो भेष, फूल अर फळ, धोनी री फरक, आगै हाल बताऊ, एक नै तो गगा माई नायगी, काचो लाम्बो पळपळ्यो, एक टकै रा गीत, थारो बैरी नेड्क्यो देवै है, पीछो बापूर है—इत्यादि कथायें हास्यात्मकता के किञ्चित् अश के साथ साथ शिक्षाप्रद भी हैं। कुछ कथाओं के शीर्षक स्वाभाविक एवं मनोरम हैं—हिगू कठे, सू सू... सू..., मुन्दामजी सौगो, कुण पटियो, थे क्या थे बीसा, जट बुध, कुर महाराज पाये लागू पूनो, [illegible] गोल ! पाणी पाय। लेखक ने व्यावहारिक विषयों को चुना है। अधिकाश कथाओं के शीर्षक अधिक लम्बे लम्बे हैं सम्भवत पाठकों की रुचि बढाने हेतु रखे होंगे। संवाद-शैली का प्रयोग भी पुस्तक मे है। पुस्तक का नाम "ठळठळी" उचित ही रखा है। क्योंकि हँसी को सच्ची तरह से स्पष्ट करने वाला राजस्थानी भाषा का शब्द 'ठळठळी' ही उपयुक्त है। मेरे विचार से इसका अर्थ "हँसी के फव्वारे" अत्यन्त ही समीचीन एवं उपयुक्त है। राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दों, के

प्रयोग, नव शब्द-निर्माण-कार्य तथा सरल भाषा के लेखन मे लेखक अत्यन्त दक्ष है। हास्यमय उदाहरण के रूप मे एक अनुच्छेद दर्शनीय है—[1]

"एक वाणियै रै ओसर सू न्यात जीमै। एक बारठजी भी मतो कर'र पगत भेळा जाय बैठ्या। जीम जूठ'र निरवाळा हुया पछै चळू करावण आळी वखत केई पूछ्यो—

थे दसा कै बीसा?

बारठजी सतोना बोल्या—म्है को दसा नै को बीसा, करावो चळू जिको देवा तेतीसा।"

इन सग्रहो के अतिरिक्त नृसिंह राजपुरोहित की 'कुए भाग पड़ी" श्रीलाल नथमल जोशी की "अमर मिनख" रामदेव आचार्य की 'लिछमी रो लाडलो" नारायणदत्त श्रीमाली की 'सैवर" भगवानदत्त गोस्वामी की "अवार अदाता नै अरज करू" अजीतसिह अमरा की "खून" भवरलाल सुथार की 'सनीमा' कान्ह मिश्र की "प्रिस्क्रीप्सन एक ईज सुवाल" एव "आधै नै गू गो नै बेगे" ओम-प्रकाश तवर की "कुण मिनख है" यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की "नेता और गण्डक" तथा "चट्टे-बट्टे" रामेश्वरदयाल श्रीमाली की "भडूरा" मुरलीधर शर्मा 'विमल' की "केसू रा मास्टरजी" तथा 'ओळखाण" गोवर्धन हेडाऊ की 'दुराळ देव सू अरदास" त्रिलोक गोयल की "मकान मालक" मोहन आलोक की "एक नवा लोक कथा" मनोहर शर्मा की "गादड पट्टो" 'भुसीजी रो सपनो" "कागद रो रिपियो" "जीवण-दग्मण" "मोनल भीग"[1] "मौमाखी"[2] "रामू रो चिडियाखानो" तथा "आ कुकी अर जा कुकी" सन्तोष पारीक की "जेळ माय रोटी" तथा "मैं राजस्थानी चोखी तरिया सीखग्यो" ओकार पारीक की "हाकम सा'ब" श्यामा रानी की "बिना दहेज बनाणी' बुद्धिप्रकाश पारीक की "टोकवा रो फळ" तथा दीनदयाल 'कुन्दन' की 'फळ' कहानियो मे हास्य और व्यग्य के फव्वारे छूटते नजर आते है। इसके अतिरिक्त राजस्थानी की अधिकाश कहानियो मे आंशिक रूप मे हास्य-व्यग्य के दर्शन तो हो ही जाते है। विजयदान देथा की लोककथाओ मे सामन्ती-प्रथा पर तीखे व्यग्य-प्रहार का आधिक्य तो है ही साथ ही इन कथाओ के बीच बीच मे आने वाले हास्य से भी आँख नही चुरा सकते। राजस्थानी भाषा और साहित्य के अनन्य सेवक एव उपासक किशोर कल्पनाकान्त की कहानियो मे भी

1 उकरड़ो लेखक-मूलचन्द 'प्राणेश' पृ स ६०
ये रचनाएँ जलमभोम पत्रिका मे छपी है। वहाँ इन पत्रिका के विशेषांक का नाम 'राजस्थानी री प्रतिनिधि हास्यकथावा" रखा गया है।
2 लेखक-मनोहर शर्मा, "वरदा" पत्रिका मे इस शीर्षक मे १२ कथायें प्रकाशित
3 — — — वही — — —

प्रसंगानुकूल मीठी मीठी चुटकियां निरन्तर ली जाती रही हैं। नानूराम संस्कर्ता की रचनाओं[1] में भी यह विशेषता पर्याप्त मात्रा में मिलती है। उदाहरणार्थ एक रचना-संग्रह की समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है—

ग्योही

समीक्षा —एक सौ छिहत्तर पृष्ठीय इस संग्रह में बीस कथाओं को स्थान दिया गया है। दूध गिलोडो, गोही रो रीछ, फोगली रो न्याव, भेड विलावों, मट-माचर, मिरचा री कुड़छी, भागेरी, काछवो, छाई-माई, मूछ रो माल, गधा-पच्चीसी, टूटा-टांटी, फदडपंच और माटी री हाडी आदि कथाओं के शीर्षक ही बहुत हंसाने वाले हैं जिनकी सामग्री पढ़ने पर तो हंसी में पेट दुखने लग जाता है। जलपान, गधा-पच्चीसी, वाणियों वैर तथा लोगां री लाज कहानियों के शीर्षक अनुपयुक्त-से लगते हैं। इन शीर्षकों से विषय-वस्तु का स्पष्टीकरण नहीं हो पाता है। पुस्तक की अन्तिम कथा ग्योही के नाम पर ही पुस्तक का नाम "ग्योही" रखा गया है। ग्योही का अर्थ स्वयं संस्कर्त्ताजी ने बताया है—

'ठमकठोलिया, चिडवोथिया, धूम-धड़ाका, भाड रा सा दांत अथवा रोळ, रिगटोळी, ठगी, मसकरी, मजाक, गप्प, गुलछर्रा गोवम, हंसी-ठठा, ठळा-ठटोळी टल्लगल्ल, मजा, रिगल, घाई, किल्लोळ, चुहल, नुकल, खिखि...... ....।[2]

श्रीलाल नथमल जोशी के फदटपंच (रेखाचित्र)[3] के समक्ष संस्कर्त्ता का यह "फदडपंच" बिल्कुल नीरस और उकताने वाला है। "दौनक" तथा "सोनै री कलम" कथाओं को पुस्तक में अनावश्यक ही स्थान दिया गया है। इनमें रोचक भाषा, मनोरंजक तत्त्व और आदर्श का अभाव है।

भाषा में मुहावरे एवं रूढ़ शब्द भी आए हैं। रूढ़ शब्दों का अर्थ समझाना बहुत ही कठिन है। ग्रामीण समाज और जीवन का यथार्थ चित्रण इसमें अवश्य है परन्तु समझे तब ? क्योंकि भाषा ठेठ राजस्थानी है अतः चक्कर और भ्रम में डालने वाली है। भाषा में इनका स्थान अन्य सभी राजस्थानी साहित्यकारों से अलग-थलग ही है जिसे कोई नया रूप कहें या मौलिक भाषा का स्वरूप। उदाहरणों द्वारा भाषा के स्वरूप को समझा जा सकता है—

"भाट लाज वागे छल-फैल करै, रिपिया लाटै अर पेट पूरण करै है। ठाकर ओधवागे, ओगै गाव उजाडै अर बटाई करै। म्हारो म्हारलो मिनख

1 ग्योही नानूराम संस्कर्ता : संवत् २०१४ में प्रकाशित

2 ग्योही · नानूराम संस्कर्ता · पृ सं २

3 सबड़का . श्रीलाल नथमल जोशी

कुकरम करै, खेला रचै अर वण्योडी वात रो विगाडो करै है। आ नीति ही पूरी लागू होवै है, स्याम करण चुनाव री शान्ति खोवै है।"[1]

कुछ भापागत भद्दे प्रयोग भी देखने को मिलते हैं—

(१) "गुरसली कागलै री पीछो पकड नियो वो। रोळा करतो म्हारै लारै हो लियो।"[2]

(२) "भोर रो वखत, भगत रो दरमण, म्हारो मूडो परसण हूर थोडो मुळक्यो।"[3]

(३) "ओप गे लोही, नाक री सोई, चढती जुवानी अर 'गधा-पच्चीसी' रा दिन, के कैवार के सुणा।"[4]

सस्कृत और उर्दू शब्दो का प्रयोग नही के वरावर ही किया गया है। भापा की दृष्टि से सस्कर्त्ता को एक नीरस और अनपढ साहित्यकार के रूप मे देखा जा सकता है। व्यर्थ की भापागत अठखेलियाँ करने का प्रयास इनकी कथाओ मे है। साधारण पढा-लिखा व्यक्ति तो इनकी कथाओ के उद्देश्य को समझने मे असफल-सा ही रहता है। प्रयास वाणभट्ट (सस्कृत के गद्यकार) की शैली के अनुकरण का रहा होगा परन्तु 'त्रिशकु' वन कर रह गए।

कथाओ के शीर्षको के अनुकूल अन्दर की सामग्री नही है। परन्तु शीर्षको का चयन अच्छा और प्रशसनीय रहा है। कथाओ के पढने पर ज्ञात ही नही होता है कि सस्कर्त्ताजी किसके वारे मे क्या कह रहे है ? राजस्थानी साहित्य मे ऐसी पुस्तको का प्रकाशन उपहासास्पद है। इनसे साहित्य का विकास रुकता है। इनमे मनोरजन की मात्रा भी नही है और समाज के लिए किसी आदर्श का चित्रण भी नही है।

राजस्थानी मे मनोवैज्ञानिक एव मनोविश्लेषणात्मक कहानी-लेखन की रुचि का विकास कहानीकारो मे इन्ही कुछ वर्षो मे देखने को मिलता है। फिर भी यह सत्य है कि ऐसी कहानियाँ अभी तक वहुत कम लिखी गई है। राजस्थानी की सफल मनोवैज्ञानिक कहानियो मे नृसिंह राजपुरोहित की "उटीक" तथा रूपाळी राजा" जगदीश माथुर 'कमल' की "मन्नो भाँजी" हणमानसिंह शेखावत की "हुसेर" श्रीलाल नथमल जोशी की "आपरो सरूप" "मोलायोडो लाडी" और "मगळ-वेळा मे आँसू" रामेश्वरदयाल श्रीमाली री "जमोदा" तथा "सळवटा" रामनिवास शर्मा की "आतमबोध" 'ममता रो मोल" "समय रो दवाव" तथा "रूपे री वारी अर माटी गळी को मोट" सूरज करेशा की "काळो गुलाव" किशोर कल्पनाकान्त की

1 म्होरी मिरचा री कुडछी पृ स ६७
2 — वही — पृ. स १२७
3 — वही — पृ स १२८
4 — वही — पृ स १३०

"अन्तिम कागद" और "गीता रो बावळियो" बैजनाथ पवार की "हारयोड़ी जिनगानी" विजयदान देथा की कुछ लोककथायें[1] तथा सावर दईया की कई कहानियाँ[2] उल्लेखनीय बन पड़ी हैं। देथा की लोककथाओं का विवरण लोककथाओं के प्रसंग में दिया जायेगा। यहाँ सावर दईया की पुस्तक की समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है—

असवाड़ै-पसवाड़ै[3]

समीक्षा —एक सौ बारह पृष्ठीय पुस्तक में आठ कथाओं का संग्रह है। लगभग सभी कहानियाँ सामाजिक तो हैं ही किन्तु लेखक का अधिक जोर मनोवैज्ञानिक तथ्य पर रहा है। पैरवी, टूटणो, बी रो दुख, जुड़्या-कट्या, हालत, सुकड़ीजता आगणा इस दृष्टि से बड़ी सुन्दर बन पड़ी हैं। गळी बणता घर तथा ओजू बसन्त बड़ी सरस और मनोरम कथायें हैं जिनमें मनोरंजन के साथ साथ शिक्षायें एवं प्रेरणायें भी छिपी हुई हैं। "बी रो दुख" और "हालत" कहानियाँ तो आधुनिकता के परिवेश में रंगी हुई हैं। बी रो दुख, जुड़्या-कट्या तथा हालत कथाएँ लघुवाक्यावलियों से युक्त हैं जिनमें मौलिकता के दर्शन होते हैं। संवाद-प्रधान एवं लघुवाक्यावलियों से युक्त आधुनिक शैली के उदाहरण दर्शनीय हैं —[4]

"कद ताईं हुवैला·······?
दीयाली रै एड़ै-गेड़ै········?
टीवर-टीगर मजै मे है ?
हाँ मजै मे है।
मजूड़ो स्कूल जावै········?
हा ऽऽ
अर कैलानियो········?
वो भी जावै·······।
राजू किया है····?
सावल है········।
टीगर म्हारी हर करै········?

1 "बाता री फुलवाड़ी" लगभग सभी भाग : रूपायन संस्थान, बोरून्दा में प्रकाशित।

2 असवाड़ै-पसवाड़ै : पोथी परकास, पाबूबारी बीकानेर से १९७५ ई. में प्रकाशित।

3. सावर दईया—लेखक

4 असवाड़ै-पसवाड़ै . जुड़्या-कट्या (कहानी) पृ. सं. ३८

इस प्रकार कहानीकार ने आधुनिक नई शैली अपनाई है जिसे आज के हिन्दी-लेखक पत्र-पत्रिकाओ मे अपनाते हैं।

पैरवी, टूटणो, हालत कथायें तो अत्यन्त नीरस है जिन्हे पढना पाठको के लिए दूभर-सा बन जाता है। इन्हे लिखते वक्त लेखक ने यह भी नही सोचा कि ऐसी कहानियो से उसकी पुस्तक का महत्त्व अल्प हो जायेगा। "हालत" और "मुकडीजता आगणा" बहुत लम्बी कथाये हैं जिन्हे प्रलम्ब कथाओ की श्रेणी मे ही रखा जा सकता है। सभी कथायें "हरावळ"[1] पत्रिका मे प्रकाशित हो चुकी हैं जिनकी आवृत्ति मात्र यह पुस्तक करती है। मेरी दृष्टि मे ये कहानियाँ निरुद्देश्य हैं। केवल मनोविज्ञान पर बल देने वाली कथाओ से समाज को क्या लाभ मिल सकता है, भले ही भाषा मे नवीनता आ जाय या उसका विकास हो जाय। पृष्ठ सख्या को देखते हुए पुस्तक का मूल्य अधिक है। उर्दू सस्कृत और अग्रेजी शब्दो के प्रयोग मे आधिक्य होने से राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता घटा दी गई है—

आत्मा, परमात्मा, सम्बन्ध, गम्भीर, स्थानीय, साम्यवादी, आकर्षण, उपेक्षा, किशोरावस्था, प्रतिमा, अन्तरिम, त्राहि-त्राहि, अन्तराल।

अग्रेजी शब्द —कमेन्ट्स, वर्स्ट, मेम्बर, ड्राई क्लीन, एवार्ड, प्लेवैक, रेसैस, परमीशन, बोयलर, ट्रासफर, ट्यूब इत्यादि।

उर्दू शब्द —बाबत, चस्मदीद, वारदात, तसल्ली, बकवास, मरम्मत, तबियत, कसूर, आखिर, सबूत, गवाह, इल्जाम, जिन्दगी, नसबन्दी। 'श' और 'ष' का प्रयोग राजस्थानी भाषा मे नही होते हुए भी लेखक ने कई स्थलो पर प्रयोग किया है। अन्य लेखको की तरह लेखक मे भी क्षेत्रीयता का अधिक प्रभाव है। भाषा पर बीकानेरी रग अधिक चढा हुआ है।

सग्रह सदोष होते हुए भी मनोवैज्ञानिक कथाओ से युक्त होने के कारण राजस्थानी मे एक नवीन और विशेष स्थान रखता है। शैली की नवीनता भी सराहनीय है।

जगदीशसिंह सिसोदिया की "रात रै अंधियारै मे" तथा सत्यनारायण रगादास की "प्रेरणा" जैसी कहानियो मे मानव के भयावह और अन्धकारपूर्ण अन्तर्जगत् मे झाकने का साहस सजोया गया है। 'रात रै अंधियारै मे" मे चेतन और अवचेतन, नैतिक सस्कार और मूल प्रवृत्तियो के सघर्ष की एक हल्की-सी झाकी प्रस्तुत हुई है तो "प्रेरणा" मे नारी-चरित्र की जटिलता की। राजस्थानी मे ऐसी उभरी हुई मन स्थिति पर आधारित कहानी-लेखन की पृष्ठभूमि का सम्प्रति निर्माण हो रहा है, यही मानना समीचीन होगा।

राजस्थानी मे प्रतीकात्मक कहानियो की सख्या अत्यन्त न्यून है। इसका

1 मासिक पत्रिका सम्पादक-सत्यप्रकाश जोशी, बम्बई से प्रकाशित।

कारण भी स्पष्ट है कि किसी भाषा के साहित्य में श्रेष्ठ प्रतीकात्मक कहानियों की सर्जना, एक स्तर तक पहुंचने के बाद ही संभव होती है। ज्यादातर भावों की जटिलता, विशेष मानसिक स्थितियों का अंकन, बात को सीधे न कह पाने की विवशता और तीव्रता के साथ किसी विचार-बिन्दु पर पाठकों को सोचने के लिए उत्तेजित करने की दृष्टि से कहानीकार प्राय ऐसी कहानियों की सृष्टि करते हैं। प्रतीकात्मक कहानियों में से अधिकांश कहानियाँ पत्र-पत्रिकाओं में ही प्रकाशित हुई हैं, कथाकारों के संग्रहों में तो न्यून मात्रा में ही आ पाई हैं।

बद्रीप्रसाद साकरिया की "बाणी नै भरत्रै रो कजियो" मूलचन्द 'प्राणेश' की "दोय कुकरिया" मनुज राजस्थानी की "बावळियो और दूवडी" श्रीलाल नथमल जोशी की "खेजडी और बांठी" मनोहर शर्मा की "सोनल भीग" "दूध अर पाणी" "गाय अर वछेरा" "गुवाळियो अर कमेडी" "भभूळियो अर पत्ता" "परवत अर झरणा" "धूजी अर पिरथी" "चौधरी अर कोचरी" "मा अर मावसी" "चित्राम अर चितेरो" "हंस अर कोचरी" "बादळ अर सूरज" तथा अन्नाराम 'सुदामा' की "आंधै नै आख्या" जैसी गिनी-चुनी कहानियाँ ही प्रतीकात्मकता से ओतप्रोत मिलती हैं। कुछ प्रतीकात्मक लोककथाएँ विजयदान देथा की भी उपलब्ध होती हैं। परन्तु श्रेष्ठ प्रतीकात्मक कहानियों का तो राजस्थानी में अत्यन्त ही अभाव है।

राजस्थानी कथा-साहित्य में बोध या नीति-कथाओं के नाम से भी एक अजस्र धारा बही है। ऐसी कहानियों ने, संख्या में अल्प होते हुए, राजस्थानी के कहानी-साहित्य को अभाव के कलंक से बचाने का प्रयास किया है। ये कहानियाँ भी अधिकांशत पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकट हुई हैं। भंवरलाल नाहटा[1] तथा मनोहर शर्मा[2] के कथा-संग्रह ऐसी कहानियों के प्रतीक हैं। इनके अतिरिक्त दाऊदयाल की "वेरी री सीख" "घणो चातर आखर मरै" मोतीसिंह की "लालच बुरी बलाय" श्रीलाल नथमल जोशी की 'मिनखपणा रो अवतार' कुबेरचन्द बाला की "कह सर बाला के नागै ब्याव न करू" श्रीलाल मिश्र की "गरु सेवा रो फळ" चन्द्रसिंह की 'मिनख मिनख सूं एक" दामोदरदास मोहता की "मिनख सर जासी बाता रै जासी' कुमारी आशा की "भाटा रो भाटो" अगरचन्द नाहटा की "चतुर स्त्री री चतुराई" तथा 'नरसिंह चतुरदसी री कथा' सीताराम पारीक की "पाप की हासी" भंवरलाल शर्मा की "अनोखा आशीर्वाद" गिरधारीसिंह चोयल की "मैं 5 सुदा सू मागूला" रामेश्वर टाटिया री पाप रो धन' और "गारगिये सू बचावणियो मोटो" सुरेश की "दरबारी आळसी" शान्ता सन्त की "चोखो आचरण"

1. बातगी . ले भंवरलाल नाहटा, १९६५ ई में प्रकाशित

2 सोनल भीग : ले. मनोहर शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर

भवरलाल नाहर की "भली हुई जे धन गयो" रामनिवास शर्मा 'मयक' की "करया सो भरया" मोहन आलोक की "दाय नम्बर री लिछमी" "क्लर्क रो भाग" "भविष्यवाणी" "अमरत्व अर क्लेक" तथा "कान री बात" और विजयदान देथा की कुछ लोककथायें [1] इस श्रेणी मे आती हैं।

सच पूछा जाय तो ये कथाएँ लोककथाओ से कोई अधिक दूर नही है। क्योकि लोककथाओ मे भी अधिकाश मे नीति, प्रेरणा एव आदर्शो का बोध भरा हुआ रहता है। परन्तु दोनो के आदर्शों, लेखन-शैली तथा विपय मे आशिक अन्तर होने के कारण दोनो की अलग अलग रूपो मे विवेचना करनी पडेगी। भवरलाल नाहटा के "बानगी" और मनोहर शर्मा के 'सोनल भीग" नीति-कथा-सग्रहो की पृथक् रूप से समीक्षाएँ इस प्रकार हैं—

बानगी

समीक्षा —एक सौ अडतालीस पृष्ठो मे बद्ध इस सग्रह मे रेखाचित्रो, सस्मरणो एव नीतिकथाओ को स्थान दिया गया है। इसमें कुछ हास्यकथाओ को छोड शेप सभी कथाएँ बुद्धि-चातुर्य, वाक्पटुता एव नीति पर आधारित है। नीति-मूलक कथाओ मे से "पाप रो बाप" और 'चोधरी काळ क ट्यो" कथाएँ लोक कथाओ के आवरण से युक्त हैं। सपूता री मा आधी ई चोखी,वा वेळा तो वैयगी अबै भलाई धोवै धोवै धाड पग्ग, आठ आठ रा दो ले आऊ,कठैई वळ कठैई काळ,नट बुध आवै पर जट बुध को आवैनी, तीजो काम थेई करलो, लधाडी मो'रया इया ई गई, जिसै नै तिसो खेत-तलाई री इग्या मू, गैगे पिडत ओछो सेठ—कथाओ के शीर्षक बडे आकर्षक एव रोचक हैं। हाथी तोल मुहतो, भगतण री सूझ, पिडतजी री सूझ, चौधरी री चतराई, बावोजी नै सीख, भैस रो न्याव, तीन हाजर-जवाबी, सुसीला री समझ, भरयो भरम, तिरिया-चरित, मेसरी, न्याव-इन्याव रो पईसो, पइसो, पाप रो मूल, पाप पुन्न रै उदै सू धन रा साचा हकदार, नेम रो महातम, पापमूल अभिमान, सपत मे लिछमी रो वासो, रिण पाप, भेद नीती, घर-भागण इत्यादि कथायें नीतिप्रद और उद्देश्यात्मकता से पूर्ण हैं। होड'र मैधाण, जैसलमेर रा भोळा राजा, दमाडा रा भोळा नवाब, राजा सूरसिघजी रो न्याव, रतन, सूई रो जुलूस, साधु रा रिपिया और पळ्‌ रो परभाव कथाएँ उपताने वाली तो हैं ही साथ ही सरसता से दूर भी। सभी कथायें एक-एक दो-दो पृष्ठो मे आबद्ध हैं जिन्हे शिशुओ की नीतिकथाओ की श्रेणी मे रखा जा सकता है। अधिकाश कथायें मरुवाणी[2], ओळमो[3] इत्यादि राजस्थानी की पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित कथाएँ ही है। जैसे

1 बाता री फुलवाड़ी लगभग सभी भागो मे कुछ कथाएँ
2 मासिक पत्रिका सम्पादक-रावत सारस्वत
3 पाक्षिक पत्रिका सम्पादक-किशोर कल्पनाकान्त

रिण पाप, नेम रो महातम इत्यादि। अधिकांश लोककथाएँ होने के कारण इन कथाओं में भाषा को छोड़ कर भावों में कोई मौलिकता नहीं आ पाई है। मावळ, आवला-चावला, वावडी इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों के प्रयोग के लिए लेखक प्रशंसा का पात्र है। भाषा-सहिष्णुता को प्रकट करने तक ही संस्कृत और उर्दू के शब्दों का प्रयोग हुआ है। राजस्थानी की स्वाभाविकता पर किसी भी प्रकार की आँच नहीं लग पाई है। भाषा की रोचकता, सजीवता, सरलता एवं एवं स्पष्टता का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

"सेखावाटी मे एक साधू हो। गाव रै बारे गुफा सी बणा राखी ही जठै रैवतो। गाव सू टुकडा माग'र उदर पूरण करतो, कनै धन हो पण कोडो ही को खरच करतो नी। एक बार साधू घणो मादो पडग्यो। वैनै मोत सूझगी। सोच्यो-म्हारै कनै सौ पूरा झाड साही रिपिया है। म्हारै मरघा पछै कोई ले लेसी। चिन्ता मे बैठे बैठे एक विचार आयो कै हू रिपिया गिट लू तो किणी रै हाथ को आवैनी। साधू एक एक कर'र सौ रिपिया गिटग्यो।"[1]

सोनल भींग

समीक्षा :—बासठ पृष्ठीय पुस्तक मे सत्तर लघु नीतिकथाओं को आश्रय दिया गया है। "सोनल भींग" शीर्षक कथा इस पुस्तक की प्रथम कथा है। सोनल भींग एक प्रकार का चमकीला जन्तु होता है जो खेतों में पाया जाता है। इस चमकीले और रगरगीले जन्तु की तरह इस सग्रह में भी अनेक प्रकार की भावनाओं से युक्त लघु नीतिकथायें है। ये सभी कथायें चिन्तन के आधार पर ली हुई है। कई कथायें इनमे प्रतीकात्मक भी हैं जिनमे कुछ प्रेरणा एव सदेश भी निहित है। अत. इस सग्रह का नामकरण युक्तियुक्त है। प्रेरणात्मक एव सदेशप्रधान कथाओं मे मुख्यत. ये कथाएँ बडी मनोरम है—सोनल भींग, दो फूल, आधी, मुगती रो मारग, आतडी री आसीस, पाणी मे पाणी, दूध अर पाणी, तुम्बण, पूतळी, पुराणी पोथी, हिरणी रो हेत, गाय अर वाछो, किरडियो, गुवाळियां अर कमेटी, परायो परसो, दुनिया, धरमसाळा, बागवान री भूल, न्याय, सरप रो हेत और भगती रो भेद इत्यादि। कुछ निरर्थक एव उबाने वाली कथायें भी है—कुअ-दनार, धोळो पछी, भार, सोनचिटी, खेत री साख, नदी अर धोरा, रोहीडो, दीवो, चरभर, मकडियो अर पत्ता, देवी रो सुझाव, तारा री बतळावण, देह रो दरद, साधना रो उमग्न, गीत री धुन, परवत अर झरणो, मेरो गीत, अगनो देव, दो सूवा, नवो दिन, राजा राणी, पुराणो पीपळ, आकाशी दीवो, धुर्जी अर पिरथी, चौधरी अर तोनगी, सिनगा जूण, मा अर मावसी, सियाम अर सितेरो, टींटी-दल, पणिहारी घांस

1. बानगी : लेखक-मवरलाल नाहटा : पृ स. ७४ ("साधू रा रिपिया" में से)

री धरती, पुराणो पिलग, छवि, मूवा री डार, नदी रै परलै पार, कागद रो फूल, मौत अर कुमौत, पचम सुर, हस अर कोचरी और बागवान इत्यादि। बादळ अर सूरज, मुक्ति अर मोत, पसीनै री कमाई, सेता भला न किसना, पुष्प री वेदना, भाग-सुभाग, गडकरा, सुरग रो पछी, मिनखा जूण, मुरदो—इन कथाओ मे लेखक सजीवता एव सरसता नही ला सका है अत ये कथाएँ निर्जीव-सी दिखाई देती हैं। लगभग सभी कथायें छोटी छोटी कथाएँ हैं जिन्हे अधिकाश को लघु बोधकथाओ मे रखा जा सकता है।

पुस्तक के कलेवर को देखते हुए मूल्य सात रुपए अधिक हैं। पुस्तक मे सस्कृत और उर्दू के शब्द भी यथोचित मात्रा मे है—उत्तर, निर्वाध, तत्काल, मुक्ति अन्याय, प्रतिकार उपद्रव, सकोच, ब्रह्माण्ड, तत्वज्ञान, अध्यक्षता, पुष्पहार कार्यवाही हिम्मत, मौत, जरूर, उम्मीद इत्यादि शब्द। काठो, सगळी, लैरा, धणी, चाएचुकी, हालताई, बपराबू, ताणी, पासै, गेर इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो जिनमे से कुछ लेखक के स्वनिर्मित शब्द भी है, का प्रयोग हुआ है। आल-कारिक सुषमा और मुहावरो-कहावतो का प्रयोग भी सन्तोषजनक मात्रा मे मिलता है—

मेरी अरज छोटै मूडै वडी है, माथो ठिकाणै लगाया ई पार पडसी, रुत गैल रूख फूलतो, बो धोळो कागलो है तो यो काळो बुगलो, भाळ आई, ई कसूरणी रो टटो मेटू, रग मे भग करै है इत्यादि। मेरै ऊपर ई बैठी रैये, साट बजावणियै, डरै मतना, इतरी, एक बर, टोर, मरपट्यो, जिमो, तनै इत्यादि शब्दो से बीकानेरी (क्षेत्रीयता) भाषा का प्रभाव लेखक पर स्पष्टत दिखाई देता है। मैं, और, भी, मुह, तो, मेरी इत्यादि हिन्दी के ज्यो के त्यो शब्दो को रखना तथा 'ष' और 'श' का प्रयोग करना (पुष्पहार, प्रकाश, पुरुष, सन्तोष, प्रकाशमान) लेखक की दुर्बलता है। भाषा-शैली के सौष्ठव का उदाहरण इस प्रकार से है—

"भरणो परबत सू तळै उतरयो जद परबत बोल्यो, "बेटा तू मेरी गोदी सू तनै मत उतरै। यो ससार वडो विकट है। तेरा कई भाई मेरी गोदी छोड'र आगै गया पण एक ई पूठो नी आयो। कोई थोहड मे रुळगो, कोई धोरा मे धसगो अर कोई खाई मे उतरगो।"[1]

कुछ विद्वान् इस पुस्तक को कथात्मक निबन्ध-सग्रह मानते हैं परन्तु स्वय लेखक की पुस्तकीय भूमिकानुसार[2] लघु नीतिकथायें ही है। क्योकि कथात्मक निबन्धो मे बीच मे या आरम्भ मे लघुकथाओ के साथ निबन्ध सम्बन्धी विश्लेषण भी होता है जो इसमे नही है।

---

1 मोतन भोग मनोहर शर्मा, "परबत अर भरणो" कथा मे पृ स २४
2 — वही —भूमिका

आकार और वर्ण्य वस्तु की दृष्टि से शिशु या बाल कथाओं की राजस्थानी कथा-साहित्य में अधिकता भले ही न हो, न्यूनता भी नहीं रही है। कुछ ही पुस्तक रूप में बाल-कथा-संग्रहों को छोड़ अन्यान्य कहानीकारों की कहानियाँ, ओळमो, मरुवाणी, कुरजां, हरावळ, मरवर इत्यादि राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं में निरन्तर आती रही हैं। फकीरचन्द व्यास की "मतळवी मोडा" "लुकमीचणी" तथा "बामण री पेट" श्रीलाल नथमल जोशी की "गोथली रा लाडू" "दो बाळगोठिया" तथा "सुधी अर पाटल" जुगराज सम्कर्ता की "म्हारो घरू बगेजो" विजयदान देथा के "म्है जीऊ हू म्हू जागू हू"[1] "म्हू हू मठवा मूठ"[2] तथा "अकल सरीरा ऊपजै"[3] कहानी-संग्रह, लक्ष्मीकुमारी चूंडावत की "भगो नाई" तथा "वहू री बात" प्रभा पारीक की "कागलो अर सरप" भवरलाल सुथार की "गधै सू आदमी" "डटदो" और "सनीमा" आनन्द माथुर की "ऐनाण-सैनाण रो तिल" गुमानसिंह सेखावत की "गुणी टाबरो !" दुर्गासिंह राठौड की "अनोखो दानी" चन्द्रकुमार मिश्र की "लोभी बान्दरो" शान्ता सन्त की "तीरथ-जातरा" और "प्राणा री बाजी" नावताराम की "चोरी रो धन मोरी माय" रामनिवास शर्मा 'मयंक' की "ग्रात् स्यामजी" गोविन्द अग्रवाल की "घर रा घर में नलट लिया" तथा "राजाजी री बिल्लडी" मनोहर प्रभाकर की "एक पढणै जोगी बात" भारती मिश्र की "गुण्डा री गिरफतारी" यादवेन्द्र शर्मा की "तीन भायला नै तीन पच्छावा" "लेखक, मगतो अर गीरडया" "मिनख र गण्डक" तथा "सवाल रो जवाब' राज्यश्री राठौड की "उदद बिलाव अर नेवली" भगवान वर्मा की "धनुष किण तोड़यो" शिवसिंह चोयल की "राजस्थानी जन-प्रवाद" रे नाम से दो कथाएँ, ललितकुमार की "भेद" निर्मला मिश्र की "जड़ोम्बारण" विश्वम्भरप्रसाद शर्मा की "कुमाणस" बी. आर, प्रजापति की "सिकार" कमलसिंह वैद की "रजपूताणी" शशिकान्त शर्मा की "सुनो अर कबूतर" श्यामसुन्दर पारीक की "गादडी अर लूकडी" कुंजबिहारी शर्मा की "चैजू बाबू" ज्योतिकुमार मिश्र की "काळन धुपग्यो" किरण नाहटा की 'तिरवाळो' 'गूंगी दीठ' और "तैन्ना सियाम" उमेश नाकृत्य की "सेर नै सवेरी" जगदम्बा अग्रवाल की "उनमादी भोळियो" एन के. उपाध्याय की "नागरिकै रो मोल" मंजु रस्तोगी की 'छोटकी नागो" देव शर्मा की "ताजा पकवान" "नगर रो फळ" और

1. लेखक—विजयदान देथा, रूपायन संस्थान, बोरूंदा।

2 " " " "

3. " " " "

इन तीनों संग्रहों की कथाएँ "बाता री फुलवाडी" के नामों से प्रकाशित हो चुकी है।

"अणमोल वरदान" रामगोपाल विजयवर्गीय की "अचम्भै हाळी हाडकी" कृष्ण कल्पित की "दो रोट्या खातर" रणजीतसिंह विश्नोई की "मूरख आया भला न जाया" श्रीचन्दराय की "हार" "भेद भरियो उत्तर" "खरो सनेव" तथा 'करतार-सिंघ अर भरतारसिंघ" सवाईसिंह धमोरा की "लादड्या माय रैसी सो जै सीता-राम कैसी" तथा "माल मनाणैं पूगग्यो, जै गोपाल जै गोपाल" गोपीवल्लभ गोस्वामी की "भलमनस्यात" तथा "भगवान सुरगा सिधारग्या" जगदीश चन्द्र शर्मा की "एक कोडी रो कोढ" सन्तोषकुमार पारीक की "लाख रो चूडो" "चिडोकलो सुभाव" "कूकू कुकाण अर लिटलिटाण" तथा "जात री तीन बात" दीनदयाल ओझा की "दो वेटा रो वाप" गोविन्दलाल माथुर की "मदन सैना आपरो वचन निभायो" मूलचन्द 'प्राणेश' की "ज्यान उवरी लाखा पाया" लक्ष्मण गोस्वामी की "भेडिया री कथा" तथा "फागणिया री चौगण" मोहनलाल पुरोहित की "पिडतजी राजाजी" भुवनमोहन मिश्र की "तीन भायल्या" निर्मोही व्यास की "रात री रुखाली" ब्रजेश्वर पुरोहित की "ऊँट कै मा'ड" पुष्पलता मिश्र की "वाचा" तथा "पून वयू चालै" किशोर कल्पनाकान्त की 'गळगटू" "मूरख" "किरोध वडो क धीरज" "सरजीवण विद्या" "भक्त प्रहलाद" "सकुन्तला" "सोनल गाय" "तेरवो कमरो" "भायली चारो" "हाड तोड मार धाडवी" "यथा नाम तथा गुण" "सांप सीटो रो खेल" "कामधेन" "मिस्टी रो रिछपाल" "नारद जी गाणो-वजाणो किण भात सिख्या" "इण भात वधी मिनखाजूण" "लेगा एक न देणा दोय" "गुरु-निन्दा नी करणी" "जिनम रो मोल अर अमरफल' तथा "तू का वाई नै सात सिलाम" मुरलीधर व्यास की "आप आपरो वाका-सा" "गुर-घटाळ" 'वोल रो तोल" "एक चौवेजी" "झूठो भमेलो" "वरावरी रो सगपण" तथा "हकीम जी" मनोहर शर्मा की "सीह रा दात गदहा आगा" 'रुत री वाधी लिछमी छै" 'पीजरै रोपी" 'पीजरै रो पछी" 'मोतियै हाळो हाणी" 'टमरक टू री पहली उडार' 'भूरी" तथा 'सिंघ पहाड री वरसगाठ' जयशकर देवशकर शर्मा की 'टप टप आनू" कल्याणसिंह शेखावत की 'मेवावाटी बाल कथा' तथा 'माखीचूस" विनोद सोमानी हंस' की 'मोटो मिनख" चन्द्रसिंह की 'विल्ली रो पजो' तथा सुभान तेरी कुदरत" अशोकचन्द जागिड की "टूकरा दियो हो" जशोदा देवी की 'धरम री वैन धरमा" कान्ह महर्षि की 'मालियै री वात" पारसकुमार नाहटा की 'पृथ्वीराज री आतम कथा" छोटूसिंह शेखावत की 'नामून" जुगल परिहार की 'धरमराज अर वाणियो" सूर्यशंकर पारीक की 'आतू" भवरलाल शर्मा की "मनोरथ पामीरनाद" श्रीलाल मिश्र की 'यै देस रा रुखाळा" "वजावै रो जूझार भैरू सिंघ' और "मृच्छा री लडाई" सुमेरसिंह शेखावत की 'हेत री वात' रावत सारस्वत की 'आजादी री वेदी पर चढ़ोडी कनिया' कन्हैयालाल सहल की 'उतर-फदूनर" सौभाग्यसिंह शेखावत की "मकान रै माय गटक घुसै हो' भगवानदत्त

गोस्वामी की 'मिनी मासी' 'समरकन्द' 'बादरो अर बामण री छोरी' 'कूकरिया राक्षस अर रुखाळो रा खड़ो' 'सीख' 'आव' क तूरो' 'छीदा नाची' 'मूरख राजा अर चालाक दीवाण' "ब्याव होयो" "टूकड़ै री बात" "सिह राजो सभा जोडी" और "कागलै अर चिटी री बात" इत्यादि राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित शिशुकथाएँ अत्यन्त ही मनोरंजक एव सरस है। अभी इनका प्रवाह अवरुद्ध नही बल्कि निरन्तरता की ओर बढ़ता जा रहा है। बालकथाओ के कुछ संग्रहो की समीक्षाएँ इस प्रकार से हैं —

देस-देसान्तर री वातां[1]

समीक्षा :— तिरेपन पृष्ठीय इस बालोपयोगी कथा-संग्रह मे नौ कथाओं को स्थान दिया गया है। "छाया किणरा बाप री है" तथा "माथा ऊपरलो मिलियो" ये दो चीनी कथाएँ "समन्दर रो पाणी खारो यूं है" (जापानी कथा), दयावान बादशाह (बगदादी लोककथा), स्याणो खरगोश (थाइलैण्डी कथा), उन्माद निकळियो (राजस्थानी कथा) "तीन मूरख जिनावर" "काछवा अर घोड़ा री दौड़" तथा "घणी चतुराई घणो दुख दै" (तीन बर्मी कथाएँ) है। सभी लोक-कथायें हैं। सभी मे कुछ न कुछ आदर्श निहित है। विशेषत चातुर्य या निपुणता के महत्त्व को सोदाहरण स्पष्ट किया है। सभी कथाओ मे चित्र दिए गए है जो बच्चो की जिज्ञासा को बढ़ाने वाले है। कथाओ के शीर्षको से ही आधा भाव समझ मे आ जाता है। इन कथाओ से देश-विदेश का ज्ञान भी अप्रत्यक्ष रूप से बच्चो को हो जाता है। अन्तिम कहानी को छोड शेष सभी छोटी छोटी ही है। सवादो के प्राबल्य के साथ बच्चो के मुख्य उद्देश्य मनोरंजन का भी ध्यान रखा गया है। लेखिका की उम्र को देखते हुए उनका प्रयास श्लाघ्य है। कुछ स्थलो एव शब्दो को छोड पुस्तक की भाषा सरल एव स्वाभाविक है जिसमे मेवाड़ी बोली का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है, सभवत. लेखिका के निवास-स्थान का कारण रहा हो। भाषा-शैली के सौष्ठव का उदाहरण दर्शनीय है—

'क्यू रे! आ गाडी बेचणा सारू है काई? जाट बोलियो।

"हां सा, बेचण सारू तो है हीज, लेवणी व्हे तो पांच रिपिया सूं एक दाम ई कमती बेसी नी करूंला।" बाणियो पाछो गाडी सवद पे जोर देनतो पूछियो। थूं गाडी पांच रिपिया मे ?—जाट हामळ भरी।"[2]

सभी कथायें उद्देश्यहीन तो है परन्तु है मनोरंजनप्रद। अन्तिम कथा सोलह-सत्रह पृष्ठो की है जो सभी कथाओ मे पांच-छह गुना बड़ी है अत. सन्तुलन की कमी रही है। परलीनाथ, सरीवपत्त्वर, मनाणनला, सासलोर, साक्षात आदि कठिन शब्दो का ज्ञान छोटे बच्चो को तो क्या, सयाने आगुवानो को भी नहीं है तब

1. लेखिका-राज्यश्री राठोड़, राजस्थानी सस्कृति परिषद्, जयपुर।
2. देस देसान्तर री वातां—लेखिका-राज्यश्री राठोड़, पृ स 31

लेखिका के लिए कैसे सभव हो सका है। छोटी बच्ची के लिए न तो कठिन भाषा का प्रयोग सभव था और न ही ससार की अन्य लोक-कथाओ का ज्ञान। कलेवर को देखते हुए पुस्तक की कीमत दो रुपए अधिक हैं। 'श' और 'ष' का अनेक स्थानो पर प्रयोग अनुचित है।

टाबराँ री वाताँ[1]

समीक्षा — उनचालीस पृष्ठीय इस पुस्तक मे दस कथाएँ सकलित हैं। शीर्षको से ही कहानियो के भाव प्राय स्पष्ट हो जाते हैं। सभी कथाएँ सचित्र हैं। मुख-पृष्ठ या ऊपरी आवरण की सजावट मनोरम है। रानीजी ने बच्चो के मनोभावो के अनुकूल ही कथाएँ लिखी हैं। भाषा राज्यश्री से भी सरल, स्वाभाविक एव सजीव है। भाषा- सौष्ठव एव सवाद-नैपुण्य का उदाहरण द्रष्टव्य है—

"गेला मे एक मोरियो मिलियो, "मासीजी, कठै जावो ?"
गगा न्हावा जावु, बेटा।
म्हू ई आवु।
चाल बेटा
"मोरियो ई साथे व्हे गियो।"[2]

कथाओ मे स्थान-स्थान पर हास्य की झलक मिलती है जो बच्चो के लिए जरूरी है। अधिकाश कथाओ मे उपदेशात्मकता, शिक्षा तथा प्रेरणा के सकेत हैं।

कई कथाएँ तो आठ-आठ शब्दो के शीर्षको को ली हुई हैं। जैसे--काग मोती दे नी चिटी गोती रे नी, मिन्नी बाई गगाजी चालिया, आई जी आई लोग लुगाया रे क्यारी लडाई, आरे पूछ फदडका ताती खीर मवडका, ऊन्दर सुन्दर बलदिया जोडिया, टेकड जीनी राजा हारियो। छोटे मू मोटी वात, गणेशजी तूठिया, अकल काम करगी, चिडी चिडा खीचडी राधी—ये चार कथाएँ लघु शीर्षको से युक्त हैं। लगभग सभी कथाएँ जानवरो, पक्षियो आदि से सम्बन्धित हैं जो अनुचित है। आरम्भ से अन्त तक सवाद-प्रधान ये कथाएँ प्रयोगवादी कविताओ की तरह लगती हैं। कथाओ, सख्या, पृष्ठो तथा समय को देखते पुस्तक का मूल्य अधिक है।

हूंकारो दो सा

समीक्षा :— छियालीस पृष्ठो मे ग्रथित इस पुस्तक मे बारह कथाओ को आश्रय दिया गया है जिनमे से तीसरी कहानी "मिन्नोबाई गगाजी चालिया" और आठवीं कहानी 'चिडी री कहाणी" तो "टाबरां री वातां" लेखिका के अन्य सग्रह मे प्रकाशित हो गई है। सभी कथाओ के कलेवर एक-एक दो-दो पृष्ठो मे सीमित हैं

1 लेखिका—लक्ष्मीकुमारी चूडावत, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।
2 टाबरां री वातां लेखिका-लक्ष्मीकुमारी चूडावत, पृष्ठ 15
3 लेखिका—लक्ष्मीकुमारी चूडावत, सवत् 2014 मे प्रकाशित।

जो बालकों के लिए आवश्यक है। ऊंदरा री बात, मिन्नी बाई गंगाजी चालिया, चिड़ी री कहाणी, हाथी अर नार रा बच्चा, ऊंट अर सियाळिया री मित्रता तथा टपूकड़ो कहानियाँ तो पशु-पक्षियों की अनिवार्यता तथा उनके महत्त्व को प्रदर्शित करती हैं। भगो नाई, टेकट री वाणी सेठ सेठाणी री बात, डोकरी री बात, बऊ री बात तथा नीलकंठ राजा—ये कथाएं हास्य, मनोरंजन एवं जिज्ञासा-वर्धक है। पुस्तक का नामकरण या शीर्षक अत्यन्त ही रोचक एवं स्वाभाविक है। क्योंकि कथा कहने वाला व्यक्ति सुनने वाले से "हुंकारा" भरवाता है। भाषा पर मेवाड़ी बोली का प्रभाव लक्षित हो रहा है। भाषा में संवादों तथा लघु वाक्यों की प्रबलता है—[1]

"पटेलजी फेर बोल्या,—"राम राम, हेमराज भाई, बोलो कोयनी ?"

"राम राम ! काई काम पड्यो है पटेला ! जो राम राम कर रिया हो ?"

"भाई थाने म्हारी एक गवाही देणी है।"

"देवा, जरूर देवा"

"म्हारै लारै गाम चालो।"

"गाम मे तो म्हूं आय जाऊं, पण गाम मे म्हारा दममण (कुत्ता) घणा जीरो काई जतन ?"

'म्हारी घोडी माथै चढ जावो।"

तीनों ही बाल-कथा-संग्रह सदोष होते हुए भी बालकों की जिज्ञासा को बढाने वाले, मनोरंजनप्रद तथा सरस हैं। राजस्थानी-साहित्य में बाल-साहित्य के अभाव की पूर्ति इन्ही संग्रहों के माध्यम से हुई है।

बातां ही बातां [2]

समीक्षा — निरूपन पुस्तक रा संग्रह में ग्यारह कथाएँ हैं। धीनो गुजरात रेजू बाव री बात, कुम्भारामजी महाराज, रामचन्दजी राणा री बात, दलजी खिचरोलियो, छोटू महाराज री बात, इत्यादि कथाएँ सत्य प्रसंगों पर आधारित हैं और वे चरित्र प्रधान कहानियों की श्रेणी में आती हैं। सेवक भक्त स्वामी, सो मण रो भार गाडो, रामभोलो तूम, राजपूत री माग और नाव रिगिया री बात कथाएँ शिक्षाप्रद के साथ साथ मनोरंजक तथा हास्य-रसिकता से पूर्ण भी है। सभी कथाएं बालोपयोगी कथित है। कुछ कथाओं को कहानियों की श्रेणी में इसलिए नहीं रख सकते क्योंकि कहानियों का महत्त्वपूर्ण अर्थ छोटे बालकों की बुद्धि से परे है यद्यपि सभी कथाएँ या रचनाएँ बालकों के लिए ही समझकर लिखी गई है। इनमें पचास-साठ वर्षों पूर्व के कुछ, कुमुद और सीकर री जीवन-धारा रा चित्रण

1. हुंकारो दो सा. लक्ष्मीकुमारी चूंडावत पृ सं ४२
2. लेखक-ब्रजविहारी शर्मा प्रकाशक—गोविन्द अग्रवाल।

मिलता है। सेठो के वैभव, एव उनकी उदारता, पण्डितो के ज्ञान तथा उनकी गरिमा, ठाकुरो की चारित्रिक कठोरता और त्यागशीलता के मनोरम उदाहरण इनमे हैं। यह सग्रह लोक-साहित्य के अधिक निकट है क्योंकि अधिकाश बाते या कथायें सुनकर लिखी गई हैं। सग्रह का प्रथम भाग ही दृष्टि मे आया है, दूसरे भाग का पता नही लग पाया है। लघुवाक्यावलि, राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग, सस्कृत और उर्दू शब्दो के प्रयोगाधिक्य से दूर तथा पात्रो का रूप-वर्णन इस सग्रह की विशेषताएँ हैं। भाषा-शैली का उदाहरण—[1]

'सेठाणी सारा उपाव कर लिया, पण बात बणी नही। धोखो मन मेनावडै नही। मैं पापण यो के कर बैठी! भाया बीच विछोवा करा दिया। पिसताव की आच मे मन को मारो मैल जल बळग्यो, आत्मा कचन-सी होगी, भावना ऊ ची उठी। देवर देवता-सो दीखण लाग्यो। देवर ही यो कलक काटै तो काटै। कागद लिखणनै बैठी। आंखड्ल्या का आँसू ही आखर बणकर कागद पर मडग्या।"

कर्म और सम्बन्ध कारको के चिन्हो मे लेखक ने "रा रो" इत्यादि का प्रयोग न करते हुए "का को" आदि को ही अपनाया है। "मैं" सर्वनाम के स्थान पर "म्हें" का प्रयोग भी लेखक नही कर सका। सभवत लेखक को राजस्थानी भाषा का सुज्ञान न रहा हो।

बात भली दिन पाधरा[2]

समीक्षा—छत्तीस पृष्ठीय इस कथा-सग्रह मे पन्द्रह कथाओ को स्थान दिया गया हैं। मागण कुवाडो मागण डाडो, लेणा एक न देणा दोय, मर्द तो इकदन्ता भला, बात भली दिन पाधरा, बावे सू डाई, हू थारै भावै चूल्हे मे पडो, माताजी मढ मे बैठा मटका किया है, विणज करो रे वाणिया, घणो खाऊ न अवेला जाऊ, थारे वाली हू पडियो, थै कहो सो तो मन भावै, गळ बाधी बाजै, राया रा भाव राते गया, शेखजी ने भातो तथा कोनायत रा वैण न्यारा—सभी पन्द्रह कथायें कहावतो के शीर्षको को धारण की हुई हैं। शेखजी ने भातो, कोनायत रा वैण न्यारा, माताजी मढ मे बैठी मटका किया है, मागण कुवाडो मागण डाडो, हू थारै भावै चूल्हे मे पडी, राया रा भाव राते गया तथा घणो खाऊ न अवेला जाऊ—ये कथाये राजस्थानी सभ्यता एव सस्कृति की विशेषताओ के अत्यन्त निकट है। इनमे हास्यातिरेक भी है। कहावतो पर आधारित कुछ हास्य-लघु कथाएँ जिन्हे चुटकलो की श्रेणी मे रखा जा सकता है, तो अवश्य मिलती हैं। परन्तु ऐसी कहावती लघुकथाएँ राजस्थानी-साहित्य मे अत्यल्प होने के कारण लेखक ने इसके रिक्त भण्डार को भरने

1 बाता री बातै कु जबिहारी शर्मा, पृ स 29

2 सम्पादक एव लेखक—रामचन्द्र महर्षि, 1969 मे प्रकाशित।

का प्रयास किया है। लघु वाक्यावलि से युक्त कथाएँ ही अधिक हैं जो अत्यन्त ही रोचकता, मनोरंजकता, सरसता, स्वाभाविकता तथा स्पष्टता की प्रतीक हैं। उदाहरणार्थ—

"एक मालदार सेठ, जके रे धन, आगे दियो पाछो आवे। सेठ पर लिछमी री तो घणी मैरवानी, पण भगवान नाराज। सतान नहीं। सतान हुवै भी कीकर। लुगाई तीन दिन सू ज्यादा कद जिवी। सेठ व्याव कर कर हारग्यो अर बीनणिया मर मर कर छेह लियो। हालत अठै ताई पहुँचगी कै सेठ सो वर्षा रै नेड़ो आयो। कदेई गोदी में बैठा'र बेटै नै रमाण री मुराद नहीं पूरी।" [1]

डोघो, कीकर, फीच्या, छेह, अठै ताई नेडो इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों के प्रयोग में लेखक ने पूर्ण सतर्कता बरती है। बेचारी, औरत, आशा, हिम्मत, सन्तान, हालत, मुराद, नाराज, ज्यादा, पति, आखिर, योजना, इत्यादि उर्दू और संस्कृत के शब्दाधिक्य से राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता को चोट पहुँची है साथ ही बच्चों की समझ से परे भी कई कथाएँ हो गई हैं। स्तर को देखते हुए कठिन शब्दों का ज्ञान बच्चों को कैसे हो सकता है?

फिर भी उक्त संग्रह राजस्थानी के बाल-साहित्य की मणियाँ हैं। लेखकों का प्रयास इस क्षेत्र में सराहनीय ही रहा है।

बालसाद [2]

समीक्षा :—सत्तर पृष्ठीय इस संग्रह में कविताएँ, गद्यगीत तथा पाच लघु कथायें निहित हैं। सुभान तेरी कुदरत, मिनख मिनख में एक, कोरियै घड़ै रो पाणी, बाईजी नै ऊँरात तथा बिल्ली रो पंजो—ये पाच लघु कथाएँ अत्यन्त ही रोचक, सरस एवं सजीव बन पड़ी हैं। कहानियों का कलेवर अपेक्षाकृत दीर्घ है। इन सभी कथाओं के शीर्षक जितने आकर्षक एवं रोचक हैं उतनी ही ये कथायें भी। ये कथायें शैली तथा भावों की दृष्टि से गद्यगीतों की तरह दिखाई देती हैं अत. इन्हें गद्यगीतों की श्रेणी में भी रखा जा सकता है। सगळिया, छउछटीनो, धोचा, उनग, आळणो इत्यादि राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दों का प्रयोग श्लाघ्य रहा है। "कमर रा दिन ओछा करै" जैसे मुहावरों का समावेश भी इनमें है। आदी, अचानक, बिल्ली, बालक, छाती, शांति इत्यादि संस्कृत और हिन्दी के शब्दों का प्रयोग कर अन्य भाषाओं के प्रति सहिष्णुता का भाव प्रकट किया है। भाषा लघु वाक्यावलि से युक्त, सरल, स्पष्ट, प्रवाहमय तथा रोचक है—

"बापड़ो कबूतरो निरा दिना सूं एकलो। छाती नीचै दो इंडा।

1. बात भली दिन पाधरा. बाल्ह महर्षि. पृ सं. 5
2. लेखक—चन्द्रसिंह, संवत् 2025 में प्रकाशित।

इतरो सो परवार। उण पर सारी आस। चार-पाच बाका-बावला घोचा सू वण्यो वैरो आलणो। पाडोस्या रो प्यार जिण सू ऊमर रा दिन ओछा करै।"[1]

राजस्थानी कहानी-साहित्य को सर्वाधिक गौरव प्रदान करने का श्रेय राजस्थानी मे लिखी गई या लिखी जा रही लोक-कथाओ को ही है। वैसे लोक-कथा-लेखन का कार्य देश की आजादी के पूर्व से ही आरम्भ था परन्तु आजादी के बाद उसकी गति तथा भाषा-शैली मे अत्यधिक परिवर्तन आया है। फलस्वरूप लक्ष्मीकुमारी चूडावत ने १९५८ ई० से १९६६ ई० के ९ वर्षो मे ही ९० के लगभग उच्च स्तरीय लोक-कथाओ की सृष्टि कर डाली। ठीक इसी प्रकार राजस्थानी लोक-कथाओ के बादशाह विजयदान देथा ने भी १९६४ से १९७२ ई० के ९ वर्षो मे ३०० के लगभग लोककथाओ का निर्माण कर पाठको के मनोरजन मे वृद्धि की है। देथा ने लोककथाओ के अलावा चार-पाँच लोक-उपन्यासो की सृष्टि भी की है जिसका विवरण "उपन्यास-साहित्य' अध्याय मे दिया जा चुका है। इस क्षेत्र मे देथा का कार्य आज भी अवरुद्ध नही हुआ है। देथा को उनकी "बाता री फुलवाडी" भाग १० पर केन्द्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली से ५ हजार रुपयो का पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। देथा की अधिकाँश लोक-कथाओ मे सामन्ती-प्रथा पर तीखा व्यग्य प्रहार हुआ है। जागीरदारो के अत्याचारो एव शोषण मे उकता कर देथा ने अपनी अधिकाश लोककथायें लिखी है। भाषा-शैली की दृष्टि से भी देथा की लोक-कथायें बडी रोचक एव सरस बन पडी है। इसके विपरीत रानीजी की लोककथाओ मे भाषा-शैली के सौष्ठव के साथ-साथ स्त्रियों की मनोवृत्तियो और अतिमानवीय तत्वो का विश्लेषण उपलब्ध होता है। अतिमानवीय तत्वो के दर्शन तो देथा की लोककथाओ मे भी होते है।

बाबाजी के चिमटे मे कवरानी का मर जाना फिर जीवित होना, चिमटे से भूतो का आगमन, मृत शरीर मे जीवात्मा का प्रवेश भले ही वह पशु-पक्षी का भी शरीर क्यो न हो, इच्छानुसार देवी या भगवान को बुलाना, रहस्योद्घाटन मात्र मे मर जाना, अप्सराओ का मानव-योनि मे जीवन-यापन, कटे हुए सिर का धड मे फिर जुड जाना, मानवी राजकुमारो द्वारा नाग, राक्षस-कन्याओ के साथ शादी करना इत्यादि अतिमानवीय तथ्यो की भरमार इन लोककथाओ मे मिलती है। यह राजस्थानी लोककथाओ का दोष नही अपितु इनकी एक विशेषता है।

विजयदान देथा, लक्ष्मीकुमारी चूडावत, मूलचन्द 'प्राणेश' तथा देवकिशन राजपुरोहित के लोककथा-सग्रहो के अतिरिक्त समय-समय पर लोककथा-भण्डार को भरने वाले साहित्यकारो तथा उनकी स्फुट रचनाओं की किंचित् जानकारी पूर्व मे दर्ज ले तो उपयुक्त होगा। इस क्षेत्र मे भवरलाल नाहटा की पाच सीख, चौधरी

---

1 बाल्साद देजर-चन्द्रसिंह पृ स ६९

काळ काट्यो, कळजुग रो चमत्कार अन्त में सत री जय, नूई रो जलूस, गुदा की गुदाई, नट वुध आवै पण जट वुध को आवै नी, राजा सूर रो न्याव, मैथी'री वात, सम्पत में लिछमी रो वासो तथा सम्मरण, नानूराम संस्कर्ता की रोही रो रीछ, डफोळसंख, दीवाळी रो मदुवो, मुरलीधर व्यास की रेख में मेख तथा जन थोटो नेहज घणो, अशोक महाजन की "जीतू अर वरुणा" जगदीश माथुर की कमल की मसखरी, देवी रो मराप, तथा वात चकवा चकवी री, बदरीप्रसाद साकरिया की चार मूरखा री वात, वारणै नै भरू खियो रो कजियो, मधुकर साधनाराजन की "मायट रो ममेव" सत्यनारायण जाजू की "जवान रो रम" आशाचन्द भण्डारी की 'सान में भगवान' सूर्यशंकर पारीक की समझ रो फरक खीर अर चांखो सुपनो, च्यार लेसू रे च्यार तथा ठाकरा री वाता, भवर व्यास की लोभी सेत-रुखाळो अर कमेडी" श्रीलाल मिश्र की "धरम री जड सदा हरी" वखत रो वरतारो, ना जाणै की, भों'रा की भों' में झगडै, जवाई-रा, पूजी राख-दिवालो कुबदी खोपरी, भगवान रा फरेस्ता रुखाळा, दिन वडो मिनख रो के वडो तथा सील रो भरम, दीनदयाल 'कुन्दन' की अन्धविश्वास रो फळ, किरणकुमार की "रगभूमी" मनोहर शर्मा की राजस्थानी लब्धप्रणाश, राजस्थानी नलोपाख्यान, सुघड कूवो, राजा रै दो सींग, सौ ज्यू पचास, छींको टूट्यो दही रह्यो, टेढणी के बोलै चरू बोलै, वात री चोट, श्रीलाल नथमल जोशी की खारियो देव, निदा रो फळ, जिगरी भायला, राजा विक्रमाजीत अर नाई, रुणझुण गुट्टी, गरीबदास नसखरो पाटण रो, नान्हू भाट, सूरज वाप रो जवाई तथा सूरज भगवान रा बेटी-जवाई, मोहनकुवर मेहता की "गोळगच राजा" जयशंकर देवशंकर शर्मा की 'मान्या सू भी देसीदान" राधेश्याम पारीक की "ठण ठण पाल" गणपतलाल डागी की "डोकरी रो रोवणो" दाऊदयाल शर्मा की "चिरमी रो वन्चो" रामनारायण माथुर की "राजै दामोदरजी री रा'णी" सन्तोषकुमार पारीक की "चतराई री वात" रविप्रकाश पारीक की "काळ आया वचै सोनी" यातेरा की "मिनख री मोल' नृसिह राजपुरोहित की "टाग री थावरू" तथा "परम्परा" नारायणदास श्रुत की "तपरे तवा तीन दिन" और "ठाकर अर कुमार री छोगे" गोविन्द अग्रवाल की "चोधरण अर मिर्च री वात तथा "वखत री सूझ" कुम्भाराम आर्य की 'सपूत-कपूत" रावत सारस्वत की "हेमो सत्तो" तथा "छठाड नाम पड्यो तिण री वात" ब्रजमोहन माथुर की "एक हो सोनी' जयकृष्ण व्यास की "निछमीजी अर सुगनो" चन्द्रसिह की "बाईजी री गैणा" भूरसिह राठोड की "मिनखा री सूम-सूम' हरिवल्लभ 'हरि' की "कविता सू पटनी ठड' श्रीम पुरोहित की 'घू घू' हुकमचन्द जैन की 'बूढा' और "सेठजी री सूद" मोतीसिह राठोड की 'सतनजान सदा जीवै' तथा 'चोधरी रो न्याय' सत्यप्रकाश जोशी री "निछमी नै आवणो होवै तो' तथा 'निछमी नूं भी माता करै' कुमारी सुमन की 'उघाटरा' अमरसिह की "दनो रो दरगाह'

महावीरप्रसाद डागी की 'पाच कोळी" माणक तिवारी 'बन्धु' की 'सडक घुमावै' वैजनाथ पवार की 'लिछमी अर भूख' तथा 'जात घरा में—जात लाठी में' सुबोधकुमार अग्रवाल की "छापर को चौहटियो भैरू' दीनदयाल ओझा की "सू णे बैठई कुलर खाईए' मोहनलाल 'शार्दूल' की "घणी सैणप मे किरकिर पडै' तथा "पूरो पाठ' उदयवीर शर्मा की "सुपनो साचो हुयो' शिवसिंह चोयल की "किण नै दीजै दोस' धरम रो पेटियो, तथा 'हरखारी वात' गोविन्दलाल माथुर की "चोर रो पतो कीकर लागो' मूलचन्द 'प्राणेश' की 'घर भिध री वात तथा "घणो चातर चीखले पडै" राज्यश्री राठौड की 'लिछमी अर सुरसती रो झगडो' और 'छाया किण रा वापरी है" ललिताप्रसाद दुवे की 'एक बनारसी प्रवाद' प्रहलाद राय की "मोम धड्का" अगरचन्द नाहटा की 'चार प्रधानांरी चतुराई' महेशकुमार ढाचोलिया की 'करवा चोथ की का'णी' सवाईसिंह धमोरा की "पेमावाई" लक्ष्मीकुमारी चूडावत की "राजा रो कुवर अर नाई री मित्रता' खीवी बीजो, ऊजली, होथल, लाला मेवाडी, अनोखा कवरजी, सेठाणी, चातर नार, चौवोली, तथा "सतरी परख" विद्यावती स्वामी की 'साधु अर गिरस्ती' राजेन्द्र मिश्र की "मुफत री रोटी' तथा दीन दुखया री सेवा "अमोलकचन्द जांगिड की 'अकल उवारै' तथा जाट अर मीयो' लक्ष्मीकमल की "सूरज भगवान री वात' भगवानदत्त गोस्वामी की 'गळगटू" किशोर कल्पनाकान्त की 'लुगाई रै पेट मांय वात नी खटावै' झेलम रै काठै कासमीर रो जलम, तीन छोरघा, "वदळो दुर्गासिंह राठौड की 'न्याव' और 'मोत्या री माळा अर कडी' रामेश्वर टाटिया की 'दुख मे सुख' 'किनरी जमी किनरो धन' "चाच देई जिको चुग्गो भी देसी' पन्नालाल शर्मा की 'देस माय रजपूत भी रैयग्या है काई, चन्द्रशेखर दुवे की 'ठग' मावताराम चौधरी की सेर नै सवा सेर' ओंकार पारीक की 'मिनख अर वाघ' मुरली रामावत की 'मूछघा री मरोड' कान्ह महर्षि की 'पेवटी माय लुगाई' 'मागण कुवाडो मागण टाटो' 'लेणा एक न देणा दोय' 'मरद तो हारदता भला' "वात भली दिन पाधरा' और 'थावै मू डाई!' रामदत्त सांकृत्य की 'मारवीनूम' कपिलकुमार की "लीलै गुलाव रो फूल' रामप्यारी मारूदिया री 'वीटी काठी घणी है काई!' मुन्नालाल राजपुरोहित की 'ऊट रो भाटो' तथा विजयदान देथा की "अकल री वोझ अदल न्याव, मैणत रो मार, रामणी रो परचो, दुनिया री खटपट, नटम्यू तो हू नटम्यू, पाबू करै ज्यू ई सोरो, माऊ री मिजाज, टकै रो गुळ, धणियै रो चाकर, मावचेती, भलाई रो री राई, कुदरत री बेटो, आदमखोर, माठ नाहरसिंघ वछराजसिंघ, मायाजाळ मरता, मरम री धार, रैणादे री रूसणो, पागी, आटी-माटी और वाळो राज तथा 'राजा रा दमराव' इत्यादि उल्लेखनीय लोककथाएं पत्र-पत्रिकाओं में समय

समय पर प्रकाशित हुई है। इनके अलावा मुरलीधर व्यास [1] तथा नृसिंह राजपुरोहित [2] कहानीकारों के संग्रहों में भी अन्यान्य कथाओं के साथ कुछ लोककथायें प्रकाश में आई हैं।

अब मैं उन लोककथाकारों की अनूदित कृतियों की समीक्षायें प्रस्तुत करना चाहूँगा जिन्होंने राजस्थानी लोककथा-साहित्य को अपने अथक प्रयासों से समृद्ध बनाया है—

हियै तणो उपाय [3]

समीक्षा :— बरानवे पृष्ठों में बद्ध इस पुस्तक में अड़सठ लोककथाएँ संगृहीत हैं। इनमें से कुछ कथायें तो पचतंत्र, हितोपदेश, कथा-सरित्सागर, शुक बहत्तरी, वैताल-पच्चीसी तथा सिंहासन-बत्तीसी से उद्भूत हैं और कुछ कथाएँ लोक-मुखों से नि:सृत हैं। हियै तणो उपाय, जैसे नै तैसा, ठीकरी घड़ो फोड़ै, सेर नै सवा सेर, अक्कल बडी कै भैंस, मूरखा रै किसा सींग हुवै, बोलणा आळी खोह, सीख उणाहीं कूं दीजियै, उडण भखणी, उपदेश, औड घर में सरच्या, स्याळियै री सेखी, ज्यान ऊबरी लाखां पाया, मा री ममता, टाग री पाती इत्यादि ऐसी कथाएँ हैं। देख मरद री ऐंगी, उळटी नमाज औसाण और अद्धम अद्धा कथाएँ हास्योत्पन्न करने वाली हैं। जो जाकै मन भावे, कूड रा पग जट बुध, विप नै विप दाटै, निसरमी, परख नै प्रमाण चाई, एक घर घणियाय दोयारो, बुराई छिप नहीं सकती पन्द्रह-पन्द्रह दिना'री बारी बारी, मा री ममता, तोल रो मोल, चोर रै माथै ऊपर चिटी, उतावळो सो बावळो, भगवान निवाज्या, जग में तो कई है, बोल रो पेच, सांच नै आंच नहीं, चोर रै मन में चानणो, रोठै री होठै आया रहै, नालरो नमूनो करडो वैरा मूळ नै सोवै कथाएँ समस्यात्मक हैं जो जिज्ञासा में वृद्धि करती हैं। माधै रा मोट, राजा रो न्याव रातै गयो आसा बोहरो—ये कथायें जीवन को समुन्नत बनाने वाली और शिक्षाप्रद हैं। ठनठक, नासमझ, बन्दान, ऊनरै में आज तुलसी, उलटो कोटवाळ नै डंड, कालो पीजरो कुपास, त्रिया चरित्र, उळटा पेच, चोर अर नाग्गा, धरमराजजी अर बाणियै रो बेटो, फता कुंभार गधै चडै, मामा नागा लोटाग्गा वणिग बुद्ध छळावा, भर्ता रगो ज्यै सूत्र आळी इत्यादि कहानी के मनोरंजन विशेष उद्देश्य को पूरा करने वाली हैं। कुछ लोककथायें राजस्थानी सभ्यता और संस्कृति की ज्योति को और प्रकाशित करने वाली हैं। ऐसी कथाओं में बिनाणी रो डाढो, अकल मगोरा उपजै, निरमोही, करडो वैरा मूळ मैं सोवै, रूठानो, भोळावण, नागरो नमूनो, एक घर घणियाप दोयारो, चोर अर नाग्गु,

1. "बरस गांठ" कहानी संग्रह
2. "घरर घूनरी" तथा 'मठ वाली गळी' — कहानी-संग्रह
3. मूलचन्द प्राणेश, राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर

कात्यो पींज्यो कपास, कूड रा पग। जे कोई जाणै बोल, भरम, आळिया-गळिया, हिव्वो लुढी, मन री साख, दोनू घर वसिया कथाएँ नीरस हैं जो मनोरंजन प्रदान करने के उद्देश्य में भी असफल हैं। जैसे नै तैसो, ठीकरी घडो फोडै, सेर नै सवा सेर, अकल वडी कै भैंस, मूरखा रै विना सींग हुवै, ज्यांन ऊवरी लाखा पाया, अकल सरीरा ऊपजै, कोठै री होठै आया रहै, चोर रै मन मे चानणो, साच नै आच नहीं, परतख नै प्रमाण काई, कच्चा कुंभार गधै चढै, विष नै विष काटै, राया रा भाव रातै गयो, उलटो चोर कोटवाळ नै डटै, जो जाकै मन भावै इत्यादि कथाएँ लोकोक्तियो और मुहावरो पर आधारित होकर अत्यन्त ही रोचक बन पडी हैं। देख मरद री फेरी और कात्यो पींज्यो कपास कथाओ मे उपमाओ तथा कविताओ की दिव्य सुषमा विकीर्ण हैं। राजस्थानी तथा उर्दू के शब्दो का यथोचित मात्रा मे प्रयोग सराहनीय रहा है—उवेरा, जेहडा, जोईजै, भोगना, पाळखेट, समा-जोगरी, धिकाव अडोदडी, इवत, निरवाळा, पैंडै, तिकेरै, नितार, मुडचो, वेलीताप चौकार्यो, अमकेदो, वख, अछूगाळ उरादै, पधराई, व्यावतार, अमानत, तजवीज इत्यादि। सुन्दर मुहावरो ने भाषा-सौन्दर्य मे वृद्धि की है—फाकी मे आग्या, मन री मन मे रैयगी, काळ करग्यो गैल छूटगी कात्यो पींज्यो कपास हुए ज्यासी, माजनै मे धूड न्हाख'र काढियो हाको वाको रैयग्यो कानारा किवाड खुलग्या, पग चिपग्या, छव दात-मूडो पोलो हुयग्यो हाड मु धुण नाख्या, नख माय सू मैल काढै, ओटाल पडग्या, ज्यान मे ज्यान आई, डेरा कूच किया इत्यादि। सवाद-प्रधान सुन्दर भाषा-शैली का उदाहरण भी द्रष्टव्य है—[1]

"स्याळियो बोल्यो—उडण भखणी।
स्याळणी कह्यो—क्यो गडा-तोड ?
स्याळियै पूछ्यो—वाघसिंघजी कणे गैवै ?
स्याळणी उथळो दियो—सिंघाणे मास खावै।
स्याळियै धाक मारी—राड ! हणै तो एक लाय'र पटक्यो हुतो। इतरी ताळ मे खूटग्यो ?"

छव दात मूडो पोलो हुयग्यो, गटका कर लिया तथा दीर्घ सोन मे पडग्यो मुहावरो की पूरी पुस्तक मे कई वार आवृत्ति हुई है। कई स्थानो पर तो लेखक ने हिन्दी के पूरे के पूरे वाक्य ही रख दिए हैं जैसे—"मरता क्या नहीं करता" "बुराई छुप नहीं सकती" इत्यादि। 'ष' और 'श' के प्रयोग कई स्थलो पर मिलते हैं। स्वर्ग, नमस्कार, प्रणाम, सुप्रसन्न, तीव्र, दीर्घ, वृद्ध, चरित्र इत्यादि शब्दो के स्थान पर राजस्थानी शब्दो के प्रयोग मे लेखक असफल रहा है। "विनाण रो टाटो" की स्वाभाविकता, "कनो वैण मूळ नै खोवै" मे मौलिकता का अभाव "छळावो" मे स्वाभाविकता का स्थान नहीं रखना, 'वणिक् बुद्ध" मे अनहोने तथ्यो का प्रयोग,

1 हिवै तणो उजास लेखक मूलचन्द 'प्राणेश' पृ स १६

"भोळावरण" मे स्वाभाविकता की उपेक्षा तथा "धरमराजजी अर वाणियँ रो बेटो" मे विलक्षण तत्त्व का समावेश—कहानीकार की बडी त्रुटियाँ रही है।

दांत कथावां ¹

समीक्षा—बीस पृष्ठीय पुस्तक मे 21 लघु लोक-कथाओ की सामग्री निहित है। इनमे रावळा मे पोल, भणिया-गुणिया, जद म्हैं जाण्यो, भो थोडो-आडो घणो, मठ मे बैठी मठन्का करचा, पूठियो फाट जासी, लेगू पूरा साठ, हराम हप, हेहोडा इत्यादि कथाएँ अत्यन्त ही हास्यवर्धक एव मनोरजक हैं गुळ दिया मरे उण ने , घोर न बूझ कोय, चूकण वाळो चूको, धूघू सू घरवास, मठ मे बैठी मठन्का करचा, जोसी नैं जोर चोईनी, वटैई दावो'र वठैई गाय, बोई कवाडो'र बोई टाटो, देख वदा री फेरी आदि कथाएँ कहावतो के शीर्षको से अलकृत है। सभी कथाएँ लघु कलेवर की होने के कारण बाल-कथाओ की श्रेणी मे ही रखी जा सकती है। भाषा मे सरलता, प्रवाहमयता रोचकता होने के कारण पाठको मे उकतावट नही हो पाती—

"एक गोरो हो। वो एक जाट री ढाणी मे पुगो। जाट री लुगाई उण री बोली में नी समझी, जद वा जाण्यो, ओ भूको है ईण ने रोटी जिमादू. पछै वा जाण्यो, ईण री जात-पात रो ठापा नै ठा कोनी। ईण नै बाजरी रा सोगरा माथै राबडी घाल दूं। वा बाजरी रा सोगरा माथै राबडी घाल'र एक कुलडी पाणी रो भर'र उण ने दे दियो। गोरो बैठो बैठो सोगरा माथै सू राबडी चाटली। सोगरो उण ने न तो दीठोडो हो, अर न खादोडो। वो जाण्यो-आ पलेट है। गोरो सोगरा ने धोय'र भीत रै पाखती ऊभो कर दीनो।"²

भोळो भाभी, भोळो भोल, जेटै री ग्यान, पलेट कथायें अत्यन्त मनोरंजन प्रदान करने वाली है। कई कथाओ मे कुछ अजीब और अस्वाभाविक तथ्य प्रकट हुए हैं जैसे—अग्रेज द्वारा राबडी डाली हुई रोटी को सोनी मिट्टी की सफेद प्लेट समझकर जाटनी के घर से भूखा ही चला जाना। ³

बरजूडी रो तप ⁴

समीक्षा—चौंतीस पृष्ठो मे छपी इस पुस्तक मे ८ लोककथायें है। अन्तिम लोककथा के नाम पर ही इस पुस्तक का नामकरण "बरजूडी रो तप" किया गया है। चोर कुण, कासमल कुंण, चाटै नैं लेगी बुगा कथायें हसी के फव्वारे छुडाने वाली है। दूध किण रो, राजस्थान, राज मे पोल, कान मे एक रा कथाएँ भी

1. लेखक-देवकिसन राजपुरोहित, १९७१ ई. मे प्रकाशित।
2. दात कथावा पृष्ठ न ७
3. दात कथावां पलेट कहानी, पृ, न, ७
4. लेखक—देवकिसन राजपुरोहित, १९६९ ई. मे प्रकाशित।

मनोरंजक तथ्य से अलग नहीं हैं। सभी कथाओं में श्रेष्ठ एवं शिक्षाप्रद कथा "बरजूड़ी रो तप" ही है। सभी लोककथाएँ लघु कलेवर में होने के कारण बालोपयोगी ही अधिक हैं। लेखक की भाषा पर नागौरी बोली का प्रभाव तो अधिक है ही परन्तु साथ में सरलता एवं हास्यात्मकता का समावेश भी। पुस्तक में राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों का ही अधिक प्रयोग है। संवादों की अल्पता है।

राजस्थानी लोकगाथा[1]

समीक्षा —एक सौ छियालीस पृष्ठों वाली इस पुस्तक में दस लोककथाओं को स्थान दिया गया है। "खींवो बीजो" में दो बेजोड़ ठाकुरों के शौर्य एवं चातुर्य, "प्रीत री रीत" में प्रेम की अनन्यता तथा मातृभूमि के प्रति निष्ठा, "चौबोली" में चौबोली के मौनव्रत को भंग करना, "भाग में लिखी जो मिली" में दैव-शक्ति की प्रधानता, "सत री पारख" में स्त्री के शील और सत्य की परीक्षा, "भूता री भूतणी" में कर्कशा स्त्री के उग्र स्वभाव, "खोटा रो फळ खोटो" में बुरे कार्यों के दुष्परिणाम, "करी पण कर नी जाणी" में दक्षता की कमी "खापरियो चोर" में अत्यधिक पटुता और "नाग-कन्या" में अटूट मैत्री की झलक इत्यादि तथ्य पढने को मिलते हैं। कथाओं में संवादों को भी यत्र-तत्र स्थान दिया गया है। आलंकारिक-सौन्दर्य एवं मुहावरों-कहावतों का प्रयोग भी यथा स्थान किया गया है- नाहर बकरी एक घाट पाणी पीवै, जोबण छकी मीणलदे काला नाग ज्यूं अलेटा खावा लागी, जाणे बिच्छू डंक मारै, अठीनै पडै तो कूवो बठी नै पडै तो खाडो, पाबासर री हंसणी ज्यूं हालती, ओढो तो बिना पाणी री माछली ज्यूं तडफवा लागो, केसूला फूल रिया जाणै काकड में बासदी लागी, पांणी पाणी व्है जावती, बाड खेत नै खावा लागगी आखिया में जैर भरियो काटो कांटो सूं नीसरै, आखिया तावा जैडी रानी, दोई कंवर चाद री कला री नाई बध रिया। लघु वाक्यावलि में पूर्ण भाषा तथा अन्यान्य स्थानों पर पद्यांशों का प्रयोग भी मिलता है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों का प्रयोग लेखिका ने पर्याप्त रूप में किया है—चोखळै, चळू, बम्पोई, अमो, अठीला, बळता, पासग थेगे-थेगे, नटाटूट, बीभळिया, हरेला, दाग, माजना, एकणदम, आट, कजाणा, नेपुत्तग्यिा, अगयायगी, अरदास मरभग, म्हो, पृठगी, एट्नाग, ढर्नाक, अबेळा, बुरीगारो, मीतमीत, खाडीर्नी, अचपळाई, गारळ-गावट। कुछ संस्कृत और उर्दू के शब्दों का प्रयोग मिलता है—आदश, आयुष्मान, गारत, रगामाती आदि। रीधी, ग्गमतो, बीनै, बम्पोई, बठीला, बगे, अठीना, रळता, हैला, बाहियो इत्यादि शब्दों के प्रयोग से लेखिका पर मेवाडी बोली का प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई देता है। मारवाडी बोली का प्रयोग कर आंचलिकता के दोष से दूर रहने का प्रयास भी लेखिका का रहा है।

---

1 लेखिका—नर्मदाकुमारी प्रकाशन, १९६६ ई० में प्रकाशित।

"खोटा रो फल खोटो" तथा "नागकन्या" में अतिमानवीय तत्त्वों की भरमार रही है। जैसे—भूतों द्वारा नाई को मारना, राजकुमार का नागकन्या के साथ विवाह करना, मृत राजकुमार को मित्रों द्वारा जीवित करना आदि।

कैरे चकवा बात[1]

समीक्षा —एक सौ चौंसठ पृष्ठीय इस संग्रह में सोलह कथाएँ हैं। समय समय में प्रचलित अन्धविश्वासों, बुरी प्रथाओं तथा रूढ़ियों एवं विशेषताओं का उल्लेख इन लोककथाओं में मिलता है। जैसे "पदमसिंघजी री वात" तथा "अनोखा कंवरजी" में वशीकरण, भस्म और जादू के डंडे का उल्लेख। "लाखो फूलाणी" में राखायच अपने बाप का प्रतिशोध लेता है तो "चातर नार" में ठगों का बोलबाला है। ये इस युग विशेष की विशेषताएँ रही हैं। अकल री पोसाक, खापरियो चोर, चातर नार, अकल बादर तथा अकलबंद सेठाणी कथाएँ कौशल तथा चातुर्य से भरी होने के कारण जिज्ञासाप्रद भी हैं। खोटा रो फळ खोटो, मरत्युफळ के अमरतफळ, मांवते असर कथायें शिक्षाप्रद के साथ साथ जन-जीवनोपयोगी भी हैं। जग जैता जगमाल, पदमसिंघजी री वात, लाखो फूलाणी तथा हरामखोर री मूछ्यों कथाएँ साहस-पूर्ण तथ्यों के साथ प्रकट हुई हैं। पलक दरियाव, अनोखा कंवरजी और रुद्र-मालो सिंदर कथाएँ अलौकिक एवं अतिमानवीय तत्त्वों से पूर्ण हैं। "बुढाय बावळी" में संयोग का प्रभाव बताया गया है। लघु वाक्यावलिपूर्ण सरस और सरल भाषा के प्रयोग का उदाहरण—

"जनाना में मा सूं मिलण ने गियो। मा बेटा ने छाती सूं लगायो। मूंडा पे हाथ फेरियो। मा बेटा रा सगीर हरख री वरखा सूं भीज गिया। जीमाया चूंटाया। वातचीत वतळावण कीधो। कंवराणी सूं मिलिया। राग रंग किया, हंसिया, खेलिया, पोढिया। भाभरके वेगा ऊठ आपरे घरे आय गियो।"[2]

मुहावरे, कहावतें एवं आलंकारिक-सौष्ठव भी पुस्तक में निहित है—चाक व्हे गिया, गुळ टा गावे, गाडरा ज्यूं भागता, गावड टळकाय दीधी, हाथा बांधे दामटा कीने दोजे दोन, जाणे वा रे पांखड़ा आय गिया व्हे, चोर चोरी सूं गै पण हेराफेरी नी करै, दाळ में काळो, काना ही नी दीधो, विछाणो काटा ज्यूं लागै, फोत व्हे गिया, वाग वाग व्हे गिया, दूध रो दाझियो फूंक फूंक ने छाछ पीवे।

संवादों का समावेश भी कथाओं में प्रचुर मात्रा में हुआ है। राजस्थानी के शब्दों के साथ साथ यथोचित मात्रा में उर्दू और संस्कृत के शब्दों का प्रयोग भी किया गया है—एकल, हाले, खवास, नाळेर, ओळूं, रावी, छैट, जरी, गुळल, धावळ्या, नीठा, सागता, माठा, चीगत, मोरो। उर्दू शब्द—मुजरो, हकीकत, नजर, धोनिवाज, आजाद, हरामखोर, नफरत, काबिल, औलाद, तारीफ, गलती, महफिल।

1. लेखिका—लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, १९६६ में प्रकाशित।
2. कैरे चकवा बात: कहानी—"पलक दरियाव" पृ. सं. ८५

आभूषण, मनोरथ, प्रण, अनुमान गति, परीक्षा, वनस्पति, रूप, आनन्द और वुद्धि।

कहानियाँ प्राय रात्रि मे ही कही-सुनी जाती रही हैं। चकवा एक पक्षी विशेष है जो रात्रि में चकवी से मिलकर बातें करता है। इसी प्रसग को ध्यान मे रखते हुए लेखिका ने पुस्तक का शीर्षक "कै रे चकवा वात" रखा है जो उचित है।

"हरामखोर री मू डकी" कहानी लेखिका की 'राजा भोज री पन्दरवी विद्या" कहानी की आवृत्ति मात्र है। "पलक दरियाव" तथा 'खुदाय बावली" शीर्षको का कथाओ की घटनाओ से कोई विशेप सम्बन्ध नही है। "रुद्रमाळो मिंदर" तथा "अकल बादर" कथाएँ नीरस एव निरर्थक बन पडी हैं। "खुदाय बावली" मे मुल्लाओ की भाषा को पूर्णत उर्दू बनाने मे लेखिका असफल रही है। सभी कथाओ मे कुछ न कुछ अलौकिक तथा अति-मानवीय तत्त्व आये है जो कहानियो की स्वाभाविकता पर प्रहार करते हैं—'लाखो फूलाणी" मे लाखोजी का का अपने भानजे राखायच को अप्सराओ से मिलाना, 'हरामखोर की मू डकी" मे राजा द्वारा सीखी विद्या के द्वारा तोते के शरीर मे तथा नाई द्वारा राजा के शव मे प्रवेश, "पलक दरियाव" मे देवदास की आत्मा का रानी के गर्भ मे चला जाना, रहस्य प्रकट करने पर देवदास का मरना, "खापरियो चोर" मे प्रकट देवी को प्रश्न पूछना, "रुद्रमालो मिन्दर" मे धरती मे सोने का कलश और मन्दिर का प्रकट होना, खापरिया चोर तथा देवताओ की बातचीत, "जग कैता जगमाळ" मे भूतो द्वारा तेजसी की कन्या को लाकर जगमाल के साथ शादी करना।

रानीजी की पुस्तक "माझल रात" मे भी 'लालजी पेमजी" लोककथा के दर्शन हो जाते हैं। इसमे दो अत्यन्त ही चतुर चोरो की गाथा है। लालजी और पेमजी चोर अपना मूल्याकन आपसी कार्यो से ही कर लेते हैं। रानीजी की एक अन्य लोककथा कृति [1] का भी उल्लेख मिलता है परन्तु उसमे निहित कथाएँ उनके पूर्व प्रकाशित सग्रहो मे समाविष्ट हो चुकी है अत उनका उल्लेख यहाँ पिष्टपेषण मात्र ही होगा।

'वाताँ री फुलवाड़ी भाग 1"[2]

समीक्षा.—चार सौ अडतीस पृष्ठो मे आबद्ध पुस्तक मे छिहत्तर लोककथायें हैं। लेखक ने सुनी-सुनाई बातो को लिपिबद्ध किया है। ऐसा स्वय लेखक ने कहा है— 'अे सगळी वाता म्हे म्हारै गाव बोरुदा मू ई भेळी करी हू। लोकगीता री भात आ लोकवाता रो खजानो ई लुगाया कनै अखूट लाधै। खुद सुणिया विना म्हैं किणी वात ने लिखावट रो रूप नी दियो।" [3]

1　सोरठ बीजा री बात ले० लक्ष्मीकुमारी चूडावत

2　ले विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, बोरुदा

3　'बाता री फुलवाडी भाग १" के "दो आखर" शीर्षक पृष्ठ का अन्तिम अनुच्छेद।

आगे पृष्ठ से लेकर ५८-७५ पृष्ठों में बद्ध कथाएँ भी हैं। साची वारता, ऊमर री, परखाणी, ओ ई धन लाली रै लेखै कथाएँ अत्यन्त बड़ी बड़ी हैं! इरड़ भु सदा हीं, एक दो नाव काळियै ना लेई, बारहठजी आळी आगळी, पागड़ो नै भेंस लायगी, घोटी अर पीवो, घडलिया भरै थारो बाप, मुदा लेग्यो मोड उतार, चोर हेरा फेरी मूं ई गियो, म्हैं पड़ा चूल्हा में, मियाजी री फारसी, धान री तोळियो, वाणिया वाळी मूंछ, लोटी कठै, भली करी रै वाणिया, अठै तिसी पोन देगी मो नै लेग्यो पजी तथा ले तो जा कथाएँ हास्यात्मक शीर्षकों से युक्त कथाएँ हैं। आकर्षक शीर्षकों से युक्त ये कथाएँ बड़ी मनोरंजक और सरस बन पड़ी हैं—ठाकर री आसरण, दो वेरा करिया दोसै, वाणिया नै टाबर को दिया नी, भावी री सपनो, नाई वाळी ठोलियो, सुणी पण साभळी कोनी, मूंछ मूंछ री फरक, जवाई वाळो कागद, खोटी खरी परखायलो, सौ रा भाई साठ, हाथ कमाया कामडा, जट विद्या कोनी आवै, जूठा री सिरदार, मटस्यू तो हू नटस्यू, लखणा बायरी मा, समझो रै बीरा समझी, राया रा भात रातै ई गिया, आवता अर जावता, ओ तो मारग ई खोटो, आ तो गेल ई भूंडी, तरवार गमगी, ब्याव रा नवा फेरा, पछै ये कैंटा दीस्या, घडी लगायदू तेजा ही, सूवा अर सूवा ई कोनी, बापडो चौर कित्तो स्याणो हो, अमलदारा री बावडी, लावा लावा सींगडा, अै वाता बवार री। बुद्धि-बल पर आधारित भी कुछ कथाएँ हैं—चौधरण री चतराई, मींया री उपज, साधू री कमाई, बोली बोली री फरक, राईका वाळी परख, वाणिया री गरू, मावचेती, चाद सूरज री साख, मैंणत सार तथा अै वाता बवार री। कई कथाएँ भावों की दृष्टि से भले ही सरस और सुन्दर नहीं हो सकी हैं परन्तु भाषा की दृष्टि से स्तुत्य हैं—निनैदान्तो, साचो आधो साचो, नाई नै राजो रग्गो, भांगी आळी भैंस, गाडेल री परताप, टोनी री पोडी, भावी भाग, ठाकर री नियाम, चारण री कोथळियो, बाबा री फकर, शिव री मवाद भूत री रटोणी, वाणिया री निजराणो, राजा री सोगन, कजडा नपो कुलडी वाळी चीटिया, वाणिया री चाकर।

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दों के आधिक्य, आलंकारिक वाता-वलि, कहावतों-मुहावरों के प्रयोग, उर्दू और संस्कृत के शब्दों के यथास्थान प्रयोग ने पुस्तक की शोभा में वृद्धि की है।

"नगाई वाळो राग" "लोटी कठै" जैसी प्रकाशित लोककथाओं का चयन करना पाठकों मात्र ही कहा जा सकता है।" साची वारता" तथा "कुनणी रटोणी" जैसी कथाओं में अस्वाभाविक एवं विलक्षण घटनाओं को स्थान देकर कथाओं की मनोरमता को नष्ट करने का प्रयास किया है। 'अमलदारा री बावडी' तथा 'साची वारता" कथाओं में घटनाओं को स्थान देना निरर्थक है। कई नै सार्थक फळो, गाडेल रो परताप, टोनी री पोडी, वाणिया री गैर, भावी भाव, ठाकर

रो चित्राम इत्यादि नीरस कथाओ को स्थान देना अनुचित है। आधे पृष्ठ से दो पृष्ठो मे सीमित कथाओ को लघु वातो की श्रेणी मे रखा जाना चाहिए। कथाओ के भावो मे तो मौलिकता अत्यल्प है परन्तु भाषा मे मनोरमता अधिक। अधिकाश कथाएँ ठाकुरो, जाटो, ब्राह्मणो एव निम्न जातियो से सम्बन्धित है, इससे लेखक की सकीर्ण मनोवृत्ति की झलक मिलती है।

बाता री फुलवाड़ी भाग 2 [1]

समीक्षा —चार सौ अट्ठावन पृष्ठो से युक्त सग्रह मे कुल तिहत्तर कथायें है। सभी लोक-प्रचलित सुनी-सुनाई कथाएँ है। आधे पृष्ठ से लेकर तिहत्तर पृष्ठो तक की कथाएँ इसमे निहित हैं। अकल सरीरा ऊपजै (तीस), अब छाछ को सोच कहा करि हैं (तयालीस) तथा इस्टूखा (तिहत्तर) पृष्ठो मे बद्ध बडी बडी कथाएँ है। दो चार कथाओ को छोड शेष सभी पक्षियो, पशुओ तथा अन्य जीव-जन्तुओ से सम्बन्धित हैं। अकल सरीरां ऊपजै, स्याळ री अक्ल अर सिंघ रो ईवळ, स्याळणी री अटकल, स्याळ रो न्याव, अकल उजागर एक स्याळ री, एक स्याळ री कुटळाई, रगियोडो स्याळ, अकल री उजास, अकल उजागर एक मीडका री, अकल उजागर एक सुमिया री, मौका री उपज, लालच रा पगलिया, अकल उजागर एक नाई री, हाथी सू बदळो, मौका मौका री वात, कबूतरा रो सिरदार, मिणियारा री अटकल, खवोचिया रो मीडकौ, छोटे मूडै मोटी वात, बोली बोली रो फरक, कीडी री करामात, घमडो री नीची धुण, लाठा रो न्याव, भलाई एळी नी जावै, पान अर ढगळो तथा एक चिडी री अटकल कथायें ज्ञान तथा प्रेरणाप्रद हैं। कुण छोटो कुण मोटो, कमेडी आळी कोडी, स्याळ रो मुकातो, कामां जीण रा धामा, भावै ई अगूर खटा, जवानी री भूख, चक्को मक्को ने हम साव आदि कथाएँ आधे पृष्ठ से लेकर एक पृष्ठ तक सीमित होने के कारण बोर भी नही करती है। म्हैं जीऊ हू म्है जागू हू, लेग्या दीय नै लाऊ च्यार, चल मेरी ढेमकी ढमाक ढम, जू जू मिथ जावै, बाधी कुरज छुडाई म्हारा वीर, आऊ ए आऊ आवलिया गटकाऊ खाऊ चिडी री चाच, म्हनै क्यू काढीजी क्यू काढी, कूकडलो नी मरणो चावै, म्हैं हू मठवा मू ठ, चावळा चू प्यां गुळ मू नीप्यो, थू ई करी काई गैती, बाई डावी फडफडावू के जीमणी, ऊदरो पूछ गमाई पण गा ी लायो, मायड रो पग गळग्यो आगै गणावळद खाडियो, कागा काणा अर सूनियो बावळ, उजली पागा हन कोयल मधरी वाणी, चरका फरका पेर पन्मो, भाय थोडी माडो घणो, अब छाछ को को सोच कहा करि है इत्यादि कहानिया के शीर्षक बडे आकर्षक है। सेराजी नागतियो उनर भीखा म्हारी बारी, गावण री परमाद कमेडी अर गरप, गुमामद री मिठास, नारलो सिंघ, केदार री कारण, सोनै रुपै रो चातरो,

---

1 ले० विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, बोरूदा

वीर थू ई थू, म्हैं वैर लेवा वालो, मवीड वाळो ढोल, लकू बादरो, थू म्हनै मारी, अचपळी ऊ दरी, कुटळाई रा माटणा, गगाराम स्याळियो, नेखोजी उमराव कथाएं भाषा की दृष्टि से बड़ी सुन्दर एव सरस है। स्थान स्थान पर प्रयुक्त आलकारिक-शैली, कहावतो, मुहावरो तथा राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग ने पुस्तक की शोभा बढाई है।

अधिकाश कथायें सस्कृत के पचतत्र एव हितोपदेश की ही नकल मात्र हैं। भावो मे मौलिकता की कमी है। कुछ कथाओ के शीर्षक हास्यप्रद होते हुए भी विषय-वस्तु हास्य से दूर रही है। 'इन्द्रया" कथा [1] इसका उदाहरण है। कई कथाओ मे लेखक को सरसता, आकर्षण, सुन्दरता एव रोचकता लाने मे असफलता ही मिल सकी है।

"वातां री फुलवाड़ी भाग 3" [2]

समीक्षा —चार सौ छियालीस पृष्ठीय इस सग्रह मे तेरह कथाएँ हैं। इनमे "सोनलवाई" और चर बोलै" उत्कृष्ट और मनोरजक कथाएँ हैं। तिणकलियै घर बोयो, म्हे गळो वढावं, सटक नदी रे आधना, सूना री पाळ जिणै, वा ताळ कोनी सजी, रावळा तल पल्ला मे लीजै आदि कथाएँ आकर्षक और सुन्दर शीर्षको से सजी हुई है। सभी कथाओ मे लेखक का भाषागत-सौन्दर्य सराहनीय है। बेजोड कहावतो, मुहावरो तथा अलकारो के सगम का क्या कहना ? उर्दू सस्कृत के शब्दो को अत्यल्प स्थान देना और सुनी-सुनाई वातो को राजस्थानी भाषा मे बद्ध करना— ये लेखक की दूरदर्शिता, दक्षता और विद्वता का परिचायक है।

"बाता री मरजादा" कहानी को नृसिंह राजपुरोहित ने "रातो वा रा टा री आवर" [3] नाम से प्रकाशित कराई है अत भावो की दृष्टि से इन कथाओ मे मौलिकता की कमी है। कई कथाए लघु वातो की श्रेणी मे ही आती है जैसे राजीजी आळो कुत्तो, गावी री बेगार, वा ताळ कोनी सजी इत्यादि। म्हे गळो वटावं तथा वाजरी लेनी के आदो कथाओ मे अस्वाभाविक तथा अनैतिक तत्त्वो को प्रवेश कराया गया है। "जीभ री रस झरै" कथा का प्रसग उत्कृष्ट नहीं है।

"वातां री फुलवाडी भाग 4" [4]

समीक्षा —चार सौ चौतीस पृष्ठीय इस भाग मे चवालीस लोककथाएं सगृहीत हैं। आमा असमन्धन, बेमाता रा लेख, न्यारा न्यारा गुण, राळ रो माग

---

1 वाता री फुलवाडी भाग 2 से उद्धृत, ले० विजयदान देथा।

2. ले० विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, बोरूदा

3. अमर प्र लटी नृसिंह राजपुरोहित

4. ले० विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, बोरूदा

ऊमर रौ लेखो, माया री मरजादा, निन्नाणू री मार, वाणिया री चतराई, सपत मे लिछमी रौ वासो, विस्वास रौ वळ, कळजुग रौ धरम, धन री लीला, करमा हदा फळ कथायें प्रेरणाप्रद और बडी मनोरजक हैं। इनमे आशा, सुख, माया, चिन्ता, आयु, चतुराई, धन, विश्वास, वर्म तथा कलियुगी धर्म इत्यादि वातो पर गहरा प्रकाश डाला गया है। थनै कह्यौ जको म्हनै ई कह्यौ, पुटियौ राजा, अकल रौ वोझ, भलाई ऐळी नी जावै, पावू करै ज्गे ई कोनी, माऊ रौ मिजाज, घी माग्या माथै फूटै, कठै ई नी गिया, रिपिया गोडै रिपियौ आवै, समझावण समझावण मे फरक, ताकडी रौ पग्चौ, धन री जड सदा हरी, पूछ आळी मादगी कथाएँ सुन्दर और आकर्पक शीर्षकों से विभूपित हैं। व्हेरा री परख, नवौ जलम, मूजी सूरमौ, लिछमी रौ पुजारी, वाणिया रौ वदळौ, वाणिया री निवतौ तथा धन री फटकार उत्कृष्ट कथाओ की श्रेणी मे रखी जा सकती हैं। इनमे हास्य के साथ साथ गम्भीर भावो की सृष्टि भी की गई है। लेखक की शब्द-निर्माण-कला का वोध भी इन कथाओ मे होता है। मुहावरो, कहावतो तथा उपमाओ की त्रिवेणी का सगम भी इनमे मिलता है। भापा-सहिष्णुता को ध्यान मे रखते हुए लेखक ने उर्दू एव सस्कृत के कुछ ही शब्दो का प्रयोग किया है।

'वेमाता रा लेख" मे अलौकिक तत्त्वो की भरमार, "ठाकर री रूसणौ" तथा "वाणिया री पाडौस" कथाओ मे जाति-विशेप पर व्यग्य-प्रहार करना अनुपयुक्त है। जैसे—

"मारवाड रा करसा वास्तै जमदूता विचै ई इदक लेणायत तीन जणा है—एक तौ गाव री ठाकर, दूजौ वाणियौ नै तीजौ काळ। [1]"

"ठाकर री रूसणौ" मे छोटी छोटी वात पर ठाकुर का नाराज होना, वेहूदी वातें करना और वाद मे गाँव के चौधरी द्वारा झूठी वातें कहलवा कर ठाकुर की नाराजगी की समाप्ति करना—ये सभी वातें विल्कुल अस्वाभाविक है। कई कथायें वालोपयोगी हैं तो कई अत्यन्त ही नीरस।

"वातां री फुलवाडी भाग 5" [2]

समीक्षा —तीन सौ पिचहत्तर पृष्ठीय इस भाग मे तेतीस लोककथाओ का सकलन है। वगनवे पृष्ठो वाली "मिनख जमारौ" मे धन के अभाव, चौतीस पृष्ठो वाली "अमोलक खजानौ" कथा मे एक विमूढ राजा की दुविधा तथा चौदह पृष्ठो से युक्त कथा "नू पडी री ग्यान" मे ज्ञान के निवास की जानकारी मिलती

---

1 वाता री फुलवाडी भाग ४, पृ स २८०

2 ले० विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, वोरून्दा

है। राम गाराज री सीख (छप्पन पृष्ठ की कथा) श्रा माया कामणगारी, सीख री दान, निछमी रा चाळा, श्राप सुखी तो जगत सुखी, दुनिया रो टाळो, समझ री भरम तथा गोरै मो पड़ै कथायें माया और लक्ष्मी के छल-पूर्ण व्यवहारों तथा दुनिया के विचित्र स्वभाव आदि के बारे में ज्ञान प्रदान करती हैं। अड़तालीस पृष्ठीय कथा "सपना री परी" और "साची भगती" कथायें पौराणिक एवं अलौकिक तत्वों से पूर्ण होते हुए भी शिक्षाप्रद हैं। रात नै सतावै दीसै, कोई वरतियो समझा होसी, किणी री रातो बळती व्हेळा, गीवैळा तो घरै गिया, कारजी श्रटो मे, कोई रम री बात सुणी रे, कोई लुगाई वणी तो रोवनो ढबू, हू रे हू, होडा होड री रग तथा कोडी साटै हाथी कहानियों के शीर्षक बड़े श्राकर्षक, सुन्दर एवं रोचक हैं। मनोरंजन में कोई कमी नहीं पड़ती है।" हंसी री स्यानी" तथा "श्री बगत श्रमोलक" कथाओं में हंसी के प्रयोजन और समय के मूल्य पर गहरा प्रकाश डाला गया है। भाषा पर लेखक का पूर्ण अधिकार है।

बेटा री मरवट, सुदा री सिखावण, सावरा ऐ श्रद्भुत लोग, दुनिया री टाळो, समझ री डड, श्राप श्राप री सुभाव, श्राधा री श्रोर, समझ री भरम, भिखमा री चुकारो तथा परोतिया कथाएं पुस्तक के आकार को ही बढ़ाने वाली हैं। इनमें हास्यात्मकता तो है परन्तु जिज्ञासा, मनोरंजन एवं सरसता की कमी है। "साची भगती" और 'सपना री परी' में अलौकिकता के आधिक्य और "सिमरू जमारो" "राम गाराज री सीख" इत्यादि कथाओं में अनावश्यक विस्तार पाठकों की जिज्ञासा और उनके मनोरंजन में बाधक है। कई लोककथायें शिक्षा या प्रेरणा, मनोरंजन तथा लक्ष्य से च्युत होकर पाठकों के लिए नीरस बन पड़ी हैं।

"बातां री फुलवाड़ी भाग ४"[1]

समीक्षा —तीन सौ नब्बे पृष्ठों वाले इस भाग में बारह रचनायें हैं। 'दूसरी कमी' में नारी के मान को रस समझना "नाग री म्यानी" में नाग-परिवर्तन का प्रयास "पाप री बाप" में लोभ का प्रभाव, "फेफरा पग" में साहस और सत्ता की परीक्षा, 'राठ री हूंस" में हंस का चमत्कार, रूपा री राजरखी" तथा "आदमी राजकुंवर" में धर्म-सहिष्णुता की शक्ति "नौबोली" में मान-दान का चातुर्य से भंग होना, 'सोना री जोरमा" तथा "मधा रै मोळिये" में अतिमानवीय तत्वों का समावेश और "आलनराम" में राजकुमार आत्मरक्षा की योग्यता एवं निपुणता—इन तथ्यों का बोध होता है। अधिकांश कथाओं में या तो देश-निकाला दिया गया है या दण्ड का प्रयोग करने पर देश-त्याग किया गया है। घर से बाहर निकलने पर प्रायः प्रकृति के साथ ही वाटिका पर से प्रवेश हुआ है—ये लोककथाएँ

---

1. ले० विजयदान देथा, रूपायन संस्थान, बोरूंदा

यही प्रेरणा देती हैं। "ग्रामकरण" ग्रौर "योगा रो जीमण" मे दैत्य के रूप-वर्णन मे लेखक ने अपनी समस्त कला दिखाई है।

लेखक निराला की भाति शब्दो का निर्माता भी है—राभी, दपूचा, नोज, पडपणो, ची दिा, नीवकीजगी शिखर, फाचरै, वागोलै ग्राफळ, हळवळ, हावगाव, ठागो, ग्राहजी, नाळाछोड, छोगो इत्यादि। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ उर्दू ग्रौर सस्कृत-शब्दो के किचित् प्रयोग को देखिए—

राजस्थानी शब्द—ग्रोडो, ग्रोळावो, कणाकलो, ग्रगई, काठै, चोवटै, वत्ता, कोगत, सिरैपीत, नेगम, सावळ, सेठी, गोडै, खाथो, मोवी निदरोही, सखरी, नितोपपणो, सरतो, नेठाव, मतेई।

उर्दू ग्रौर सस्कृत के शब्द—उपरान्त, पारगत मोहित, साप्रत, तथास्तु, ग्रभ्यागत, जिज्ञासा, मूढता, जवाव, उम्मीदवार इत्यादि।

मुहावरो, लोकोक्तियो तथा ग्रलकारो का सौष्ठव ग्रनुपम वन पडा है—राखपत रखापत, तरळा तोड्या, गाती ग्रायग्यो, हरडै काढ़ दै, जाफ ग्रायगी, तडफा तोडतो, हेम पटग्यो, ग्राव सोच्यो नी ताव, कुठोड पीड ग्रर सुसरोजी वैद, पगा रा काटा जीभ मे खडकै, पाणी ई उतग्यो, राभो पजग्यो, दिन गुडण लागा, एक पथ दोय काज, दूधा न्हावो पूता फळो, की मीन मेख नी, मन मे हजारू मण ग्राकडा री दूध घुळग्यो, पातर जावो, मन रा लाडू खावतो, चग्डको लागो, पाणी पैला पाळ वाधणी, समदर मे रैय मगरमच्छ सू वैर नी पोमावै, धोळा मे धूड पड जावैळा, तीतक व्हियां।

सपना री कावड, पतिव्रता, धरम री मतग्रडियो महल, धणी री रू रू फण करया भुजग ज्यू फिडकली ज्यू नाचणो, ग्रामा गे सूरज, मिसरी ज्यू मीठो, वोल ग्वारा ग्राक ज्यू, मोगा गो पिलग काटा ज्यू लखावण लागो, ग्राख्या रा कोया धावडा रै गोरा ज्यू जगण लागा, गाती व्हे ज्यू, रू रू मे जाणै कवळ ग्विलग्या, मायो मान पूवो न्ह ज्यू कर दू ला, माया कांकरा ज्यू विग्वरयोडी पडी, जाणै वाग वैगो।

दृष्टान्तो के प्रयोग मे भी लेखक कुशल है—

सुग्व रा दिन ई न्हळै ग्रर दुग्व रा दिन ई ढळै, मिनख काई मोचै ग्रर काई वीतै, रूख हरियल पाना सू फूठरा लागे—सरवर पाणी सूं सुहावणो लागै—ग्रर वात हुकारा सू फूठरी लागै, पेट री खातर सिव ग्रर साप री डाटा मे ई हाथ घालणो पडै, मिनख रै मह्लाम विना लुगाई री देह माटी नं नै माटी व्हे, उगतो सूरज कद ग्रवारा रै मादै व्हे।

भाषा मे पुनरुक्तियो का प्रयोग भी स्थान स्थान पर प्रकट हुग्रा है। "गो नामतो भला दिन है" इस वाक्य की लगभग सभी कथाग्रो मे ग्रावृत्ति हुई है।

लगभग सभी कथाओं की राजकुमारियों को वस्त्रहीन कर स्नान कराया गया है। क्या वे सभी नंगी होकर नहाया करती थीं ? "नत रा'ड़िया" महल के अनेक बार प्रयोग से स्पष्ट है कि लेखक को इसके अलावा अन्य महल का कोई ज्ञान नहीं है। लीलगर री बेटी, चौबोली, थाटवी राजकुंवर, गधा रै खोळियै, आसकरण और गोगा री जीमण कथाओं के प्रारम्भ में प्रयुक्त असंगत और निरर्थक कविताओं की कोई आवश्यकता नहीं है। 'गोगा री जीमण" तथा "आसकरण" इन दोनों कथाओं के कुछ घटनांश एक-से ही हैं। जैसे-दैत्य की बेटी से भेंट, दैत्य का रूप-वर्णन बेटी के प्रेमी द्वारा दैत्य का वध, दैत्य का विशाल भोजन, बेटी को दैत्य द्वारा अपनी मौत का रहस्य बताना इत्यादि। "माणसियो गिदावै, माणसियो गिदावै" इस एक ही वाक्य की कई पृष्ठों[1] पर आवृत्ति अनुचित है। कुछ अलौकिक एवं अतिमानवीय तत्त्व कथाओं की स्वाभाविकता को ठेस पहुँचाते हैं—"फेफ रा फूल" में फेफावती रानी के हँसने से असंख्य मोतियों का पैदा होना, "काठ रो हंस" में राजकुमार द्वारा काठ के हंस पर बैठ कर उड़ना, "सपना री राजकंवरी" में मछली चींटियों की रानी, तोते और मधुमक्खियों की रानी का मानव-वाणी में बोलना, "थाटवी राजकंवर" में सर्प की फुंकार से राजकुमार का पत्थर की मूर्ति होना, परियों द्वारा राजकुमार को मक्खी बनाना, बाद में शादी करना, 'गोगा री जीमण" में किसान के बेटे के साथ दैत्य की बेटी की शादी होना, "लीलगर री बेटी" में लीलगर की बेटी का इन्द्र-सभा में जाना तथा "चौबोली" में पलंग, हार, चूनड़ी तथा दीपक का मनुष्य की वाणी में बोलना इत्यादि।

"वातां री फुलवाड़ी भाग 9" [2]

समीक्षा :—चार सौ पृष्ठों में वृद्ध इस भाग में इकतीस लोककथाएँ संकलित हैं। भावना रा मोती, इंसान री दाझ, गुणवती, बांगो म्हारो भाई, गान्हू गुवाल, विस्वास री बात, कमाई री जोग में भावना, सौतेली मा के उग्र रूप, गुणवती पत्नी की शिक्षा, भ्रातृ-प्रेम, गो-प्रेम, विश्वास, सहयोग आदि का मनोरम चित्रण मिलता है। इन कथाओं के उद्देश्य भी बड़े सुन्दर हैं। पाप-धरम, रबूटी नागो, अंठो रूप, रावण रा चाळा, नाग राजस्थान, गुणियो राजा तथा नाना नै गटकाय जाबू इत्यादि बालकथाओं में एक विशेष स्थान रखती हैं। नाहरसिंह बछराजसिंह, बेकू री दाव, मसाण री मया, राजी-खुशी, कुत्ता री सेज, रा बणो राजा और टाबर री भूत इत्यादि कथाएँ विलक्षण एवं अलौकिक तत्त्वों से पूर्ण हैं। बेकू री दाव तथा नाहरसिंह बछराजसिंह कहानियों के प्रस्तुतीकरण का ढंग बड़ा रोचक बन

---

1. वातां री फुलवाड़ी भाग ८, पृ॰ सं॰ १०४, २७५ तथा ३६२
2. सं॰ विजयदान देथा, रूपायन संस्थान, बोरूंदा

पड़ा है। अधिकांश कथाएँ अनेक शिक्षाएँ ली हुई हैं। "कमाई री जोग" तथा "मसाण री मया" जैसी कथाओं मे पशु-पक्षियो एव अन्य जीवो का मानव के उपकार का बदला चुकाने का मनोरम वर्णन है। कुछ कहानियो के शीर्षक तो रोचक हैं ही परन्तु राजी, खुसी, रक इत्यादि पात्र-पात्राओ की भी मौलिक सर्जना की गई है। अधिकांश कथाओं मे सामन्ती एव जागीरदारी-प्रथा की कुरीतियों पर तीखा प्रहार मिलता है। जैसे प्रजा को घाणी मे पीसने की धमकी देना तथा रुष्ट रानियों को खुश करने हेतु कइयो को दुख देना आदि। सुन्दरी कन्याओं का वर्णन कर उनके साथ झट से विवाह कराने मे लेखक बड़ा पारंगत है। ज्यादातर कथाओं मे ऐसा ही किया गया है। कई स्थानो पर उपदेशात्मक प्रवृत्ति का सहारा लिया गया है। रूप-वर्णन तथा रूप-परिवर्तन मे भी लेखक पटु है। एकदम किसी को कौआ, तोता, मोर, सर्प, बिल्ली, चिड़िया, मधुमक्खी, फूल और पेड़ आदि बना देना तो कथाकार का सरल काम है। कहानीकार का साधारण पात्र भी इस गुण से युक्त दिखाई देता है। जैसे "आक-धतूरो" मे योगी जाति के मनुष्य का अनेक रूपो मे दिखाई देना, 'बीरो म्हारो भाई" मे "ब्राह्मण-पुत्र का अनेक योनियो मे आना तथा "कान्ह गुवाळ" मे गायों और सांड का चिड़िया, तोता और मोर बनना इत्यादि। सक्करपारा, सोगरा, खीच, गुलगुला इत्यादि खाद्य पदार्थों का जिक्र आने से स्पष्ट है कि लेखक राजस्थानी सभ्यता एव संस्कृति से पूर्णत परिचित है।

सखरो, धकै, ठालो भवतो, गौडै, कावळ, न्हाटनै, खाथो, चूकारोळो, सागेडी, जाभरकै इत्यादि बीकानेरी एव थली के शब्दो का प्रयोग लेखक की भाषा-सहिष्णुता की नीति को प्रकट करता है। शब्द-निर्माण की कला मे तो लेखक सिद्ध-हस्त है ही—आळा-माळा तावाडतो, तिगू-मिगू, छपाक छपाक, हळफळाया, तरजन-तरजन, आमण-दूमणा डोखरावतो, पतवाणियोडी, लाळालोळा, हुचा-हुचा तथा तगत गावता। रूप-वर्णन की मनोरमता लघु वाक्यो मे युक्त भाषा मे दर्शनीय है[1]—

"एक ही विधवा मा। उण रै ही एक बेटी। फूठरी-फररी। गोरी-निछोर। पतळी। छरहरी डील। मोटी आख्या। तीखो नाक। मो:या रै उनमान धोळा दात। गुलाबी मुराया। मीठी बोली। लाबी नस।"

"ढोलै बैठना" मुहावरा लेखक की मौलिक सर्जना है जो प्राय सभी कथाओं मे प्रयुक्त है। मुहावरो, कहावनो तथा आलंकारिक छटा के दर्शन भी यत्र तत्र हो जाते हैं—मोकळ मनाई, तरळा मारती, धै छिलग्या, थावा मारता, खज करै, जादा पडण लागा, काळ, टवळिया खावतो हो, खोद्यो डूगर नै काढ्यो ऊदर

1 बाता री फुलवाड़ी भाग ९ पृ स २७१, ले० विजयदान देथा।

माठ खेली, भया देवरा लागी, मछरां करै, हाथां कीना कामडो किरा नै दीजै दोस, भुतियां विखेर दिया, ठेठी भडगी, जाफ आयगी, निजरा दीठी परसराम कदै न कूड़ी होय तथा लांठा-री डोको ई डाग फाड़ै।

फूटोडा चंग री दाई, आख्या मे मिरचा ज्यू लखावतो, रांती व्है जैड़ी मिडकल देह, नोळियां जैडो मूं डौ, डूंगी ज्यूं तिरतो, रूपाळी लुगायां अडवा व्है ज्यूं लागै, हीयो जांणै दूध सूं धोयोडो।

राजस्थानी, संस्कृत और उर्दू के शब्दो का मेल लेखक की चतुराई का परिचायक है—फगंत, मौत, कवूल, माकूल, विकट, उपरान्त, अभ्यागत, प्रपंच और प्रीत आदि। धोज्या, हूचटो, वागोलरा, ओक्या, डंयाळ, ओटाळ, तोजी, धंग, डाढ़्यौ, रांळयौ, मेहणी, वेंगळा, सावका, अळवदा गीड़, वेजां, वखड़ी, वौरगत, हपला, ऐदीपणौ, लोतर, भिमरी, नेठाव, सधीणौ, ढीमड़, वोजी, भोवर, गागरत, मथारे, सपाड़ौ, सोल्याळ, साता।

कई कथाओ के प्रारम्भिक कविताश असगत तथा निरर्थक-से लगते हैं। कई कथाएँ निरर्थक प्रारम्भिक घटनाएँ लिए बैठी हैं। "रामजी भला दिन दे" इस वाक्य की ज्यादातर कथाओ मे आवृत्ति हुई है। अमरफल लाना, सत-खडिया और नवखडिया महल की जानकारी, दैत्य-पुत्री द्वारा राजकुमारो को मधुमक्खी वनाना, दैत्य का रूप-वर्णन, दैत्य के विचार और वाक्य, दैत्य द्वारा अपनी पुत्री को मौत का रहस्य वताना आदि कई वातो की यथावत् आवृत्तियाँ हुई हैं। कई कहानियो[1] मे वच्चो को खुश करने वाली तुकवन्दियाँ की गई हैं जो कथाओ के स्तर को निम्न करती हैं। लगभग सभी कथाओ मे विलक्षरा और अतिमानवीय तत्त्वो की प्रविष्टि हुई हैं। जैसे—केरी खाने से रानी के सतान होना, सर्प के साथ विप्र-कन्या की शादी, सर्प का मनुष्य वनना, सात भाइयो की मृता वहिन का जीवित होना, पेडो और पक्षियो द्वारा खाती के वेटे की सहायता करना, पक्षियो का मानव-वाणी मे वोलना, मृता माँ का गाय-वन कर वेटी को दूध पिलाना, गुलगुले का पेडा पैदा होना, हथेली से कवूतरी का वच्चा निकलना, थोरी जाति के मानव का फूल वनना और फूल से मानव वनना।

"नाहरसिंघ वछराजसिंघ" कहानी मे दूती के कहने मात्र से ही दैत्य-पुत्री द्वारा उसे वुआ मान लेना तथा "सूळा हदी सेज" मे नगरी को निर्जन वनाने का जिक्र करने वाले दैत्य का अन्त मे पता तक नही रहना—लेखक की कुछ भावगत भूलें ही हैं।

---

1. "आक धतूरौ" कहानी—पृ स ३९४ से ३९८ तक
   "अनूठौ रूख" "—पृ स २७२ से २७५ तक
   "कवूडी राणी" "—पृ. स. ३४८, ३५५ से ३५७ तक

"वातां री फूलवाडी भाग 10"[1]

समीक्षा :—तीन सौ चौतीस पृष्ठीय इस भाग मे इक्कीस कथाएँ सकलित हैं। यह सग्रह केन्द्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा पुरस्कृत है। इस क्रम दिवली वळै, बाड्यो वीर, कांळदर री सुगराई, एक नुगरौ साप, फूलकवर, पीळौ साप, सीधौ हिसाव, लिख्या लेख टळै जून्यौ सरप, नागण थारौ वम वधै—ये प्रथम दस कथायें सर्पो के जीवन एव कार्यो के ही अत्यधिक निकट हैं। इनमे सर्पो के भले-बुरे कार्यो तथा अमानवीय या अलौकिक कृत्यो का विवरण भी प्रस्तुत किया है। देवाळा री वपौती, खातीलौ चोर, जोग री वात, भू डो अर भलौ, करणी जैडी भरणी कथाएँ शिक्षाप्रद एव प्रेरणादायक हैं जिनमे दिवाळा की कथा, चतुराई, जोग-सजोग, कर्मो का फल तथा भली-बुरी भावनाओ का परिणाम आदि तथ्यो का वोध होता है। चालीस-चालीस पृष्ठीय "दुविध्या" और "असमान जोगी" कथाओं मे दुविधा के समय मानव का स्वभाव और सच्चाई का प्रभाव—इनके वारे मे जानकारी मिलती हैं। घर रै पाखती घर, वैटौ सीझै, नी रौ म्यानौ हौ तथा वेटौ किण रौ—ये चारो कथाएँ प्रहेलिकाओ एव प्रश्नोत्तर के ईर्द-गिर्द चलती हैं जिनमे राजस्थान की प्राचीन ग्रामीण सस्कृति का परिचय मिलता है। कई स्थानो पर हृदय के अच्छे-बुरे भावो का वर्णन, रूप-वर्णन एव प्रकृति का चित्रण भी लेखक ने सागोपाग किया है।

'नव शब्द-निर्माण की कला, अन्याय भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव, मुहावरो, कहावतो और आलकारिक-सौन्दर्य को प्रकट करने की क्षमता भी लेखक मे पूर्णत है। लघु वाक्यावलिपूर्ण भाषा-शैली का उदाहरण इस रूप मे देखा जा सकता है।

"उण ब्रामण रै इकलौनी डावडी। रूप री खान। सोळवौ वरस। जाणै सोना मे सौरम साचरी। टावर थकाई व्याव व्हियोडो। पण हाल मुकलावौ नी कर्यो। आखा राज मे उण जोड री रूपाळी डावडी नी ही। देख्याई उण रूप माथै भरोसौ नी व्हैतौ। वामणी रै पेट इन्दरलोक री कोई अपछरा तौ नी अवतरी। दान जाणै वीजळिया रा इज टुकडा।· गुलाबी रूवाली। सोनल केस। उणरी वोली आगै कोयल रो कठ ई अलूणौ लागतौ। एडिया जाणै ममोल्या एकठ व्हिया।"[2]

कई कथाओ मे मनोरजन तथा रोचकता का अभाव है। इनमे मस्तिष्क के साथ खिलवाड के अलावा कुछ नही है। लेखक ने वातो के माध्यम से कुछ पहेलियां प्रकट कर दी हैं। ऐसी कथाओ मे घर रै पाखती घर, नी रौ म्यानौ, वेटौ

1 ले० विजयदान देथा, रूपायन सस्थान, वोरुदा

2 वाता री फुलवाडी भाग १० ले० विजयदान देथा, पृ स ३०८

किए री, वेटी सीर्भ तथा सीधौ हिसाब है। फूलकवर, जून्यौ सरप, नागण थारो वम वधै, दुविध्या, अममान जोगी तथा खातीलौ चोर कथाएँ अनावश्यक रूप से वडी कर दी गई हैं जिससे लघु उपन्यास का भ्रम भी हो जाता है। सभी कथाओ के केन्दीय भावो मे, सुने-सुनाए होने के कारण, मौलिकता नही है, भाषा मे अवश्य नूतनता है। कई अतिमानवीय या अलौकिक प्रसगो के कारण कहानियो की जिज्ञासा, सरसता एव रोचकता ही नष्ट हो गई हैं—

सर्प द्वारा कामदग्धा युवती के साथ सम्भोग करना, सर्प का मानव-वाणी मे वोलना, बाँवी पर प्रहार से सात महलो की सृष्टि, सर्प द्वारा अनेक रूपो को धारण करना, नौलखे हार द्वारा वालक की उत्पत्ति, स्थान स्थान पर भूतो और मानवो के वार्तालाप और सर्प-दश से मोती एव लालो की उत्पत्ति।

इस प्रकार इन लोककथाओ मे कई दोषो का समावेश होने के वावजूद राजस्थानी-साहित्य मे इनका एक पृथक् महत्त्व है। लोककथाओ का अपना एक अलग निर्माण है, अलग इनकी शैली है और भाव भी इनके अलग है। हम सामान्य आधुनिक कहानियो से तुलनाकर इनके महत्त्व को कम नही कर सकते। सुनी-सुनाई वातो को ऐसी सजीव भाषा मे वद्ध करना कोई सरल कार्य नही है। भले ही इनमे अतिमानवीय तत्त्वो की भरमार रही हो परन्तु मनोरजन का अभाव इनमे किंचित् मात्र भी नही है। मनोरजन ही कहानी का प्राण होता है, शेष वातें गौण हुआ करती हैं। इनकी लोककथायें अन्य लोककथाकारो से भी भिन्न स्वरूप या भावो वाली है।

घर की रेल[1]

समीक्षा :—एक सौ छिहत्तर पृष्ठो वाली इस पुस्तक मे इक्कीस लोककथायें है। प्रथम कथा के आधार पर ही पुस्तक का नामकरण हुआ है। बूझबुझाकडजी, पचमारखा, डफोळसख, चूसै रो व्याह, गुटियो राजा, भाग चन्दरियो, पीरदानियौ और आधियो पगळियो कथाओ के शीर्षक आकर्षक हैं जिनमे हास्य, चातुर्य एव वेवकूफी के प्रसगो का वोध होता है। "घर की रेल" मे ग्रामीणो की सूझ-वूझ की कमी प्रकट हुई है। घोडे रो असवार पीर-दानियो, ऊपरलो उसदाद तो मानो वुद्धि के ठेकेदार वन कर वुद्धि को वितरित करने वाले प्रतीत होते हैं। "सूध और जालसाजी" पशु-पक्षियो से सम्वन्धित लोककथा है। कथाओ मे विविधता के दर्शन होते हैं। कही वच्चो के मनोरजनार्थ चिडिया, कौए तथा चूहो की वातचीत है तो कही वुद्धि भाकडजी की वुद्धि का वखान। कही किसी की पोल खुलती है तो कही वुद्धि का अधिक चमत्कार देखने को मिलता है।

अधिकाश कथाएँ नीरस है। लोककथाओ की सरल भाषा तथा सीमितता का ध्यान विल्कुल नही रखा गया है। भाषा मे सस्कृत के गद्य-लेखक वाणभट्ट की

1. ले०नानूराम सस्कृता, १९६८ ई० मे प्रकाशित।

नकल करने का प्रयास किया गया है परन्तु लेखक पूर्णत इसमे असफल रहा है। सवादो का नितान्त अभाव है। भाषा पर ठेठ ग्रामीण क्षेत्र का पूर्ण प्रभाव दिखाया गया है। भाग चन्दरियो, पिंडत अर नाथ, नाडी वैद, कळायण बत्तीसी, मुदुग्रो, ऐव, पिंडत री टक्कर, दरबारी पिंटत रो रोग, वीर समद देस तथा कळाळी—ये कथाएँ तो अत्यन्त ही नीरस है। लोककथाओ की विशेषताएँ लेखक की ठेठ ग्रामीण भाषा से ढक जाती है। कहानियाँ समझ से परे होने के कारण न तो जिज्ञासा पैदा करने वाली है और न ही मनोरजन का भाव। बच्चे तो क्या, ऐसी भाषा को एक शिक्षित व्यक्ति भी समझने मे असमर्थ रहता है—

"लूवाँ रा लपका में लाल हुयोडा लोगा रै डील माथै चौमासै फाफ रा फटकार। लागै जद बै सिटाईज्योडा नी रैवै। आखा मार्णस लाखा बोता खिल पडै, लाल कोड मे पिल पडै। हिडदा म तार-तार, सतार रा सुरे-सा गूँजड लाग जावै। रामइयै री गाज मार्थ मिनख ई मेळ केरणै वैगी भाज उठै है। बिरखा रै वेल, मोरा रै ढेन अर बीज रा खेल विजोगी अर सूका लकडा नै हर्या-कचन कर देवै है।"[1]

दस दोख[2]

समीक्षा—एक सो दो पृष्ठीय पुस्तक की दस कथाएँ समाज के दस दोषो का पर्दाफाश करती है। समाज मे कई प्रकार के अन्ध-विश्वास एव रीति-रिवाज है जो मनुष्य के लिए हानिप्रद है। कभी-कभी लोग इनके भय से आत्म-हत्याये कर लेते है। इन्ही दोषो से अबलाओ का अपमान होता है और निर्बलो की हार होती है। मौसर, भूत-पलीतो का चेडा, डाइनो की दृष्टि, तत्र-मत्रो मे झूलती राजस्थानी जनता भयभीत है।

इधर अन्ध-विश्वासी पडितो-पुरोहितो, पण्डो और काजियो जैसे गुण्डो एवं हरामखोरो को शरण देकर इनका पालन-पोषण किया जाता है। दहेज, मौसर, कर्जा, चेडा, ढोग, डाईनो के कार्यो में मानव बहुत लिप्त है।

ये कथाएँ समाज के अलग अलग दोषो पर प्रकाश डालती है—जैसे "दायजो" मे दहेज, "वारो तथा खच" मे मौसर' "चेडो" मे भूत-प्रेतो के कार्यो "डाकण स्यारी" मे डाइन की धमाचौकडी तथा "देवता अर पडा" मे पण्डाओ के ढोग तथा इनके प्रति अन्ध-भक्ति पर प्रकाश डाला गया है। "गुरु-भक्ति" और "दूठ बावल" कथाएँ अपने उद्देश्य मे सफल है। "जवाई की पिटाई" मे मनोरजन

1 घर की रेल नानूराम सस्कर्ता, 'कळायण वत्तीसी" कहानी, पृष्ठ स १०१
2 लेखक-नानूराम सस्कर्त्ता, सवत् २०२३ मे प्रकाशित।

तथा हास्य की कोई कमी नही है। "लैणो" तथा "वैर" कहानियाँ भी एक न एक आदर्श लेकर प्रस्तुत हुई है।

"बूढ वावल' शीर्षक भ्रमात्मक है। "चेडो" का अर्थ 'अन्ध विश्वास' गलत है। चेडो अन्धविश्वास का एक प्रकार हो सकता है। अन्य पुस्तकों की भाषा का प्रभाव पडने के कारण लेखक को इस पुस्तक की भाषा मे इतनी नीसरता नहीं आ पाई है तथा न ही भाषा का वाणभट्टी स्वरूप देखने को मिला है। वैसे ठेठ ग्रामीण राजस्थानी के प्रभाव से लेखक पूर्णत तो नही हटा है परन्तु उसका किंचित् प्रभाव ही देखा गया है। दीर्घ वाक्यावलिपूर्ण भाषा का आधिक्य तो है ही साथ ही अन्यान्य भाषाओं के शब्दो के प्रयोग से भी लेखक अनभिज्ञ रहा है।

घर की गाय [1]

समीक्षा :—एक सौ सोलह पृष्ठों मे बद्ध इस संकलन मे लेखक की पन्द्रह लोककथाएँ है। प्रथम कथा के आधार पर पुस्तक का नामकरण "घर की गाय" हुआ है। धार देखना, पितरजी रो पार्सल, घर वाळी री घात, मूरख मिनख, भो मोटो हुवै, महकती राणी, तिरिया चिलत, काळू री गिणगौर, कुल पतराई, पाडौसी नै फील हुयौ, बूढो डाको, साचलो पी एम ओ, असराळ ऊट तथा कीकर रो रूख—ये सभी कथाएँ अत्यन्त ही नीरस हैं। इनमे से काळू री गिणगौर, असराळ ऊट तथा "धार देखना" आदि कथाएँ रेखाचित्रो या निवन्धो की श्रेणी मे रखी जा सकती है। ठेठ ग्रामीण भाषा के प्रयोग करने वाले लेखक को भी फील, पी एम ओ. इत्यादि अंग्रेजी शब्दो की क्या जरूरत पडी ?" "कुलपतराई" शब्द के स्थान पर किसी अन्य सरल शब्द का प्रयोग होता तो ठीक रहता।

पूरी पुस्तक मे असंख्य शब्द ऐसे प्रयुक्त हैं जिन्हें मैं तो क्या स्वय लिखने के बाद लेखक भी नही समझ सकता। इन कथाओ में न तो मनोरजन है और न ही इनका कोई उद्देश्य। लेखक भाषा तथा उक्ति के सौन्दर्य मे कहानी के लक्ष्य को भूल ही गया है। केशवदास की तरह कई स्थानो पर जान-बूझ कर तुक मिलाने का प्रयास किया गया है। उर्दू और सस्कृत के शब्दो का नितान्त अभाव है। इनकी भाषा को पढने पर ऐसा ज्ञात होता है कि पाठक भावो से उचट कर भाषा पर आ जाता है जिससे न तो भाव समझ मे आते हैं और न कथाओ की भाषा का वोध हो पाता है। भाषा के विकृत रूप का उदाहरण द्रष्टव्य है [2]—

"माराज मुड्दो-मडकलियो कामी करमीण तथा कागजी जुवान अर गौरी गाव-री बेटी खुल्लै मुह रयोडी छोरी नाज इज्जत री आण। आप

1. ले० नाथूराम संस्कर्त्ता, १९७० ई० मे प्रकाशित।
1. घर की गाय . कहानो-"बूढो डाको" पृष्ठ सं. ८१

रै हळ गै हाथा सू माराज रो म्हैदरो भु वा नाख्यो अर मगद वणा नाख्यो। ऊजलो चिडचिडो सदा करतो जूजळो सो रैतो। पण आजकवळो काकडियो सो पड्यो विनै भरचो विरगरावै अर किरावै है।"

संस्कर्ता की भाषा ठेठ ग्रामीण होने के कारण पाठकों के मनोरंजन में खलल तो अवश्य पडती है परन्तु राजस्थानी कथा-साहित्य में इनका साहित्य एक अलग ही विशेषता प्रकट करने वाला है। अपने क्षेत्र में इनका महत्त्व अधिक है जिसे हम तुलनात्मक दृष्टि से अंकित नही कर सकते। पूरे राजस्थानी साहित्य में इनकी भाषा का अपना एक अलग निराला अलाप है। इनकी चौथी रचना [1] की समीक्षा पीछे की जा चुकी है। क्योंकि उसका अधिक महत्त्व बालोपयोगी कथाओं में है।

इनके अतिरिक्त अन्य कई विषयों तथा प्रवृत्तियों की तरफ झुकी हुई पत्रिकाओं में स्फुट रूप में प्रकाशित कहानियों की संक्षिप्त जानकारी यहाँ कर लेनी अपेक्षित है तत्पश्चात् राजस्थानी कहानीकारों की अनेक कथा-कृतियों की समीक्षाएँ प्रस्तुत की जायेंगी। पत्र-पत्रिकाओं में स्फुट रूप से प्रकाशित कहानियों में मदनलाल वर्मा की "भूख भवानी" आशा विद्यालकार की 'धीरज गे फळ मीठो" रमेशचन्द्र शर्मा की "जवेरो दीवो" सत्यदेव' 'सत्यार्थी' की "जुवानी री बाढ" सीताराम पारीक की "देवता रा हत्यारा कुण" उदयवीर शर्मा की "छोरो विगडग्यो" "ठेकैदारी' तथा "चार मिनी कहानिया" रामेश्वरदयाल श्रीमाली की भडूरा, सजीवण, हार को मानू नीं, काचळी, वडो वाबू, खाजरू, म्हैं गुनैगार हैं, सळवटा, जसोदा, ईजतदार तथा धरम री जै, विजयशकर शास्त्री की "देसळाई की पेटी" अमोलकचन्द जांगिड की "वेटी नाक लेगी" बादस्या, बात रो फेर, बिचारो मास्टर, बापू मैं तो सूई खाऊ हू, चिडो न्याग्यो लीक लीकोळिया एक अणसळझी डोर, नक्सलिया रो जोर तथा नितकै एक'र मिनख रै मू टै राम बोल, सावर दईया की "हत्या" होणो न होणो, सुल्योडो, गळत आदमिया रै बीच, आज गी आमदानी, तीजोडै री जीत, प्लस-माइनस तथा कोट, रामस्वरूप 'परेश' की 'टेरीलीनी हियो" बुद्ध रो वस्ट, छयोटी मच्छी, वडी मच्छी तिरसूल, सुवापखी साडी, अढाई आखर रो मोल, मोहन पुरोहित की "वाह रै मिनख' तथा "जीवती लास" मुरलीधर शर्मा की "केसू रा मास्टरजी" तथा 'ओळखाण" लक्ष्मीकुमारी चूडावत की "गिन्दोली" पातर, नानडियो, स्वामीभक्ति, जनाब को याद है तथा कविता री करामात, यादवेन्द्र शर्मा की "वाप अर वेटो" अण बूझी, सुख रो सूरज, एक रै पाछै एक, हर री पैडी, एक उथप्योडो उफाण, जूता, चीचड, जठै निजर टिकै और खौळ, नानूराम संस्कर्ता की 'काळी गाय" समो कुसमो, डाक्टर वीद, जसमल ओटणी, धरती माता, सौभाग्यसिंह शेखावत की "तीजा रो कोल" तथा

1 ग्योही ले० नानूराम संस्कर्ता, संवत् २०१४ में प्रकाशित

"साच नै कूड" किशोर कल्पनाकान्त की "किसन" रूपा, लाल गाड़ी, राखी तथा बाप रो कर्जो, सोहनलाल शर्मा की "पछतावो" विजयदान देथा की "सौदो" राजी नग्वो, अलेखू हिटलर और फाटक, जयचन्द्र शर्मा की "सगीत मास्टरा रै इन्टरव्यू" भगवानदत्त गोस्वामी की "एक अन्धारी रात" भवरै रो मन्त्रोपदेश, अवार अन्दाता नै अरज करू, नेताजी, देस-भगत रो वलिदान, आत्माराम भाकल की 'उण री चिन्ता" लक्ष्मणसिंह पवार की "दिवलै री जोत" बद्रीप्रसाद पुरोहित की "मरजी रावळी है सा" केसर रो अन्त समै रो पत्तर, ठाकर री नवी बीनणी, रामप्रसाद चाकलान की "अ-व-स' घाव मे घोवो, नाथो. चिरत वानगी, रोह्रा, अणचाई, चन्दा नागडो वावो, रू ख री साख, दूजोडी मिनकी तथा वच्ची, माणक तिवारी की "धूतो" निरभागण, सडक घूमगी तथा असली अर गैला, निर्मोही व्यास की 'वालू रा रमतिया" तथा "वनजी री अडीक" जगदीश माथुर की "झगडो" लाल हवेली भटकती आत्मा, तीज रमावण आयो साहिबो, सन्नो भौजी तथा जाजम, वेद व्यास की 'सिकताव" जगदीशसिह सिसोदिया की "रात रै अधियारै मे" दूदसिह काठात की "आकास सू वाता करतो धवलगढ" आशाचन्द भण्डारी की "सुहाग रात" नारायणदत्त श्रीमाली की "शुक उवाच" तथा "जूनो परसन नू वो हल" विद्याधर शास्त्री की "गैळ" शिवराज छगाणी की "दुरामीस" भवरलाल छलानी की "खुरडपगो" मोतीलाल पवार की "अणहूत" सूर्यशकर पारीक की "टूटो" तेलो-वानो, सभा गगा-न्हायोडी-सी होयगी, भाड़ै रो घर, वनिता विद्या वेलछ्या साथ रिया लिपटाय, दीनदयाल 'कुन्दन' की "फळ" चिळको, किक; ज्वालामुखी, पण कद तक तथा थोथ, रामदत्त साकृत्य की "सेठजी" जयशकर देवशकर शर्मा की "देस वडो'क वेटो" तथा "गैली" गुलावकुमारी शेखावत की "काकी री का'णिया" कुम्भाराम आर्य की "प्रीत री रीत कुण जाणी" हरमन चौहान की "नान्ही प्रोमिथिअस" खिरग्या पान, काच रा टुकडा अडाणै री जूण, रजपूतन, वेजिटेरियन मच्छी, सैकिंड हैंड दरद, सुमेरसिंह शेखावत की "च्यार जमारा एक जमानो" अभिनव आख्यान पुराणै परिवेस रो,मीण, मणि, निर्मला छव-लानी की "एक विलखती सूनी साळ" चन्द्रशेखर दुवे की "नादान वाप दानो वेटो" भावसिंह शेखावत की "राजपूत" देवीदत्त पवार की "रतनी" गुलावचन्द की "वचनरो लाज" भूपतिराम साकरिया की "आतमहत्या" रामेश्वर टाटिया की "अछूत" राजा र रक, सिवजी भायो, हरखू री मा, परोपकार, मत्रीजी रो जलम दिन, सम्राट'र साधू, जीत्यो जी टोडरमल वीर, भाग, चकरियो, चन्दरी भूवा, अपणेस, प्रभुरो प्यारो, तथा मजदूर सू मालक, भवर भादानी की "दिनूगै रो भूल्यो" तथा "देस रो सिणगार" कमाल की "एक छिण....ढलाव जिदगी" मीठालाल खत्री की "दण्ड" और "गुजारो" भुवनमोहन मिश्र की "ईसर रो साचलो प्रेमी" जगदीशचन्द्र शर्मा की "गीता री गळी" आधी रात, उळझ्योडा तार, कुंवारी सरहदा, खूबीलाल की "उल्लु रा पट्ठा" पी आर व्यास की "लिछमी रो अपमान" सोम-

देव शर्मा की "मिनखा सार्ग" तथा "उळझ्योडा प्रश्न" मदनमोहन जावलिया की "ईसर रो न्याव दूध रो दूध पाणी रो पाणी तथा "कायाकल्प" सुरेश व्यास की 'एक भायलै री जिनगानी रो सोवणो राज" फकीरचन्द व्यास की "तीन तत्रा री तर-वीणी" तथा "चीकाणै री लाल फौज री वात्या" किशनलाल पारीक की "मिनख-पणो" वनफूल की "अंतिम अछा" नन्दकिशोर की "एक लुगाई फूटरी सी" दीन-दयाल ओझा की 'मानखो" वेलडी रा ताता, भ्रणजाणी जीवन-यात्रा, करडो काळजो कवळा आसू, दुर्गादत्त की "थोडा टावर सुरग वगावर" तथा "थे क्या का पतरकार हो" अरुणा खन्ना की "कुण जाणै किण मारगा गमग्या" चेतना पारीक की "क्वारी" रतनसी की "आख्या पाछै तार" अजीतसिंह 'भ्रमरा' की "लेवणो-देवणो" ब्लैक आउट, खून, तू वो भोजन तथा एक नू ईज बात, विनोद सोमानी की "एक मिनख, एक जिनगाणी" सामली बारी, आतम क्रोध, चाचा मिया, ग्लानि अर ग्लानि, धु ध भरी गैल, भीड अर सपना, बदळाव अर बदळाव, खुद री ही लास तथा चुप्पी, सज्जनसिंह की "धरती रा सपूत" कल्पना शर्मा की 'भोळो सो मुखडो" त्रिलोक गोयल की "मकान मालक" व्रजेश गोयल की "जाऊ तो जाऊ कठै" श्रीलाल मिश्र की "आजादी री पुजारण" तथा "मूछा री लडाई" विश्वम्भरप्रसाद शर्मा की "उजरणू" डागडी री रात, ओसाण, भूरसिंह राठौड की "मिनख री साख" कृष्ण कल्पित की "ताम्र पत्तर" तथा "हिडकायोडा" पुरुषोत्तम छगाणी की "थारो खुदा हाफिज" जदै मार्च गहगट्ट, पूरब-पिछम, दाडी दे करतार, ओळखाण एक जिंदगी सू तथा बैड न १६, ओम अरोडा की ' च्यार मिनी वाता" पन्नालाल की ' देस मे रजपूत भी रैया है कोई" मनुज राजस्थानी की "पाटै कुण उतारसी" मदरसा री छतरया तथा पडूत्तर, गोपाल राजगानी की ' माथै रो 'मोल" तथा "अधूरा सपना" मोहन आलोक की "अन्तरात्मा री आवाज" अलसेसन, कु भीपाक, डाई, रामू काको, उडीक, बुद्धिजीवी एक नवी लोककथा, मोहनसिंह भाटी की "मरण रो हक" रामनिवास शर्मा की 'रोटी अर मौत" इला न देणी आपणी, सुहा-गण मांगण, रात ढळती जावती, भोर कदे न होय, रामनिवास शर्मा 'मयक' की "नैणा खू ट्यो नीर" एक इच हसी, दिन एक तारीख रो तथा रूप रो वायरो, बुलाकीदास की "चिथडा मे दाता" नारायणसिंह भाटी की "अन्तर रो मोल" जनार्दनराय नागर की "भतैया" विश्वेश्वर की "आख्या रा डोरा" शचीन्द्र की "डाळ सू छूट्या पछी" तथा "काची गडार" जगदीशसिंह की "नोकराणी" राधा-कृष्ण शर्मा की "परीक्षा" विष्णुदत्त आचार्य की "राजपिरोत" प्रतापसिंह की "तळाव री पीड" उमाचरण की "तीन जोधा" वस्तीश की "माथे रो मोल" कमला वर्मा की "ना, कोई भी पसद कोनी" नीलम की "सीळ री माठ" पारस अरोडा की "वेतारीख डायरी रा पाना" पीड, सोध, जरूरत, विश्वनाथ 'विद्यार्थी'

की 'चिलम होटल" सीताराम महर्षि की "अणबूझ प्हाळी" तथा "गुलाव" ओंकार पारीक की 'हाकम साव" चासेवाज हीरजी, माधव शर्मा की "धोळो दाग" तथा 'पाप री भभूत" रामगोपाल विजय की "केसर" वी आर प्रजापति की "एक साची वात" तथा 'माखीमाळो" मणि मधुकर की 'अकथ रौ उणियारौ" कृष्ण-गोपाल शर्मा की 'खज्योडी खिमता अर हावू" मोटोडा भुजिया, उळझ्योडा तार, दाऊदयाल शर्मा की "मगता रो मेळो" तथा "कुत्ता री गिरफ्तारी" गोविन्द कल्ला की "चवरी रौ धुंओ" तथा 'ढेरियो" नथनियल हावथ्रोन की "वदळा रा तीन सौ वरस" हनुमान पारीक की 'भीत" और "प्रेत" भागीरथसिंह की "हिमायती" और "लीरा लीरा आस" कुसुम की "सौत' मोहनलाल गुप्त की "प्यासोप्रेम" उमानी-राम की "विदा" रामवल्लभ की "विधवा को सार्थक जीवन" विश्वेश्वरप्रसाद की "आ भाटा पै मैल वणसी" जोगीदान की "राखी" मागीलाल की "घाटवै रो गैलो" शिव की "फोकट को खवाई" वुद्धिप्रकाश पारीक की "साडू-सम्मेलन" भवरसिंह की 'आखरी रात" सुभाष की "जीवतौ तावूत" मुरली राकावत की 'मान" और "डोरो फळाप्यो" श्यामा की "भीड भरोसै" कमल की "अणत जातरा" व्रजमोहन जाव-लिया की "कुण हारचो कुण जीत्यो" सुवोधकुमार की "वात की पाण" नन्दलाल की "जीवत लोथ" हवीव की "वै तीन" छोटाराम की "सावो" वजरगलाल की "तेडो" गणेशीलाल व्यास की "डोकरी री का'णी" लक्ष्मीनारायण की "दीया वळै—दीया वुझै" तथा "इदर-धनुस" शान्तिदेव की "चन्दा री चादणी" व्याहता तथा उडीक; जयकृष्ण की "देवरभाभी" ममता री मूरत मेवली, उडीक, शान्ता की "वाईजी को व्याव" विद्या, सुशील तथा वदलते जमाने री वात, जवरअली की "नकली वलाय" सोनै रौ सूरज, "देख मरदा री फेरी" सत्यनारायण की "वावासा री लाडली" अरुण की "टेलीफून" वद्रीप्रसाद पचोली की "भ्वौ भाग्यो मौत भागी" दुर्गादान-सिंह की "चडी री वेगम" हरिवल्लभ को 'वेकारी को साप" गिरधारीलाल मालव की 'पातो" शान्ता भानावत की 'किसन्न री मा" जमनाप्रसाद ठाडा की 'विधग्या सो मोती" प्रेमचन्द की 'उडती धूड" नाथूलाल की 'तार को पढाक" जयपाल की 'रूपा" प्रेमजी 'प्रेम' की 'सळ" तथा 'आख्या माच्यो कीच" धनराज की 'वाळू रो आकार" नन्द भारद्वाज की 'अकाळ मौत" लगाव, ठस्योडो मून, मोहनसिंह की 'पीड री सिवात" अर्जुनसिंह की 'भोळाराम री फारगती" तथा मुवारकखान की 'वुधवार" कहानियाँ राजस्थानी कथा-साहित्य का भण्डार भरने मे समर्थ और उल्लेखनीय हैं। विशेष प्रशसनीय वात तो राजस्थानी कहानी-वधा मे यह रही है कि नृसिंह राजपुरोहित, रामनिवास शर्मा तथा रामेश्वरदयाल

श्रीमाली की रचनाएँ[1] राजस्थानी भापा साहित्य सगम, वीकानेर द्वारा पुरस्कृत भी हो चुकी हैं।

इनके अतिरिक्त पूर्व-वर्णित दिग्गज कहानीकारो के कथा-सग्रहो और अन्यान्य सकलनो की समीक्षाएँ यहाँ प्रस्तुत की जा रही है—

परदेशी री गोरडी[2]

समीक्षा :—इकतीस पृष्ठीय यह पुस्तक एक प्रलम्ब कथा के रूप मे प्रस्तुत हुई है। लेखक ने इसे दस परिच्छेदो मे बाँट कर उपन्यास का आवरण चढाने का प्रयास किया है परन्तु यह एक प्रलम्ब कथा का रूप धारण कर ही रह गई।

जीविका हेतु अभीरचन्द परदेश जाता है। उसके जाने के बाद उसकी वहू को सास दु ख देती है। सास का दुर्व्यवहार, गीतो की मधुर वहार तथा प्रकृति का मनोरम वातावरण इसे अभीरचन्द की याद मे तल्लीन कर देते हैं। परदेशी (अभीरचन्द) की गोरडी (गौरी) मन मसोस रह जाती है। परन्तु भविष्य मे पति को परदेश नही जाने देने का सकल्प कर वैठती है। एक विरहिणी को प्रकृति का मनोरम वातावरण किस प्रकार उद्दीप्त कर देता है—इसकी झलक इस पुस्तक मे है। तेरह-चौदह शृ गारिक गीतो की सृष्टि भी की गई है। जैसे—

चमचम चमकै वीजळी जी ढोला, झिरमिर वरसै मेह।
कवल किया था तीज रा जी ढोला, निकल्या वारू जी मास।
सावण सतरै गया छै जी ढोला, आई हो नवली तीज।
वैगा घर आज्यो गोरी रा वालमा ॥[3]

भापा-सरल, स्पष्ट एव सजीव है। कहावतो-मुहावरो का यथोचित प्रयोग किया गया है। भापा-सारल्य मे विरहिणी की वेदना दर्शनीय है—[4]

"मन मे विचारै—म्हारा ढोलोजी तो हाळी-वाळदी सू भी हेठा। पण जोर काई? कमाया विना खाणो काई? हे रामजी, आज-काल रै जमाने मे रोटी रो ही सासो। लाखा कोसा घर-वार छोड'र जावणो पडै। लारै चाहै कई वीतो, कई हुवो। हाथ माथै रो भी कोई सीरी नही। इयै अमीराई सू तो गरीवी घणी भली, जिकै मैं लूखा-सूखा टुकड खाय'र आपरै टावरा मे तो पडिया रहै!"

---

1 अमरचू नडी ले० नृसिंह राजपुरोहित—कथा-सग्रह
ढळती रात ले० रामनिवास शर्मा— " "
सळवटा ले० रामेश्वरदयाल श्रीमाली " "
2 ले० मूलचन्द 'प्राणेश' राजस्थानी भापा प्रचार प्रकाशन, जयपुर
3 परदेशी री गोरडी ले० मूलचन्द 'प्राणेश' पृ स २८
4 परदेशी री गोरडी : वही पृ स १२-१३

कथा-साहित्य मे यह भी अपने ढग की एक अलग कृति है। लेखक ने 'श' का प्रयोग अनेक बार किया है जो राजस्थानी से अनभिज्ञता का द्योतक है।

ऊकळता आंतरा: सीला सांस [1]

समीक्षा —यह दस कथाओ का सग्रह है। पुस्तक की "ऊकळता आतरा" कथा मे ग्रामीणो के भोलेपन, पुलिस की ज्यादती, तीजा के उज्ज्वल चरित्र, "लैणायत" मे लैणायत (कर्जदाता) का सोदाहरण विश्लेषण, "सौदो" मे विवशता के कारण सुन्दरी पुष्पा का तीन सौ रुपयो मे सौदा होने, "एक अणबुझी तिरस" मे वेश्या रूपा की अच्छी बनने की प्यास का अपूर्ण रहने "लाचार" मे एक बाबू की चरित्रहीना पत्नी के विषय मे लाचारी, "जडली" मे जडली का वृद्ध पति से मुक्ति पाने के बाद भी वृद्ध के चगुल मे फसने, "दर रा ढोल" मे कलकत्ते के मशीनी और दूषित वातावरण वाले जीवन, "कोयलडी ए सिध चाली" मे दहेज-प्रथा की बीमारी तथा युवती बेटी सूवटी की विवाह से पूर्व ही मृत्यु, "थू थीजियोडो सिट्टो" मे पैसो के महत्त्व तथा 'सीला सास" मे टेटनस से मृत गरीब पुत्र की माँ के दुःखोद्गारो एव आहो की झलक मिलती हैं। अधिकाश कथाएँ ग्रामीण वातावरण से सम्बन्धित हैं। कई स्थलो पर हास्य का ध्यान भी लेखक ने रखा है जैसे तीजा द्वारा नाई के मुह मे थूकना। मूछो, मुह और कपोलो आदि के वर्णन मे लेखक पटु है। इन कथाओ द्वारा लेखक ने शोषित और पीडित वर्ग के प्रति सहानुभूति भी प्रकट की है। पुस्तक का नामकरण प्रथम (ऊकळता आतरा) तथा अन्तिम (सीला सास) कथाओ के आधार पर हुआ है। कथाओ की मौलिकता सराहनीय है।

भाषा पात्रो के अनुकूल है, आचलिकता से दूर है तथा साहित्यिकता का पुट भी ली हुई है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग एव नव शब्द-निर्माण मे कहानीकार दक्ष है—मेळाखै, पाचर, गगेड, हणै, उवा, ताकड, नकारग्यो, चितार, थथू भा,कग्ळाटियो, गुरव, छीछर, आगडो, वागरी, वासीदो,थळकण, गोट्टी, मिजळी, अलफरी ,निरायती, अचवव चकाईजग्यो, अळसा-मळसा, भागलमनो, पैळायो, ढूळ रा ढूळ, रवकीजियोडी, खरतीडिया, राणो-राण, तिगता, तळाचै, वैडीजियोडो, चीधी-चीधी, भ ळा री भ ला, टीपरो-टीपरो, मरचावती, वाखळ, छेछवा, जुळगै सैत्री-वैत्री, खिडग्या। युगल शब्दो का अधिक प्रयोग हुआ है। आवश्यकतानुसार सस्कृत एव उर्दू के शब्दो का समावेश भी किया गया गया है। कई स्थानो पर रूप-वर्णन तथा आलकारिक शोभा की झलक भी देखने को मिलती हैं। लघु सवाद तथा लघुवाक्यावलि-पूर्ण भाषा भी यत्र-तत्र देखने मे आती है :—[2]

---

1. ले० मूलचन्द प्राणेश, राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर
2. ऊकळता आतरा . सीला सास, "लैणायत" कथा से

"ऊनाळै री रुत । जेठ रो महिनो । खैखाट करती श्राधी वाजै । वळबळती लूवा ऐहडो कै पैरियोडै गाभा रा डील ऊपर चरडका सा चिपै । चिडिया, कमेड्या कागला अर मोरिया झाड-वाटा री जडा मे वडियोडा ससक ससक करै ।"

अधिकाश कथायें अंग्रेजी के शेक्सपियर की भांति दुखान्त है जो भारतीय सस्कृति के प्रतिकूल है । "कोयलडी ए सिध चाली" कथा का शीर्षक अनुपयुक्त है । लेखक ने मृता कन्या के लिए इन शब्दो का प्रयोग किया है जिनका प्रयोग विवाह के वाद ससुराल जाती कन्या के लिए होता है । इसी प्रकार "लाचार" कहानी का पात्र पत्नी के दुश्चरित्र पर लाचार क्यो रहता है ? इसका कारण लेखक ने नही वनाया है । "दूर रा ढोल" कोई कहानी नही है । यह तो कलकत्ते मे रहने वाले व्यक्ति के सक्षिप्त वर्णन की झांकी है जिसमे रोचकता, सरसता एव जिज्ञासा का अभाव है ।

रातवासौ [1]

समीक्षा —८८ पृष्ठीय इस सग्रह मे छ कथाएँ सकलित है । "भीमजी ठाकुर" मे भीमजी की निभयता एव उनके चरित्र की उज्ज्वलता, "उत्तर भीखा म्हारी वारी" मे समय की महानता, "कलम री मार" मे शोपको के शोपितो के प्रति निर्ममता, निष्ठुरता तथा हीनता के भाव, "प्रेतलीला" मे गुण्डों की शरारतो तथा "रातवासौ" मे धनियो की स्वार्थ-वृत्ति पर करारी व्यग्य है । "मा' रो ओरणौ" कथा लेखक की एक अन्य कृति [2] मे प्रकाशित हो चुकी है । सभी कथाएँ (एकाध को छोड) ग्रामीण क्षेत्रो से प्रभावित हैं ।

लेखक की भाषा मे स्वाभाविकता एव सरलता है । यत्र-तत्र कहावतो-मुहावरो का स्वत ही प्रयोग हुआ है । [3] जैसे —

माया थारा तीन नाम-पूमी, फरसी, फरसराम, पूरब री गधी नै पच्छम री चाल, ढकणी मे नाक डुवोय'र मर क्यू नी जावै, समद मे रैवणो अर मगरमच्छ सू वैर । आलकारिक-सौन्दर्य भी मिलता है—[4]

हाजरियौ काती महीना रा कुत्ता ज्यू लपक्यौ, कडपदार आंटाळौ पोतियौ जो सा'व रा टोप रै ज्यू आधौ पड्यौ हो, भादवा री काठल रै ज्यू जग गूजण लागता, उण री गोरी चामडी पर द्वारका री छापा रै ज्यू रावळी छापा रैयगी ।

इन छ, कथाओ मे अधिकाश कथाएँ लोककथाएँ ही दिखाई देती हैं ।

---

1 लेखक-नृसिह राजपुरोहित, १९६१ ई० मे प्रकाशित ।

2 अमरचूनडी ले० नृसिंह राजपुरोहित, कहानी-सग्रह ।

3 रातवासौ कहानी—'ऊतर भीखा म्हारी वारी" मे से ।

4 यही— — यही — यही —

ये प्राय सभी, पत्र-पत्रिकाग्रो मे प्रकाशित हो चुकी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इनके पास कथाग्रो की कमी है।

अमरचूंनडी [1]

समीक्षा:—एक सौ सात पृष्ठो मे ग्रथित इस पुस्तक मे चौदह 'कथाएँ सगृहीत हैं। "रूपाळी राजा" मे सैनिक तेजा की पत्नी राजा के अपूर्व साहस एव उसकी अदम्य वीरता का चित्रण है तो "उडीक" में एक अबोध बालक किसन को अपनी मृता माँ से मिलने की प्रतीक्षा रहती है। 'भारत भाग विधाता" में आधुनिक काल की शिक्षा-प्रणाली पर करारा व्यग्य है। "बदळो" मे मानव मे, प्रतिशोध की भावना के साथ-साथ किस प्रकार दया का भाव उमड पडता है, का सकेत है। "खूंटा री ग्रावरू" मे इज्जत को रखने हेतु पटेल अपने अमूल्य बैलो तक को गवा देता है। "पेट री दाभ" मे पेट की असह्य जलन का विवरण है। हत्यारे पुत्र से माँ-बाप के हृदय मे जलन ही पैदा होगी। "लक्की स्टोन" मे शहरी शान-शौकत का वर्णन है। साठ हजार मे खरीदे हीरे के एक लाख मे बिकने पर चोरो एव लुटेरों को उचित सवक मिलता है। "ग्रमरचूंनडी" मे राजा अजीतसिंह का कान का कच्चा होना, मारवाड मे षड्यत्र चलते रहना आपसी ईर्ष्या-द्वेष एव भीमो तथा धनजी के अदम्य शौर्य का वर्णन है तो "खेत वाळी बात" मे राजा के प्रति प्रजा की भक्ति-भावना प्रदर्शित है। "रूपाळी बीनणी" मे जरूरत से ज्यादा चतुर बनने वाले सूरजमल को लडकी शारदा द्वारा विवाह की अस्वीकृति देते हुए सवक सिखाया जाता है। "बोल म्हारी माछली" मे परिवार-नियोजन के प्रति गहरी निष्ठा प्रकट होती है। "मा री ग्रोरणो" मे मातृभूमि की रक्षा का भाव स्पष्ट होता है तो 'कुए भांग पडी" मे रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार एव बेईमानी का पग पग पर मिलना बताया गया है। 'पान झडता देख नै" मे झडते हुए पत्तो के समान वृद्धावस्था के निरादृत जीवन की झलक मिलती है। "ग्रमरचूनडी" जैसी एकाध कथा को छोड शेष सभी सामाजिक कथाएँ हैं जिनमे समाज के आदर्श, समाज की कुरीतियो एव समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, चोर-बाजारी तथा झूठा दिखावा—इत्यादि का स्वाभाविक चित्रण मिलता है। कथाग्रो मे हास्य को भी उचित स्थान दिया गया है—

(क) "........ग्राख्या माथै चस्मौ—डोला जाणे मारकणी भैंस—ध्यान नी राख्यौ तौ अबार सीगडौ घुसेड देला ।....." [2]

(ख) नरम नरम गादिया माथै पसरघोड़ा मोटी तूंद अर गंजी खोपड़ियां वाळा सेठ लोग, मरकरी चांदणा मे सगळाई चमाचम करै।" [3]

1. लेखक-नृसिंह राजपुरोहित, शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर।
2. ग्रमरचूंनड़ी : कहानी—"भारत भाग विधाता" मे से।
3. — यही — " —"लक्की स्टोन" मे से।

(ग) "सेठ साचरणी ग्यावरणी भैंस री गळाई पसरनै बैठौ हौ। मटकी रै उनमान टणका तूंद, दोणिया जेडौ घोटमघोट माथौ, गोळ गोळ वटरण जैडी आख्या अर घाची जिमा मैला घाण कपडा। परसेवा मे लथपथ व्हियोडो बकरा वासै ज्यू बासतौ हौ।" [1]

पुस्तक मे लोकगीतो की वहार भी स्थान स्थान पर फूट पडी है। कहावतें, मुहावरे तथा आलकारिक-सौष्ठव भी यत्र-तत्र विकीर्ण हैं —

भैंरू खिवै, डैंण नी मरै अर नी माची खोलै, खुद गुरुजी वैंगन खावै अर दूजानै परमोद बतावै, डूगर वळती तौ मनै दीसै परण पगा वलती किरण नै ई कोनी दीसै। डोळा जाणै मारकणी भैंस, फाटोडा वास री गळाई भन्डा सुर मे वोली, गोळ गोळ वटन जैंडी आख्या, घणोई मातो-मणगौहै—गाम साऊ पाडा व्है जिसौ। यथोचित मात्रा मे सवादो के साथ साथ राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो की छटा देखने को मिलती है और शब्द-निर्माण की कला भी—

फळगटी, कौगत, टैंटाई, वरगडैं, हळफळना, ठीमर, नीठ, वाल्हौ, काटीडा, पोखाळौ, पातरौ, टगू-मगू, थोकडा, चिगावो, कूडा, आभी, घारटी, मीट, पसम, ओसिया, टीग, नेखम, मोतविर, इक्कड, उनमान, अवलख, धितल, रिण्डक-भिडक, मगमी, खवा, तपास, जोजवारण हारण फारण, गैंतल, सामधरमी, थापोट, परवारौ, नकेवलौ, अवोट, मछरा, अगूतो, धूकलियौ, आवकारी, छाकटा, पाठक, ठवक, जावक, नींतर, नाठी, पाखती, काया, करणाकलाई, माटौ, टवारौ, मोकळा।

भापा-शैली की सरलता, सजीवता एव स्पष्टता द्रष्टव्य है—

"एक दिन ई टावरा नै अवैरी नो ठा पडै, कोरा वाना रा मटर-का किया है। थारी इण टीटा फौज नी अवैरी तो जाणू के टावरा नैं नी कूट्या समझदारी है। नी तौ कोरी-मोरी बाना रा पटाडा पोडण मे तो काई जोर पडै? घर मे नव नव टावर अर म्हारी जिद एकली। म्हनै तो जीवनी नै खायली है दुष्टिया। हे भगवान् अबै तो मौत देवै नी इण नरक-वाडा सू पिंड छूटै।" [2]

चौदह कथाओ मे अधिकाश लोककथाये होने के कारण लेखक की मौलिकता केवल भापा के क्षेत्र में ही हो सकती है, भावो के क्षेत्र में नही। स्थान-स्थान पर गीतो की सर्जना कथाओ के सौन्दर्य को न्यून करने मे ही सहायक है। "रूपाळी वीनणी" कथा मे स्कूल खोलते समय नारियल और सवा रुपयो का ढेर लगना तथा "अमरचूनडी" मे धनजी के हाथी का वहुत ही उच्च दरवाजे को तोडना

1 अमरचूनडी कहानी "कुए भाग पडो" मे से।
2 अमर चूनडी कहानी—"वोल म्हारी माछली" मे से।

आदि कुछ अस्वाभाविक से ही लगते हैं। सरकारी प्रकाशन होते हुए भी पुस्तक का मूल्य अधिक है।

मऊ चाली माळवै [1]

समीक्षा —अठ्यासी पृष्ठों के कलेवर वाली इस पुस्तक मे बारह कथाएँ समाविष्ट हैं। "गिरजडा" के दुर्भिक्ष हेतु चलाए गए सहायता-कार्यों मे नियुक्त रिश्वतखोर सरकारी कर्मचारी वास्तव मे गीध हैं। "दूधा न्हावौ पूता फळौ" कथा "निवळी नाड" के नाम मे प्रकाशित हो चुकी है। "धव चीकरणा क्वाडा वोथा" मे सास और वहू को लडने मे समान वताया गया है तो "मऊ चाली माळवै" मे अकालग्रस्त जन-समूह का उदर-पूर्ति एव पशुओ की जीवन-रक्षा हेतु माळवे की ओर प्रस्थान का उल्लेख है। "सुलेमान री टेक" मे देश-भक्ति की कट्टरता तथा 'आफरौ" मे मन के आन्तरिक दवे विचार प्रकट होते हैं। "वैरण दीवाळी" मे मकान एव कच्चे झोपडो मे आग लगने पर सुखद त्यौहार दीवाली वैरिन वन जाती है तो "अवगतियौ" मे एक विशेष दुर्दशा का चित्रण हुआ है। "गऊग्राम" मे गाय हेतु निकाले जाने वाले ग्रास की मार्मिकता, "पेट रा पडपच" मे रिश्वतखोरी तथा भ्रष्टाचार के नाटक और "राम और रहीम" मे साम्प्रदायिक दगे भडकाने वाले नेताओ का चतुराई से वचने आदि की मनोहर झाकी प्रस्तुत की गई है। 'धव चीकरणा क्वाडा वोथा" तथा "मऊ चाली माळवै" शीर्षक वहुत ही उपयुक्त तथा रोचक हैं। "मऊ" का अर्थ उस जन-समूह से है जो अकाल पडने पर अपने स्थान को छोड कर जीविका हेतु दूसरे स्थान को जाता है। कहावतो, मुहावरो तथा अलकारों की सुपमा के साथ-साथ भापा-शैली की सरलता, सजीवता एव प्रवाहमयता द्रप्टव्य है—

दो कातिया वीच मे माथौ, अठीनै कुओ अर उठीनै खाई, वाधी मुट्ठी लाख री अर खुल्या पछै खाक री, घडा जिसी ठीकरी अर मा जिसी दीकरी, दूध सूं वल्योडौ छाछ रै फू का दंवै, पडतो दुकाल अर व्हैती राड वजराग व्है ज्यू लागै, वादरी ही नै विच्छू खायौ, कठै राजा भोज नै कठै ग गू तेली, राई घटै न कोई तिल वधै, जमी गुमावणा जनमिया पेमा वाई रा पूत, लोजां कै हाथ पीलौ तौ जगत गोलौ, पाई री डोकरी अर टकौ सिर मु डाई, म्हारै करम मे तौ कागळा रो पग हो।

"झाड जिसा इज तो पाटिया व्है अर कौठा-जिसा इज कीटा व्है। इण री मा करकमा है तो आ भली किया व्है सकै ? हे राम ! आ नकटी औलाद म्हारै घरै क्यू आई रै। वेटा रौ सगपण कियौ जद आडौ काळी नाग ई नी फिर्‌यो। हे प्रभु ! एक तिल ही जिकौई तालर मे वायौ। वैटौ ई राड जणियौ खूटौडौ। नी तौ इण राड नै तीन घडियै पो'र नी कराय

1. ले० नृसिंह राजपुरोहित, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

दे । सूतौडी रै सीसौ नी नाम दे । पण ओ तो वापडौ लुगाई रै घाघरिया री जू । मिनकी रा डोळा सू ई डरै । ओ वापडो काई कर सकै ? साची कही है—कोलिया बळद अर मोलिया मोटी रौ की ठा नी पड़ै ।[1]

"पेट रा पडपच" "आफरौ" तथा "धव चीकरणा क्वाडा वोथा" मे कहावतो, मुहावरो एव लोकोक्तियो के आधिक्य से ये कहानियाँ वोझिल एव कृत्रिम भावो वाली वन गई हैं । राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों मे डिवेटिंग, सोसाइटी, लाइब्रेरी, वक्ता, साम्प्रत और आर्ट्स आदि शब्दो का प्रयोग अस्वाभाविक है । "ठूठ" में 'सुसीला' के स्थान पर 'प्रमीला' कहना तथा "वैरण दीवाली" मे सेठ मुकनदास को कथान्त मे सेठ लालचन्द कहना—कथाकार की भूल है । "मऊ चाली माळवै" "आफरौ" "गऊ-ग्रास" तथा "अवगतियौ" आदि कथाएँ लोककथाओ की श्रेणी मे आनी चाहिए । इस सग्रह की अधिकाश कथायें "मरुवाणी" इत्यादि पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुकी हैं ।

इतना होते हुए भी कथाकार का राजस्थानी कथा-साहित्य मे वहुत वडा योगदान रहा है । कथा-साहित्य के विकास के क्षेत्र मे इनकी सभी कृतियाँ महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं ।

कन्यादान [2]

समीक्षा :—नवासी पृष्ठो मे वद्ध पुस्तक मे तेरह कहानियो का सग्रह है । पुस्तक का शीर्षक उचित ही है क्योंकि लेखक के प्राक्कथनानुसार सारी कथाएँ विवाह शादी से सम्वन्धित हैं । "कन्यादान" मे निर्धन ब्राह्मण मुनीम की कन्या का उसके सेठ द्वारा कन्यादान करना, "खाँजी" मे विश्वासपात्र नौकर खाँ साहव के खोए हुए ऊँट की प्राप्ति, "चिलको" मे विवाह के चिलके (प्रकाश), "घर की लक्ष्मी" में नव-विवाहिता तारामणि का गृहलक्ष्मी बनना, "दो शास्त्री" मे दो शास्त्रियो के तर्क-वितर्क, "गरू-चेलो" मे गुरु-शिष्योचित कार्यों, "पान वाई" मे नव-विवाहिता पान वाई की प्रसव-पीडा से मृत्यु, "पीर-सासरो" मे स्त्री की दृष्टि मे पीहर और ससुराल के महत्त्व, "गरूजी" मे धनी शिष्यो द्वारा भविष्य मे भी गुरु के आदर, "जवान रो मोल" मे जवान की कीमत, "चिगटै हाली वगीची" मे चिगटो (मैला-कुचैला सेठ) द्वारा वगीची के निर्माण-कार्य "पडदो" मे घूघट-प्रथा के दुष्परिणाम तथा 'फतियै रो व्याव' मे अविवाहित वेवाप फतियै का जोशीजी द्वारा विवाह करवाने इत्यादि की झलक मिलती है । सभी कथायें राजस्थान के शेखावाटी अचल के जन-जीवन से सम्वन्धित हैं । यहाँ के सेठ वाहर

1 मऊ चाली माळवै , ले० नृसिह राजपुरोहित पृ स २६-२७

२ लेखक—मनोहर शर्मा, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर से १९७१ ई० मे प्रकाशित ।

से कमा कर अपने गाँवो मे कुँए, धर्मशालाएँ, मन्दिरो, विद्यालयो एवं औषधालयो आदि का निर्माण करवा कर धर्म और यश दोनो का ही लाभ कमाते हैं। यह भावना इन कथाओ मे प्रकट हुई है। यजमानी-वृत्ति पर निर्भर ब्राह्मणो का यथार्थ जीवन भी चित्रित है। हिन्दू-मुस्लिम इत्यादि जातिओ मे भ्रातृत्व की भावना तथा गृहस्थो की वैवाहिक समस्या का भी चित्रण इनमे है। लेखक ने पात्रो के निर्माण एव उनके चरित्रो मे यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया है।

भाषा-शैली के स्वरूप का एक उदाहरण देखिए—[1]

'मुखजी री बेटी घू घटो काड्या ई धीरै-से बोली, मैं तो जी रै साथै फेरा लिया वै रै ई लार आई हू। पडदो थे परै करो। फेरा रै बखत पिछाण करी ही के? इतगी सुणता ई मुखजी बेटी रै मु ह कानी देख्यो अर हेमजी मुखजी रै मु ह कानी देख्यो। मालोजी दोनू सगा कानी देखर थोड़ा मुळक्या।"

अधिकाश कथायें "मरुवाणी" आदि पत्रिकाओ मे छपी हुई हैं। चिलको, पडदो, जवान गे मोल—इन दो चार कथाओ को छोड शेष सभी नीरस हैं। "खाजी" "दो शास्त्री" "पान बाई" और "गरुजी" आदि को सस्मरण के आवरणो से सजाया जाता तो अधिक ठीक था। क्योकि ये, कहानी की कसौटी पर खरी नही उतरती हैं। "कन्यादान" आदि कुछ कथाओ के अनावश्यक विस्तार से पाठको की ऊब बढ जाती हैं। लेखक पर शेखावटी अ चल का प्रभाव अधिक है। कथाओ मे बडे-बडे वाक्यो का आधिक्य है, कल्पना की कमी है, सवादो तथा मुहावरो-कहावतो का भी नितान्त अभाव है। छपाई की अशुद्धियो का तो कहना ही क्या? भाषा मे राजस्थानी के अन्य कथाकारों जैसी सजीवता की कमी रही हैं।

इनका यह सग्रह सदोप होते हुए भी राजस्थानी कथा-साहित्य को इसने एक विशिष्ट प्रकार की गरिमा प्रदान की है। शेखावटी क्षेत्र का सक्षिप्त मे पूर्ण इतिहास को अकित कर राजस्थानी कथा-साहित्य को प्रदान किया है। अत लेखक सराहना के योग्य हैं।

बरसगांठ [2]

समीक्षा:—एक सौ छियालीस पृष्ठीय इस सग्रह मे तेईम कथाएँ हैं। "बरसगाठ" प्रथम कथा के आधार पर पुस्तक का नामकरण हुआ है। "बरसगाठ" मे वर्ष-गाठ मनाने की आतुरता, "मेहमामो" मे वर्षा से प्रसन्नता, "गाय" मे मूक पशुओ की समझदारी, "लादे आळो" मे लडकियो के विक्रय, "मतीरा-आळो"

1. कन्यादान . ले० मनोहर शर्मा, पृ स २५
2. ले० मुरलीधर व्यास, सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर

मे ग्राहक की शब्द-वापसी, "चेजारो" मे ग्राधुनिक समय के मजदूर-कारीगरो की नीयत, "पेट रो पाप" मे पेट की भूख से अनर्थ की सभावना, "धरम री बेटी" मे भिक्षुक की बेटी को धर्म-बेटी बनाकर लोगो के व्यग्यो को बन्द करने, "लिखमी-पूजन" मे लक्ष्मी-पूजन के महत्त्व, "पलमैं रो मोल" मे इज्जत की रक्षा, "नरमेध या समाज रो नीरो" मे समाज-सुधार के ढोगियो पर तीव्र व्यग्य, 'भाठो" मे पत्थर समझी जाने वाली कन्या की प्रगति का रूप, "मिनखापणो कन ढाढा-पणो" मे चतुरता और मूर्खता का समन्वय, "सचवादो" मे सत्यवक्ता और परोपदेश मे रत कुशल व्यक्तियो पर करारा व्यग्य, "प्रभु रो धरम" मे साम्प्रदायिक दगो मे रक्षक और हत्यारे के स्वभावो, "पराछीत" मे पछतावे का महत्त्व, "सुरेश ' मे बुरी नीयत वाले आदमी के स्वभाव, "व्याव" मे विवाह की फिजूल-खर्ची, "पत्र" मे देश-भक्ति से पूर्ण प्रताप के पत्र, ' वीर कुमलोजी" मे कुशलोजी की वीरता और कार्य-कुशलता, "जय जगलधर बादशाह" मे बीकानेर-नरेश कर्णसिंह की महानता तथा दयालुता, "जाज डूबी" मे परिवार के एकमात्र सहारे की मृत्यु, और "एक मे अनेक" मे प्रोफेसर तथा उनकी अधी पत्नी कमला मे अनेक गुणो के होने इत्यादि का विवरण मिलता है। इनमे पत्र, वीर कुसलोजी तथा जय जगलधर बादशाह ऐतिहासिक कथाएँ हैं। बरसगाठ, जाज डूबी, एक मे अनेक, व्याव, भाठो, ळिखमी-पूजन कथायें अत्यन्त ही सरस एव मनोरजक हैं। भाषा मे मुहावरो, कहावतो, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो तथा सवादो की मनोरमता द्रष्टव्य हैं—रूपजी पल्लै तो रोई मे ही चल्लै, लावो तिलक माधरी वाणी बेईमाना री आ ई निमाणी, जिण घर वाळा उण घर काय रा देवाळा, नव नव ताळ नाचतो हो, नागी वया धोवै क्या निचोवै, माजनै रा तीन टका कर देवै है, मू डै जित्ती ई वाता, फूल्यो को समावतो नी, राब्या इया ई रोती रैसी अर पावणा इया ई जीमता रैसी, पराया घर ऊनै पाणी सू वाळता फिरो हो।

राजस्थानी के शब्द—चिनसोक, सळपोटियो भटलोटियो, थळथळै, तोवड, घतवणी, धीगाणै, तुतगा, भाभडाभूत, गागडदा, राफ्ट, अवकली।

संवाद-प्रधान शैली—[1]

"लाव राड गैणा।
गैणा म्हारै कनै है काई ?
थारी मा-राड कनै सू मागला। नही जद देखै है'क सोटो ?
नितरी री काय री गफ्फट। एक दिन मा'र मूर'र पिंड छुडावो।
फेर राड साभी बोलै है, निसरमी ।... ..."

"बरसगाठ" और "मेहमामो" ये दोनो कथाएँ सग्रह की विषय-सूची में

1. बरसगाठ ले० मुरलीधर व्यास कहानी "नरमेध" पृ स ८१

नही होने पर भी इन्हे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। पुस्तक मे अधिकाश कथायें कथाओ की श्रेणी मे नही आती हैं जैसे लादै आळो, चेजारो, पराछीत, सुरेश, ब्याव, पत्र इत्यादि। पलमै रो मोल, नरमेध और एक मे अनेक—कथाओ को विस्तृत रूप दिया गया है जैसा जीवनी को दिया जाता है। रामले, गोमती, लिखमी आदि पात्र-पात्राओ के अलावा व्यासजी को कोई अन्य नाम सूझे ही नही है जिससे कई कथाओ मे इन्ही नामो की आवृत्ति हुई है। 'राड रा'' शब्द व्यासजी का तकियाकलाम ही होगा जिसके दर्शन स्थान-स्थान पर हो जाते है।

फिर भी भाषा, मूल्य और विषय की दृष्टि से यह सग्रह एक अद्भुत देन के रूप मे प्रकट है।

आदमी रो सीग [1]

समीक्षा :—एक सौ दो पृष्ठीय पुस्तक की तेरह कहानियाँ ग्रामीण सस्कृति से युक्त और सामाजिक हैं। सूवटी, चूनकी आदि ग्रामीण नाम हैं। "सूवटी री बेटी" मे स्वाभाविक और गहन-प्रेम, "ठिकाणो" मे झूठी शान-शौकत एव दिखावे, "चूनकी री मा" मे गरीबी की विवशता, "धरती रो रग" मे अपनत्व और आत्मीयता, "दोजख" मे ऋण के बोझ तथा गरीबी, "परलै" और "आपो" मे ईर्ष्या के भाव, "पाड" मे दरिद्रता, "धन घडी धन भाग" मे आज की दूषित राजनीति के रग, "चिमनी रो च्यानणो" मे पूर्व की सम्पन्नता या समय की परिवर्तनशीलता के प्रभाव, "पीळा हाथ काळो मूढो" मे आधुनिक युवक-युवतियो पर विवाह के बुरे प्रभाव, "मौत री गोठ" मे अपने अडिग स्वभाव तथा जिद्द और "आदमी रो सीग" मे मानवो की छिपी कुत्सित मनोवृत्ति का चित्रण किया है। अन्तिम कथा के नाम पर ही पुस्तक का नाम रखा गया है। सूवटी री बेटी, चूनकी री मा, धरती रो रग, दोजख, पीळा हाथ काळो मूढो कथायें सरस एव मनोरम बन पडी है।

अग्रेजी, राजस्थानी, उर्दू तथा सस्कृत के शब्दो का प्रयोग बडी सतर्कता से किया गया है—इससे भाषा-सहिष्णुता का भाव प्रकट होता है ईनै-बीनै, चाणचकै टिपग्या, अवार, इली-बिली, बग, ओज् , टुकर, टबरा, बोकरो, हरणै, मेरली, धणियाप, कोझी, पिताय, सापडटै, सुस्तायो, सारेकर, डैण, माडा, बेरो, बारोठियो, सफा, खोगाळ, सागण, गदरियो। आवरू, मरम्मत, कैद, कुदरत, तकदीर, करामात, अफसोस, शिकायत, बेमतलब, खारिज, जिन्दगानी, दस्तख्त, हद, दफ्तर,। चेष्टा, राष्ट्रीय, छात्र-ससद्, शान्ति, सत्यानाश, उत्पात, प्रार्थना। रिसेस, इन्स्पेक्टर, रिटायर, ग्रेच्युटी, सिच्यूएशन, पावर। मुहावरो, कहावतो तथा अलकारो की शोभा पुस्तक की कथाओ मे निहित है—लाल टमाटर-सा गाल, सूवै री चूच

1 लेखक—करणीदान बारहठ, राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, बीकानेर

सी नाक, विंधग्या सो मोती, वात रै वाण री चोट, रोही रै जिनावरा सो भोळो-सूधो, आव देख्यो न ताव, साठी बुधि नाठी, आख्या लाल मिरच-सी सुरख, मूंडो दाडम-सो खिलग्यो, वरफ ज्यू पिघळग्यो, छोगे आक-सो खारो लाग्यो, घिग्घी वधगी, इत्ती लम्बी स्कूल ई भूतणी-सी लागै, अैढ लाग्या, जाणै मूक्योडो सतरो हुवै, पतळा पापड सा होठ, घर मे भूवाजी वड जासी, छोडै ज्यू सूकगी।

सवाद-प्रधान शैली के उदाहरणो के साथ-साथ "चूनकी री मा" कथा के प्रारम्भ का ढग कैसा रहा हैं—[1]

"वो पोठो मेर लो।

वा भैस मेरली।

बा गाय मेरली।

गरमी री तानी लूआ मे पीपळ रै रूख री छाया में कई छोरचां पोठा चुगै ही। कनै ही जोडियै मे थोडो पाणी भरयो हो।"

लघु वाक्यावलि का चमत्कार भी पुस्तक मे हैं—[2]

"शर्मा ओजू घबरायो। करै तो काई करै। दोना कानो गडवड। ओ काई होग्यो। ओ तो रोज रो झगडो है। की रै सिर पर ताज मेलै। आछो बगत आयो।"

"धन घडी धन भाग' कथा मे गडमरा, चूतियै, त्रू सठ इत्यादि अपशब्दो का प्रयोग करने पर भी उसकी इतिश्री इस वाक्य [3] के ऊपर आकर हुई है—"दोनू आप आप रो पलग सभाळ लियो हो। घडी देखी तो बारह बजग्या हा।"

ऐसे अपशब्दो एव अश्लीलता का प्रयोग सत्साहित्य मे अशोभनोय रहता है। परलै, चिमनी रो च्यानणो, मौत री गोठ, आदमी रो सीग नीरस कथायें हैं। धन घडी धन भाग तथा धरती रो रग के शीर्षक उपयुक्त नही हैं। तथा "पाड" के शीर्षक भी भ्रमात्मक हैं। "आदमी रो सीग" कथा का स्थान प्रथम होना चाहिए परन्तु लेखक ने उसे अन्तिम स्थान दिया है। लेखक ने 'श' और 'ष' का प्रयोग भी अधिक वार किया है।

आंधै नै आंख्यां [4]

समीक्षा —प्रथम कहानी "ढळै डूगर फळै चट्टान" मे आडम्वर और आस्था का सघर्ष, "फेंट मे आयोडो" मे रिश्वत की फेंट, "रोग रो निदान" मे

---

1. आदमी रो सीग कहानी—"चूनकी री मा" पृ. स १७
2 — यही — " — "धन घडी धन भाग" पृ स ६३
3 — यही — " — "आदमी रो सीग" पृ स ९९
4, ले० अन्नाराम 'सुदामा' सूर्य प्रकाशन, बीकानेर।

ऊपरी आमदनी या रिश्वतखोरी को एक रोग बताने, "बोध" मे भारती बाबू को उनकी माँ द्वारा वास्तविक स्थिति का बोध कराने तथा "आँधै नै आख्या" मे खीप के पौधे ने गरीब गठिये और छोटे-से चिडीखेतिये को नई दिशा प्रदान कर सहयोग का चित्रण किया गया है। "बोध" कहानी मे राजनीतिक स्वाभाविकता, "आँधै नै आंख्या" मे प्रतीकात्मक-शैली और शेष तीनो कहानियो की सामाजिकता अत्यन्त सुरम्य बन पडी है। स्थान-स्थान पर हास्यात्मक प्रसगो से पूर्ण वाक्य भी प्रकट हुए हैं—

(1) "आरा कुणक्योड़ा ही लागां, बिना मतळब बाढी आगली पर ही नही मूता।"

(2) "जाव पूरो, पाच छोरी, तीन छोरा अर ओजू किसो कफ्यू लागग्यो।"

(2) "घणी ईमानदारा में तो नन्दै आळी हुवै।"

(4) "ई री जाग्यां जे कोई 'विशुद्ध आधुनिक' लुगाई म्हारै हुती तो आज सू किता ही बरस पैला का तो बा मनै तिलाक दे ज्यावती अर का हूं अब उमर मे धुळ घुळ मरनो।"

पुस्तक मे यथा स्थान सवादो के दर्शन हो जाते हैं। सभी कथाओ के शीर्षक आकर्षक, सुन्दर एव रोचक हैं। मुहावरो, कहावतो तथा सुभाषितो के प्रयोग भी यत्र-तत्र मिलते है—बहू बछेरा डीकरा नीवडिया परमाण, फूंफो नाराज तो भुवा नै काठी राखो, सूथण पैरे वीनै मूतण नै जाग्या तो राखणी ही पड़ै, जाणै ऊट कीनै बैठतो कीनै बैठै, मू ढो देखता जिसो ही टीको काढ देवता, यत्ने कृते यदि न सिध्यति कोत्र दोष, सब मिलि एक बरण भयो सुरसरि नाम परयो। लेखक की उपमाओ और उत्प्रेक्षाओ के आधिक्य को देखते हुए इसे "राजस्थानी का कालिदास" कहना अधिक उपयुक्त होगा—वो थोड़ै दिना पैला रोज जानकी रो विरोध करतो उग्र अर विरोधी नेता कुर्सी रो करतो हुवै जिया, गाय नै गाळ काढतो भूखो समाज-वादी शोषका नै काढतै हुवै ज्यू, इत्ता होळै किया बोल्या—गबन कियोड़ो बाबू बोलै ज्यू, लुहार री धू कणी-सी बण्योडी, एक हाथ बीरो थोडो थोडो धूजतो हो चालती मोटर मे स्पीडोमीटर री सूइयो धूजतो हुवै जिग्या मा सामो देख बोकरयो गैलो काच कानी देखतो हुवै जियां, धोरो बध बोकरयो मक्कीचूस रै मनमूवा सो, बा एकर चमकी जिया छली री छाया सू कोई साध्वी,एक खीप खडी ही शिव री आराधना मे ऊभी अपर्णा उमा सी एकली। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग श्लाघ्य रहा है—बटकै, इया, मधरो, कितोक, धपटवो, खोपै, ठार, स्याणप, मरतोड, गाळा, मोळी, भळे, कण, वासत्यो, अड़ै-गड़ै, कुणक्योड़ा।

संस्कृत, अंग्रेजी और उर्दू के शब्दो के प्रयोग मे लेखक की भाषा-सहिष्णुता के दर्शन हो जाते हैं—आत्म-सन्तोष, विकारवद्ध, कुसस्कारी, अविरल, समाधिस्थ, ऊहापोह, अप्रत्याशा, आक्रोश, मुखारविन्द, वीतराग, स्थितप्रज्ञ, निदाघ, उत्स, मृगतृष्णा, निश्चेष्ट, वातनाशक, दूषित, अवधूत।

ग्राउण्ड, मीटिंग, पोस्टमार्टम, सस्पेंड, सीसमोग्राफ, स्पीडोमीटर, टेम। वेवाज, वेदाग, कमाल, वल्कि, फजीती, खुराक, फालतू मदद जरूर।

अधिकाश कथाओ का अनावश्यक विस्तार किया गया है। अत्यधिक उपमाओ एव उत्प्रेक्षाओ के बोझ से कथाओ के भाव-प्रवाह मे रुकावट-सी प्रतीत होती है। कई स्थानो पर तो लेखक ने इस तथ्य को जवरदस्ती थोपने का प्रयास किया है। बीकानेरी बोली के प्रयोगाधिक्य से लेखक की भाषा के क्षेत्र मे आचलिक प्रवृत्ति ही लक्षित होती है। संस्कृत, उर्दू और अंग्रेजी शब्दो के आधिक्य की इस पुस्तक मे क्या आवश्यकता थी ? भाषा-सहिष्णुता के भाव को स्पष्ट करने हेतु तो इन भाषाओ के किंचित् शब्द-प्रयोग ही काफी था। कई स्थानो पर 'श' और 'ष' का प्रयोग भी हुआ है जबकि ये वर्ण राजस्थानी भाषा मे हैं ही नही। पुस्तक का नामकरण प्रथम कथा के आधार पर होना चाहिए था।

कुछ दोषो मात्र से ही इस रचना का महत्त्व नही घटा है। लेखक की भाषा-शैली मे वैशिष्ट्य एव मौलिकता होने के कारण यह पुस्तक राजस्थानी कथा-साहित्य की अमूल्य निधि ही है।

लाडेसर[1]

समीक्षा:—तिरेसठ पृष्ठीय पुस्तक मे कुल आठ कथाएँ हैं जो ग्रामीण-जीवन एव समाज से सम्बन्धित हैं। पात्रो के नाम तक ग्रामीण हैं। "लाडेसर" मे शिक्षित वेरोजगार का अपने ही घर मे भारस्वरूप होने, "सुरजी" मे चन्दर का विधवा सुरजी के प्रति अगाध-प्रेम, "कातिग महातम" मे विधवा चनणा का पुजारी के साथ पलायन, 'दूजवर" मे विमाता का वच्चो के साथ दुर्व्यवहार और ईर्ष्या के भाव, "भूरी" मे तृतीय श्रेणी के अध्यापक के आर्थिक सकट, "छाती-कूटो" मे दहेज के विकृत रूप "जापो" मे पुत्रोत्पन्न की तीव्र लालसा, उसका आनन्द तथा नवजात शिशु के दु खद अन्त और "इनामी भाभी" मे इनाम न खुलने की आतुरता, निर्धनता के कारण समाज द्वारा अवहेलना एव पैसो के मान की अनुपम झाकी प्रस्तुत की गई है। प्रथम कथा के नाम पर ही पुस्तक का नामकरण हुआ है। कथाओ की सम्पूर्ण घटनाएँ इहलौकिक एव स्वाभाविक हैं। छोटे छोटे सवादो के अतिरिक्त लघु वाक्यावलि से पूर्ण सरल भाषा का प्रयोग इन कथाओ मे हुआ है—[2]

---

1. ले० वैजनाथ पंवार, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
2. लाडेसर कहानी—लाडेसर, पृ स ४

"ग्रामोज नो मीनो । मीखर दोपारी । भोभर बरसै । खेजडिया मे कमेडी ग्रर चिडकल्या सिसकै । फोगडा मे लू कडी ग्रर सुसिया फलर फलर करै । खेता मे कई मिनख मोठ उपाडै ग्रर कई टापल्या मे पडया तावडियो टाळै । इस्यो हूमसडो कै जी लकोवरण नै जगा को ल्हादै नी । तरवर रो पान भी को हालै नी ।"

राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग तथा नव शब्द-निर्माण की कला भी पुस्तक में प्रकट हुई है—ग्रोखो, हडदा, पळगोड, सरतरियो, हदर, लब्बड धवकै, फिगरग्यो, लरडलप्प, पिदावै, सीठणा, सैम-गैम, रिगल्या, दोगाचिन्ती, ग्रळवद, हळाडोब, ग्रणचारी, पडपाता, हुम्बै, टगारै, सिटग्यो, हतायां, सोपो। ग्रालकारिक-सौष्ठव तथा मुहावरो-कहावतो के दर्शन भी सहजता से हो जाते हैं—मा बापडी भुरती भुरती ग्रोळा मारेडी कमेडी-सी हुगी, वीस वरस री चढती ऊमर काकडियै री ज्यू फाटै, जेवड़ी बळगी पण वट को गयोनी, होणी नै कुण टाळै, हाथी रा दिखाणै रा दात न्यारा ग्रर खावण रा न्यारा, एक पथ ग्रर दो काज, कुण गडेडा मुडदा उखाडै, भूखो तो धाया पतीजै, घायल री गत घायल जाणै, नगद न्याणा ग्रर वीन परणीजै काणा, चढी हाडी रै ठोकर मारणी ग्राछी कोनी, सिघ पकड्यो स्याळियो जे छोडै तो खाय, पाणी पी'र काई जात पूछणी, ठालो बैठो वाणियो घर मे घाल्यो घोडो।

तगादो [1]

समीक्षा — नव्वे पृष्ठीय इस सकलन मे दस कथायें निहित हैं। पुस्तक का नामकरण ग्रन्तिम कथा के ग्राधार पर हुग्रा है। "वाता" मे जीजा ग्रौर साली की वातो, "वापडा भगत" मे ढोगी ग्रौर स्वार्थी भक्तो के दिखावो, "उड़दो" मे बच्चो के खेलने, लडने तथा वापिस राजी होने, "पछतावो" मे पैन की ग्रप्राप्ति मे पश्चात्ताप, "फोडा" मे निजी बाधाग्रो "बाइस्कोप" मे ग्रामीणो के ग्रत्यन्त भोलेपन, "हेलो" मे चाय पीने की ग्रावाज पर विचारमग्न मास्टरजी के चमकने, "योग्यतावा रै घेरै मे" नेताजी ग्रादि के झूठे वादो एव वहकावो के प्रति जनता की जागृति, "ढोग" मे मानवता-विरोधी सेठो के ढोग, तथा "तगादो" मे ग्रर्थ-विपन्न मानवो की विचित्र दशाग्रो के चित्रण मिलते हैं। सभी कथायें वालोपयोगी ही दिखाई देती हैं। कुछ कथाग्रो की शैली मे नवीनता ग्राई है जैसे "फोडा" मे पत्रात्मक-शैली का प्रयोग। "बाइस्कोप" के मूला काका जैसे भोले-भाले ग्रौर मूर्ख पात्रो की ग्राज भी गाँवो मे कमी नही हैं। मुहावरो, कहावतो तथा उपमा ग्रादि के प्रयोग मे लेखक पटु हैं—

---

1. लेखक—भवरलाल सुथार 'भ्रमर' १९७२ ई० मे प्रकाशित।

रोजीनै री राडना सू वाड ई चोखी, खरची खूटी'र यारी टूटी, वो छोरो इया राजी हुय रैयो है जाणै राजस्थान लाटरी रो सान्त्वना पुरस्कार मिलग्यो हुवै, इयै तिला मे तेल कोनी, रगो सियार है सालो, मारणी गाय आळै दाई आख्या काढ'र धमकी दी, वै लप देणा ऊभा हुयग्या जाणै विच्छू खायगो हुवै, वै चोरी करता रंगे हाथा पकडीजगा ।

भाषा के सारल्य का उदाहरण—[1]

"आज तारीख तीन हुयग्यी, ई खातर मा बाप तिणखा नै आख्या फाड्या अडीक रैया है । अडीकै तो सरी, दूजो कुण है कमावण आळो ? आरी'स अबै सरधा रैयी को'नी अर लेणायत ई तो केई है । ई खातर आजकल काकोजी रै चिडचिडीपन कई जादाई है ।"

उडदो, वाइस्कोप, हेलो और "योग्यतावा रै घेरै मे "कथाओ के शीर्षक भ्रमात्मक हैं । वापडा भगत, पछतावो और हेलो कथाओ को रेखाचित्रो का रूप दिया जाता तो ठीक रहता । ऐसी वालोपयोगी कथाओ मे बाइचास, वायस्कोप, आत्मघात, आत्मीय, घातक, निष्ठावान्, तिरस्कार, लोकप्रियता इत्यादि शब्दो का प्रयोग अस्वाभाविक है । 'श' और 'ष' का प्रयोग करना भी लेखक की त्रुटि है । मूल्य भी पुस्तक का अधिक है ।

परण्योड़ी कंवारी 2

समीक्षा —एक सो अडतालीस पृष्ठीय इस सग्रह मे जोशीजी की बीस कथाये समाविष्ट हैं । "नाटक" मे पुलिस वालो के प्रभाव, 'छत्तर छंया" मे मृता मा की वेटे पर कृपा रहने, ' भाडेती" मे शहर मे कु वारे व्यक्ति के लिए किराया के मकान की समस्या, "वाप रो औसर" मे मौसर की रूढि को निभाने, "मोला-योडी लाडी" मे अनमेल विवाह के दुष्परिणाम, "काल ले जाये" मे हरिजनोत्थान, "छुट्टी री मौज" मे छुट्टी के दिन का महत्त्व, "कमला रो वाप" मे गुणवती पुत्री कमला की प्रगति एव उसकी आदर की भावना, "मनै सत्तो हुवण दो" मे एक स्त्री के मरने पर उसके पति और प्रेमी मे उसके पीछे जलने का विवाद "कवारो चौधरी" मे गुण्डो द्वारा कु वारे चौधरी की जमीन एव पू जी हडपने की नीति मे असफल होने, "कोनफीडेंसल रिपोट" मे अधिकारी की महानता, "बधण री वेला" मे समय के औचित्य, "तेरै दिना री छुट्टी" मे निम्न विचारो वाले अधिकारी को उसके उच्चाधिकारी द्वारा सबक सिखाने, "घरणी अर भरणी" मे गृहिणी तथा भरण-पोषण करने वाली पत्नी के दो रूपो, "मगल वेला मे आसू" मे राष्ट्रभाषा के साथ राष्ट्र-प्रेम, "परण्योडी कवारी" में नपु सक पति की प्राप्ति पर पत्नी के

1 तगादो कहानी—तगादो, पृ स ८३

2 ले० श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थानी साहित्य अकादमी, उदयपुर ।

अभावयुक्त जीवन, "एक वस एक" मे सच्चे प्रेम के उद्‌गारो "कथनी अर करणी" मे कथनी और करनी मे अन्तर, "अमर मिनख" में साहित्यकार के अमर मिनख' उपन्यास की चर्चा तथा "साळी री फेट मे" मे लडकी देखने जाने वाले जीजा की अज्ञातावस्था मे साली से छेडछाड इत्यादि तथ्यो का परिचय मिलता है। मोलायोडी लाडी, भाडेती, कमला रो वाप, कोनफीडेंसल रिपोर्ट, परण्योडी कवारी और साळी री फेट मे--कथाएँ अत्यन्त ही उत्कृष्ट वन पडी हैं। "मनै सत्तो हुवण दो" मे हसी के फव्वारे छूटे विना नही रह सकते। इस कथा का अन्त कितना हास्यप्रद एव हृदय-स्पर्शी है—

"ठीक आज रै दिन गणेस चौथ नै बी सरीर छोड्यो, ई सुलोचना रै कारण। सत्तो बो हुयग्यो। थे काई हुसो ?"

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो तथा लेखक की नव शब्द-निर्माण की कला स्तुत्य है—हवाहोळ, सैंपूर, चकरीवव, कदास, सोरप, सागीडी, गू भारियै, हवड-बोच, गिनारी, वौळीजगी, पसवाडलै इत्यादि।

अलकारो, मुहावरो तथा कहावतो का प्रयोग तो पूरी पुस्तक मे यथोचित मात्रा मे किया गया है। पति के नपु सकत्व के कारण चिन्तित पत्नी के मनोभाव सरल भाषा मे द्रष्टव्य है—

"थारा जीजोजी मनै लेवण नै आयग्या। बारा लाड कोड कर्‌या अर वानै दो दिन राख्या। पण सरला, म्हारै सोनलिया सुपना री लंका खातर थारो जीजो हड़मान सावत हुयो। म्हारा सपना बळ वळ'र राख हुयग्या। मनै ठा पडी कै म्है पूरवलै जळम मे कोई घोर कुकरम कर्‌यो हो। मनै लिखता सरम लागै—म्हारो अखड जोवन भी उण बाळ-ब्रह्मचारी नै डिगावण मे सिमरथ नई हुयो अर मनै इ'या लखायो जाणै म्हारै पसवाडै जीवती लास सूती है। बा रात कित्ती लाम्बी लागी अर दोरी खूटी, म्हारो जीव ही जाणै।"[1]

कुछ कथाएँ नीरसता की वर्षा करने वाली हैं। पुस्तक का शीर्षक प्रथम कथा के नाम पर ही रखा जाना चाहिए था। निष्कर्षत पुस्तक सराहना के योग्य वन पडी है। जोशीजी मे भाषा की दृष्टि से भी आचलिक प्रवृत्ति नही दिखाई देती है।

प्रेतात्मा री प्रीत[2]

समीक्षा :—छिहत्तर पृष्ठो वाले इस सग्रह मे लेखक की पन्द्रह कथाएँ

1 परण्योडी कवारी ले० श्रीलाल नथमल जोशी, पृ स १०९

2. ले० दामोदरप्रसाद शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य सगम वीकानेर

हैं। "चितराम" मे क्लर्क हरनाथ की दयनीय दशा, "प्रेम री पाती" मे जमीन के बटवारे और मा की मृत्यु को बाद आए रामसिंह का अन्तर्द्वन्द्व, "कविता कसूर कीरत" मे पत्नी से नाराज बारहठजी का कविता द्वारा पत्नी के चरित्र को उज्ज्वल बनाने, "दो भाई अर दो चितराम" मे दो भाइयो के राज्यारोहण तथा राज्य-त्याग के चित्रो, "हमजोळो" मे मरणासन्न दशा मे प्रेमिका को स्वीकार करने, "आलीजा म्हानै वीर मिलण रो कोड" मे स्त्री के पीहर-प्रेम, "प्रेतात्मा री प्रीत" मे मृता मा की जीवित हत्यारे बेटे पर प्रेतात्मा के रूप मे प्रीति, "सम्पादक री समस्या" मे पर्याप्त सामग्री के अभाव में सम्पादक की समस्या, "चढ चल्यो राव रूणीचै रो' मे अवतारी रामदेवजी द्वारा गर्वी जीजा के गर्व को नष्ट करने, "पछीडा रा बोल" मे वन मे दो पक्षियो के बोलो से सर्वनाश होने के बाद पछतावा करने, "सुपनै रो छळ" मे उपन्यास-लेखन विषयक स्वप्न-कथा, "एक म्यान अर दो तलवार" मे भारतीय नारी की सुहाग के प्रति भक्ति और उसके सतीत्व 'मीरा अर भोजराज" मे मीरा की कृष्ण-भक्ति, "विसदत रो बलिदान" में विषदन्त नाग द्वारा कृतज्ञता प्रकट करने तथा "परदेसी री प्रीत" मे दूर रहने वाले व्यक्ति को स्वय का देश भी परदेश-सा लगने इत्यादि प्रसग इन सभी कथाओ मे उभरे हैं। चितराम, प्रेम री पाती प्रेतात्मा री प्रीत, एक म्यान अर दो तलवार तथा विसदत रो बलिदान श्रेष्ठ कथाएँ हैं। कुछ कथाओ मे ऐतिहासिक तत्त्व अपने अनूठे रूप मे प्रकट हुआ है। अलकारो, मुहावरो तथा कहावतो से पूर्ण यह सग्रह बडा मनोरम बन पडा है—

हियै मे भावना रो तूफान अर चाल मे पून रो वेग, बादळ बरणी ओढणी मे पोयण फूल सी कवळी काया छिपाया, आसुवा री बू दा नै इण विध मसल कर आछी करी जाणै कोई माछर काट खायो, रूई-सी बरफ, कचन-बरणी कामणी-सी बीजळ नाचै, रोया राबडी कुण घालै, गोडा टेकणा पडया, कागलै री ज्यू काला वस्तर पैर्यां, सापा नै दूध पाया जैर ई बधै, मरती मछली नै जल मिल्यो, साहित रो सोमनाथ, चित्रगुप्त सो मुसी।

सवाद-प्रधान शैली की छटा दर्शनीय है—[1]

"आप पैली कदै दिल्ली आया हा ?
जी हा सा'ब।
आप कदै गोरा री फौज मे हुया हा ?
ना सा'ब! पल्टण मू म्हारो काई काम ?
तो कदै सिपाही री नोकरी नी करी ? जज सा'ब सवाल कर्‌यो।
ना सा'ब मैं तो मामूली सो आदमी हूँ।"

1 प्रेतात्मा री प्रीत कहानी "सुपनै रो छळ" पृ. स ५७-५८

सक्षिप्त कथाओ को परिच्छेदो मे बाटना अनुचित है परन्तु लेखक ने इसकी तरफ ध्यान नही दिया है। कुछ कथायें नीरस हैं और कुछ केवल वार्तालापो या निबन्धो की श्रेणी के योग्य। "दो भाई अर दो चितराम" मे दो घटनाओ का चित्रण करना भी अस्वाभाविक है। इसी प्रकार "हमजोली" तथा "सम्पादक री समस्या" कथाओ मे भी लेखक ने विषय-गत दोष रखे है। "सम्पादक री समस्या" मे सस्कृत के श्लोको तथा पूरे सग्रह मे सस्कृत के शब्दो का आधिक्य भी अनुपयुक्त है। मैं, उत्तर आदि शब्द ज्यो के त्यो प्रयुक्त है। कई प्रकाशित कथाओ को भी सग्रह मे स्थान दिया गया है। "मीरा अर भोजराज" मे पृष्ठ ६७ तथा ६८ के सवादो मे लेखक ने भूल की है जो भोजराज के हृदय मे उठे भाव-शब्द मीरा के द्वारा कथित बता दिए है। और कुछ नही तो राजस्थानी कथा-साहित्य के विकास मे तो इस सग्रह का कुछ योगदान रहा है। सदोष होने पर किसी कृति को हम भुला तो नही सकते।

अब यहाँ कुछ कथा-सकलनो की समीक्षाएँ की जा रही है जिनमे विभिन्न कथाकारो की कथायें प्रकाशित हुई है :—

राजस्थान के कहानीकार (राजस्थानी)[1]

समीक्षा —एक सौ अडतालीस पृष्ठीय इस सकलन मे तीस-इकतीस कथा-कारो की विभिन्न कहानियाँ सकलित है। मुरलीधर व्यास की "जाज डूबी" मे परिवार के एकमात्र सहारे का चल वसना, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की "रजपूताणी" मे राजपूतनी के अन्तर्द्वन्द्व, यादवेन्द्र शर्मा की "तानो" मे तेजा की वीरता तथा उसका वचन-पालन, नानूराम सस्कर्त्ता की "दूध गिलोडो" मे किसान फूसे के हृदय की दशा, सौभाग्यसिह की "लोहियाणा रो कुंवर" मे प्रण-पालक कुंवर के शौर्य, किशोर कल्पनाकान्त की "अतिम कागद" मे विधवा राधा के अतिम पत्र का प्रभाव, वैजनाथ की "भूरी" मे उच्च पद से परिवर्तन, भगवानदत्त की "अवार अन्दाता नै अरज करू" और "मानखै रो मोल" मे रामधन के तकिया-कलाम और नश्वर मानव का मूल्य, चाकलान की "नातो" मे नाता के कष्टो, जगदीश माथुर की "सन्नो भौजी" मे सन्नो भाभी के परिवर्तित स्वभाव, नारायणदत्त की "सॅवर" मे मर्द-स्वयवर का नया विचार सूर्यशकर की "हियो तणो उपाय" मे प्रत्युत्पन्नमति, जोशीजी की "भाडेती" मे कुंवारो के लिए मकान-समस्या, हणमान-सिह की "हुमेर" मे अभिलाषा की अनन्तता, दामोदरप्रसाद की "चितराम" मे क्लर्क की दयनीय दशा, भवरलाल नाहटा की "न्याय-इन्याय रो पइसो" मे न्याय-अन्याय का प्रत्यक्ष प्रभाव, रामदत्त की "गगली" मे निम्न जाति की पवित्र जीवन-यापन करने वाली गगली द्वारा उच्चवर्गीय दुश्चरित्राओ पर तीखा प्रहार, रामदेव की

1 स दीनदयाल ओझा, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

"लिछमी रो लाडलो" मे दोषो का प्रकटीकरण, रामप्यारी की "बीटी काठी घणी है काई" मे सेठ की चतुराई, देवनारायण की "यादगार"मे घुडले के मेले का रहस्यो-द्घाटन, गुलाबकुमारी की "माघजी पडित" मे पुस्तकीय ज्ञान की हसी, बदरीप्रसाद की "बारणैं नै भरूखैं रो कजियो" मे घर के मुख्य द्वार तथा झरोखे का विवाद, जेठाराम की "ऊधो तूजो" मे दुर्गुणों एव रूढियो का पर्दाफाश, मुन्नालाल की "ऊट रो भाडो" मे लाधजी की वीरता, नृसिह राजपुरोहित की "पुन्न रो काम" मे पातको मे पुण्य कार्यो का दर्शन, गोपीवल्लभ की "म्हारै व्याव री बात चाल पडी" मे विवाह के के दोषो, कुम्भाराम की "सपूत-कपूत" मे सपूत बाप एव कपूत बेटे के कार्यों की झाकी, श्रीचन्दराय की "खरो सनेव" मे सच्चे प्रेम की झलक, मोतीसिंह की "राजा भोज री पदर्वी विद्या" मे भोज की विशेष विद्या का उल्लेख—इत्यादि तथ्यो का चित्रण इनमे मिलता है। इनमे से कुछ कथाएँ ऐतिहासिक, सामाजिक तथा बोध कथायें भी हैं। विषय, उद्देश्य तथा भाषा-सौन्दर्य की दृष्टि से अधिकाश कथाएँ श्रेष्ठ बन पडी हैं। सवादो, मुहावरो, कहावतो, अलकारो, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो, तथा लघुवाक्यावलि की रश्मियाँ स्थान-स्थान पर बिखरी हुई दिखाई देती हैं। अधिकाश कथाकारो मे भाषा-सहिष्णुता का भाव भी विद्यमान है।

गवारू भाषा मे लिखित सस्कर्त्ता की "दूध गिलोडो" कथा को स्थान देना, कुछ रेखाचित्रो को कहानियाँ स्वीकार करना, छोटी छोटी नीति और बाल-कथाओ को इस पुस्तक मे स्थान देना, कुछ लेखको मे भाषा की दृष्टि से आचलिक-प्रवृत्ति का होना तथा कई पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित कथाओ को भी इस पुस्तक मे स्थान देना—इत्यादि बातें कुछ अशोभनीय एव अनुचित लगती हैं। फिर भी इस क्षेत्र मे सम्पादक का प्रयास श्लाघ्य रहा है।

राजस्थानी रा प्रतिनिधि कथाकार[1]

समीक्षा — एक सौ बारह पृष्ठीय इस सकलन मे राजस्थानी के प्रतिनिधि कथाकारो की अनेक कहानियाँ निहित है। नृसिह राजपुरोहित की "पेट री दाझ" मे हत्यारे और घृणित बेटे मे माँ का पेट जलना, सस्कर्त्ता की 'रामै री गाय" मे गाय का दु खद अन्त, विनोद सोमानी की 'ग्लानि अर ग्लानि" मे निर्दोष मुनीम की पिटाई पर मजदूर शीतल को ग्लानि होना, जगदीश माथुर की "जाजम" मे प्रतिशोध के भाव की शान्ति और अछूतो के प्रति सहानुभूति, रामनिवास शर्मा 'मयक' की ' दिन एक तारीख रो" मे एक वेतनभोगी कर्मचारी की आर्थिक स्थिति, मनोहर शर्मा की ' गुरुजी मे यजमानी गुरुत्व की वृत्ति, दामोदरप्रसाद की ' सुपनै रो छळ" में लेखक की स्वप्न-कथा, मूलचन्द 'प्राणेश' की ' दोय कूकरिया" मे मानव की स्वार्थ-प्रवृत्ति का चित्रण, वेद व्यास की "सिकताव" मे एक विधवा के

1. स. मूलचन्द 'प्राणेश' राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर।

दु खद उद्‌गारो, जगदीशसिंह की "रात रै अंधियारै मे" परिस्थितिवश स्त्रियों का गुमराह होना, सूर्यशकर पारीक की "तेलो वानो" मे स्त्री के युवती और वृद्धा रूपो, रामनिवास शर्मा की "सुहागरण-भागरण" मे चौथ माता के प्रभाव, विद्याधर शास्त्री की "गैळ" मे स्त्री के नशे अजीतसिंह 'भ्रमरा' की 'एक नूंई वात" मे परिस्थितियो एव समय की शक्ति, माणक तिवारी की "निरभागरण" मे पति द्वारा तिरस्कृता पत्नी की मनोदशा, रामस्वरूप 'परेश की 'वुद्ध रो वस्ट" मे मानव की मन स्थिति, वैजनाथ की "पासो" मे रूढि-वादिता, झूठी शान-शौकत और पर्दा-प्रथा का विरोध करते हुए श्रम का महत्त्व, दीनदयाल ओझा की "वेलडी रा ताता" मे दो विरोधी स्वभाव वाली स्त्रियो के चरित्रो, सवाईसिंह की "नकली आमेर असली कछावा" मे जन्म-भूमि-प्रेम, शिवराज छगाणी की 'दुरासीस" मे दीनो पर अत्याचार तथा रिश्वत के धन का दुष्परिणाम, भवरलाल छलानी की 'खुण्डपगो" मे असभव का सभव होना, मुरलीधर व्यास की 'वाक फाटगी" मे रिश्वत के आदान-प्रदान, मोतीलाल की "अणहूत" मे अकालग्रस्तो की दुर्दशा— इत्यादि तथ्य सामने आये हैं। मनोवैज्ञानिक कथा "वुद्ध रो वस्ट" ऐतिहासिक कथा "नकली आमेर असली कछावा" पौराणिक कथा "सुहागरण-भागरण" को छोड शेष सभी सामाजिक आदर्शोन्मुखी कथाएँ है। भाषा और भावो की दृष्टि से ग्लानि अर ग्लानि, वाक फाटगी, रात रै अंधियारै मे. पेट री दाझ, दोय कूकरिया, जाजम, पासो श्रेष्ठ कथाएँ हैं। मुहावरो, कहावतो, अलकारो का सौन्दर्य, नव शब्दो का समावेश, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग, सस्कृत और उर्दू के शब्दो का यथोचित मात्रा मे प्रयोग प्राय सभी कहानियो मे मिलते हैं।

कुछ ही कथाओ को छोड, सभी कथाओ मे 'श' और 'प' के प्रयोग देखे गए हैं। अधिकाश कहानीकारो की भाषा पर क्षेत्रीयता का आवरण आच्छादित है। वुद्ध रो वस्ट, अणहूत, एक नूंई वात, तेलो वानो, सुपनै रो छल, गुरुजी आदि कथाएँ नीरस है। कई कथाओ मे उर्दू और सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य रहा है। फिर भी यह सकलन अपने प्रयास मे सफल रहा है। राजस्थानी कथा-साहित्य की प्रगति मे भी इसको वहुत कुछ श्रेय दिया जा सकता हैं।

माला[1]

समीक्षा :—वारह कहानियो के अलावा इस पुस्तक मे गद्यगीत, एकाकी, सस्मरण, निवन्ध और रेखाचित्र भी है। अन्नाराम 'सुदामा' की 'गुनैगार" मे प्रतीक्षा की तीव्र घडियो, नृसिह राजपुरोहित की 'ऊतर भीखा म्हारी वारी" मे काल-परिवर्तन के प्रभाव, गणेश्वरदयाल की 'बडो वावू" मे गवन के आक्षेप का प्रभाव, मीठालाल की 'सान" मे धन्ने के प्रति रुचि, शार्दूलसिंह की "गंगा रो

1. स. गुरु इकवालसिंह तथा प्रेम सक्सेना, शिक्षा विभाग, वीकानेर।

नीर'' मे उमली के पवित्र चरित्र, करणीदान की 'सूवटी री बेटी'' मे सोनडी के अवैध सम्बन्ध, मोहनसिंह की ''ढळती रात'' मे प्रेम की गहराई, अमोलकचन्द की 'एक हाथ रो पीसो'' मे बच्चो पर नक्सलपथी बनने के झूठे आरोप, रघुनाथसिंह की ''पीण्ड्यां रो मास'' मे एक गरीब ठाकुर का अपूर्व त्याग सावर दईया की 'सुकडीजता आगरणा'' मे मनोवैज्ञानिकता, बसतीलाल की ''चार अकल (सीख)'' मे चार शिक्षाओ, तथा भवरलाल सुथार की 'सनीमा'' मे भोले-भाले और मूर्ख ग्रामीण की मनोवृत्ति—आदि तथ्यो का निरूपण किया गया है। गुनैगार, बडो बावू, गगा रो नीर तथा ढळती रात दु खान्त कथाएँ हैं जो पाठको के मर्म को छूने वाली हैं। सूवटी री मा, ढळती रात, सनीमा ऊतर भीखा म्हारी बारी—सकलन की श्रेष्ठ कथायें हैं। पुस्तक का शीर्षक ''माळा'' उचित है क्योकि 'माळा'' मे फूल पिरोये जाते है तथा इसका शाब्दिक अर्थ भी 'समूह'' होता है। इसमे कई विधाओ का समूह हैं। अधिकाश कथाओ मे सरस सवादो, हास्य तथा आलकारिक-सुषमा का प्रयोग यथोचित मात्रा मे हुआ है।

अधिकाश कथाएँ अन्यान्य सग्रहो तथा पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुकी हैं। कई कथाओ मे उर्दू और सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य रहा है। एक हाथ रो पीसो तथा सुकडीजता आगरणा कथायें अत्यन्त नीरस हैं। प्राय सभी लेखक भाषा की दृष्टि से क्षेत्रीयता के सरोवर में निमग्न हैं। ''चार अकल'' जैसी कथा का युग समाप्त हो चुका है। ''पीण्ड्या रो मास'' में ठाकुर ने मास काट कर बारहठजी को परोसा—यह जगली वृत्ति इस युग में भी है क्या ? मानव का खून पीने वाले तो आज भी हैं परन्तु मास-भक्षक नही।

निष्कर्षत यह सकलन राजस्थानी गद्य-साहित्य को बहुत कुछ दे सका है।

जूनां बेली : नुंवां बेली [1]

समीक्षा — नौ कहानियो के साथ एकांकी, रेखाचित्र तथा कविताओ को भी इस सकलन मे स्थान दिया है। रघुनाथसिंह की 'अकाळ ऊपरलो काळ'' मे इज्जत और प्रतिष्ठा के सर्वाधिक महत्त्व, मोहनसिंह की 'सूकेडा आसू'' मे अत्यधिक दु खाग्नि के कारण आसुओं के सूखने, गोपाल 'राजस्थानी' की 'कुणाल'' मे सम्राट् अशोक के पुत्र की कठिन परीक्षा की घडियो, मोहन पुरोहित की 'जूनो वेली नुवो वेली'' में नए साथियो की प्राप्ति के बाद पुराने साथियो के महत्त्व मे कमी, वशी बावरा की ''माड साव'' में परोपकारी, त्यागी तथा सेवाभावी हिन्दी अध्यापक, सावर दईया की ''क्षयग्रस्त'' मे क्षयग्रस्ता वेश्या से फतियै नामक व्यक्ति को घृणा, नृसिंह राजपुरोहित की ''सिणगारी'' मे भीषण अकाल की चपेट मे आई

1, सम्पादक—शिवरतन थानवी तथा पुरुषोत्तम तिवाडी, शिक्षा विभाग, बीकानेर,

सिणगारी नाम की स्त्री की दु खद दिनचर्या, मीठालाल की 'नु वी राह'' मे विधवा-विवाह, और देवकिशन की 'मोसरवद'' मे रिश्वतखोरी के प्रभाव इत्यादि का सागोपाग वर्णन मिलता है। ऐनिहासिक कथा 'कुणाल'' को छोड शेष सभी ग्रामीण वातावरण से ओतप्रोत कथाएँ हैं। जू नो वेली नु वो वेली, क्षयग्रस्त, नु वी राह तथा अकाळ ऊपरलो काळ—कथाएँ श्रेष्ठ वन पडी है। सूकेडा आसू, सिणगारी तथा मोसर वद जैसी कहानियो मे स्वाभाविकता के दर्शन होते हैं। "क्षयग्रस्त" कथा मे हास्य के उदाहरण भी प्राप्त होते हैं। कहावतो, मुहावरो, अलकारो, सवादो तथा लघुवाक्यावलियो के दर्शन भी कथाओ मे होते है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग में भी अधिकाश कथाकार पटु है।

अधिकाश कहानीकारो पर आचलिक प्रभाव भी है—विशेषत. भाषा के क्षेत्र में। पुस्तक का नामकरण भ्रमात्मक है। 'क्षयग्रस्त'' जैसी कथा में सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य रहा है। 'कुणाल'' जैसी ऐतिहासिक कथा और 'मोसर वद'' जैसी वालोपयोगी कथा को इस सकलन में स्थान देना अनुपयुक्त है।

बारखड़ी[1]

समीक्षा —एक सौ आठ पृष्ठीय इस सकलन में अन्यान्य गद्य-विधाओ के साथ कहानियाँ केवल आठ ही हैं। नृसिह राजपुरोहित की 'निवली नाड़'' में पाखण्डी साधुओ तथा जनता की अन्ध-भक्ति, रामेश्वरदयाल की 'भड़ूरा'' में कथनी और करनी मे अन्तर, अन्नाराम 'सुदामा' की "की सूरज री मौत'' में पू जीपतियों और गरीवो की विरोधी प्रवृत्तियो, सावर दईया की "गळी वणता घर'' में गली-गली मे व्याप्त व्यभिचार, रामस्वरूप 'परेश' की "उडीक'' में प्रतीक्षा की तीव्रता तथा "दो रूपक'' मे प्रतीकात्मकता से युक्त उपदेश के सकेतों, मोहन पुरोहित की "जीवती लाश" मे जीवितावस्था मे ही लाश के समान अनुभव होने तथा करणीदान की "च्यानणो'' मे रिश्वत के कुप्रभाव के सागोपांग दर्शन होते है। निवली नाड, गळी वणता घर तथा उडीक कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली मे होती हुई भी मनोरजन और आदर्शो से परे नहीं है। उडीक, गली वणता घर तथा जीवती लाश कथाएँ मनोविज्ञान के अधिक निकट हैं। सवादो की दृष्टि से सूरज री मौत, जीवती लाश तथा भड़ूरा कहानियाँ अत्यन्त ही रोचक वन पडी हैं। "भड़ूरा" कथा का सवाद उदाहरणार्थ प्रस्तुत है—[2]

"थे कम्पलेंट वुक देवो कोनी ?
थारे जैड़ा निराई घानिया-भगवानिया फिरै।

---

1 सम्पादक—वेद व्यास, शिक्षा विभाग राजस्थान, वीकानेर।
2 वारखड़ी . "भड़ूरा"—कहानी, पृ स १५

था नैदेगी पदमी
जा रे ! देखियो थनै वाऊ मख ने ।
लो ठीक है, इण रूट माथै वस चलावणी भूल जावैला ।
लो'सा, रावडी ई केवै म्हने दाता सू खावो ।"

प्राय सभी लेखको मे अन्यान्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव है। सभी कथाओ मे आलकारिकता, मुहावरो-कहावतो का सौन्दर्य यत्र-तत्र विकीर्ण है। अधिकाश कथाकार नव शब्द-निर्माता है। कहानीकारो की भाषा सरल, स्पष्ट, सजीव एव प्रवाहमय है।

सभी लेखको पर अपने अपने क्षेत्र की वोलियो का जवरदस्त प्रभाव तो नही अपितु आशिक अवश्य है। मूलत सकलन की सर्जना सराहनीय रही है। समय समय पर राजस्थानी के प्रकाशन करवा कर शिक्षा विभाग राजस्थानी साहित्य की श्री-वृद्धि करने का प्रयास कर रहा है।

संभाळ[1]

समीक्षा :—एक सौ चार पृष्ठीय इस पुस्तक मे कुल 5 लेखको की रचनायें प्रकाशित हुई हैं। इनमे रामेश्वरदयाल श्रीमाली की दस, विश्वरम्भरप्रसाद शर्मा की तीन, सावर दईया की दो, मोहनसिंह की तीन तथा मुरलीधर शर्मा की एक, कहानियां सकलित है।

पुस्तक का शीर्षक "सभाळ" सुन्दर है। रामेश्वरदयाल श्रीमाली की "सळवटा" मे नही कमाने वाले पति की पत्नी के समक्ष स्थिति "जसोदा" मे गरीब भोली मजदूरनी के चरित्र, "काचळी" मे वृद्धा समधिन के वात्सल्य, "म्हैं गुनैगार हू" मे आत्मकथात्मक शैली मे अपने हृदय के उद्गारो, "सजीवण" मे एक अध्यापक के निरादृत जीवन, "खाजरू" मे झूठी शान-शौकत एव वडप्पन, 'वडो वावू' मे गवन का प्रभाव, "लाल वत्ती" मे नियम रूपी लाल वत्ती, "सगपण" मे आधुनिक युग मे भाई-वहिन के सस्ते सम्वन्ध तथा "ओ घर म्हारो कोनी" मे पढे-लिखे वेरोजगार व्यक्ति के हृदय के उद्गारो की झलक है।

विश्वम्भरप्रसाद शर्मा की तीन रचनायें कहानी की श्रेणी मे नही अपितु गद्यगीतों की कोटि मे आ सकती हैं। तीनो गद्यगीतो मे लेखक ने प्रकृति और कवि के तादात्म्य की झलकी प्रस्तुत की है। "ओल्यु" "एक कवर लाडली हरखी" तथा "मधरी वेळा री अमी फुवार" इस दृष्टि से सफल है। सम्पादक ने इन्हें कहानी का रूप कैसे दे दिया है? वडे अचम्भे की वात है।

---

1 स [illegible] यदान देथ, शिक्षा विभाग, राजस्थान वीकानेर।

मोहनसिंह की "माकड़ैला" मे सकट की घडियो की भीषणता, "समझा-वणी" मे शिक्षित लोगो की मूर्खता पर व्यग्य "थारो राज" मे एक उत्कृष्ट व्यग्य के दर्शन होते है। सावर दईया की "मुग्रावजो" मे समाज की एक भोली-भाली लड़की के धोखा खाने का सही चित्र तथा "पैरवी" मे सोदाहरण पैरवी के भाव को अकित किया है। मुरलीधर शर्मा विमल' की केवल एक ही कथा है—वह भी वडी उत्कृष्ट कोटि की। "तमासो नु ई दीठ रो" कथा मे सन्देही व्यक्ति के हृदय मे सन्देह-सागर उमडने की झलक है। इनकी भाषा की रोचकता का उदाहरण दर्शनीय है—[1]

"वी दिन म्हैं घर रै माय कम रिया। सिञ्झ्या ताई सड़क माथै, रेलवाई ठैमरण माथै अर बस स्टैण्ड माथै फिरता रिया। अबै म्हारै डोळा माथै पुलिस रो चममो वैठ्यो हो। रात ताई एक मोटी लिस्ट त्यार होयग्यी।"

सकलन की अधिकाश कथायें मनोरजक, आकर्पक एव सरस है। भाषा-शैली की दृष्टि से भी प्राय सभी रचनाएँ मनोरम वन पडी है। इस दृष्टि से श्रीमालीजी का अभूतपूर्व स्थान है। भाषा-सारल्य का स्वरूप मुरलीधर शर्मा की कथा मे अधि-काशत मिलता है।

सम्पादक की, रचनाओ के चयन सम्वन्धी, कुछ त्रुटियाँ भले ही हो, जिसका दोष इस सकलन पर नही मढा जा सकता। अव कथा-तत्त्वो के आधार पर राज-स्थानी कहानी की प्रवृत्तियो पर विचार करना चाहिए। इस दृष्टि से कहानी के चार भेद किये जा सकते हैं—घटना-प्रधान, भाव-प्रधान, वातावरण-प्रधान तथा चरित्र-प्रधान। घटना-प्रधान कहानियो मे मनोरजन का ध्येय मुख्य होता है। राजस्थानी में प्रारम्भिक अवस्था की कहानियाँ ऐसी रही है। मुरलीधर व्यास, नानूराम सस्कर्त्ता नृसिह राजपुरोहित, वैजनाथ पवार, मनोहर शर्मा तथा मूलचन्द 'प्राणेश' की अधिकाश कथाएँ घटना-प्रधान रही है।

चरित्र-प्रधान कहानियो मे मानव-चरित्र ही केन्द्र विन्दु होता है अत ऐसी कहानियाँ प्रस्तुत पात्र का कई रूपो में चरित्राकन कर सकती हैं। इसमें कहानीकार या तो स्वय ही वहुत कुछ प्रस्तुत चरित्र के विषय में कह देता है या स्थूल घटनाओ के माध्यम से पात्र की किसी एक मुख्य चारित्रिक विशेषता या कुछ स्वभाव-गत विशेषताओ पर प्रकाश डालता चलता है। सस्कर्ता की "वैर" और "वूढ वावल" श्रीलाल नथमल जोशी की "भाडेती" और "सेनाणी" व्यासजी की "वेजारो" दामोदरप्रसाद की "चितराम" चाकलान की "नागडो वावो" नृसिह-राजपुरोहित की "पेट री दाझ" अन्नाराम 'सुदामा' की "ढळै डू गर . फळै चट्टान" तथा

1. सभाळ . कहानी—"तमासो नु ई दीठ रो" पृ. सं. १०१

"रोग रो निदान" किशोर कल्पनाकान्त की "अन्तिम कागद" और "गीता रो बावलियो" जयदीशसिंह की "रात रै अंधियारै मे" बैजनाथ की "जापो" और रामेश्वरदयाल की "जसोदा" इत्यादि अनेक कहानियाँ इस कोटि की कहानियाँ है। रामनिवास शर्मा की "आतमबोध" रतनसी की 'आख्या पाछै नार" परेश की "बुद्ध रो बस्ट "कृष्णगोपाल शर्मा की "उळझ्योडा तार" तथा सावर दईया की अधिकाश कहानियो मे क्षण विशेष की मनोदशा के अकन की प्रवृत्ति की प्रमुखता है। नृसिंह राजपुरोहित की "उडीक" भगवानदत्त की "मानखै रो मोल" सूर्यशकर की "सभा गगा न्हायोडी-सी होयगी" और कुछ ऐतिहासिक कहानियाँ ही वातावरण प्रधान कहानियो की श्रेणी मे आती हैं। इस कोटि की कहानियो की राजस्थानी-साहित्य मे अल्पता है।

अब शैली और शिल्प के आधार पर कहानियो का मूल्याकन किया जा रहा है। आलोचको ने शैली की दृष्टि से कहानी के मुख्यत चार भेद किए हैं—

(1) इतिहास या कथात्मक शैली
(2) आत्मकथात्मक शैली
(3) पत्र एव डायरी शैली
(4) सवाद या नाटकीय शैली

राजस्थानी मे अधिकाशत कथात्मक शैली को ही अपनाया गया है। इसमे कहानीकार इतिहास-वर्णन की तरह तृतीय पुरुष के विषय मे वर्णन करता चलता है अत वर्णनात्मक शैली को इस शैली का एक प्रमुख भेद माना जा सकता है। वरसगाठ, ग्योही, रातवासौ, अरधू नडी, मऊ चाली माळवै, लाडेसर, कन्यादान, उकळता आतरा सीला सास, परण्योडी कवारी, तगादो, आदमी रो सीग, मूमल, अमोलक वाता, वाघो भारमली इत्यादि कथा-सग्रहो की अधिकाश कथाएँ इसी शैली मे लिखित हैं। राजस्थानी की वातें इस शैली के अधिक निकट हैं।

आत्म-कथात्मक शैली मे मुख्यत एक पात्र या कभी कभी सभी पात्र अपनी अपनी राम-कहानियाँ प्रस्तुत करते जाते है। परेश की "उडीक" सावर दईया की "पैरवी" रामनिवास शर्मा की "लैम्प पोस्ट" चाकलान की "लिछमी रो लाडलो" रामेश्वरदयाल की "म्हैं गुनैगार हू" आदि कहानियाँ इसी शैली के अन्तर्गत आती हैं।

पत्र-शैली मे पूरी कहानी दो या अधिक पात्रो के परस्पर के पत्र-व्यवहार मे या कभी केवल एक ही पत्र मे समाप्त हो जाती है। डायरी-शैली पत्र-शैली का ही एक अन्य रूप माना जा सकता है जिसमे पात्र अपने जीवन के कतिपय प्रसगो को अपनी दैनन्दिनी के विन्दुओ के रूप मे पाठको के सम्मुख रखता है। वदरीप्रसाद पुरोहित की "केसर रो अत समै रो पत्तर" जोशीजी की "परण्योडी कवारी" भवरलाल सुयार की 'फोडा' तथा मूलचन्द 'प्राणेश' की "दूर रा ढोल" इत्यादि कहानियाँ पत्र-शैली की द्योतक हैं।

राजस्थानी मे प्रयोग प्रवृत्ति के फलस्वरूप ही सवाद-शैली मे लिखी कहानियाँ सामने आई हैं जो दो या दो अधिक पात्रो के आपसी वार्तालाप मे ही पूरी कहानी समाप्त हो जाती है। आद्यन्त सवाद-शैली मे लिखित कहानी राजस्थानी मे अभी तक दृष्टि मे नही आई है। वैसे आधुनिक अधिकाश कहानीकारो ने अपनी कथाओ मे सवादो को प्रधानता देने का प्रयास किया है। व्यासजी की "लादै आळो" तथा "मतीरा आळो" और यादवेन्द्र शर्मा की "तानो" कहानियो मे कुछेक पक्तियो को छोड सर्वत्र सवादो का ही प्रयोग मिलता है। आद्यन्त सवाद-शैली इनमे भी नही अपनाई गई है। सवादो पर बल देने वाले कहानीकारो मे विशेष उल्लेखनीय कहानीकार मूलचन्द 'प्राणेश' सूर्यशकर पारीक, रामनिवास शर्मा श्रीलाल नथमल जोशी, सावर दईया, विजयदान देथा, नृसिंह राजपुरोहित, मुरलीधर व्यास, लक्ष्मीकुमारी चूडावत तथा सौभाग्यसिंह शेखावत आदि हैं।

राजस्थानी कहानी-साहित्य मे सह-कथा-लेखन की प्रवृत्ति भी चल पडी है। इस क्षेत्र मे, रामनिवास शर्मा की 'सुहागण भागण" मे चौथ माता की लोक-कथा के साथ साथ मुख्य कथा के चलने के कारण, यह विशेष उल्लेखनीय कहानी हैं। इसमे जहाँ एक ओर पातिव्रत-धर्म की महिमा का प्रसग चल रहा है वहाँ दूसरी ओर कथा की नायिका पति से प्रेमी की तरफ बढती हुई नजर आ रही है।

निष्कर्ष — इस प्रकार राजस्थानी कहानी-साहित्य ने अत्यल्प समय मे अपनी काफी लम्बी यात्रा तय कर ली हैं। आज धीरे धीरे एक तरफ घटना-प्रधान कहानियो का स्थान चरित्र-प्रधान एव मनोवैज्ञानिक कहानियाँ ले रही हैं तो दूसरी तरफ उसका प्रयास समसामयिकता को परिभाषित करने और निरर्थक होते जा रहे सम्बन्धो को अपने सही रूप मे प्रस्तुत करने का चल रहा है। इस सम्पूर्ण यात्रा के बीच यद्यपि राजस्थानी कहानी समाज, इतिहास, धर्म, पुराण एव अन्यान्य क्षेत्रो मे घूम आई है तथापि उसकी मुख्य सचरण-भूमि सामाजिक-जीवन ही रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य मे राजस्थानी कथा-साहित्य अन्यान्य भारतीय भाषाओ के कथा-साहित्य की विशेष अन्तर की खाई को पूर्ण कर समान स्तर पर, लाने मे समर्थ हो जायेगा। क्योंकि अभी तो इसके प्रयास को समय ही कितना हुआ है।



अध्याय ४

नाटक-साहित्य

पृष्ठभूमि सामान्य परिचय —नाट्य-शास्त्र के प्रणेता भरत मुनि ने नाटक को पचम वेद माना है। भारतीय सस्कृत-वाङ्मय मे नाटको का विकसित रूप देखने को मिलता है जो पाश्चात्य-प्रभाव से दूर है। किन्तु हिन्दी-साहित्य के नाटको पर पश्चिमी-प्रभाव पडे विना नही रह सका है। सस्कृत के नाटको का प्रभाव प्राकृत और अपभ्र श से होता हुआ राजस्थानी मे आया है। राजस्थानी नाटको पर जितना अधिक सस्कृत के नाटको का प्रभाव है उतना पाश्चात्य नाटको का नही। राजस्थानी भाषा के प्रारभिक नाटको ने तो सस्कृत की नाटक-परम्परा का पूर्णत पालन करने का प्रयास किया है। राजस्थानी की आधुनिक नाटक-परम्परा ने कुछ पाश्चात्य प्रभाव को भी स्वीकार किया है।

राजस्थानी भाषा मे नाटक का प्राचीन रूप ख्याल, तमाशा, रामत, गम, फाग और चर्चरी नाम के काव्यो मे मिलता है। इनमे नाच और गीतो की प्रधानता रही है। राजस्थानी मे सर्वप्रथम नाटक नाच-गानो के रूप ही प्रकट हुए हैं। ख्याल-तमाशो मे गीत और हाव-भाव पूर्ण नाच के साथ किसी न किसी कथा का प्राधान्य रहता है। इस कारण इनमे बीच बीच मे गद्यात्मक सवाद भी प्राप्त होते हैं। राजस्थानी के कई गाँवो एव कस्वो मे अब भी ख्याल-तमाशो का प्रचार है। शेखावाटी तथा बीकानेरी ख्याल बहुत प्रसिद्ध हैं। जोधपुरी तमाशो मे कुछ खडी बोली का मिश्रण मिलता है।

साहित्यिक नाटको की रचना राजस्थानी मे काफी समयोपरान्त मिलती है। १९ वी सदी के अन्त मे कवि कृपाराम ने एक नाटक लिखा बताते हैं परन्तु उस नाटक के अभी तक प्रकाश मे नही आने के कारण राजस्थानी नाटको के बीजारोपण का श्रेय उसे नही दिया जा सकता। उपलब्ध नाटको के आधार पर शिवचन्द भरतिया को ही राजस्थानी नाटको का जन्मदाता कहा जा सकता है। भरतिया ने सस्कृत, हिन्दी, मराठी और राजस्थानी के विद्वान् होने के कारण चारो भाषाओ मे कुछ न कुछ साहित्य लिखा। इनमे मारवाडी-समाज के सुधार की प्रवल इच्छा होने के कारण इन्होंने राजस्थानी भाषा मे नाटक लिखे। इन्होने सवत् १९५७ मे "केसर विलास" नाटक प्रकाशित कराया। इसके पश्चात् दूसरा तीन अकीय नाटक "बुढापा री सगाई" सवत् १९६३ मे लिखा जो सस्कृत-शैली पर ही आधारित था। सवत् १९६४ मे इनका पाच अकीय बडा नाटक "फाटका जजाल" पाठको के

समक्ष प्रस्तुत हुआ। भरतिया के सभी नाटक समाज-सुधार की भावना को लेकर पेश हुए हैं। भरतिया के बाद राजस्थानी नाटको की गति मन्द अवश्य थी पर अवरुद्ध नही हुई। भरतिया-युगीन तथा इनके युग के काफी समय बाद के नाटक सुधारवादी विचार-धारा मे ओतप्रोत रहे। सवत् १९७९ से नारायण अग्रवाल के कई नाटक [1] पाठको के समक्ष प्रस्तुत हुये जिनमे मुख्यत ये है—बाल ब्याव को फार्स, अकल बडी कै भैंस, विद्या-उदय, भाग्योद्यम, दानधर्म नाटक, महाराणा प्रताप, सरस्वती-विजय तथा महाभारत को श्रीगणेश। इनके अलावा सवत् २००० तक के नाटको मे दो नाटक [2] "मारवाडी मौसर" तथा "सगाई जजाळ" भी प्राप्त होते हैं। इसी समयावधि मे प्रकाशित कुछ और भी नाटक [3] प्रशसनीय रहे हैं। इस काल के नाटको मे अधिक लोकप्रिय नाटक 'जयपुर री ज्योणार' [4] रहा। सवत् १९८९ मे कलकत्ता मे ठाकुरदत्त दाधीच का नाटक "माहेश्वरी पचायत री बायस्कोप' भी प्रकाशित हुआ। सवत् २००० के बाद के नाटको मे भरत व्यास के नाटक [5] उल्लेखनीय रहे हैं। बाबा रामदेव, बाबासा री लाडली, धणी-लुगाई इत्यादि फिर मे भी राजस्थानी के स्वतन्त्रता के बाद के नाटको की देन है।

स्वातन्त्र्योत्तर-काल मे राजस्थानी नाटक-साहित्य अपने प्राचीन आवरण के साथ नूतन आवरण को धारण कर पाठको के मनोरजन हेतु प्रकट हुआ। देश की सामयिक परिस्थति का प्रभाव भी पर्याप्त मात्रा मे इस पर पडा है। १९४७ ई० से कई उल्लेखनीय नाटक [6] प्रकाशित हुए हैं। लगभग पाँच-छ वर्षो से तो बम्बई मे प्रतिवर्ष तीन-चार नाटको का अभिनय किया जाता रहा है। वित्तीय या अन्यान्य

---

1 मारवाडी भाषा प्रचारक मण्डल, धामण गाव से प्रकाशित।

2 लेखक—गुलाबचन्द नागौरी।

3 कळजुगी कृष्ण रुकमण नाटक, लेखक बालमित्र
अध-परम्परा लेखक—मदनमोहन सिद्ध
समाज-सुधार प्र स्थान—ओसवाल हितकारिणी सभा, लाडनूं।

4. लेखक-मदनगोपाल सिद्ध।

5. रगीलो मारवाड अमरसिंह राठौड . ढोला-मरवण

6. ,, ,, ,, ,, ,, —भरत व्यास
"पन्ना धाय"—लेखक-आशाचन्द भण्डारी, "चूंनडी"—ले० प० इन्द्र
"नई बीनणी"—ले० जमनाप्रसाद पचेरिया। "बिकाऊ टोरड़ा"—ले० फूलचद डगायच।
"पाणी प'ली पाळ" ले० बद्रीप्रसाद पचोली। "तास री घर"—यादवेन्द्र शर्मा। "गुवाड़ री जायेडी" सत्यनारायण प्रभाकर।

प्रकाशन आदि की कठिनाइयो के कारण ये नाटक हालांकि पुस्तकाकार मे उपलब्ध नही हो रहे हैं तथापि राजस्थानी भाषा के नाटको का प्रतिवर्ष अभिनय के क्षेत्र मे मे खडा होना कोई कम महत्त्व की बात नही है। अभिनय की दृष्टि से दीनदयाल कुन्दन का अनूदित नाटक "देसी टोग्डी पूरवी चाल" व इन्द्र का "आखड्या पण पड्या कोनी" तथा जमनाप्रसाद पचेरिया के "नई बीनणी" और 'म्हानै ब्या कोनी करणो" नाटक बडे सफल सिद्ध हुए हैं।

आधुनिक राजस्थानी के प्रारंभिक चरण के प्राय सभी नाटककार प्रवासी राजस्थानी थे। बगाल, महाराष्ट्र और गुजरात मे रहने वाले इन प्रवासी मारवाडियो ने यह महसूस किया कि उनका समाज अन्य समाजो की तुलना मे कितना पिछड हुआ है। अपने समाज की इस विषम स्थिति का निरूपण तात्कालिक लेखको ने अपने साहित्य के माध्यम से खुल कर किया है। राजस्थानी साहित्य ने अपनी बात कहने के लिए साहित्य की अन्य विधाओ की अपेक्षा नाटक को ही विशेषत अपनाया। इसका मुख्य कारण नाटक के माध्यम से सामाजिक दोषो की ओर लोगो का ध्यान आकर्षित करना तथा उनके आसपास के वातावरण का उन पर प्रभाव पडना ही है।

राजस्थानी नाटको का मुख्य आधार तो सामाजिक जीवन ही रहा है किन्तु साथ ही साथ ऐतिहासिक, अर्द्ध-ऐतिहासिक एव पौराणिक प्रसगो पर आधारित नाटक भी लिखे गए हैं। सामाजिक नाटको की मूल प्रेरणा समाज सुधार की भावना रही है। प्राय सभी सामाजिक नाटक मारवाडी समाज की कुरीतियो से सम्बन्धित हैं। इनमे प्राय प्रत्येक बुराई को एक समस्या के रूप मे उठाया गया है और अन्त मे लेखको ने समाधान के रूप मे कुछ आदर्शो की ओर भी इगित कर दिया है। इन नाटको मे बार बार उठाई जाने वाली प्रमुख समस्यायें वृद्ध विवाह, बाल-विवाह, अनमेल-विवाह कन्या-विक्रय, अशिक्षा, फाटका (सट्टा) फिजूल खर्ची, फैशनप्रियता, मृत्यु-भोज तथा वेश्या-वृत्ति इत्यादि हैं। अधिकाश नाटको के नामकरण भी सामाजिक समस्याओ पर आधारित है। जैसे भरतिया के "बुढापा री सगाई" तथा 'फाटका-जजाळ" भगवतीप्रसाद दारुका के "बाल विवाह नाटक" 'वृद्ध-विवाह नाटक" तथा "सीठणा सुधार नाटक" गुलाबचन्द नागोरी का "मारवाडी मौसर और सगाई जजाळ" बालकृष्ण लाहोटी का 'कन्या विक्री" और नारायणदास सारडा का "बाल ब्याव को फार्स" इत्यादि। इस प्रकार सभी सामाजिक नाटको मे उपदेश की प्रवृत्ति प्रधान रही है। 'फाटका-जजाळ" मे अकेले एक पात्र ने ११ पृष्ठीय उपदेशात्मकता-पूर्ण लम्बा भाषण दिया है।

पौराणिक नाटको मे सवत् १९८१ मे मारवाडी भाषा प्रचारक मडल, धामणगाँव से प्रकाशित श्रीनारायण अग्रवाल का नाटक "महाभारत को श्रीगणेश" एक

विशेष महत्त्व रखता है। इस नाटक की भूमिकानुसार लेखक का इसके लेखन का उद्देश्य शिक्षण या अन्य सस्थाओ मे अभिनीत करने के लिए बिना स्त्री-पार्ट का नाटक प्रस्तुत करना था। इसमे कृष्ण को भगवान् मानते हुए भी उनके किसी अलौकिक कार्य का वर्णन नही हुआ है तथा उपदेशात्मक प्रवृत्ति का भी सर्वथा अभाव है।

ऐतिहासिक नाटको मे श्रीनारायण अग्रवाल के "महाराणा प्रताप" नाटक का प्रथम स्थान है। राणा प्रताप के जीवन को आधार बनाते हुए गिरधारीलाल शास्त्री ने भी सवत् २०१५ मे मेवाडी बोली के आधिक्य से युक्त राजस्थानी भाषा मे "प्रणवीर प्रताप" नाटक प्रकाशित करवाया। इसमे प्रताप के चरित्र को ऐतिहासिक तथा स्वाभाविक रूप मे ही प्रस्तुत किया है। नाटक की भाषा पात्रानुकूल है। जहाँ प्रताप और उनके साथी मेवाडी बोली का प्रयोग करते है वहाँ पृथ्वीराज बीकानेरी (मारवाडी), अकबर उर्दू तथा भील लोग भीली बोली का प्रयोग करते नजर आते है। कुछ परिवर्तन करने पर इस नाटक का सफल अभिनय हो सकता है। सबसे बडी बाधा दृश्यो के भरमार की है। इसमे किसी भी ऐतिहासिक घटना को न तो तोडा गया है और न ही किसी ऐतिहासिक पात्र के चेहरे को विकृत करने का प्रयास किया गया है। इस श्रेणी मे आज्ञाचन्द भण्डारी का 'पन्ना धाय" नाटक भी आता है। इसमे भी लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यो पर कुठाराघात नही किया है। पन्ना धाय के चरित्र को बडी तन्मयता एव कुशलता से सवारा गया है। कुछ स्थानो पर रस-बोध मे किंचित् बाधा अवश्य पहुचती है। इसके बाद बद्रीप्रसाद पचोली का नाटक "पाणी प'ली पाळ" भी अपनी ऐतिहासिकता को सजोए साहित्य-मर्मज्ञो के समक्ष प्रकट हुआ है। कुछ परिवर्तनो के साथ यह नाटक भी अभिनय के योग्य बन सकता है। कुछ भी हो, राजस्थानी मे ऐतिहासिक नाटको की न्यूनता की खाई इन नाटको मे अवश्य कुछ भरी है।

नाटक वही श्रेष्ठ माना जाता है जिसमे अभिनेयता का गुण सर्वोपरि तथा जो रगमच की दृष्टि से सफल हो। इस दृष्टि से गुलाबचन्द नागोरी के "मारवाडी मौसर और सगाई-जजाल नाटक" "अकल बडी कि भैंस" शिवचन्द भरतिया के "केसर-विलास" "बुढापा री सगाई" तथा 'फाटका जजाल" भगवतीप्रसाद दारुका के "बाल-विवाह नाटक" "वृद्ध-विवाह नाटक" और 'सीठणा सुधार नाटक" बालकृष्ण लाहोटी का "कन्या विक्री" नारायणदास सारडा का "बाल-व्याव को फार्स" और स्वातत्र्योत्तर-युगीन नाटककारो के ढोला मरवण, रगीलो मारवाड, बिकाऊ टोरडा, चू नडी, नई बीनणी, गुवाड री जायेडी तथा तास रो घर इत्यादि सामाजिक नाटक उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त प्रणवीर प्रताप

पन्ना धाय और पाणी प'ली पाळ नाटको को भी आवश्यक परिवर्तनो के माथ अभिनय के योग्य बनाया जा सकता है।

राजस्थानी नाटक एक विशिष्ट परिचय — स्वातन्त्र्योत्तर-युगीन उपलब्ध राजस्थानी नाटको की सक्षिप्त समीक्षायें इस प्रकार से हैं —

रंगीलो मारवाड़[1]

इसका दूसरा नाम "रामू चनणा" है। इसकी कथा का सार इस प्रकार है— एक गरीब स्वर्णकार का अपने ही गाँव के ठाकुर की बेटी से प्रेम हो जाता है। इस कार्य मे कई अडचनो के बावजूद इनका प्रेम अडिग रहता है। समाज के सारे बन्धन इन प्रेमियो के लिए ढीले पड जाते हैं। प्रेमी रामू और प्रेमिका चनणा सदा के लिए एक हो जाते हैं। अन्त मे कडे सघर्ष के बाद, दोनो अपनी जानें दे देते हैं। इनकी आत्मायें स्वर्ग मे एक दूसरे मे मिल जाती है। वहाँ वर्ग एव वर्ण का कोई भेद नही रहता है।

भरत व्यास का इस क्षेत्र मे यह प्रथम प्रयास ही है। नाटक का विषय बडा मार्मिक एव रोचक है। फिल्मो क्षेत्र मे कार्यरत होने के कारण इनके नाटक की भाषा में सगीतात्मकता का आधिक्य है। भाषा के प्रवाह, उच्च कल्पना तथा सगीतात्मक सवाद का उदाहरण दर्शनीय है—[2]

"चनणा—साथीडा रामू रे, म्हूँ गे रो नैण गमाऊ ।
रामू री आवाज—म्हारी प्यारी चनणा ए, म्हूँ किस विध था ताई आऊ ।
चनणा—बीजळिया चमकै रै थू बादळिया मिस आज्या ।
आवाज—बादल तो गीला ए, म्हे पाणी मे भिज जाऊ ।
चनणा—या 5डी चालै रै, थू पछी बण कर आज्या ।
आवाज—पछी तो भोला ए, म्हू भोळो क्यू बण जाउ ।"

भाषा मे राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का आधिक्य है। सस्कृत और उर्दू के शब्दो का नितान्त अभाव है। अभिनय की दृष्टि से भी सफल नाटक है। गीतो की भरमार होने के कारण इसे गीति-नाट्य माना जाय तो कोई अनुचित नही होगा। मुहावरों-कहावतो एव आलकारिक वैभव का प्रभाव नाटक पर बिल्कुल ही नही है।

ढ़ोला मरवण[3]

कथा-सार —दुर्भिक्ष पडने पर नरवलगढ का राजा नल अपनी रानी सहित

1 ले० भरत व्यास, प्रका० वर्ष १९४७ ई०, बम्बई।
2. रगीलो मारवाड़, ले० भरत व्यास, पृ स ३२
3 ले० भरत व्यास, प्रका० वर्ष १९४७ ई०, बम्बई।

पूगलगढ के राजा बुद्धसिंह के यहाँ आता है। रास्ते मे रानी के ढोलकु वर उत्पन्न हो जाता है। बुद्धसिंह नल का स्वागत करता है। शतरज के खेल मे जीतने के कारण नल के पुत्र ढोलकवर की शादी बुद्धसिंह की पुत्री मरवण के साथ कर दी जाती है। पडित द्वारा विपत्ति का वहम पटकने के कारण नल और ढोले को सीख दे दी जाती है। बीस वर्षो तक दोनो को ही विवाह की वात नही वताई जाती है। इधर ढोला रेवा मालिन से गान्धर्व-विवाह कर लेता है। उधर मरवण को विवाह की वात मन्दिर मे देवो के द्वारा ज्ञात होती है। मरवण का पिता जोशी के साथ नल को पत्र भिजवाता है परन्तु रेवा उस पत्र को फाड़ देती है। फिर मरवण तोते के गले मे वाध कर पत्र भेजती है। रेवा इसे भी फाड देती है। ढोला गीतो मे मरवण का नाम सुन प्रभावित हो जाता है। कुछ समय के वाद एक भिखारी मरवण का गीत सुना कर सारा रहस्य खोलता है। रेवा का प्रभाव वढता जाता है। ढोला पूगल जाता है। चिता मे जलती मरवण को वचाता है। निशानी की अगूठी और पत्र वताता है। सहसा सेना लेकर रेवा यहाँ आती है। युद्ध मे रेवा और सैनिक मारे जाते हैं। ढोला और मरवण अपने राज्य मे चले जाते हैं।

समीक्षा — विवाह की मनोरम विधि, पडितजी द्वारा मत्रोच्चारण तथा औरतो के गीतो की सागोपाग छटा नाटक मे मिलती है। विवाह के समय घटाटोप तथा दूसरे पडित की वहस, रेवा और घटाटोप, सेठ और घटाटोप तथा मालव और घटाटोप के सवाद हास्यप्रद हैं। नाटककार पर फिल्मी-प्रभाव के कारण गीतो का आधिक्य रहा है। कई स्थलो के सवाद तक गीतमय हैं। नाटक अभिनय के योग्य है तथा इसमें अधिकाश स्थलो पर सवाद भी छोटे-छोटे हैं। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग, अलकारो, मुहावरो-कहावतो का समावेश स्तुत्य रहा है। उर्दू और सस्कृत के शब्दो का अत्यल्प मात्रा मे प्रयोग कर लेखक ने भापा-सहिष्णुता का परिचय दिया है। निरक्षर, अनिष्ट, विश्वासघाती वियोगिनी, प्रयोजन आदि सस्कृत के तथा वेहोश, आखिरी, खैर, वदमाश, वेमौत उर्दू के शब्द हैं जो नाटक मे प्रयुक्त हैं। तीन अकीय नाटक मे आलकारिक-सौन्दर्य, मुहावरो-कहावतो तथा सवादो का सौन्दर्य द्रष्टव्य है—

थारली खाल मसालो मागै दीखै, नौ दो ग्यारह होवै है, रामदेवजी ने मिले जिका ढेढ ही, आस्तीन मे साप छिप्यो वैठ्यो है, धरम-धक्को ना दे देया, उण रो वाळ भी वांको नही हो सकै, गळी की काकरी वोली कि मन्ने भी दुर्गा की ज्यू ध्यावो, माथो खासी, रूप री रूडी वीनणी।

"रेवा—(क्रोध सूं)—फाड दे-फाड दे या चिट्ठी ! टुकडा-टुकड़ा कर गेर इण रा। और मोड दे मूडी इण नाडी टूस्ये सूवैरी, किरचा-किरचा कर गेर इण रा। मरवण ! तू एक काली नागण से छेड करी है—विच्छू रे डंक पर

हाथ फेर्‌यो है, सोई सिगणी ने जगाई है—तू कुण है और के करणो चावै है।"[1]

सूत्रधार या नट-नटी के स्थान पर भोपा-भोपी को स्थान देना राजस्थानी संस्कृति के तो अनुकूल है परन्तु स्तर घटिया है। देवी का प्रकट होकर मरवण को उसकी शादी का रहस्य बताना तथा तोते के गले में पत्र बांध कर ढोले को सदेश भेजना अस्वाभाविक बाते हैं। पृष्ठ स. ८४ पर रेवा के लिए ढोले के मुख मे 'गुणवती-रूपपती' शब्दो का प्रयोग कराना अनुपयुक्त-सा है। पृ स. ८९ पर भिक्षुक द्वारा ब्राह्मण को फासी देने की बात कही गई है—वह गलत है। क्योंकि पूगलगढ से चला जोशी रेवा को पत्र देकर वापिस पूगल आ गया था। अधिक गीतो और कुछ स्थलो के बड़े-बड़े सवादो से नाटक बोझिल-सा बन गया है। मरवण को लेकर नरवल रवाना होने पर ढोले पर क्या विपत्ति आई—इसका नाटककार ने जिक्र तक नही किया है। प्रथमाक मे १०, द्वितीयाक मे ८ तथा तृतीयाक मे ३ दृश्यों की सर्जना नाटक का सन्तुलन बिगाडती है। कुछ ऐसी घटनायें भी हैं जिन्हे रगमच पर प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। हू, मैं, और इत्यादि का ज्यो का त्यो प्रयोग करने के कारण भरतजी मे भाषागत त्रुटियाँ रही हैं। 'श' और 'ष' का भी खुल कर प्रयोग किया गया है।

कुछ भी हो, राजस्थानी नाटक-साहित्य को इनके नाटको से बहुत कुछ मिला है। राजस्थानी में नाटको की न्यूनता इन नाटको से पूर्ण हुई हैं।

चूनड़ी[2]

कथा-सार :—तीन अकीय इस नाटक मे दो राजपूत वीरो की कथा है। डूगरसिंह अभिमानी, ईर्ष्यालु, धोखेबाज और नीच प्रकृति का तथा चन्दनसिंह स्वाभिमानी, धर्म की लाज रखने वाला और वास्तव मे वीर राजपूत है। एक दिन डूगरसिंह स्वय को हीन समझते हुए देवी के मन्दिर मे चन्दनसिंह के दोनो हाथ काट कर उसे अपग करने की प्रतिज्ञा करता है। भात के निमत्रण हेतु पिता के घर जाती हुई डूगरसिंह की बहिन रूपादे को चन्दनसिंह के सैनिक पकड़ लेते हैं। चन्दनसिंह इस कार्य हेतु सैनिको को धिक्कारता हुआ रूपादे को घर पहुँचाने जाता है। इसी बीच चन्दनसिंह की पत्नी कपूरदे जो धोखे से डूगरसिंह के हाथो पड जाती है, डूगरसिंह की नीचता से जले शरीर वाली होकर बेहोश पडी रहती है, को चन्दनसिंह देखता है। कपूरदे पर-पुरुष की छाया पड़ने के कारण छाती में कटार भोक कर मर जाती है। डूगरसिंह अपनी बहिन रूपादे का निमत्रण स्वीकार नही करता है क्योकि उसने चन्दनसिंह की प्रशसा की थी। रूपादे के विनय करने पर चन्दनसिंह भात भरने का निमत्रण स्वीकार करता है। बाद मे रूपादे कपूरदे

1 "ढोला-मरवण" ले० भरत व्यास, पृ स ६५, अक दूसरा

2 प, इन्द्र, १९५५ ई० में बम्बई मे प्रकाशित तथा अभिनीत।

की चूनडी के तिलक करती है। रूपादे के घर चूनडी ओढाने जाते समय डूगरसिंह धोखे से चन्दनसिह के दोनो हाथ काट डालता है।

समीक्षा :—यह नाटक बम्बई मे १९५५ ई० मे खेला गया था। उक्त कथा की वाद की स्थिति का विवरण रंगमञ्च पर ही स्पष्ट हुआ। नाटक के प्रकाशित पूरे सवाद उपलब्ध नही हैं। तीन अको के गीत अवश्य प्रकाश मे आए हैं। नाटक मे हास्य को वढाने वाले पात्र विजली और छैला हैं। चन्दनसिह के चरित्र को नाटककार ने उच्च कोटि के शिखर पर पहुँचा दिया है जवकि डूगरसिह का चरित्र अत्यन्त ही हेय, पतित और घृणित रूप मे प्रकट हुआ है। स्त्री-पात्रो मे कपूरदे तथा रूपादे दोनो के ही चरित्र उज्ज्वल वन पडे हैं। नाटक का अभिनय सफल रहा है। दृश्य सभी रगमच पर प्रस्तुत किये जाने योग्य है। पात्रो की सृष्टि भी आधिक्य का रोग लिए नही है। भावपूर्ण और सगीतमय गीत का चमत्कार दर्शनीय है—[1]

"देखो भाभी वीरोजी तो तिलक करायो, थे क्यू चुदडी मे मूडो छिपायो।
रुस्या किरणा कारण भोजाई, ऊभी थारे द्वारे सासू री जाई ॥
काई गरजा नरणदी सू करावो—द्वारे आयोडी रो मान वडाओ।"

बिकाऊ टोरडा[2]

कथा सार —अडसठ पृष्ठो वाले इस द्वि-अकीय नाटक मे मुख्यत दहेज-प्रथा एव अनमेल विवाह पर करारा प्रहार है। दहेज की वीमारी के काररण ही मूलचन्द की वेटी का वहुत ममय तक विवाह नही होता है। अर्थोपार्जन के लिए पकौडीमल आदि टोरडो (कुवारे लडको) के विक्रय का कार्यालय लगाते है। इसी दहेज के लोभ मे हरमाय नामक युवक द्वारा पकौडीमल मारा जाता है किन्तु इसके विपरीत मूलचन्द का वेटा मल्लू अपनी वहिन का विवाह विना दहेज करता है और स्वय का भी विना दहेज करने का विचार रखता है। दूसरी ममस्या अनमेल-विवाह की है जो पैसो के लोभ मे आकर या विवशता के कारण लडकी वाले अपनी जवान लडकियो की शादी वूढो से कर दिया करते हैं। इसमे भी सेठ होनहारमल की उम्र ६५ वर्ष की है और वह सेठानी के मरने पर २० वर्ष की युवती चमेली के साथ विवाह करता है जिससे घर मे हमेशा महाभारत मचा रहता है। चमेली कामवासना की पूर्ति हर सभव अन्य से कराने के प्रयास मे रहती है। वह वूढे से सन्तुष्ट नही है। इमी हेतु वह दुर्गन्धदेव को सेठ का अमूल्य हार दे देती है। इस प्रकार ऐसी

---

1 चूनडी ले० प. इन्द्र "तीसरा अक" गीत न २१
2. लेखक—फूलचन्द डगायच, १९५८ ई० मे वम्वई मे प्रकाशित

शादी नरकमय हो जाती है। दोनो प्यासे के प्यासे रह जाते हैं। हास्य पात्र विजली और डग्गल भी बिना दहेज के विवाह करते हैं।

समीक्षा — अनमेल-विवाह तथा दहेज-प्रथा के दुर्गुणों को सोदाहरण नाटककार ने प्रस्तुत किया है। डग्गल, होनहारमल, पकौडीमल, दुर्गन्धदेव, ऊखल, मूसल, हडपानन्द, लट्ठसिंह, लोभीराम आदि के नाम तो हास्यात्मक हैं ही साथ ही सवाद भी हसी के फव्वारे छोडने वाले हैं। इसमे विजली और डग्गल, गोवरखाना और दुर्गन्धदेव के सवाद तो हसी मे लोटपोट करने वाले हैं। रेसवाडो, ओरवी, अनाने, लेडला, चाका, गाछा, वत्योडो, मोदूडा, इवार, सेती ढोरो, वोलीण्डो, फीकरिणयोडी इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ आलकारिकता तथा मुहावरो-कहावतो का सौन्दर्य भी छिटका हुआ है—दहेज रूपी पीळा बुखार, डाकरण वेटा लेवे कि देवे, कुण सो बाग की मूळी, हाथ ने हाथ खावै, आभा की-सी वीजळी या समाज हरद्वार घालेगी, पूण्यू को चाद हो रैयो है, वापे पूत परापत घोडो, जीवेगा नर तो करेगा फेर घर, आपको उल्लू सीधो करै हैं।

कुछ व्यग्य और हास्यप्रधान वाक्याश भी प्रयुक्त हैं—

ये तो लकडा मुशारणा मे गयोडा है, डग्गल का डग्गळिया मिटा मे खिडा द्यूगी, करा दे नातो थारली मा के सागे, यो मुनीमडो गधो है, सैकिण्ड हैंड चाहे तो चालीस वर्षा तारणी की, माराड का फूल घालवा गयो थो के, हियो को आधो, मन्ने वो रामार्‌यो देख्योडोई चोखो कोनी लागे।

भाषा-सौष्ठव मे नाटक के उद्देश्य की अभिव्यक्ति की झलक भी है —

"चमेली—यो सावरण को महिनु। चारू मेर रिमझिम मेहुडो वरखे है। मेरे मान की छोरिया आप आपका मोदूडा के सागे हीडो हीड रही है। अठे यो जोबन को वगीचो कुम्हळाय रह्यो है। कीको दोष देऊ ? म्हारला मा-वाप को वी के दोष है ? विचारा गरीवी की मार सहने कोनी सक्या। इव तो इसी मन मे आवे है जहर खाकर मर जाऊ। पण मरू क्यू ? घणी ई बडी दुनिया है कोई न कोई कसाऊ टोरडो देख लेस्यू।"[1]

बिजली के मुख से अपशब्द कहलाना, पात्रो के वार्तालाप के अतिरिक्त शेष सामग्री का हिन्दी मे होना, पृष्ठ १७ पर अशिक्षित ग्रामीण नौकर डग्गल के मुख से 'धन्वन्तरि' शब्द का प्रयोग कराना, चमेली की कामान्धता को चरम सीमा से ऊपर ले जाना, अनावश्यक गीतों को स्थान देना, पात्रो की सख्या मे वृद्धि करना, प्रथमाक मे ८ वाँ तथा द्वितीयाक मे आठवें और दसवें दृश्यो को निरर्थक स्थान देना, 'श' और 'ष' का प्रयोग तथा कचरा भाषा को प्रकट करना और कुछ भावगत अस्पष्टता नाटरकार की भूलें रही हैं।

1 विकाऊ टोरडा ले० फूलचद डगायच पृ स ४१

इतना होते हुए भी सामाजिक कुरीतियों पर प्रकाश डालने वाले इस नाटक का राजस्थानी गद्य-साहित्य में श्लाघनीय स्थान है। नाटक अभिनेय तो है ही।

नई बीनणी[1]

कथा सार :—रूढ़िवादी सेठ बनवारीलाल का पुत्र रामलाल एम ए. समाज-सुधारक युवक है। दहेज-इच्छुकों और घर-फूंक विवाहोत्सवों का तमाशा करने वालों से उसे घृणा है। कालेज में पढ़ रही चम्पा नाम की लड़की से आर्यसमाज-विधि से साधारण खर्च में विवाह कर लेता है। चम्पा बी. ए. है। इसी विवाह से लोभी बाप नाराज होकर बेटे को घर से निकाल देता है। इस समय "लोक-सेवा" पत्र का सम्पादक जगन्नाथ मित्र रामलाल का पूरा साथ देता है। सम्पादक ऐसे विवाह को "विद्युत्-विवाह" कहकर सराहना करता है। जगन्नाथ कला-प्रेमी और सौन्दर्योपासक होने के कारण अपनी अशिक्षिता और झगड़ालू पत्नी राधा से परेशान हैं। एक दिन पति-पत्नी में काफी झगड़ा होने पर वह राधा का परित्याग कर उसे घर से निकाल देता है। इस आघात से राधा आत्मघात करना चाहती है परन्तु अचानक चम्पा उसे बचा लेती है। शेष कथा को रंगमंच पर ही प्रस्तुत की है, उसका प्रकाशन नहीं हुआ है।

समीक्षा :—नाटक की पूरी संवादीय कथा उपलब्ध नहीं है परन्तु कथा का विषय सामाजिक सुधारवादी रहा है। झगड़ालू अशिक्षिता और मतभेद वाले स्वभाव से युक्त औरतों तथा दहेज- प्रथा से घृणा का चित्रण इस नाटक में है। स्त्री-जाति में अशिक्षा एवं अनमेल- विवाह (शिक्षित और अशिक्षित) की समस्या को उभारने का प्रयास नाटक में है। भाषा सरल, रोचक तथा प्रवाहमय है। नाटक में आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद का सांगोपांग चित्र उभर आया है। जैसे नाटक में सम्पादक अपनी पत्नी को अशिक्षिता एवं कलहकारिणी होने के कारण त्याग देता है किन्तु बाद में उसी पत्नी को अपने मित्र तथा मित्र-पत्नी के प्रयासों से स्वीकार भी कर लेता है। ये लोग सम्पादक की पत्नी को शिष्टाचार तथा सदाचरण की शिक्षा भी देते हैं। नाटक में फिल्मी प्रभाव से युक्त गीतों की सृष्टि भी हुई है—

"तोरण आयो राईवर थरहर काप्यो राज
म्हें नहीं जाणा म्हारा खाती कामणगारा राज
खात्या को नेग चुकास्यां, कामण ढीला छोडो राज"

संवाद हास-परिहास युक्त तथा अत्यन्त चुस्त हैं। अभिनय की दृष्टि से सफल नाटक है जिसका बम्बई में दो तीन बार अभिनय हो चुका है।

नाटक लघु कलेवर वाला होते हुए भी, इसमें पात्रों की भरमार है। कुछ पात्र तो अनावश्यक ही स्थान लिए बैठे हैं। गीतों की संख्या अल्प है। भाषा पर

---

1 ले० जमनाप्रसाद पचेरिया, राजस्थान ड्रामेटिक सोसायटी, बम्बई।

आंचलिक प्रभाव दृष्टिगत होता है। परन्तु किंचित् दोषो के आधार पर नाटक के महत्त्व को घटाया नही जा सकता है।

पन्ना धाय[1]

कथा-सार —यह तीन अकीय ऐतिहासिक नाटक बयालीस पृष्ठो मे बद्ध है। मेवाड के राणा सागा का पुत्र उदयसिंह था। माँ कर्मावती ने राणा की मृत्यु के बाद अपनी धाय पन्ना को उदयसिंह की रक्षा एव उसके पालन-पोषण का भार सौंपा। सागा के बडे पुत्र रतनसिंह को धोखे से मार दिया गया। छोटे बेटे विक्रमाजीत को मार कर सागा के भाई पृथ्वीराज के दासी-पुत्र बनवीर ने सिंहासन हथिया लिया। पन्ना धाय के स्वय का पुत्र जगमाल था। छोटी उम्र में ही उदयसिंह को बनवीर मारना चाहता था। पन्ना धाय ने स्वामिभक्ति से ऐसा नही होने दिया। उसने उदयसिंह को मेवे के टोकरे में सुला कर विक्रमाजीत की हत्या के समाचार देने वाले खेतो नाई के द्वारा राज्य के बाहर भिजवा दिया। बाद मे बनवीर ने पालने मे सोये पन्ना धाय के पुत्र जगमाल को उदयसिंह समझते हुए मार दिया। पन्ना ने अपनी स्वामिभक्ति का ऋण चुका दिया। इस घटना के बाद पन्ना ने उदयसिंह को कु भलनेर के राजा आशाशाह के राज्य मे शरण देने की प्रार्थना की। बनवीर की दुष्टता से डरते हुए भी राजमाता के आग्रह पर उदयसिंह को शरण दे दी। तत्पश्चात् पन्ना और खेतो नाई अपने राज्य मे चले गए।

समीक्षा—एकलिंग का स्थान स्थान पर नाम बुलवा तथा उसकी जय-जयकार करवा कर लेखर्क ने देश-काल का ध्यान रखा है। पन्ना की प्रशसनीय स्वामिभक्ति का वर्णन बडा रोचक बन पडा है। मृत पुत्र को जलाते वक्त भी वह अपने आँसुओ को रोके रखती है। नाटक का मुख्य उद्देश्य भी यही रहा है। प्रथमाक के दूसरे दृश्य मे पन्ना धाय द्वारा विजय-स्तम्भ के नौ खण्डो की गणना के माध्यम से बाप्पा रावल, समरसिंह, जैतसिंह, पद्मिनी, हमीर, लाखा, मोकल, कुम्भा और सागा को याद करने का प्रसग नाटककार की मौलिक सृष्टि है।

छोटे छोटे सवाद जिज्ञासावर्धक हैं। कही कही पर पन्ना के बडे-बडे सवाद भी हैं परन्तु वे नीरस नही, सरस हैं। लेखक ने अजमेरी, नागौरी तथा जोधपुरी के मिश्रित रूप वाली भाषा को अपनाया है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के साथ नव शब्द-निर्माण की कला भी लेखक में विद्यमान है—कितरी, खणखणावणी, सेंग, कोकर, कई, एडी, कदई, पाखती, उणरो, आइज, थू, कदी, आजू-बाजू, अबार, पण, बीइज, निराते, अणूती, हेटो, न्हाठ, लाखीणी, हालनै। कहावतो-मुहावरो तथा आलकारिक छटा का सौष्ठव श्लाघ्य रहा है—पाछू आगली सीरखी

1. लेखक—आज्ञाचन्द्र भण्डारी, १९६३ ई० मे प्रकाशित

नही, होणहार नै कुण मेट सकै, नाम मोटा नै दरसण खोटा, कठै राजा नै कठै रक, परण्यो नी पण परण्या री जान तो गयो हू, नी तो रै'वै वास नी वाजै वसरी, वोल तीर जैडा तीखा, चीन रा जादूगर ज्यू वाता करण नै लाग गिया, कुम्हार चाक ऊपर सू घडो उतारै ज्यू म्हारो माथो उतार लै। कुछ मधुर गीतो का सम वेग भी हुआ है।

नाटक का कलेवर अत्यन्त लघु है। पन्ना धाय के कु भलनेर से वापिस आने पर वनवीर ने क्या किया ? क्या वनवीर ने पन्ना को तकलीफें दी ? क्या उसने आशाशाह पर हमला किया ? नाटककार ने आगे कुछ नही वताया है। सस्कृत और उर्दू के शव्दो का अधिक प्रयोग अनुपयुक्त है—प्रतिमा, अहिंसक, उपरान्त, कर्त्तव्य, मज्जित, जगज्जननी, व्रत, फौलाद, वफादार, सलामत, औकात, करामात, वेकसूर। 'श' और 'ष' का प्रयोग भी किया गया है।

गुवाड री जायेड़ी[1]

कथा-सार —तीन अकीय नाटक की कथा सामाजिक-जीवन से युक्त है। स्योपुर गाँव के गोपालराम सारस्वत की पुत्री केशर की शादी मगनीराम के वेटे रामचन्द्र से होती है। रामचन्द्र उसे गुवाड री जायेडी (कुजाति की स्त्री) कह कर छोड देता है। रामचन्द्र की पहली पत्नी मर जाती है। केशर को छोड कर धन्नाराम की वेटी चन्दा को तीसरी पत्नी वनाता है। माँ जानकी केशर को ससुराल पहुँचाती है परन्तु रामचन्द्र खाना वनाते वक्त केशर को सोने की अगूठी देकर वहा से निकाल देता है। यही केशर और चन्दा आपस मे मिलती हैं। गाँव जाते वक्त रास्ते मे ठा० भैरूसिंह द्वारा केशर के साथ असफल वलात्कार होता है। नाटक मे केशर को अपने चाचा से खूब सारी मोहरें मिलती हैं। डाकू सरदार मन्नू महाराज केशर को धर्म-वेटी वनाता है। केशर का नाम 'गोरजा' रख कर उसके लिए एक मकान भी वनाता है। इधर धन्नाराम द्वारा पचास रुपए देने से इन्कार करने पर रामचन्द्र चन्दा को भी छोड देता है। केशर चन्दा को अपने पास बुला लेती है। चन्दा रामचन्द्र से अपने पैर दवाने का प्रण करती है। एक दिन डाकू जगमाल रामचन्द्र को वन्दी वना कर लाता है। चन्दा उससे पैर दववाती है। यही रामचन्द्र अपनी भूल स्वीकार कर चन्दा और केशर दोनो को अपना कर धन सहित घर चला जाता है।

समीक्षा :—पूरे नाटक मे चार गीतो की रचना कर नाटककार ने भारतीय नाट्य-परम्परा का पालन किया है। अको, दृश्यो तथा पात्रो की संख्या यथोचित है। प्रथमांक के चौथे दृश्य मे रामचन्द्र द्वारा शकुन्तला और दुष्यन्त का स्मरण, दूसरे अक के तीसरे दृश्य मे मन्नू महाराज तथा केशर द्वारा वर्ण-व्यवस्था की चर्चा और तीसरे अक के पहले दृश्य मे कर्म, ज्ञान और आसक्ति इत्यादि भावो पर विचार

1. लेखक—सत्यनारायण प्रभाकर 'अमन' "हरावळ" पत्रिका मे प्रकाशित।

ये सभी बातें भारतीय संस्कृति के अनुकूल हैं। कुछ स्थानों पर हास्य की सृष्टि की गई है जैसे तीसरे अंक के तीसरे दृश्य में रामचन्द्र और चन्दा के संवादों में इसकी झलक मिलती है। चुटीले भावों से युक्त संवाद का उदाहरण दर्शनीय है।[1]

"केसर—म्हनैं बाग में क्यूं ले आई ? कांई बात है, यूं आसै-पासैं कांई तकावै है तू ?

चंदा—कोई आ नी जावै ! (इन्नै-बिन्नै देख'र) थारैं साथैं की बात करणी है।

केसर—म्हैं थनैं ओळखी कोनी ? कांई नांव है थारो ?

चन्दा—चन्दा, म्हैं थारी सौत हूं भैन !"

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों तथा नव शब्द-निर्माण की कला भी लेखक में पर्याप्त मात्रा में है—खासी, लघण, निरणी, सीर एकलवाणा, ठारती, ऊर दू, जावक, ईन्नैं, बापरज्यै, कटरूप, केवट, जुगाड, रिनरोई, आड-तेड।

स्यायीज्योडो, तारा,-बारा, भे-बात, रिहाणी, उलाड्यौ। कहावतों-मुहावरों तथा आलंकारिक-सौन्दर्य का चमत्कार भी नाटक में है—करम कमेडी-सा अर मन राजा रो सो, बिना रोया मां बोबो को देवैनी, चांद रो टुकडो, गुवाड री जायेडी, बात में हुकारो अर फौज में नगारो, काणी दूधा छाणी, फूंक फूंक'र पग मेलणा पड़ै, भूखो तो धाप्या ई पतीजैं, राड भांड अर उलल्या गाडा बसगत में ओखा ई आया करै, नागी के तो न्हावै अर के निचोवै, कालो आखर भैंस बराबर, बाप जिसी डीकरी घड़ै जिसी ठीकरी। नाटक अभिनय के योग्य है। भाषा-शैली सरस एवं प्रवाहमय है। डाकुओं के कठोर हृदय गरीबों पर अवश्य पिघलते हैं परन्तु धन की बू आने पर भी केशर के "गरीबां रा रुखाला" इतना-सा कहने पर डाकू-सरदार मन्नू महाराज का हृदय कैसे पिघला जिसने केशर को धर्म-बेटी बना कर नया घर भी उसके लिए बनवाया। डाकुओं से भयभीत केशर का सूने जंगल में रहना कैसे संभव था ? मन्नू महाराज द्वारा केशर को ऐसा कहना असभ्यता का प्रतीक है—

"मन्नू—इण हाल में धन कनै राख तो सकैली थूं ? मुसकल है। क्यूं क थूं जवान है, रूपायत है। बावली डाकुवां रै हाथां सूं तो बच्चो जा सकै, पण रूप-जोबन सूं बचणो घणो अबखो काम है।"[2]

मन्नू महाराज द्वारा केशर को पढाना क्या आवश्यक था ? धन आदि का हिसाब तो बिना पढी-लिखी औरतें भी तो रख लेती हैं। कर्म, ज्ञान और आसक्ति जैसी बातों को केशर और डाकुओं के मुखों से प्रकट कराना कुछ अनुचित-सा लगता है। ठा०भैरूंसिंह तथा फूलां राणी को एक बार थोडा-सा याद कर बाद में नाटक-

1. गुवाड री जायेडी पहला अंक—तीसरा दृश्य।
2. " " दूसरा अंक—तीसरा दृश्य।

कार इन्हे भूल ही गया है। चन्दा और रामचन्द्र की वातो की समाप्ति के बाद एकाएक केशर(गोरजा)का आना, डाकुओ की कैद मे पडे रामचद्र द्वारा बहुत बोलने पर भी चदा और केशर को नही पहचानना, बिना परिचय के ही जडाव नाम की लडकी को केशर की महेली बनाना, गोरजा द्वारा मन्नू महाराज के समक्ष अपने पति द्वारा उपेक्षिता एव तिरस्कृता होने का रहस्य प्रकट नही करना, तृतीयाक मे केशर द्वारा कुछ बातें कहने का बहाना बना कर चदा का हाथ पकड कर उसके पीहर से ले आना और बाद मे कुछ बातें भी नही करना, इसी अ क के दूसरे दृश्य मे "स्वामी ! मत जाओ।" जैसे शुद्ध हिन्दी के वाक्य का प्रयोग करना आदि अस्वाभाविक बातें हैं। उर्दू और संस्कृत के शब्दो का अधिक मात्रा मे प्रयोग, भाषा पर आञ्चलिकता का प्रभाव, नाटक के शीर्षक की सार्थकता को प्रकट नही करना, गीतो का उपयुक्त स्थानो पर प्रयोग नही करना, सुलतान और मुलतान जैसे अनावश्यक पात्रो की सृष्टि, "दूजो कुण है थारै साथै?" मन्नू महाराज द्वारा इस वाक्य की आवृत्ति करना आदि नाटककार मे कुछ भूलें रही है।

अधिक गुणो मे कुछ दोष छिप जाया करते हैं। ठीक यही बात इस नाटक पर लागू होती है। राजस्थानी मे ऐसे मौलिक भावो के नाटक की सृष्टि करना एक महत्त्व की बात है। राजस्थानी के गद्य-साहित्य की निधि को बढाने मे सहायक तो है ही।

तास रो घर[1]

कथा-सार -दो-अ कीय इस नाटक का नायक दीपक प्रारम्भ से ही ताश का घर बनाने मे जुटा रहता है। किन्तु अपूर्णावस्था मे ही वह धराशायी होता रहता है। बीच-बीच मे कुछ अन्य प्रसग भी आते है जैसे दीपक का बीमार रहना, तारेश द्वारा तारा के गर्भ का रहस्य, पडौसी पति-पत्नी मे झगडा होना और भ्रष्ट स्त्री द्वारा थानेदार के साथ रगरेलियाँ मनाना, गबन करने वाले एक वृद्ध पुरुष का प्रसग, तारेश द्वारा डा० मोहीब का बटुआ चुराना, मकान-मालकिन के साथ रगरेलियाँ मनाना और तारा के साथ प्रेम कर उसके गर्भ ठहराना तथा अन्त मे दीपक का फदा लगा कर मरना।

नाटक का नायक नही के बराबर है अत: अन्य प्रसगो से नाटक को पूर्ण किया गया है। दीपक की आत्महत्या के बाद नाटक समाप्त हो जाता है।

समीक्षा -नाटक की कथावस्तु भले ही सरस न हो किन्तु पचास पृष्ठीय इस नाटक के उद्देश्य को स्पष्टत समझाने का प्रयास लेखक ने किया है। बेकारी, भ्रष्टाचार, पुलिस के आतक तथा युवक-युवतियो की यौन-स्वच्छन्दता आदि प्रसगो को नाटककार ने उभारने की चेष्टा की है। इस नाटक ने राजस्थानी भाषा मे रेडियो-रूपक की

1. लेखक—यादवेन्द्र शर्मा "चन्द्र" राजस्थानी भासा प्रचार सभा, जयपुर।

परम्परा डाली है। चार-पाँच स्थलो को छोड शेष सभी स्थानो पर लघुवाक्यावलियो से युक्त लघु सवादो का आधिक्य रहा है। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के अतिरिक्त लेखक मे नव शब्द-निर्माण तथा अन्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता की कला भी विद्यमान है—

राजस्थानी के शब्द—सँग, सगला, हाल ताई, बोदी, हळवा,-हळवा, कोनी, सागीडो, जावक, निकोट, ओजका, खूटै, कूडी, भेळा, अऊत।

उर्दू शब्द—बकवास, इ कलाबी, मुजब, कानून, बेकारी, असल, मस्ती।

सस्कृत शब्द—आस्था, सघर्ष, स्तब्ध, निरपेक्षता, रागात्मक, अस्तित्व, निर्माण, उन्नति, साम्प्रदायिकता, प्रमाण।

अ ग्रे जी शब्द—वेन्टीलेशन, फ्रस्ट्रेशन, मोनोटोनी, पिकेटिंग, अगेंस्ट, इन्वैस्टमैंट, ओरिजिनैलिटी, प्रेस कान्फ्रेंस।

शब्द-निर्माण—इणगी-उणगी, मादरकाड, झमाझमी, होकडो, छाई-माई, रिगचू, फाई फीटो, पिताण्योडी।

कहावतो-मुहावरो तथा अलकारो की छटा भी विकीर्ण है—

अनाथियै गोधै ज्यू डाचा भर, गैलै जिया चिरळावैलो, कीडिया ज्यू मानखो, तिरिया चरित न जाणै कोई मिनख मार कर सती होई, फीचा पिराणियारी गावण लागगी, भूतणी ज्यू लारै लाग्योडी, नानी मरगी, सीताराम करग्या, चढी माथै चढाव सिर दुखै न पाव थूक मुट्ठी मे पारघट्टी हुयग्यो, जिसी करणी विसी भरणी।

दीपक, तारेश और डा० मोहीव का स्थान स्थान पर अ ग्रे जी शब्दो का प्रयोग, पृष्ठ १८ १९, २४ २९, ३३ और ३५ पर पूरे के पूरे वाक्यो की आवृत्ति, डोकरा-डा० मोहीव-असित-मोदी और नौकर आदि कई पात्रो की अनावश्यक सृष्टि, नौकर और डोकरे के सवादो तथा प्रसग को व्यर्थ मे स्थान देना, चार गीतो का अनावश्यक प्रयोग, पृष्ठ ३० और ३१ पर रीता द्वारा अपने पति को 'तू' कहना, बीच बीच मे आजादी और देश की दुर्दशा के विषय मे प्रकट की हुई कुछ आदर्श की बातें, प्रथमाक तक नाटक के नामकरण की अस्पष्टता, दोनो ही अ को मे दृश्यों की कमी, तीस पृष्ठीय प्रथमाक के ५-६ पृष्ठो मे स्पष्ट होने वाले उद्देश्य का निरर्थक विस्तार करना, पात्रो की सख्या मे कमी, "छाई-माई" शब्द का अधिक प्रयोग, पृष्ठ ४६ पर कृत्रिम हास्य को उत्पन्न करना, सवादो की निरर्थकता एव नीरसता, शीर्षक (नाटक का) की सार्थकता से मौन रहना आदि नाटककार की भूलें रही है। अश्लील भाव के सूचक वाक्य का उदाहरण—[1]

"तारेस—लीवर तो आजकाल हर नूवैं ताळा रो खराब हुवै है।" कई

1 तास रो घर: पृ स ४०

स्थानो पर 'श' और 'ष' का प्रयोग भी किया है। निष्कर्षत नाटक अत्यन्त ही नीरस एव उद्देश्यहीन-सा है। नाटक के पात्र निर्जीव एव बेखबर से डोलते रहते है। फिर भी नाटककार ने राजस्थानी नाटक-साहित्य मे रेडियो रूपक का श्री-गणेश किया है अत सराहना का पात्र है।

पाणी प'ली पाल[1]

कथा-सार—हाडौती बोली मे लिखित इस पांच अंकीय नाटक का विषय ऐतिहासिक है। शाकटायन तपोवन मे अपनी विधवा पुत्रवधू जया के साथ रहते हैं। जया का पुत्र जयन्त दस वर्षो से लापता है। इस आश्रम मे वैद्यशास्त्र के ज्ञाता गुणाकर तथा यही पढा श्रीविजय अध्यापक है। ये मालव प्रदेश मे रहते हैं। मालव प्रदेश मे राजतत्र के स्थान पर प्रजातत्र की स्थापना हो जाती है। प्राग्ज्योतिप तथा गाधार से शुकदेव और कुशलभोज इस तपोवन मे पढ़ने आते है। इधर सादीपन के आश्रम से शिक्षा प्राप्त धीरजवाहु द्वारा मालव-प्रदेश पर आक्रमण की सूचना मिलती है। धीरजवाहु पारसी-साम्राज्य के विस्तार के पक्ष मे था। उसी वक्त द्वारकापुरी से धनपति वसुमित्र भी शाकटायन के आश्रम मे आता है। ये सभी मिलकर धीरजवाहु के हमले से मालव प्रदेश की रक्षा का उपाय सोचते हैं। इधर तलवार से आत्म-हत्या करने वाले जयन्त को, कुशलभोज रक्षा करते हुए, शाकटायन के पास प्रस्तुत करते हैं। जया और शाकटायन जयन्त से मिल कर खुश होते है। जयन्त कई डाकुओ को मार कर नारी-रक्षा करता है। इस प्रकार धीरजवाहु के आक्रमण से मालव प्रदेश की रक्षा का पूर्व उपाय ही 'पाणी प' ली पाळ' है।

समीक्षा —नारी-रक्षा, नारी-उत्थान, देश की गरीवी एव अशिक्षा, प्रजातत्र तथा पचायत राज का महत्त्व, देश की एकता तथा हमले से पूर्व रक्षा का उपाय आदि तथ्यो पर विचार किया गया है। कई स्थानो पर गीतो की सृष्टि तथा लघु सवादो की छटा स्तुत्य है। हाडौती बोली मे इस कृति के रूप मे प्रथम प्रयास श्लाघ्य है।

हाडौती बोली के स्वाभाविक शब्दो के साथ साथ मुहावरो-कहावतो आदि के सौन्दर्य की वर्षा भी हुई है—अणसरगारचो, ववावरो, असोई, कस्या, ढगस, वरबूळयो, मनख्याण, गारलाग, सगोस, गदान्यो, सुवाळिया, सरोधा। छानी रह फूटा करम की, आग वळगी तो धवळका उठ'गा, मन का लाडू फोरवा हाळा की असी बात, जसी थारी घूघरी उसा म्हारा गीत, ईंट को जवाव पत्थर सू दया, काची कोथ्या सू खेल्या होगा, नन्याणम' का फेर सू दूरा छो। हाडौती बोली की शैली का सुन्दर उदाहरण दर्शनीय है—

.1 लेखक-वद्रीप्रसाद पचोली राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।

"जया—मल'गो । मळ जाव'गो म्हागे जयत । ··· जरूर मल'गो । जयतिया कद मल'गो'र ई दुख्यारी मा ने थारी बाट न्हाळता न्हाळता आंख्या का आसू भी सूख गया । 'पण, कोई चन्ता कोई न जद म्हारा दुख की बात ई कटणी तो तू सूरज की नई उग'गो ।"[1]

नाटककार ने जया को एक स्थान पर तो शाकटायन की बहिन तथा दूसरे स्थान पर बेटी बनाया है परन्तु जयन्त के सवादो से जया शाकटायन की पुत्रवधू है । जयत के आश्रम से भागने का कारण भी नहीं बताया गया है । नाटक का शीर्षक भी जचने लायक नही है । धीरजवाहु के हमले की कईबार चर्चा होने पर भी उसके रुकने का कारण नहीं बताया है । नाटक मे दृश्यो की सृष्टि नहीं की गई है । आश्रम के उद्देश्य "अर्जन और समर्पण" को प्रयोग मे नही बताया गया है । धीरजवाहु के आक्रमण की सूचना मिलने पर भी शाक्टायन आदि के मौन ग्हन का कारण स्पष्ट नही है । "अर्जन और समर्पण" तथा "शब्दार्थ" आदि पर पात्रो के विचार नीरस हैं । आध्यात्मिक, प्रेरणादायक, तिलाजलि, कर्ठहार, धुरधर इत्यादि सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य भी अनुचित है । 'श' और 'प' का प्रयोग भी स्थान स्थान पर किया गया है । क्योंकि ये वर्ण राजस्थानी मे नही हैं ।

सदोष होते हुए भी हाडौती बोली मे लिखा रहने के कारण राजस्थानी गद्य-साहित्य मे इस नाटक का विशिष्ट स्थान है ।

मराठी, बगला और सस्कृत भाषाओ के कुछ अनूदित नाटक भी स्वातत्र्योत्तर-युग मे उपलब्ध होते हैं । इनमे गिरधरलाल शास्त्री के "मालविकाग्निमित्र" तथा "शकुन्तला" देवदत्त नाग का "सपतो, ब्रजमोहन जावलिया का 'राजा-राणी" और दीनदयाल कुन्दन का "देसी टोरडी पूरबी चाल" विशेष उल्लेखनीय हैं । "देसी टोरडी पूरबी चाल" के तो बम्बई मे कई बार सफल अभिनय भी हो चुके हैं ।

आधुनिक राजस्थानी नाटको मे प्रवृत्तियाँ विशेषत प्रभावी रही हैं—यथार्थवाद तथा आदर्शोन्मुख यथार्थवाद । स्वतत्रता से पूर्व और उत्तर के सभी नाटको मे दोनो प्रवृत्तियाँ विशेषत उभर पडी हैं । पन्ना धाय, प्रणवीर प्रताप तथा पाणी प'र पाळ में ऐतिहासिक तथ्य की यथार्थता, ढोला मरवण एव रगीलो मारवाड राजस्थानी सस्कृति का यथार्थ रूप, विकाऊ टोरडा, बूनडी, नई बीनणी र गुवाड री जायेडी मे आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद तथा "तास रो घर" मे केवल यथार्थवाद का शखनाद फूंका गया है । ठीक इसी प्रकार सभी अनूदित नाटको मे भी प्रवृत्तियों के स्वरूप उभर पडे हैं ।

आधुनिक राजस्थानी नाटककारो ने भारतीय तथा पाश्चात्य दोनो नाट्य-शैलियों से प्रेरित होकर नाटको की रचनायें की हैं । सूत्रधार, मगलाच

---

1 पाणी प'ली पाळ पहला अक पृ स २१

भग्न वाक्य एव अङ्ग-योजना आदि को स्थान देते हुए उन्हे सुखान्त बनाना भारतीय नाट्य-परम्परा के अनुकूल ही है। ऐसे नाटको मे सस्कृत के अनूदित नाटक तथा पाणी प'ली पाळ आदि मुख्य हैं। इसके विपरीत गठन और पात्र-विधान की दृष्टि से पन्ना धाय, नई बीनणी तास रो घर, बिकाऊ टोरडा, चू नडो, गुवाड री जायेड़ी इत्यादि नाटक, पाश्चात्य नाट्य-शैली से ओतप्रोत दिखाई देते हैं। परन्तु देखा जाय तो पूर्ण रूप से न तो पाश्चात्य-शैली और न ही भारतीय नाट्य-शैली का इन नाटको मे निर्वाह हुआ है। पात्रो की वेश-भूषा, रगमच की स्थिति आदि के बारे मे सूचना देने वाली रग-सकेत-प्रणाली को अपनाने मे राजस्थानी नाटककारो ने कोई उत्साह नही दिखलाया है। सकलन-त्रय के निर्वाह, परिस्थितियो के द्वन्द्व एवं तज्जन्य सघर्ष की तीव्रता को प्रमुखता देने मे भी नाटककारो ने कोई विशेष रुचि नही ली है।

नाटक के कथानक का साधारण जनो से सम्बद्ध होना और नायक की परिकल्पना को तोडना—ये पाश्चात्य नाट्य-शैली की विशेषताएँ आधुनिक राजस्थानी नाटको मे पर्याप्त रूप मे मिलती हैं। चाहे राजस्थानी नाटक सुखान्त हो या दुःखान्त, चाहे उसका प्रारम्भ बिना किसी मगलाचरण तथा सूत्रधार की सहायता के हुआ हो या इन परम्पराओ का निर्वाह करते हुए हुआ हो—हर स्थिति मे उसके कथानक का सीधा सम्बन्ध तात्कालिक समाज के सामान्य जनो की समस्याओ से रहा है। इस प्रकार ये नाटक पाश्चात्य प्रभाव के कारण विशिष्ट जनो के घेरे से निकल कर जनसाधारण तक आ पहुँचे है। इस युग के अधिकाश नाटको मे मगलाचरण एव सूत्रधार आदि को अनावश्यक समझते हुए सीधा मूल प्रतिपाद्य पर आना, सघर्ष का प्राधान्य, पात्रो के चरित्राकन मे मनोवैज्ञानिकता को महत्त्व देना, अक-सख्या की सीमितता, गीत-नृत्यादि की अल्पता इत्यादि विशेषतायें पाश्चात्य नाट्य-परम्परा के प्रभाव का कारण ही है।

राजस्थानी मे पद्य-प्रधान गीति नाट्य, भाव-नाट्य, एक-पात्रीय तथा स्वप्न नाटक और कल्पनामूलक नाटको का तो सर्वथा अभाव रहा ही है किन्तु इसके साथ ही साथ साहित्यिक नाटको की सर्जना भी नही के बराबर हुई है। यही स्थिति समस्या-नाटको की रही है। व्यक्ति-समस्या नाटक तो देखने मे भी नही आया है। हाँ, सामाजिक समस्या पर प्रकाश डालने वाले नाटक अवश्य रचे गए हैं। दृश्यो की बहुतायत जहाँ राजस्थानी नाटको की सामान्य विशेषता रही है, वहाँ पात्रो की सख्या भी उनमे कुछ अधिक ही बढी-चढी मिलेगी। परिणामत जहाँ एक ओर बार बार दृश्य-परिवर्तन की परेशानी नाटक की अभिनय-कला मे बाधा उपस्थित करती है वहाँ दूसरी ओर एक-एक तथा डेढ-डेढ पृष्ठो के दृश्य भी कोई प्रभाव जमा नहीं पाते हैं। इसके अतिरिक्त पात्रो के चरित्राकन मे मनोवैज्ञानिक दृष्टि का अभाव, स्वगत

कथनो का आधिक्य, कथा-सगठन तथा सवादो मे नाटकीयता की कमी, घटना-सयोजन मे त्वरा का अभाव आदि राजस्थानी नाटको की सामान्य कमजोरियाँ रही हैं। किन्तु अधिकाश गुणों मे कुछ दोषो का छिप जाना स्वाभाविक है। इस दृष्टि से राजस्थानी नाटको मे भले ही कुछ कमियाँ रही हो, इन्होंने राजस्थानी नाटक-साहित्य के भण्डार मे श्रीवृद्धि कर राजस्थानी मे नाटको के अभाव के कलक को अवश्य तिरोहित किया है। चलचित्रो की लोकप्रियता, लेखको के सघर्षपूर्ण जीवन की व्यस्तता, लम्बे नाटकों के प्रति दर्शको की अरुचि, शिक्षण-सस्थाओं आदि द्वारा एकाकियो को प्रोत्साहन न मिलना पत्र-पत्रिकाओ मे एकाकी-विधा को अधिक प्रश्रय न मिलना तथा अन्य वित्तीय साधनो की कमी इत्यादि कारण ही राजस्थानी नाटको की भारी सख्या मे बाधक सिद्ध हुए है। अन्यथा कोई कारण ही नही था कि राजस्थानी मे स्वतत्रता से अब तक नाटको की सख्या पन्द्रह-बीस तक सीमित रह जाती।





अध्याय ५

एकांकी-साहित्य

राजस्थानी एकाकी : एक सामान्य परिचय—

रूपक-साहित्य का सर्वोत्कृष्ट रूप एकाकी नाटक अपने जन्म के कुछ समय पश्चात् ही अत्यन्त जनप्रिय हो गया। भारत मे एकाकी का प्रचलन पश्चिमी देशो मे काफी कुछ लोकप्रियता प्राप्त कर लेने के वाद ही हुआ। वैसे संस्कृत नाट्य-शास्त्र में रूपक और उप-रूपक के भेदो मे एक अक वाले कतिपय रूपको का उल्लेख भी मिलता है किन्तु आधुनिक एकांकी का उनसे कोई सीधा सम्वन्ध नही है। हिन्दी की तरह राजस्थानी ने भी पश्चिमी साहित्य से प्रेरित होकर ही एकाकी विधा को अपनाया है।

इतरेतर भारतीय भाषाओ की तरह राजस्थानी के एकाकी-साहित्य का कोई अधिक प्राचीन इतिहास नही है। अब तक प्राप्त जानकारी के आधार पर राजस्थानी मे सर्वप्रथम प माधवप्रसाद मिश्र ने इस क्षेत्र मे कदम वढाये।[1] इनके एकाकी मे दो दृश्य तथा तीन पात्र रहे। यह विशुद्ध रूप मे एकाकी नही होते हुए भी शिल्प की दृष्टि से एकाकी के काफी निकट पहुँचा हुआ है। इसमे मारवाड़ियो की स्वार्थपरता, कायरता, चालाकी और चापलूसी पात्रानुकूल भाषा मे अपनी यथार्थता के साथ प्रकट हुई हैं। कतिपय विद्वानो के अनुसार मिश्र के पूर्व भी "वैश्योपकारक" पत्र के कई अको मे "कनक-सुन्दर" नाम से कई पात्रो के सवाद प्रकाशित हुए थे। जवकि इसके लिए दृश्य १, दृश्य २ आदि का प्रयोग किया गया है किन्तु इनका एक दूसरे से कोई सीधा सम्वन्ध नहीं है। वास्तव में इनमे तत्कालीन मारवाडी-समाज की किसी एक कुरीति या किसी एक चर्चित घटना का आधार वना कर उसे रोचक तथा उपदेशात्मक शैली मे वार्त्तालाप के रूप मे प्रस्तुत किया जाता था। इस प्रकार "कनक-सुन्दर" नाम से प्रकाशित इन सवादो और "वडा वाजार" को राजस्थानी एकाकी का प्रारम्भिक रूप कहा जा सकता है।

इसके वाद काफी समय तक राजस्थानी एकांकीकार एकाकी-लेखन की दिशा मे सक्रिय नही हुआ। अद्यावधि उपलब्ध सूचनाओ के आधार पर शोभाचन्द जम्मड का एकाकी[2] राजस्थानी का प्रथम उपलब्ध एकाकी माना जा सकता है। तत्पश्चात्

1. वडा वाजार (एकाकी) : ले माधवप्रसाद मिश्र, "वैश्योपकारक" पत्र में वि. स १९६२ मे प्रकाशित।
2. वृद्ध-विवाह विदूषण (एकाकी) . ले. शोभाचन्द जम्मड, सन् १९३० मे प्रकाशित

ये एकाकी[1] प्रकाशित हुये। इन चार-पाँच एकाकियो के प्रकाशन के वाद लगभग २० वर्ष तक राजस्थानी मे एकाकी-लेखन का कार्य अवरुद्ध-सा रहा। इस अवधि मे सुधार या प्रचार की दृष्टि से प्रेरित होकर लिखे गये एकाकी चाहे स्थानीय सस्थाओ द्वारा रगमच पर भले ही अभिनीत हो चुके हो किन्तु प्रकाशित रूप मे वे सामने नहीं आ पाये। इस लम्बे अन्तराल के पश्चात् एकाकी-लेखन के कार्य को गति प्रदान करने मे जहाँ एक ओर राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की, वहाँ प्रो गोविन्दलाल माथुर की तरह स्वतत्र रूप से एकाकी-सग्रह प्रकाशित करवाने वाले एकाकीकारो का योगदान भी कम उल्लेखनीय नही है। गत वीस-पच्चीस वर्ष की अवधि मे राजस्थानी मे कई एकाकी-संग्रह तथा शताधिक एकाकी स्फुट रूप मे प्रकाशित हुये हैं। गोविन्दलाल माथुर के एकाँकी-सग्रह[2] रूपी वीज ने आज विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लिया है। फलस्वरूप कई एकाकी-सग्रह तथा मरुवाणी ओळमो, चामल, मूमल, कुरजाँ, जळमभोम जागती-जोत, लाडेसर, हरावळ, हेलो राजस्थानी वीर, ईसरलाट, मधुमती, लोकसम्पर्क एव समाजवाणी इत्यादि पत्र पत्रिकाओ मे स्फुट रूप में प्रकाशित एकाकियो के सक्षिप्त परिचय के बाद प्रमुख प्रवृत्तियो के आधार पर इनका मूल्याकन करना उचित होगा।

राजस्थानी एकाकी एक गहन अध्ययन —सन् १९४७ से १९७४ तक काल-क्रमानुसार मुख्य एव महत्त्वपूर्ण एकाकियो तथा एकाकी-सग्रहो की समीक्षा इस प्रकार से है—

छः एकांकी[3]

समीक्षा —आदर्श गाँव अंध-विश्वास, कर्जे का अभिशाप हरिजन, सो कम और एक खाऊ तथा शफाखाना ये छ एकाकी १९५३ से १९५७ तक की अव मे प्रकाशित सभी के सभी सामाजिक आदर्शो एव समस्याओं के साथ अवतरित है। इनमें अधिकाश एकाकियो के लेखक प्रो गोविन्दल ल माथुर हैं तथा शेष के अज्ञात है। सभी एकाकियो मे पुरानी नाट्य-परम्परा का ही अनुसरण किया गया आज के नवीन रेडियो-रूपकों की परम्परा का नही। अधिकाश एकाकियो हास्यात्मकता की झलक भी है। स्थान स्थान पर व्यग्य के तीखे प्रहार भी मि है। भाषा-सौष्ठव तथा व्यग्यात्मकता के लिए यह उदाहरण ही काफी है—
"मै तो इत्ता दिन तक जाणतो हो के मारणा ग्रामीण भाई इज विछडोयोडा है

---

1. "गांव सुधार या गोमा जाट" ले श्रीनाथ मोदी १९३१ ई में प्रकाशित।
"वोळावण या प्रतिज्ञा-पूर्ति" ले सूर्यकरण पारीक, १९३३ ई में प्रकाशि
2. एकाकियाँ ले गोविन्दलाल माथुर सन १९५४ मे प्रकाशित।

मने तो आज ठा पडी के आपा सेर मे रेवणियाई वेणे लारे कोनी हा। गरीवा ने पइसा देवताई ढावा मे रोटी नही मिले, प्याऊ माले पाणी नही मिले, सरायां मे जगा नही मिले—कोई वात है। धिक्कार है एडा जीवण मे। खाली उजळा कपडा पेरीयाऊ नै लाऊड स्पीकरा माते भापण दियाऊ सुधार थोडई वे।"[1]

मुहावरो-कहावतो एव आलकारिक-चमत्कार के दर्शन इनमे हो जाते हैं।

दो-दो ढाई-ढाई पृष्ठो के लम्बे सवाद, सस्कृत और उर्दू के शब्दो का आधिक्य, आचलिकता का प्रभाव, गीतो का नितान्त अभाव, 'श' और 'प' का प्रयोग तथा हिन्दी के पूरे के पूरे वाक्यो की समाविष्टि—इत्यादि अधिकाश नाटको के दोप हैं।

इतने दोप होते हुए भी ये एकाँकी समाज-सुधार के उद्देश्य में सफल हुए हैं—इनकी मुख्यत. सर्जना भी इसी उद्देश्य से हुई थी।

सतरंगिणी[2]

समीक्षा.—"ठाकुरशाही की झळक" मे ठाकुरो के अहकारपूर्ण जीवन और निकम्मे शौको पर करारा व्यग्य, ठाकुरो की स्वेच्छाचारिता, विलासिता और वेहूदगी, महाजनो की भीरुता तथा ठाकुरो का गाँव के लोगो के साथ अनाचारपूर्ण व्यवहार का चित्रण है तो "लालची माँ-वाप" मे लड़के-लडकी का सम्वन्ध करते समय लडके वालो की माग-सम्वन्धी रवैये का रोचक खाका खीचा गया है। 'शफाखाना" मे ठाकुरो और जनता के पारस्परिक सघर्ष तथा महाजन-मण्डली की यशोभिलाषा उभर पडते हैं तो "वाल-विधवा" मे नगरवासियो की जातीय पचायतो के सडे-गले न्याय का नग्न रूप प्रकट होता है। "सूदखोर" का सेठ हजारीमल राजस्थान के गाँव-गाँव मे व्याज का धन्धा करने वाले सैकड़ो मक्खीचूस सेठो का प्रतिनिधित्व करता है जो अपनी खुशी से किसी हितकारी कार्य मे एक कौड़ी भी न देवें परन्तु सरकारी अफसरो के भय से हजारो तक का चन्दा दे डालें। "हरिजन" के महाजन पूरे रूढिवादी और लड़ाकू हैं। इस एकाकी मे ठाकुर की पर्याप्त उदारता, गम्भीरता और शान्तिप्रियता की झलक भी मिलती है। "शिक्षा का सवाल" मे हमारे देश के विचारशील विद्वानो की निष्क्रिय विचार-शीलता की अनेक लघु-दीर्घ तरगो का गर्जन-तर्जन है। वास्तविक जीवन से सम्वन्ध रखने वाली सामाजिक समस्याओ के चित्र इनमे हैं। लेखक का मुख्य उद्देश्य समाज और देश-सुधार का ही रहा है। "शफाखाना" जैसे कुछ एकाकियो मे पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग भी मिलता है। कुछ मुहावरे-कहावते भी दिखाई पड़ते हैं—कठेऊ

---

१ हरिजन · एकाकी पृ. स ११

२. ले. गोविन्दलाल माथुर, १९५४ ई० मे प्रकाशित।

काटा ने कठेऊ वाळा, डूगर बळती दीखे पगा बळती किने ई कोनी दीखे, गिग्गोरिया मातेई घोडा नही दौडी जद कद दौडी । कुछ स्थानो पर हास्य-वातावरण की सृष्टि भी की गई हैं । कई स्थान लघु सवादो से पूर्ण हैं ।

कई स्थलों के बडे बडे सवाद उकताहट पैदा करते हैं ।[1] सभी एकांकियो के दृश्यों की पूर्व की पृष्ठभूमि मे साज-सज्जा तथा स्थान आदि के वर्णन मे विस्तृतता, "शिक्षा का सवाल" और "बाल-विधवा" एकांकियो मे अग्रेजी तथा हिन्दी के शब्दो से युक्त सवादो का प्रयोग, 'श' तथा 'ष' का प्रयोगाधिक्य तथा कुछ शब्दो के प्रयोग मे असावधानी—ये सभी नाटककार की कमजोरियाँ रही हैं ।

इतने दोषो के बावजूद इस सग्रह का राजस्थानी एकाकी-साहित्य मे एक विलक्षण स्थान है । माथुर साहब का मातृभाषा के प्रति प्रेम राजस्थानी साहित्य-निधि को बढाने वाला ही है । तत्कालीन सामाजिक समस्याओ का निराकरण करने वाला एक प्रभावी साधन भी इस सग्रह को मान लिया जाय तो कोई अत्युक्ति नही होगी ।

नहरी झगडो[2]

समीक्षा —सम्पूर्ण जमीन गाँव को सौंप कर सहकारी समिति बना कर किसानो के हित तथा ग्रामीण एकता का सदेश ही इस एकाकी नाटक का मुख्य उद्देश्य है । राजस्थान सरकार द्वारा पुरस्कृत इस एकाकी का ४८ पृष्ठीय कलेवर है । राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो तथा नव शब्द-निर्माण की कला भी इस एकाकी मे है—

धीरपाई, हाची रूमच्या, ढसा, दीदा, आके, तोमद, बीज्ये, लपराया, अणीकेडे, एखट, बेक्यो, हाफड्या, आदना, नानोक । आ तो बाड ही खेत ने खावा लागगी, आज पाप को घडो फूटणो है, लेणा का देणा पड जाला, लाता रा भूत बाता सू मानवा वाळा नही, पेट के पाटा बाध ने बैठा है इत्यादि मुहावरे-कहावते भी एकाकी मे अपनी छटा दिखाते है । भाषा के सारल्य एव रोचक-शैली का उदाहरण—

---

1. "लालची मा-बाप" पृ स १ तथा ११-भवानीमल के सवाद
   "ठाकुरशाही की झलक" ,, ,, १७—ठा जालमसिंह के सवाद
   "हरिजन"———— ,, ,, १४, १५, १६, १७, १८—दयाशकर और रामस्वरूप के सवाद
   "शफाखाना"———— ,, ,, ७————पूनमा के सवाद
   "बाल-विधवा"——— ,, ,, १३————मुरारीलाल के सवाद

2 लेखक—निरजननाथ आचार्य, १९६० मे प्रकाशित ।

"हीरा—हा वावजी हा। श्रणी सू आछी वात कई व्हे सकै। श्रो नेहर को भगडो भी परो खतम व्हेला। भले ही श्रणी खेत ने पेली पावो श्रौर भले ही दूजा खेत ने। ए तो सव गाँव का खेत है। श्रापस को राडो ही खतम व्हे जावेला।"[1]

सवाद छोटे छोटे एव सरल है। भाषा पर मेवाड़ी बोली का काफी प्रभाव है। पृष्ठ २० से २२ पर थानेदार से शुद्ध हिन्दी मे बुलवाना, भोपा द्वारा भैरूंजी के थान पर एक स्वाग रचना, मुख्य सदेश या उद्देश्य की चर्चा श्रन्तिम दृश्य मे करना, कलेवर की विस्तृतता, चार-पाँच श्रनावश्यक भजनो को स्थान देना इत्यादि एकांकीकार की श्रसावधानियाँ रही है। किन्तु लेखक श्रपने उद्देश्य में सफल रहा है श्रतः इस दृष्टि से एकाकी का महत्त्व है।

देस रो हेलो-सुरग री पुकार[2]

समीक्षा.—सभी चारो एकाकियो मे देश-प्रेम, साहस, देश-भक्ति, वीरता एव मातृभूमि के प्रति श्रद्धा जैसे उच्च भाव वर्णित हैं। "देस रो हेलो" मे प्रताप की श्रार्थिक सहायता हेतु भामाशाह श्राते है तो "कुंवारी सीव" मे मैजर शैतानसिह असख्य चीनी हमलावरो का सहार कर देश की सीमा को रक्त देकर माँग भरते हैं। "जलमभोम" वू दी के राव हेमू श्रौर कुम्भा जैसे वीर वू दी के नकली किले को भी लाखा को नष्ट नही करने देते है। "सुरग री पुकार" मे ब्रिगेडियर उस्मान का मातृभूमि हेतु लडते हुए वीरगति प्राप्त करने का विवरण है। पात्रों की सख्या तथा एकाकियो का विस्तार श्रपेक्षित है। सभी एकाकी श्राशिक परिवर्तन के वाद श्रभिनय के योग्य है। पाठको को उवाने वाले सवादो की उपेक्षा की गई है। भाषा तथा सवाद की सरसता श्रौर सुन्दरता का उदाहरण प्रस्तुत है—[3]

"प्रताप.....। धन है, वै मावा, जिकी ज्यान हथेळी उपर मेल्या फिरण हाळा पूत जणै हैं। तिल तिल कटता जावै है, पण रण माय पीठ कदे नी फिरावै। धन है, वै बैना, जिकी मरण-त्यू वार मनावणिया वीरा ने गोदया खिलावै है। लाख वधावा, उण छत्राण्या नै जिकी सुवागरात मनावण सू पैली चिता ऊपर सेज विछावै है।"

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो, नव शब्द-निर्माण की कला, सस्कृत-हिन्दी श्रौर उर्दू के शब्दो का प्रयोग लेखक ने पर्याप्त मात्रा मे किया है—

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द—रोळ, स्यारमा, श्राखा, उणमणा, धारैपाण, सोकी श्रलूणो, नेचो, जोगाड, पूठा, श्रापळती, ननोनच, ऐळा, पौवारा, सैठा,

---

१ नहरी भगडो निरजननाथ ' श्राचार्य . पृ सं. ४८

२ ले रामदत्त साकृत्य "श्रोळमो" पत्रिका मे प्रकाशित सग्रह।

३ देस रो हेलो—सुरग री पुकार ले रामदत्त साकृत्य, पृ सं. १३

रावरी, डोल्या, खोगाळ, उपन्या, कूडो ।

शब्द-निर्माण—दापळ, सुळभळाट, साटै, आपळती ।

सस्कृत, हिन्दी और उर्दू के शब्द—मन्दभागी, पराधीन, स्वागत, लज्जा । दौलत, दरकार, वन्दोवस्त, नापाक, हैवानियत, मातम, मजहब, जन्नत, अस्मत, नजाकत, इन्सानियत । निहत्था, मांवसी ।

मुहावरो, कहावतो एव अलकारो का सौन्दर्य भी स्तुत्य रहा है—

गाजर-मूळी री ज्यू काट नाखता, तिडी दल री दाई, जाणै छोरया पीरो छोड'र सासर जाय रैई, ढकणी माय नाक डुवोयनै मर जावण हाळी वात, नाका माय दम कर नाख्यो, छठी रो दूध याद आय जावतो, पु गी वुलाण नान्दू ळा, मार आगै भूत भागै, कीडी नगरै ज्यू-, पीठ नी दिखाणी, म्हारी मिनकी'र म्हारै सू ईज म्याऊ ।

भाषा के क्षेत्र मे आचलिकता का प्रभाव, मैं-भी-है इत्यादि शब्दो का यथावत् प्रयोग, कुछ स्थानो पर पात्रानुकूल भाषा और वातावरण की उपेक्षा, उस्मान और भामाशाह का अत्यल्प वर्णन, सेन्या तथा हैनू शब्दो का असख्य वार प्रयोग—साकृत्य की कमियाँ रही हैं । फिर भी ऐसे भावो वाले इस सग्रह ने एकाकी-साहित्य को वडे रोचक एकाकी प्रदान किए हैं जो अपनी अलग ही विशेपता रखते है ।

ठा पड़बा लागगी[1]

समीक्षा —दो दृश्यो से पूर्ण इस एकाकी मे हास्य की सृष्टि की गई है । राफटमल, सुण्डो, झोटक्यो आदि पात्रो के नाम भी हास्यात्मक हैं । एकता के सूत्र मे वध कर गाँव के विकास मे जुटना ही इस एकाकी का सन्देश है । पात्रो की सख्या वाछित है । भाषा सरल, प्रवाहमय एव सजीव है । सवाद रोचक हैं ।

कुमलो फौज में[2]

समीक्षा :—छत्तीस पृष्ठीय इस सग्रह मे दो एकाकी हैं । "कुमलो फौज मे" मे दो दृश्य हैं । स्थान-स्थान पर हास्य-रश्मियां विखरी पडी हैं । चाची द्वारा चीणा (चीनियो) को मारने की वात कहने पर मेवला का चीणा (चने) के पौधों को उखाडना समझना, कुमलो द्वारा सिल्यूट करने पर स्वय को पीटने का समझना वार-वार राकुडया की गाली का प्रयोग, फौजी नायक के पद को चाची द्वारा नायक जाति समझना, फेमिली साथ ले जाने की वात चलने पर चाची का पेमली नाम की किसी अन्य लडकी का अर्थ लगाना इत्यादि वातो मे अशिक्षा पर तीखा व्यग्य-प्रहार कर हास्य को उत्पन्न करते हुए मातृभाषा के महत्त्व पर प्रकाश डाला गया

---

१ लेखक—भालचन्द कीला, १९६७ ई० मे प्रकाशित

२ लेखक—भालचन्द कीला - १९६७ ई० मे प्रकाशित ।

है। दूसरे एकाकी "खवासजी रो फैंसलो" मे एक दृश्य है। खवासजी (नाई) की शिकायत का फैंसला सरपच लिखाता है जिसमे हास्याधिक्य है। "ई में मन्नै काई ओळमो" मु शीजी के इस वाक्य की कई बार आवृत्ति भी हास्य हेतु हुई है।

भाषा सरल है। सवाद प्राय लघु हैं। मूल्य कम, हास्याधिक्य, सामाजिक आदर्शो का चित्रण तथा देश की तत्कालीन समस्याओ के स्वरूप को स्थान-स्थान पर उभारा गया है।

हसी के फव्वारे छुडाने वाले संवाद दर्शनीय है—[1]

काकी—दख्योक राकुडयो कवै है के मैं नायक हूग्यो। अरे राकुड़या नायक ही होणो हो तो अठै ही हो ज्यातो। फौजा मे नायक होण नै क्या नै बळयो हो। मनै राड नै मौत ही कोनी आवै। किस्याक जनम्या है राकुडया।............राकुड़या कुमला, तू रगरेजी मे वाता मत कर।"

राजस्थानी एकांकी[2]

समीक्षा —दो सौ बावन पृष्ठीय यह सकलन ऐतिहासिकता के साथ सामाजिकता का अपूर्व सयोग रखता है। इसमे विभिन्न एकाकीकारो के पन्द्रह एकाकी हैं। आपणो खास आदमी, मिनखापणो, डाक्टर रो व्याव, हातै कीजै कामणा किणनै दीजै दोस, वीनणी, टीगर टोली, सम्पादक री मौत एव देवता सामाजिक एकाकी हैं जिनमे क्रमश· सिफारिशी कुप्रथा, मानवता, दहेज, वृद्ध-विवाह, नारी के वन्ध्यत्व-जीवन, अधिक सन्तानो से कष्ट, ठगो एव पाखण्डियो तथा मानव के सुन्दर व्यवहार की झलक मिलती है। वो'ळावण, सीहण जाया साव, सामधरमा माजी, वीरमती, देसभगत भामामा, कामरान की आखडल्या तथा बदळी ऐतिहासिक एकाकी हैं जिनमे क्रमश एक राजपूत की वीरता, कुम्भा के शौर्य, एक वीर माता के साहस, वीरांगना के सतीत्व के उभार, भामाशाह की राजभक्ति और उनके त्याग, हुमायू के न्याय तथा राजपुरोहित केसौ के चातुर्यपूर्ण बदले का चित्रण है। 'टीगर-टोळी" एकाकी हास्य से भरा है। "देवता" एक रेडियो रूपक है जो राजस्थानी-साहित्य को नई देन है। हातै कीजै कामणा किणनै दीजै दोस तथा सीहण जाया साव कहावती शीर्षक धारण किये हुए एकाकी हैं। वो'ळावण, सामधरमा माजी, वीरमती, मिनखापणो, आपणो खास आदमी, डाक्टर रौ व्याव, वीनणी, टीगर टोळी और देवता इत्यादि एकाकी उद्देश्य एव विषय-सामग्री की दृष्टि से सर्वोत्कृष्ट बन पडे हैं। सूर्यकरण पारीक, लक्ष्मीकुमारी चू डावत, आज्ञाचन्द, दामोदरप्रसाद, शक्तिदान कविया, बैजनाथ, अम्बालाल, गोविन्दलाल, मुनश्री पूनमचन्द, नारायणदत्त, शोभाचन्द जम्मड़, गणपतिचन्द्र भण्डारी, मनोहर शर्मा, रावत

---

१. कुमलो फोज में, मालचन्द कोला : पृ. स १५

२ सम्पादक—गणपतिचन्द्र भण्डारी, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।

सारस्वत तथा यादवेन्द्र शर्मा के एकाकियो को इस सकलन मे स्थान दिया गया है। प्राय· सभी एकाकियो मे लघु वाक्यावलियो से युक्त सवादो की भरमार है। प्राचीन परम्परा को ध्यान में रखते हुए वो'ळावण, वीरमती, सीहण जाया साव मे पद्याशो का प्रयोग भी किया गया गया है। मुहावरो-कहावतो का सौन्दर्य भी इन एकाकियो मे देखने को मिलता है—दूवलै नै दो साठ, कयो एक परदेस घणा, जीवती माखी नही गिटू ला, ठठारा रा ऊदरा नै डरया नी सरै, ताळी वाजै नै वावो आवै, काचर रा वीज, पूत कमावै एक पौ'र अर व्याज कमावै सारू पौर, खोटै रो फळ खोटो ई हुवै।

प्राय. सभी एकाकीकारो की आचलिकता मे आसक्ति, "वदळो" जैसे छोटे-से एकाकी में ६ दृश्यो का समावेश, 'वो'ळावण" शीर्षक की अनुपयुक्तता, "कामरान की आखडल्या" में भाषा की स्वाभाविकता का पूर्णत· निर्वाह नही होना, पूर्व-परिचित कथाओ का आधार लेना, कई एकाकियों के शीर्षकों की लम्वाई इत्यादि कुछ कमियाँ इस सकलन की दृष्टिगत हुई हैं।

सम्पादक का चयन वडा सुन्दर एव उचित रहा है। इस दृष्टि से अकादमी का भी प्रयास श्लाघ्य रहा है।

राजस्थानी हास्य एकांकी[1]

समीक्षा—८७ पृष्ठीय इस सग्रह मे प्रथम तीन मालचन्द कीला तथा शेष तीन श्रीमन्तकुमार व्यास के, कुल छ एकाकी है। "लडकी देखू ला" मे दहेज-प्रथा का विरोध, "वोट देवता" मे चुनाव विपयक गांवो मे फैली गलत धारणा एव भ्रान्ति "सीजती खीर" मे गाँवो मे फैले अन्धविश्वास, "गादडी री पूछ" मे जाट की वुद्धि का कमाल, "पोपा वाई रो साळो" मे शासन-प्रवन्ध की शिथिलता तथा "मासी सू मसखरी" मे मौसी से भानजे की मजाको इत्यादि का व्यग्य एव हास्यमूलक विवरण मिलता है। इन एकाकियो का उद्देश्य हसी के साथ साथ सामाजिक कुरीतियो एव बुराइयो पर तीखा प्रहार करना है। पोमू, भोकूराम जैसे हास्य-प्रधान पात्र इनमे हैं। पात्रो की सख्या कथानुकूल है। यथार्थवादी तत्व के साथ आदर्शवादी तत्त्व का मिश्रण भी इनमे मिलता है।

सवादो की लघुता, लघुवाक्यावलि एव सरल भाषा के उदाहरण इनमे यत्र-तत्र मिल जाते हैं। हास्यात्मकता का एक उदाहरण—[2]

"पडत—मैं वोलू जिया वोलीजे। मैं करू जिया करीजै।
चौधरी—तू कहसी जियाँ कह सू। तू करसी जिया करसू।

1 लेखक—मालचन्द कीला तथा श्रीमन्तकुमार व्यास, १९६७ ई० मे प्रकाशित।
2 सीजती खीर ले मालचन्द कीला पृ स ३७

पडत—दिखणा रो एक रिपियो चडा।

चौधरी—दिखणा रो एक रिपियो चडा।

पडत—आछैं वज्जर मूरख सू पानो पडियो।

चौधरी—आछैं वज्जर मूरख सू पानो पडियो।

पडत—अच्छा तो धीगामस्ती करणैं री मन मे आवै है।

चौथरी—अच्छा तो धीगामस्ती करणैं री मन मे आवै है"

कुछ एकाकियो मे आंशिक परिवर्तन कर उन्हे अभिनय के योग्य बनाया जा सकता है। राजस्थानी-साहित्य (गद्य) मे हास्य-साहित्य की कमी की पूर्ति का श्रेय मालचन्द कीला को दिया जा सकता है।

देस रे वास्तै[1]

समीक्षा—एक सौ चार पृष्ठो वाले इस एकाकी-सग्रह मे पाँच एकाकियो को स्थान दिया गया है। पुस्तक का नामकरण प्रथम एकाकी के आधार पर हुआ है। "देस रै वास्तै" में देशभक्ति के रग मे रंगी माँ द्वारा देश-द्रोही पुत्र को विष-पान करा कर मारने, "कायर" मे ईसा के सिद्धान्तो पर चलने वाले सेवा-निवृत्त रणजीत को 'कायर' की सज्ञा देने, "सजा" मे दोष की मात्रानुसार प्रिंसिपल, सुनील और रहमान अली छात्रो को सजाये देने के निर्णय, "वदळा री आग" मे प्रतिशोध की आग भडकाने तथा वुझाने, "भगवान मिलै" मे सत्य के महत्त्व एव प्रभाव—इन तथ्यो का विश्लेपण प्राप्त होता है। इस प्रकार सभी एकाकियों के उद्देश्य अच्छे हैं।। सभी एकाकियो की भापा सरल, मुहावरेदार तथा छोटे-छोटे सवादो से युक्त है। राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो तथा नए शब्दो के निर्माण की कला लेखक मे है। भापा-शैली के सौष्ठव तथा सवादो की सुषमा का उदाहरण द्रष्टव्य है—[2]

"म्हैं मालदारा नै लूटिया है। अन्याय करण वाळा नै हटाया है। अत्याचार नै गुडागिरदी साम्ही वन्दूक चलाई है म्है खून किया है पण अैडा लोगारा जिका इण धरती मायै भार सरूप हा। दूजी कांनी, म्है गरीवा री सेवा की है। किती ही गरीव विधवा वा री वेटिया री किन्यादान अै हाथा सू किया है।"

देस रै वास्तै, कायर तथा वदळा री आग—इन तीनो एकाकियो मे अनावश्यक दृश्यो की योजना की गई है। "वदळा री आग" के पुलिस इन्स्पेक्टर जवान को ज्ञात होने पर भी नरपत तथा सुरजन नामक डाकुओ को उसने गिरफ्तार क्यो नही किया ? प्रिंसिपल को सजा मिलने से "सजा" एकाकी की रोचकता नष्ट हो जाती है। "कायर" एकाकी मे मेजर दलपत और भवानी के सवादों के अन्तिम पृष्ठो

---

1 लेखक-आज्ञाचन्द भण्डारी, १९६७ ई. मे प्रकाशित।

2. देस रै वास्तै . ले. आज्ञाचन्द भण्डारी . पृ. सं. ८२ (वदळा री आग) से

को अनावश्यक ही स्थान दिया गया है। 'देस रै वास्तै' एकाकी के प्रथम दो-तीन पृष्ठो के सवाद स्वाभाविकता से दूर है। पृष्ठ ८५ एव ८७ पर नरपत के सवाद, पृष्ठ ६५ पर प्रिंसिपल का सवाद, पृ ६२ पर सुशील तथा पृ ५५ पर रणजीत का सवाद बडे-बडे तथा नीरसता प्रदान करने वाले हैं। किन्तु गुणो के समूह मे एकाध दोष छिप जाता है। भण्डारीजी का भाषा-लालित्य सराहनीय है।

खाग्या वालण जोगा1

समीक्षा—अट्ठारह पृष्ठो मे बद्ध इस एकाकी का उद्देश्य तथा सन्देश सामयिक ही है। बडे परिवार से अधिक समस्याओ का होना एक मध्यम या गरीब वर्ग के लिए स्वाभाविक है। अत इस एकाकी ने बडे आकर्षक ढग मे परिवार-नियोजन का सन्देश दिया है। एकाकी मे राजस्थानी सस्कृति एव सभ्यता का पूर्ण ध्यान रखा गया है। रामी, जीवणी, तीजूडी, रामू मगतूजी, रूळजी इत्यादि पात्रो के नामकरण तथा पात्रानुकूल भाषा से यह बात स्पष्ट हो जाती है। एकाकी का शीर्षक अत्यन्त ही आकर्षक तथा उपयुक्त है क्योकि ज्यादा सन्तानो वाली स्त्री दुखी होकर बच्चो के विषय मे ऐसा ही कह सकती है। इसमे निहित चार गीत मधुर एव हास्यमय बन पडे हैं। जैसे—

(क) म्हारो चातरियो भरतार, गेहू ल्यायो किल्ला च्यार।

(ख) खाग्या अै सै बाळण जोगा, जीवण मे अणगिण दुख भोग्या।

एकाकी मे विविध समस्याओ एव तथ्यो के विश्लेषण के साथ साथ कथोपकथन, सकलन-त्रय, रस-निष्पत्ति का भी पूर्ण निर्वाह हुआ है। सवादो तथा भाषा-सौष्ठव मे एकाकी का उद्देश्य भी बोल उठा हैं—2

"गोपाल—सुख पाया। देख किसीक मौज करै है। चोखा रहवणै नै मकान खावणनै बढिया माल और पैरण नै टैरीलीन, अग्रेज साव-सा रहवै है थारा डाक्टर। और म्हारै कानी देख, म्हारो डोळ देख लै। पूरा एक दर्जन टावर होया। चार तो रामजी कै घरै गया। पाँच छोरा, तीन छोरी म्हानै जीवता नै खा रह्या है। ई जमानै में तो जीण रै घरै थोडा टाबर वे लोग बीत्ता ई सुखी।"

इस प्रकार पूरे एकांकी मे हास्य-रस का प्रवाह बहा है। भाषा मे सारल्य रहा है।

राम मिलाई जोडी 3

समीक्षा —एक सौ सत्तर पृष्ठोंमे इस सग्रह मे सात एकाकी हैं। अन्तिम

1 लेखक-जयन्त निर्वाण, १९६७ ई मे प्रकाशित।

2 खाग्या वाळण जोगा ले जयन्त निर्वाण पृ स १५

3 लेखक-नागराज शर्मा, सुशील प्रकाशन, पिलानी।

एकांकी के आधार पर संग्रह का नामकरण हुआ है। "चांद पर हमलो" एकांकी हास्य के आधिक्य के साथ प्रौढ-शिक्षा की पैरवी करता समाप्त हो जाता है तो "मायतपणो" मे एक अनपढ बाप बेटे को पढाने हेतु तैयार करता है। "आलो वाचर" मे प्रेम-विवाह से आई लडकी के स्वभाव मे प्रभावित होकर सास-ससुर उसे आदर देने लगते हैं। "लाटरी लूटरी लोटरी" मे हास्यमय लाटरी की आरती की योजना है। अभी तक अन्धविश्वासी जनता देवी-देवता की प्रवलता मे प्रवल विश्वास रखती है—बताने का प्रयास भी इसमे है। "जीवतै को खरच" मे कुटुम्ब के सम्बन्धो पर तीखा प्रहार है। "घर की पलटण" मे परिवार-वृद्धि पर करारा व्यग्य है। "राम मिलाई जोडी" मे दहेज के प्रति आसक्ति तथा नई एव पुरानी पीढी का मेल बताया गया है। सभी एकाकी अभिनय के योग्य हैं। अधिकाश हास्य एव व्यग्यमूलक एकाकी हैं। इनमे पात्र भी स्वाभाविकता लिए हुए हैं तथा उनके नाम देश-कालोचित हैं। इनके विषय समयोचित है तथा ये पाठको या दर्शकों के समक्ष आदर्श प्रस्तुत करने वाले हैं। प्राय. सभी एकाकियो मे गीतो की सृष्टि की गई है। हास्यात्मक आरती[1] की मनोरमता देखने योग्य है—

"जै लोटरी मैया ओम जय लोटरी मैया।
जं कै तू निकळ पावै, पार करै नैया ॥
जात-पात को न रगडो सब तन्नै ध्यावै
रपियो एक लगा कै, परम मोक्स पावै ॥"

मुहावरो-कहावतों का प्रयोग भी श्लाघ्य रहा है—टोर वाधणो, अडकै फूटणो, कांकड तोडनो, बिना सिर पग री वात कदे जच्चा करै है। आलकारिक-सौन्दर्य भी विकीर्ण है—

लोटरी मारणियै सांड की ज्यूं खुल्लो छोड राखो है, तकदीर रो चादरो, सुपारीमान छोरो, राजस्थानी गाजसो पडदा देसी खोल, सरीर खीचडी की ज्यूं खदवद सीजन लागग्यो। शेखावाटी बोली के साथ हरियाणा की तरफ की बोली के शब्द भी आए है—अणांन, वणांन, किमी, सासू को जरख, न्यू कोन्या, वरकी, स्योकिमि।

स्याणा, वोदी, वैछा, पीसा, कुणसी, कदीनो, गुमराई, सोता। भाषा-शैली का उदाहरण[2] —

"......" आज लोग चाँद पर पूंजगा अर तूं टाबरां नै पट्टी वरतै का पीसा कोनी दे सकै। जो वच्चो जन्म लेवै, ऊंकै पालन-पोसण को पूरो भार वाप पर इ होवै है.अर वणांनै पूरो आदमी वणाणे को वी भार वाप पर इ होवै।"

---

1. राम मिलाई जोड़ी लाटरी लूटरी लोटरी (एकांकी)-पृ. स. ८१
2. —यही— : मायतपणों (एकाकी)—पृ. सं. ४२

प्रयुक्त गीतो मे तुकवन्दी का ध्यान नही रखना, शेखावाटी वोली का अधिक प्रभाव तथा राजस्थानी के सम्वन्ध कारक 'रा-रे री' के स्थान पर 'का-कं-की' का प्रयोग करना—ये एकाकीकार की त्रुटियाँ रही है, जो विशेष प्रभावी नही हैं।

नैणसी रो साको[1]

समीक्षा —एक सौ वारह पृष्ठीय इस सग्रह मे ग्यारह ऐतिहासिक एकांकी हैं। पुस्तक का नामकरण प्रथम एकाकी 'नैणसी रो साको" के आधार पर हुआ है। "नैणसी रो साको" मे जसवन्तसिंह द्वारा दण्डित निरपराध नैणसी का आत्म-घात कर साका (स्वाँग या खेल) दिखाने, "सुपियारदे" मे पति द्वारा व्यथ मे ही अपमानिता सुपियारदे का छोटी वहिन के पति के पास चली जाने, "सोढी राणी" मे पति लखपत द्वारा सोढी रानी को, डूम को, शृ गार सहित इनाम मे देने पर सोढी के मरने, "राजदड" मे विमाता की इच्छा के विरुद्ध राजदण्ड धारण किए लाखोजी के द्वारा अपनी वहिन की ठाकुर वीरण राठौड के साथ शादी करने, 'वदळो" मे अपमानित राजपुरोहित केसो का अजैसी से वदला लेकर तालाव के खुद-वाने, "सती रो सकट" मे विना विवाह दूल्हे के मरने पर लाडकु वर के समक्ष सती वनने का सकट आने, "रजपूत री वेटी" मे राजपूत की सुन्दरी वेटी जीजी के द्वारा सोजत के कामान्ध स्वामी वीरमदे को प्राण-भिक्षा देकर सदा के लिए ऐसी हरकतो से वचाने, "कवि रो कलक" मे धन-लोभी वारहठजी को कवि के कलक का अर्थ महसूस कराने, "वेटी-जमाई" मे जालौर के कान्हडदे द्वारा जमाई को जालौर वुला कर नाई के द्वारा मरवाने, "धरम सकट" मे दलो जोईयो के समक्ष वीरम के साथ युद्ध करने या न करने के धर्म-सकट तथा "अपमान-भार" मे अपमान के भार से पीडित नरो सूजावत की माँ लिखमादे के अपमान का वदला पोकरण के स्वामी के राज्य पर अधिकार जमा कर नरो द्वारा लिए जाने इत्यादि का पूर्ण विवरण मिलता है।

प्राय सभी एकांकी अभिनेय हैं। कवि रो कलक तथा सुपियारदे के सवाद वडे मार्मिक वन पडे हैं। सुपियारदे, सोढी राणी, राजदण्ड और सती रो सकट की ऐतिहासिकता एव रोचकता सजीव हो उठी है। दृश्य एव सवाद छोटे-छोटे हैं। पात्रानुकूल भाषा के क्षेत्र मे शर्माजी आचलिकता से परे है। भाषा-शैली के सारल्य एव प्रवाह का उदाहरण[2]—

"सुपियारे— '' । यो वोल तरवार री धार सू भी वणो तेज है। म्हारी आत्मा रो पछी छटपटावै है। काया सू प्राण नीसरै कोनी। (सिर नीचो

---

1 लेखक-मनोहर शर्मा, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

2 सुपियारदे (एकाकी)--पृ स १७ (नैणसी रो साको)।

करर्यां थोडी देर चुप रैवै है) लुगाई रो जीतव महाहीणो है। सरवस त्याग'र भी उग रै भाग मे अविस्वास ई लिख्यो है। मैं काई बुरो करयो ? बधती राड़ नै ई तो मेटी। पण समझावै कुण ? सदेह रै विख री दारू कोनी।"

एकाध एकांकी को छोड शेष सभी राजस्थानी भाषा की पत्र-पत्रिकाओ मे छप चुके हैं। "राजदण्ड" का शीर्षक अनुपयुक्त है। दृश्य तो छोटे-छोटे हैं परन्तु उनकी सख्या अधिक हैं। "सोढी राणी" मे पृ. २८ पर लखपत तथा "राजदण्ड" मे पृष्ठ ५६ पर वलोचणी का सवाद तथा अन्य कई सवाद एक-एक डेढ-डेढ पृष्ठो मे होने से नीरसता की वृद्धि करते है। कई स्थानो पर हिन्दी के सर्वनामो का प्रयोग किया गया है। इस प्रकार ये आशिक दोष गुणो के समूह में छिपने के योग्य हैं।

जूना बेली नुवा बेली[1]

समीक्षा :—इस सकलन मे दो एकाकी है। "टावरिया नै ठाडा झोला दीजै म्हारी माय" मे नृसिह राजपुरोहित ने चेचक के प्रकोप तथा राधाकृष्ण वर्मा ने "हर की पेडी पर" मे मक्खीचूस सेठो पर तीव्र प्रहार किए हैं। दोनो ही रेडियो रूपक हैं अत इनमे दृश्यो का आयोजन नही किया गया है। दोनो ही पात्राधिक्य के दोष से बचे हुए हैं। कुछ हास्यप्रद वातावरण की सृष्टि भी हुई है—[2]

(क) "एक रै इक्कीस च्ट्रैग्या तो खावेला कांई"

(ख) "भालेहू किस्यो इव म्हारो माथो फोडसी के ?"

(ग) "हर की पेडी पर खड़्या हां तो म्हारे पगां पर खडर्यां हां, तनै कोई जोर आवै है।"

भाषा-सौन्दर्य मे कहावतें, मुहावरे एव आलकारिकता के दर्शन होते है—

दूधा न्हावौ पूतां फळौ, बड ज्यू फळौ अर दोब ज्यू पांगरौ, गुड लागै न फिटकरी रग आवै चोखो, कूवे मे भांग पडगी, मनै ई डोका चरावै है।

भाषा पर आंचलिक-प्रभाव, "हर की पेडी" एकाकी का दो सवा दो पृष्ठो का कलेवर होना, "हर की पेडी" मे 'पटाक्षेप' तथा "टावरिया नै ठाडा झोला दीजै म्हारी माय" मे 'पडदौ पडै' का प्रयोग करना (रेडियो रूपक होने के कारण) इत्यादि आंशिक त्रुटियां इन एकांकियो मे हुई हैं। परन्तु शिक्षा-विभाग का इस क्षेत्र मे कार्य श्लाघनीय माना जाता है।

---

1. सम्पा०--शिवरतन थानवी और पुरुषोत्तम तिवाडी, शिक्षा विभाग, बीकानेर।
2. टावरिया नै ठाडा झोला दीजै म्हारी माय : हर की पेड़ी पर : पृ सं ३४ तथा ३९

टमरक टू[1]

समीक्षा —अस्सी पृष्ठीय इस संग्रह में सात वार्तोपयोगी एकांकी निहित हैं। "सगाई को आडतियो" में वेढंगे विवाहों का कारण दहेज-तिलक मांगने वाले आढतियों का होना, "फेमली भेजो में अशिक्षा तथा भोली ग्रामीण स्त्री के स्वरूप को प्रकट करना, "कद्दी विगाड" में दूसरे के कार्य को विगाड कर खुश होने वाले लोगों के चरित्र पर व्यंग्य, 'लकीर का फकीर" में प्रगतिशील-युग में भी अन्धविश्वासियों की कमी न रहना, "इन्टरव्यू' में साक्षात्कार का एक रोचक प्रसंग तथा "टमरकटू" में प्रेम-गीत के साथ नए शिल्प का प्रयोग—इत्यादि का विवेचन मिलता है। अशिक्षा के कारण गांव के लोग अर्थ का अनर्थ कर बैठते हैं इसका ज्वलन्त प्रमाण "फेमली भेजो" एकांकी है। इस प्रकार सभी एकांकियों में वास्तविकताओं का पर्दाफाश होना है। अन्तिम एकांकी के नाम के आधार पर इस संग्रह का नामकरण हुआ है। सभी एकांकी अभिनेय हैं। एकांकियों में हास्यात्मक प्रसंग भी सामने आये हैं—

(क) "इब तो छोड्यो ए छापै नै। ऐ गमार्‌यै छापै नै भागोत वणा राखी है।'[2]

(ख) 'ए छोरी तेरा तो नकसो ही कोनी नावडै। दो आक के सीख लिया, इन्दरा गाधी हो री है। · थोडी-सी वार पैल्या तो घुचरिया खिलांवती फिरै थी।"[3]

माडूराम, कुरडो, कजोडमल और छैंदीलाल जैसे पात्र भी हास्यात्मक नाम धारण किये हुए हैं। प्राय सभी एकांकियों में सवाद लघु ही है। अंग्रेजी, सस्कृत तथा उर्दू के शब्द-प्रयोग मे लेखक की भाषा-सहिष्णुता प्रकट होती है। जैसे—आयुर्वेदिक, वैज्ञानिक, सम्बन्ध, युग कार्यालय, बीमार, बिल्कुल, साइन्स, एकाउण्ट्स। "टमरक टू" एकांकी में चौधरी, पण्डित, कमेडो, कौए, बैल और चूहे आदि के सवाद बडे हास्यप्रद हैं। गीत-शैली भी प्रयुक्त है—[4]

"ऊंदरो—कूतर कूतर काटू गो,
फेर सीरणी बांटू गो।

फर फर तू उड ज्याये वीं जाटी पर चढ ज्याये।
टमरक टू भाई टमरक टू, टमरक टू भाई टमरक टू।"

---

1 ले रामनिरजन शर्मा 'ठिमाऊ" सारस्वत प्रकाशन प्रतिष्ठान, पिलानी।
2 "सगाई को आडतियो" (एकांकी) —'टमरकटू"—पृ स ३
3 "फेमली भेजो" (एकांकी)———पृ स १८
4 टमरकटू ———पृ स ८०

इस प्रकार सभी एकाकी बाल-एकाकी हैं जिनमे मनोरजन हेतु कुछ अस्वाभाविक बातो का समावेश भी है।

बारखड़ी[1]

समीक्षा —अन्यान्य गद्य-विधाओ के साथ साथ दो एकाकियो को भी सकलित किया गया है। सुरेन्द्र 'अचल' के ' राजीनामो" मे मत्रियो तथा आन्दोलनकारी कर्मचारियो के बीच राजीनामे (समझौते) की परिस्थितियो एव जमनाप्रसाद ठाडा राही' के "अणसमझी रा रोवणाँ" मे अशिक्षित ग्रामीणो के विचित्र स्वभावो का चित्रण हुआ है। ' अणसमझी रा रोवणाँ" मे कसन की पदोन्नति के तार को पिता और चाचाओ द्वारा मृत्यु के सन्देश वाला समझते हुए रोना तथा "राजीनामो" मे कर्मचारियो द्वारा आन्दोलन और विवश मत्रियो द्वारा समझौता करने—इत्यादि का विश्लेषण अत्यन्त स्वाभाविक बन पडा है। आज के नेताओ एव मत्रियो की ढुलमुल नीतियो, शिक्षा और देश भक्ति की भावना आदि के रोचक सकेत इनमे उभर पडे हैं। दोनो ही एकाकी अभिनय के योग्य हैं। इनकी भाषा सरल हैं। इनके सवादो मे सजीवता एव सरलता है। कथायें देशकालानुकूल हैं। पात्रो की सख्या यथेष्ट हैं।

"राजीनामो" मे किरण तथा मगल नामक पात्रो की अनावश्यक सृष्टि की गई है। दोनो ही एकाकियो की भाषा पर हाडौती बोली का अधिक प्रभाव है। भाषा-शैली का एक उदाहरण—[2]

"घासीजी—मत पूछे म्हारा कसना की बातां भाया, आँख्याँ मीचतां ही ऊकी छब साँम आज्या छे। ऊ भोलो ढालो दल्ली के भेंट होग्यो। म्हाँने जीवतां ही मारग्यो।.......। म्हाने दर दर करग्यो। यो आयो छे, खोलो तार भाया कसनाँ को (रोवे छे)।"

विविधा[3]

इसमे हिन्दी की अन्यान्य विधाओ के साथ राजस्थानी भाषा के दो एकाकियो को भी स्थान दिया गया है। प्रथम एकाकी "सगीत रो चमत्कार" मे गागरूनगढ के राजा अचलदास खीची के पत्थर हृदय को पिघला कर उपेक्षिता रानी उमादे के जीवन को सार्थक बनाने मे दासी चारणी झीमा के सगीत का चमत्कार प्रकट हुआ है तो दूसरे एकाकी "राजस्थान रो कँवळ" मे विनाश से बचाने हेतु राजस्थान की कमल मेवाड-सुन्दरी राजकुमारी कृष्णा का विष-पान कर अभूतपूर्व त्याग

---

१. सम्पादक-वेद व्यास, शिक्षा विभाग, राजस्थान, बीकानेर।
२. बारखडी अणसमझी रा रोवणा पृ स ७९।
३ स राजेन्द्र शर्मा, सकलन-ग्रन्थ, शिक्षा विभाग बीकानेर।

प्रदर्शित किया गया है । 'सगीत रो चमत्कार'' मे जहाँ अर्ध विराम के चिन्ह के प्रयोग का नितान्त अभाव, आंचलिक भाषा का अधिक प्रभाव एव शेखावाटी बोली का प्रयोग मिलता है वहाँ नूतन शब्दो के निर्माण का कौशल, सस्कृत-उर्दू के शब्दो की अत्यल्पता, अभिनेयता, सवादो की लघुता, भाषा-सारल्य एव सकलन-त्रय का अपेक्षित ध्यान भी देखने को मिल जाता है । एकाकी मे तीन दृश्यो की योजना है । 'राजस्थान रो कँवळ'' का पचहत्तर प्रतिशत भाग हिन्दी भाषा मे अभिव्यजित हुआ है । एकाकी के पात्र अमीर खाँ के सवाद तो हिन्दी मे हैं ही अपितु मेवाड के महाराणा भीमसिंह और वाचक-वाचिका के सवाद भी हिन्दी के प्रभाव से नही बच सके हैं । उर्दू के शब्द यथोचित मात्रा में आए हैं परन्तु सस्कृत के शब्दो आधिक्य रहा है । वाचक-वाचिका द्वारा भूत-भविष्य की कथा की ओर सकेत तथा स्मृति-दृश्य आदि की योजना एकाकी की मौलिकता है । हिन्दी भाषा के प्रयोग का आधिक्य एकाकीकार की राजस्थानी भाषा की अल्पज्ञता को सूचित करता है ।

इन सभी के अतिरिक्त कई एकांकी स्फुट रूप मे मरुवाणी, ओळमो, हरावळ, जागती जोत, चामल, मधुमती, राजस्थान भारती, हेलो, लोक-सम्पर्क, समाजवाणी, लाडेसर तथा ईसरलाट इत्यादि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुके हैं जिनमे सुरेन्द्र 'अ चल' के ''रगत एक मिनखरो'' ''सूरज री उगाली'' 'धरती मुळकी'' तथा ''प्रजातन्त्र री बगसीस'' भूरसिंह राठौड के ''कतारिया'' ''इन्टरव्यू'' और ''शरणागत'' कविराज मोहनसिंह श्रीमती मानकुमारी का ''पोपराज'' कनकराज सोनी का ''टमरकटू'' मोतीसिंह राठौड का 'सेठाँ री पगडी' गणपत-लाल डाँगी के ''कुबदी चाकर'' और ''सासूजी'' भूपतिराम के ''मुक्ति रो आणद'' और 'भणाई मे समाजवाद'' गणेशीलाल उस्ताद का ''धरती उतरण'' निर्मोही व्यास का ''मोल एक रमतियै रो'' जमनाप्रसाद ठाडा के पगछत, साँचा देवता तथा ''शेरवान्याँ'' कृष्ण कल्पित का 'रग्योडो रेवड'' दामोदरप्रसाद के हाथी रा दाँत, तोप रो लायसैन्स और 'कामरान की आँखडल्याँ'' बैजनाथ पवार का ''मोत सू मुंकाण वडी'' अबालाल जोशी का ''विरखा नी हुई' नारायणदत्त श्रीमाली के ''बन्दो बैरागी'' ''माटी रो पौरेदार'' ''माँ रै घर मे·····'' ''सुततरता रो हेलो' जनता रै नाँव'' ''छिया तावडो'' ''बातचीत'' तथा ''पुन रा पगल्या'' मनोहर शर्मा के 'एक नयो मठ'' ''कवि रो कलक'' ''बेटी-जमाई'' यादवेन्द्र शर्मा का ''तू वो जलम'' नारायणसिंह भाटी 'नानण' का ''चेडो'' मुरली-धर व्यास के ''दीन ईमान जलम-भोम रै सागै'' ''दर्प-दळण'' ''राखी'' और मेवाड री लाज ''श्रीलाल मिश्र का ''धनजी भीवजी'' दौलतसिंह लोढा का ''राजा भरतरी'' दीनदयाल ओझा के ''मूमल'' और ''रतनकुंवरी'' विनोद सोमानी का

"रग मे भग" कन्हैयालाल शर्मा का 'यारो कर लिया म्हेतो" कन्हैयालाल राजपुरोहित का "टाबरिया नै ठाडा झोला दीजै म्हारी मा'य" भगवानदत्त का "एकलो मारग" रामनाथ सोनी का "दहेज ककए" श्रीचन्द राय का "बीकाणे रो निर्माण री एक झांकी" बालकृष्ण का "चालू दुनिया" हरिकिशन का "म्हारो बेटो लादूराम लाखां मे एक टाबर' किशन शर्मा का 'दर्द की मौत' सत्यनारायण प्रभाकर का ' आओ देस बुलावै" अन्नाराम 'सुदामा' के "उठती दूकान" तथा "मिली-भगत" श्रीमन्तकुमार के "बीरता रो नसो" लिछमी अर घग्घू" "डफोळ" "चानणी" और "पोपा बाई रो साळो" भौमराज का "ध्यानी बाबाजी" सुबोधकुमार का "दो बाघडा" धनजय वर्मा का "जय जळमभोम" नरोत्तमदास स्वामी का "सोराब और रुस्तम" नृसिंह राजपुरोहित के "धरती गावै'रे" तथा "बीड़ी" रतिकान्त के के "चपडासो-सघ" "ठाकर बखतपालसिंह" तथा ' उतरा पाव पसारज्यो" जगदीश माथुर का "पितरा रो आगमण" अमोलकचन्द जांगिड के "गुटक बच्चा" तथा "मुळक्या सरसी" नन्द भारद्वाज के "रामलीला रा पात्र" तथा "गली गुवाड" पूरणमल का "कुण जीत्यो" इत्यादि अनेकानेक एकाकी अत्यन्त उल्लेखनीय रहे है जिनका राजस्थानी के एकाकी-साहित्य के विकास मे बडा अपूर्व योगदान रहा है। इसके अतिरिक्त कई अन्य एकाकी-सग्रह तथा एकाकी भी प्रकाशित हुए हैं, प्राप्त नही होने की स्थिति मे उनका विस्तृत मूल्याकन अनुपयुक्त होने के कारण परिचय मात्र ही पर्याप्त होगा।[1]

राजस्थानी एकाकीकारो का झुकाव ऐतिहासिक एव सामाजिक समस्यामूलक एकाकी-लेखन की ओर ही विशेपत. रहा है जिनमे आदर्शवाद, आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद तथा यथार्थवाद—तीनो ही विचारधाराओ के स्वर फूट पडे है। ऐतिहासिक और सामाजिक एकाकियो के अलावा हास्य-व्यग्य-मूलक, धार्मिक पौराणिक तथा राष्ट्रीय एकाकी भी लिखे गए है किन्तु प्राधान्य प्रथम दो का ही रहा है। राजस्थान का इतिहास समस्त भारतीय साहित्य-जगत् के लिए प्रेरणा का एक बहुत बडा स्रोत रहा है। इसी प्रवाह मे बहने के कारण आज्ञाचन्द भण्डारी ने "देस रै वास्तै" तथा "देसभगत भामासा" दामोदरप्रसाद ने "कामरान की आखडल्या" नारायणदत्त श्रीमाली ने "बन्दो बैरागी" मनोहर शर्मा ने "कवि रो कलक" नैणसी रो साको, सुपियारदे, सोढी राणी, बदळो, राजदण्ड, सती रो सकट, रजपूत री बेटी, बेटी-जमाई, धरम-सकट तथा "अपमान-भार" मुरलीधर व्यास ने "दीन ईमान जलजभोम रै

1. ग्यारह राजस्थानी एकांकी स्पेशल मीटिंग एकाकी-सग्रह-श्रीमन्तकुमार व्यास।
   जीतसी तो कांगरेसई— — — " " "
   दारु रो ठेको (एकाकी)— — — प्रो. गोविन्दलाल माथुर
   गढ थापण बीकानेर (एकाकी-सग्रह)-श्रीचन्दराय, १९७६ मे प्रकाशित

सागै" तथा "मेवाड री लाज' श्रीलाल मिश्र ने "धनजी-भीवजी" दीनदयाल ओझा ने 'मूमल" तथा "रतनकुवरी" श्रीचन्दराय ने "वीकाणै रो निर्माण री एक झाकी' श्रीमन्तकुमार व्यास ने "वीरता रो नमो" धनजय वर्मा ने 'जय जळमभोम' नरोत्तमदास स्वामी ने "सोराव और रुस्तम" रामदत्त साकृत्य ने 'देस रो हेत' तथा "जलमभोम री मूरत" लक्ष्मीकुमारी चूडावत ने 'मामधरमा माजी' शक्तिदान कविया ने वीरमती" सूर्यकरण पारीक ने 'बोळावण" तथा गणपतिचन्द्र भण्डारी ने "सीहण जाया साव" इत्यादि ऐतिहासिक घटनाओ पर आधारित अनेक एकाकियो की सर्जना की है। इतिहास मे वर्णित शूरवीरो, आन के धनियो, विलक्षण योद्धाओ शरणागत-वत्सलो, स्वाभिमानी राजपूतो एव कर्त्तव्यनिष्ठ वीरो की जीवन्त प्रेरणा, अदम्य साहस वाली तथा हसने-हसते जौहर की लपटो मे कूदने वाली राजपूत ललनाओ के चित्र राजस्थानी के आधुनिक ऐतिहासिक एकाकियो मे यत्र तत्र सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं। इन एकाकियो मे एक वात सामान्य रूप से प्रमुख रही है, वह है—इनके कथानको का अधिकाशत राजस्थान के ही इतिहास से चयनित होना। दामोदरप्रसाद का "कामरान की आखडल्या तथा नरोत्तमदास स्वामी का 'सोराव और रुस्तम" जैसे गिनती के एकाकी ही इसके अपवाद है।

सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओ तथा सामाजिक समस्याओ को चित्रित करने वाले एकाकी भी राजस्थानी मे पर्याप्त मात्रा मे लिखे गए है। ऐसे एकाकियो मे आदर्शवादी, आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी और यथार्थवादी विचारधाराओ से अनुप्राणित एकाकी ही प्रधानत आते हैं। सामयिक समस्याओ को उठा कर उनका आदर्शवादी अन्त प्रस्तुत करने वाले एकाकियो मे श्रीनाथ मोदी का "गाव सुधार या गोमा जाट" दिनेश खरे का "नुवो मारग" निरजननाथ आचार्य का "नहरी झगडो" नागराज शर्मा का "डूबतो चेतो" और "सोवो मत ना, जागो" कन्हैयालाल दूगड का "आदर्श विद्यार्थी" आदि एकाकी उल्लेखनीय वन पडे है। इस प्रकार के एकाकियो मे प्राय लेखको का उद्देश्य अशिक्षित या अल्पशिक्षित ग्रामीणो के मध्य सरल एव रोचक ढग से कोई न कोई शिक्षाप्रद तथा अनुकरणीय वात का प्रचार करना होता है। कुछ ऐसे एकाकी भी अधिक सफल तथा स्वाभाविक वन पडे हैं जिनके पात्र स्वय ही अपने विगत जीवन के कार्यो से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को एक सही राह मे डालने के लिए स्वेच्छा से परिवर्तन को स्वीकार कर लेते हैं। ऐसे एकाकियो मे नारायणदत्त श्रीमाली का "माटी रो पौरेदार" नागराज शर्मा का "ओप री पढाई" आज्ञाचन्द भण्डारी का "वदळा री आग" तथा गोविन्दलाल माथुर का "डाक्टर रा व्याव" इत्यादि एकाकी उल्लेखनीय है।

सामाजिक समस्यामूलक एकाकी-लेखन मे गोविन्दलाल माथुर का विशिष्ट स्थान है। इनके एकाकियो मे कही दहेज का विकृत एव घिनौना चित्र अकित हुआ

है तो कहीं ऋण का भयंकर परिणाम प्रस्फुट हुआ है। कही ग्रामीणों की अशिक्षा-जन्य अज्ञानता के भीषण परिणामो का चित्राकन तो कही छुआछूत की विषैली नागिन की विकरालता का भयावह परिणाम चित्रित हुए है। सामन्ती-युग की क्रूरताओ का मार्मिक चित्रण भी कई एकाकियो मे उपलब्ध हो जाता है। इस क्षेत्र मे दामोदरप्रसाद का 'तोप रो लायसैन्स' सुरेन्द्र 'अचल' का ' रगत एक मिनख रो" नारायणदत्त श्रीमाली का "छिया तावडो" और जयन्त निर्वाण का 'खाग्या वाळण जोगा" इत्यादि एकाकी सफल सिद्ध हुए है।

राजस्थानी मे हास्य एव व्यग्यमूलक एकाकी भी लिखे गए है। इनमे से कुछ तो मनोरजन की दृष्टि से और कुछ सुधारवादी भावनाओ से ओतप्रोत हास्य-प्रधान एकाकी है। ऐसे एकांकियो मे शोभाचन्द जम्मड का "टीगर-टोळी" मालचन्द कोला के "ठा पडवा लागगी" तथा "कुमलो फौज मे" वैजनाथ पवार का "आपणो खास आदमी" रावत सारस्वत का "सम्पादक की मौत" विनोद सोमानी का "रग मे भग" कविराज मोहनसिंह : श्रीमती मानकुमारी का "पोपराज" मोतीसिंह राठौड का "सेठा री पगडी" निर्मोही व्यास का "मोल एक रमतियै रो" नारायणदत्त श्रीमाली का "बातचीत" कन्हैयालाल शर्मा का 'यारो मर लिया म्हेतो' अन्नाराम 'सुदामा' का "उठती दूकान" रतिकान्त चौधरी का "चपडासी-सघ" जगदीश माथुर का "पितरा रो आगमण" रामनिरजन शर्मा[1], नागराज शर्मा[2], श्रीमन्तकुमार व्यास तथा मालचन्द कोला[3] के एकाकी-सग्रहो के एकाकी उल्लेखनीय बन पडे हैं। राजस्थानी मे हास्य की अपेक्षा व्यग्य-प्रधान एकाकियो की सख्या और भी अल्प रही है।

देश की सामयिक समस्याओ से प्रेरित होकर कुछ राष्ट्रीय एव राजनीतिक एकाकियों की सर्जना भी अर्वाचीन राजस्थानी साहित्य मे हुई है। इस दृष्टि से कही प्राचीन ऐतिहासिक प्रसगो को युगानुरूप नूतन सदेश का वाहक बनाया गया है तो कही सामयिक प्रसगो को प्रेरणा-स्रोत। ऐसे एकाकियो मे नागराज शर्मा का "हमलो" रामदत्त साकृत्य के "देस रो हेलो" "कुंवारी सीवा" "जळमभोम री मूरत" तथा "सुरग री पुकार" सत्यनारायण प्रभाकर का "आओ देस बुलावै" नारायणदत्त श्रीमाली का "सुततरता रो हेलो जनता रै नाव" धनजय वर्मा का "जय जळमभोम" सुरेन्द्र 'अचल' का "राजीनामो' जमनाप्रसाद टाडा का 'शेर-वान्या" सोमदेव शर्मा का "प्रजातंत्र री बगसीस" आशाचन्द भण्डारी का 'देस रै

1. टमरकटू' एकाकी-सग्रह, सवत् २२०९ मे प्रकाशित।
2 राम मिलाई जोडी एकाकी-सग्रह, १९७२ ई० मे प्रकाशित।
3. राजस्थानी हास्य एकाकी-सग्रह, १९६७ ई " " "।

वांस्तै' मुरलीधर व्यास के "दीन ईमान जळभोम रै सार्ग" तथा "मेवाड री लाज" इत्यादि स्तुत्य है।

मुरलीधर व्यास ने "दर्प-दलरण" तथा नन्द भारद्वाज ने "रामलीला रा पात्र" एकाकी पौराणिक एव धार्मिक प्रसगो को चुनकर लिखे हैं। इनमे से नन्द भारद्वाज ने पौराणिक नामो से पूर्ण अपने एकाकी को समाज के नए स्वरूप मे ढाला है। सख्या की दृष्टि से यद्यपि इस क्षेत्र मे ये एकाकी अत्यन्त ही अल्प हैं तथापि सर्वथा अभाव के कलक को धोने का आशिक प्रयास तो कहना ही पडेगा। एक-पात्रीय सूचनामूलक, व्यक्तिसमस्यापरक, दार्शनिक, मनोविश्लेषणप्रधान तथा प्रतीकात्मक एकाकियो की तरफ राजस्थानी एकाकीकारो का ध्यान बिल्कुल नही गया है।

आकाशवाणी से विशेष प्रोत्साहन मिलने के कारण कुछ रेडियो रूपक तथा सगीत रूपक भी राजस्थानी मे लिखे गए है। इस क्षेत्र में नृसिंह राजपुरोहित का "धरती गावेरे" यादवेन्द्र शर्मा का 'देवता" गणेशीलाल 'उस्ताद' के "वधाउडो" "धरती उतरण" और "जुगजाभरखो" नारायणदत्त का "पुन रा पगल्या" सुरेन्द्र 'अचल' का "सूरज री उगाली" एकाकियो की सृष्टि अत्यन्त ही प्रशसनीय बन पडी है। जहाँ "धरती गावे रे" मे वैज्ञानिक पद्धति से खेती करने के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है वहाँ "देवता" मे साम्प्रदायिक सद्भावना, सहकारी जीवन, प्रेम और अहिंसा के माहात्म्य का गुण-गान। प्रगतिशील विचारधारा से प्रेरित सगीत रूपको मे श्रम और सहकारिता आदि की महत्ता बताई गई है। इनके अतिरिक्त दौलतसिंह लोढा ने 'राजा भरतरी" जैसे लोक-एकाकी तथा नारायणसिंह भाटी 'मानरण' ने "चेडो" अमोलकचन्द जांगिड ने "गुटक बच्चा" तथा "मुळक्या सरसी" और भूपतिराम साकरिया ने "मुक्ति रो आणद" जैसे मिनी-एकाकियो की सर्जना की है जो राजस्थानी एकाकी-साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

यहाँ तक राजस्थानी एकाकियो के ऐतिहासिक विकास-क्रम और विषयगत प्रवृत्तियो की विवेचना हुई है। अब आगे शिल्प की दृष्टि से इनका विवेचन करना भी अनुपयुक्त नही होगा। राजस्थानी एकाकियो मे शिल्पगत जटिलता और रगमचीय प्रयोगो की नवीनता का अभाव रहा है। रगमच की परिष्कृत प्रणाली के उपयोग और आधुनिक कौशल के प्रयोग को ध्यान मे रखते हुए तदनुकूल एकाकी-रचना की ओर एकाकीकारो का ध्यान बहुत ही कम गया है। आज्ञाचन्द भण्डारी कृत 'देस रै वास्तै" जैसे कुछेक एकाकी इसके अपवाद हैं। वैसे परम्परागत चले आ रहे रगमच तथा अपनी अभिनेयता की दृष्टि से राजस्थानी के कई एकाकी सफल सिद्ध होते हैं। यह अवश्य है कि हिन्दी चल-चित्रो की लोकप्रियता, वित्तीय साधनो के अभाव और राजस्थानी सस्कृति के अत्यन्त उन्नत नही होने के कारण राजस्थानी एकाकियो का

अभिनय-कार्य नहीं के बराबर है। प्रतिवर्ष बम्बई आदि नगरो मे दो-तीन राजस्थानी नाटको का अभिनय अवश्य हो जाता है। शिक्षण-शालाओ मे राजस्थानी एकांकियों के अभिनय मे सबसे बडी बाधा स्त्री-पार्ट की है जिसे राजस्थानी सस्कृति के पिछडे ढर्रे मे पली युवतियाँ ग्रहण करने मे अत्यन्त सकोच करती है। अस्तु, अभिनय की की दृष्टि से सफल एकांकियो की राजस्थानी-साहित्य मे कोई कमी नही है।

एक श्रेष्ठ एकांकी के लिए सकलन-त्रय का निर्वाह आवश्यक होता है। राजस्थानी एकाकीकारो मे से नागराज शर्मा के "इब तो चेतो" सोवो मत ना; जागो" तथा "घर का टाबरा" आज्ञाचन्द भण्डारी के "देस रै वास्तै" "कायर" और "बदळा री आग" दिनेश खरे का "नुंवो मारग" मनोहर शर्मा तथा गोविन्दलाल माथुर के अधिकाश एकाकियो में सकलन-त्रय का पूर्णत निर्वाह हुआ है।

सवाद, कथानक, पात्र, वातावरण, सघर्ष आदि तत्त्वो की दृष्टि से राजस्थानी एकांकियो का सम्यक् सयोजन हुआ है। कथानक की प्रवाहमयता के साथ यदि कही वातावरण और सघर्ष की मनोरम झाकी के दर्शन होते हैं तो कही सवादो की सजावट और ताजगी के। सुधारवादी दृष्टिकोण से प्रेरित कथानको के चयनकर्त्ताओ मे मनोहर शर्मा, आज्ञाचन्द भण्डारी, गोविन्दलाल माथुर, जयन्त निर्वाण, निरंजन नाथ आचार्य तथा अन्नाराम 'सुदामा' के नाम अधिक उल्लेखनीय हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मनोहर शर्मा का ऐतिहासिक एकाकियो के लेखन का लक्ष्य ऐतिहासिक घटनाओ की पुनरावृत्ति नही है अपितु इतिहास के ऐसे प्रसगो को प्रकाश मे लाना है जो अल्प-प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध रहे हैं। ठीक इसी प्रकार समाज-सुधारक एकाकीकारो का लक्ष्य भी सामयिक जीवन की किसी एक महत्त्वपूर्ण समस्या या मानव-जीवन के किसी एक विशिष्ट पहलू पर तीव्र प्रकाश डालना है। पात्रो के चरित्राकन तथा उनके अन्तस्थ भावो के द्वन्द्व, उनकी मानसिक ऊहापोह तथा मस्तिष्क मे चल रहे सत् और असत् विचारो के सघर्ष को अभिव्यक्त करने मे ये एकाकीकार ही विशेष सजग हैं। सफल एकाकी के लिए पात्रो की अल्प संख्या, मुख्य पात्र के व्यक्तित्व या फिर उससे सम्बन्धित समस्या का पूरे एकाकी मे छाये रहना आवश्यक है। राजस्थानी मे "गांव सुधार या गोमा जाट" तथा "आदर्श विद्यार्थी" जैसे अपवादस्वरूप एकांकियो को छोड अधिकांश एकाकियो मे पात्रो की सख्या पांच और सात से अधिक नही हैं। "जय जळमभोम" जैसे कुछेक एकाकियो को छोड किसी एकाकी मे कोई गौण चरित्र इतना अधिक नही उभर पाया है कि वह मुख्य पात्र एव मुख्य समस्या को ही प्रभावहीन कर दे। "जय जळमभोम" का मंत्री राणा की अपेक्षा अधिक दबग एव प्रभावशाली लगता है तथा इसकी सामान्य नर्तकी मे भी मान-सम्मान एव स्वतत्रता के गुण समाविष्ट हैं।

भाषा-शैली की दृष्टि से राजस्थानी एकांकियो मे कुछ भिन्नता देखने को मिलती है। जमनाप्रसाद ठाडा के एकांकियो मे हाडोती बोली, निरजननाथ आचार्य तथा लक्ष्मीकुमारी चूडावत के एकांकियो मे मेवाडी बोली, रामनिरजन शर्मा, नागराज शर्मा और मनोहर शर्मा के एकांकियो मे शेखावाटी बोली, गोविन्दलाल माथुर, नारायणदत्त श्रीमाली तथा आज्ञाचन्द भण्डारी के एकांकियो मे जोधपुरी (मारवाडी) बोली, मुरलीधर व्यास, श्रीचन्द राय तथा अन्नाराम 'सुदामा' के एकांकियो मे बीकानेरी बोली, रामदत्त साकृत्य के एकांकियो मे चुरू-रतनगढ के तरफ की बोली और दीनदयाल ओझा के एकांकियो मे जैसलमेरी थली बोली का विशेष प्रभाव स्पष्टत. नजर आता है। राजस्थानी भाषा की अन्यान्य बोलियो के विशेष प्रभाव मे आने के बावजूद सभी एकांकीकार मूलत राजस्थानी भाषा की शृंखला मे ही बद्ध हैं। अत. भिन्न भिन्न एकांकीकारो के राजस्थानी भाषा की विभिन्न बोलियों के प्रभावी झोको मे बहने पर भी इसे भाषा के क्षेत्र मे आंचलिकता का अमिट दोष नही कहा जा सकता। यह तो एक नैसर्गिक छाप है जिससे राजस्थानी एकांकीकार बचने मे असमर्थ रहे हैं। राजस्थानी एकांकियो में वाग्-विदग्धता, वक्रता तथा चुटीलेपन का सफल निर्वाह विशेषत देखने को मिलता है। उकताने वाले नीरस, उपदेशात्मक तथा दीर्घ सवादो का प्रयोग अत्यल्प एकांकियो मे हुआ है। "गाव सुधार या गोमा जाट" "सोत्रो मत ना जागो" "हरिजन" तथा "शिक्षा का सवाल" आदि कुछ ही एकांकी ऐसे हैं जिनमे लम्बे और उपदेशात्मक सवादो के के कारण पाठक या दर्शक ऊब जाता है। सुबोधकुमार के "दो घाघडा" एकांकी मे पात्रो की ठेठ देहाती शब्दो मे गालियां राजस्थानी एकांकियो मे अपने आप मे एक ही उदाहरण है।

कथानक के अनुकूल वातावरण की सृष्टि राजस्थानी एकांकी की एक ऐसी उल्लेखनीय विशेषता है जो हिन्दी के ऐतिहासिक एकांकियो मे भी अत्यल्प मात्रा में मिलती है। यहाँ की सामन्ती सस्कृति के विशेष मान-मूल्यो, बातचीत तथा मान-मनुहार की उनकी अपनी विशिष्ट शैली की बारीकियो से सुपरिचित एकांकीकारो ने सजीव वातावरण की सर्जना मे आशातीत सफलता प्राप्त की है। इस दृष्टि से लक्ष्मीकुमारी चूडावत का "सांमधरमा माजी" सूर्यकरण पारीक का "बो'ळावण या प्रतिज्ञापूर्ति" गणपतिचन्द्र भण्डारी का "सीहण जाया साव" शक्तिदान कविया का "वीरमती" दीनदयाल ओझा के "मूमल" और "रतनकुंवरी" मुरलीधर व्यास का "मेवाड री लाज" मनोहर शर्मा के अधिकाश एकांकी तथा नारायणदत्त श्रीमाली का "बन्दो वैरागी" एकांकी सफल सिद्ध हुए हैं। गोविन्दलाल माथुर सहित अन्यान्य एकांकीकारो ने हमारे दैनन्दिन घरेलू-जीवन के मनोरम वातावरण को उभारने मे आशातीत सफलता पाई है।

निष्कर्ष —इस प्रकार प्रारम्भ से चले आ रहे ग्राम्यजनोचित उपदेशात्मकता एव ऐतिहासिकता की भावनाओ से ओतप्रोत राजस्थानी एकाकी ने आज अपने नये कौशल को हस्तगत करने मे सराहनीय सफलता प्राप्त की है। यद्यपि राजस्थानी एकाकीकार ने जीवन के विविध पक्षो को समेटने का पूरा प्रयास किया है तदपि उसका झुकाव ऐतिहासिक तथा सामयिक सामाजिक घटना-प्रसगों की ओर ही रहा है। रगमच की आधुनिक विकसित प्रणाली को अपनाने तथा शिल्पगत जटिलताओ के जाल से मुक्त होने का प्रयास राजस्थानी एकाकीकार ने नही किया है।



अध्याय ६

रेखाचित्र, संस्मरण एवं रिपोर्ताज-साहित्य

गद्य-साहित्य की अनेक विधाओं में रेखाचित्र, सस्मरण एव रिपोर्ताज का आज के युग मे महत्त्व बढ गया है। सर्वप्रथम रेखाचित्र-विधा के तात्पर्य को समझ कर पश्चात् राजस्थानी-साहित्य मे इसके प्रभाव का मूल्याकन करना उचित होगा।

रेखाचित्र का अर्थ एव इसके प्रकार —यह गद्य-साहित्य की एक नवीन विधा है। नए युग के कलाकारो ने अपनी अनुभूतियो को कम से कम समय और कम से कम शब्दो मे प्रकट करने के लिए ही रेखाचित्र का माध्यम अपनाया है। शैली की दृष्टि से यह न निबन्ध है और न कहानी। इसका अपना अलग ही अस्तित्व है एव अपना अलग ही कला का विधान है। इसे निबन्ध और कहानी के मध्य की कोई विधा कहा जा सकता है। यो तो यह एक प्रकार की चरित्र-प्रधान रचना है परन्तु इसमे कहानी की तरह चरित्र का विकास नहीं होता। इसमे चरित्र का क्रमिक उद्घाटन न होकर प्रस्तुतीकरण होता है। यह शब्द मूलत चित्रकला के क्षेत्र का शब्द है। कुशल चित्रकार कुछ रेखाओ के प्रयोग मात्र से सुन्दर और प्रभावी चित्र बना देता है। चित्रकला के सन्दर्भ मे इसे 'पेंसिल स्केच' या 'रेखा-चित्र' कहते हैं। साहित्य मे रेखाचित्र का अर्थ है—शब्दो द्वारा, किसी वस्तु, व्यक्ति या घटना का मर्मस्पर्शी, सजीव और भावपूर्ण चित्र प्रस्तुत करना। रेखाचित्र मे व्यक्तित्व दो रूपो का होता है—(1) लेखक का (2) चित्रित प्राणी, वस्तु या घटना विशेष का। मोटे तौर पर रेखाचित्र के ये प्रकार हैं—

(1) जड पदार्थो पर आधारित रेखाचित्र

(2) मानवेतर चेतन प्राणियो पर आधारित रेखाचित्र

(3) मानव पर आधारित रेखाचित्र

(4) व्यग्य और हास्यमूलक रेखाचित्र

राजस्थानी रेखाचित्र एक सामान्य परिचय —राजस्थानी रेखाचित्र का इतिहास १९४६-४७ ई से ही प्रारम्भ हुआ है। सन् १९५९ तक राजस्थानी रेखाचित्र राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे ही प्रकाशित होते रहे तत्पश्चात् विभिन्न रेखाचित्रकारो के विभिन्न रेखाचित्र-सग्रह अपने नये रूप मे

पुस्तकाकार मे प्रकाशित हुए।[1] सन् १९४६-४७ के समय मे पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से ये रेखाचित्रकार ही पाठको की दृष्टि मे आ पाए हैं—मुरलीधर व्यास, मोहनलाल पुरोहित, श्रीलाल नथमल जोशी, शिवराज छगाणी भवरलाल नाहटा इत्यादि। श्रीलाल नथमल जोशी का प्रथम रेखाचित्र[2] पत्रिका से प्रकाश मे आया था। तभी से विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे जोशीजी के कई रेखाचित्र प्रकाशित हो चुके है। इसी अवधि में मुरलीधर व्यास के सस्मरणात्मक रेखाचित्र भी 'राजस्थान-भारती' और 'मरुवाणी' आदि पत्रिकाओ के माध्यम से प्रकाश मे आने लगे। इस प्रकार राजस्थानी मे इस नवीन विधा का सूत्रपात १९४६-४७ ई, से ही हुआ है। विगत २३-२४ वर्षों मे स्फुट रूप से कई रेखाचित्रकारो के रेखाचित्र राजस्थानी मे प्रकाशित हुए है किन्तु पूर्वोक्त चर्चित रेखाचित्रकारो के अतिरिक्त एक और विभूति इस क्षेत्र मे हमारे सामने प्रकट हुई है, वह है डा. व्रजनारायण पुरोहित। डाक्टर साहब के छुटपुट रूप मे कई रेखाचित्र राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होने के बाद पूर्वोक्त दो सग्रह प्रकाशित होकर मर्मज्ञ पाठको के समक्ष प्रकट हुए तथा दो सग्रह पाडुलिपि मे प्रकाशनातुर[3] हैं।

राजस्थानी रेखाचित्र : एक विशिष्ट परिचय।—स्वातन्त्र्योत्तर-युग की इस २७-२८ वर्षीय कालावधि मे पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से प्रकाशित (स्फुट रूप मे) रेखाचित्रो तथा रेखाचित्र-सग्रहो (पुस्तक रूप से) की विवेचना यहाँ करनी अधिक उपयुक्त होगी। हरावळ, म्हारो देस, राजस्थानो वीर, ओळमो, मधुमती, मरुवाणी, राजस्थान भारती, हेलो, ईसरलाट, राजस्थानी समाज, मारवाडी, कुरजाँ, और जागती जोत इत्यादि पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित विभिन्न विपयो पर आधारित विभिन्न रूपो मे रेखाचित्र पाठको के समक्ष आए हैं जिनमे से सुरेन्द्र 'अचल' का 'सूरज री उगाळी'' सुरेश 'राही' के 'ब्याव री बरस गाठ' तथा 'लाडेसर'' जगन्नाथ

---

1. जूना जीवता चितराम ले० मुरलीधर व्यास तथा मोहनलाल पुरोहित।
   सवड़का ले० श्रीलाल नथमल जोशी—१९६० ई. मे प्रकाशित।
   वानगी भवरलाल नाहटा—१९६५ ई. मे प्रकाशित
   उणियारा शिवराज छगाणी—१९७० ई प्रकाशित
   अटारवा . व्रजनारायण पुरोहित, १९७३ ई. में प्रकाशित
   वकील साहब : ले. व्रजनारायण पुरोहित, १९७४ ई
   जूना वेली . नुवा वेली . शिक्षा विभाग, बीकानेर १९७४ ई.
2. फर्रामल ले.श्रीलाल नथमल जोशी, १९४६ ई०, मारवाडी'' पत्रिका मे प्रकाशित
3. गोधा रै पजा : इक्कीसा. ले. व्रजनारायण पुरोहित

सिंघी का "गोधा" वशी 'वावरा' का "लाकडा मेल्या" विश्वम्भरप्रसाद शर्मा के "ठग लकडी" और "एक कवर लाडली हरखी" सत्येन जोशी के 'गवरु साव' तथा "समझ रा झाड" देवकिशन राजपुरोहित का 'वेमाता रा लेख' मुरलीधर व्यास और मोहनलाल पुरोहित लेखक द्वय के "अलखियो" "सिवदत्त भाई' और "दौलूभा" मुरलीधर व्यास के "सिरदार रगारो" "भगदत भाई" "जोसीजी" "रामलो भगी" "हरदास दही वालो" "नदो ओड" "कावली नसीरुद्दीन"-तथा "रुघो खल्ला गाठणियो" शिवराज छगाणी के 'वे चोखै सभाव-आळा हा नागजी" और "ठाकुर (तोता मास्टर)" आसाराम 'सुदामा' के "तस्कर सडक सू ससद ताई" और "सुलतान" विनयकुमार शर्मा का "पोढी को आतरो" गोवर्द्धन हेडाऊ का "असली हिन्दुस्तान रो वासी" रामनिवास शर्मा का "गाव रा काकोजी" उमाचरण का "कि अर की" दामोदरप्रसाद का "दो भाई अर दो चितराम" श्रीलाल मिश्र का "गरीवदास मसखरो पाटण रो" भवरलाल नाहटा का "मत्री अर करमचन्द जी वछावत" सूर्यशकर पारीक के "एवाळिया" "फगडल" और "सम्पादकजी" जगदीश माथुर के "होळी रा गैग्यिाः किशनरामजी" "जीमण" "चमचावाज हो ऽऽऽ" श्रीलाल नथमल जोशी के "मसाणिया अचारजजी" "लै' री" "कामेरी" "गोधी वाई" "रडवो" "फदडपच" एव गुलछर्रामल" सवाईसिंह का "सासूजी" ओकार पारीक के "बुलकी वातेरण" "दरवार अस्पताळ में" और "कागराज" दाऊदयाल जोशी का "भैंसो होय नै मिनख री वोली वोलै" कृष्णगोपाल शर्मा का "घूम चकेरिया रे वीच' जिनगाणी रा छिण' दीनानाथ का 'अखजी रेडी आलो" मूलचन्द 'प्राणेश' का "चौधरी दादो" तथा व्रजनारायण पुरोहित के "सिफारिश" "पिण्डतजी" तथा "उपनाम महातम" इत्यादि विशेष उल्लेखनीय बन पडे हैं। अन्य भाषाओ के साहित्य को देखते हुए राजस्थानी रेखाचित्रकारो ने इस २४-२५ वर्षो की अवधि मे कोई आशातीत प्रगति नही की है तथापि कहानी और अनूदित साहित्य के वाद सर्वाधिक समृद्ध साहित्य की विधा मे इसी विधा का नाम है। सर्वप्रथम स्वतत्रता-काल से १९७४-७५ ई तक की अवधि मे रचित एव प्रकाशित रेखाचित्र-सग्रहो की समीक्षा करना उचित होगा, पश्चात् प्राप्त रेखाचित्रो की प्रवृत्तियो, विशेषताओ एव प्रकारो इत्यादि का मूल्याकन।

जूना जीवता चितराम[1]

समीक्षा —वरानवे पृष्ठीय इस सग्रह मे उनतीस सस्मरणात्मक रेखाचित्र हैं। राजस्थानी समाज, सस्कृति और आचलिक जीवन की सरल तथा प्राजल भाषा मे अनेक विशेषताए इन रेखाचित्रो मे हैं। श्रम की पूजा, अपने अपने स्थान पर सवका

1. ले मुरलीधर व्यास तथा मोहनलाल पुरोहित, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

सम्मान, भ्रातृत्व, मेल, सहयोग, अनेक धन्धो का विवरण, गुणो का आदर, त्याग, विश्वास और भक्ति, जातीयता के भेदभाव को दूर करना तथा प्राचीन रीति-रिवाजो इत्यादि तथ्यो का बोध इनमे हैं। अधिकाश रेखाचित्र निम्न वर्ग एव जाति के पात्रो से पूर्ण हैं जैसे हुसैनो गूजर सुगनो वहीभाट, भीखो भठियारो, रामलो भगी, भोलियो ढाकोत, रूड़ो खल्ला गाठणियो मिरदार रगारो, गनी टठारो, भीलियो खवास, नदो ओड, वींजो खाती, सिणगारी सैंसण इत्यादि। सीतकी मालण, मनजी मचकावाळो, पोग्यतणी - मदियै री वह इत्यादि अजीव शीर्षको वाले रेखाचित्र हैं। रमजान न्यारियो, सुखो वारीदार, विरधु सेवग, हरदास दही वाळो, ऊमो दरजी वालो साभी तेजो सोनार, पखै वाळो, जेसियो तबोळी, मघ्घो फेरी वाळो, श्रीगोपाल ओझा, भोलो घडा नांखणियो, अलखियो इत्यादि बहुत ही मार्मिक रेखाचित्र हैं। अधिकाश रेखाचित्रो के पात्रों के चरित्र-चित्रण को विन्दुओ में प्रकट किया गया है। कुछ शीर्षक राजस्थानी सम्यता एव सस्कृति के अनुकूल हैं तथा सम्वन्धित रेखाचित्रो मे पात्रो का वर्णन भी स्वाभाविक ही हैं। प्रायः सभी रेखा-चित्रो का आकार तीन पृष्ठों तक मे सीमित है, दो पृष्ठो और पांच-छ पृष्ठों वाले रेखाचित्र तो अत्यल्प मात्रा मे हैं। कावली नसीरुद्दीन, रामलो भगी, मघ्घो फेरी वाळो, सिणगारी सैंसण आदि रेखाचित्रो मे प्रयुक्त कविताश शोभावर्धक रहे हैं। लगभग सभी रेखाचित्रो मे पात्रो के रूप-वर्णन तथा चरित्र-चित्रण मे लेखकद्वय ने वडे कलात्मक ढग से लेखनी चलाई है जो भाषा-सौन्दर्य एव परिमार्जित राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता मे चार चांद लगा देती है[1]—

"वीजो ढ़ळती ओस्था री हो। ओछो खामणो, दाडी अर केस करड-कावरा, पक्को रग, लिलाड माथै रामदेवजी री रिख्या लगायोडी, आख्यां छोटी-छोटी, कान टिरियोडा, जाडा भवारा, पैरण नै एक वडो, खाधै माथै रेजी रो अगोछो, लट्ठै रो ऊचो ऊची धोतियो, माथै दमाली पागडी-गट्टो जिकै ऊपर काळी ऊन रै जाड़ डोरै मे पोयोडा रामदेवजी रा पगलिया वधियोड़ा, पगा मे खुडा-खाँच देसी कार्‌धा लागोडी पगरखी, वीजो खाधै एक जाडी मैली झोळी लटकायोडी जिकै में जोयीजता राछ-वसोलो, रदो, करोती, छीण्या, हथोडो अर सार।"

लघु संवाद और वाक्य तो पाठकों को वरवस मोहित करने वाले हैं—२

"ए सीतकी! सागरधा काकर दी?

दादीजी। आठ सेर री, घणी सस्ती है, अर है ई मी।

दस सेर री देवै तो एक आनै री तोल दे।

---

1. जूना जीवता चितराम : वींजो खाती : पृ. सं. ७६
२. " " " : सीतको मालण : पृ. सं. ५८-५९

लो दादीजी ! थानै तो राजो गाख सू —ऐ लो दस सेर रो।

आगै कई कोयनी भलो, आईज रैमी।

ठीक दादीजी।

हा ए, कैर कातरा दिया मीनको ?

वाई सा, छ सेर रा लो, देखो।"

लेखक-द्वय मे नव शब्द-निर्माण की कला भी विद्यमान है—जडाजत, खर्डजितर, फतोया, अरडोठा, फड, रिवफाय, मिणावद, घुपाडियो, फुरवा मुहावरा मे युक्त भाषा-सौष्ठव के उदाहरण भी मिलते हैं—

सगळा रा चैरा फक्क, टुगटुग एक वीजै रो मूडो जोवै, गळै-घाटे नही आवै, कूए पाड सू माथो टकरावै कूए स्याम सू संग्राम मांडै। संस्कृत और उर्दू के शब्द-प्रयोग मे लेखको ने सतर्कता बरतते हुए अत्यल्प मात्रा मे ही उनको स्थान दिया है।

एकाध रेखाचित्र को छोड शेष सभी संस्मरण हैं क्योकि प्राय सभी मे पात्रो को स्वर्ग की टिकटे दे दी गई है फिर भी इन्हें रेखाचित्रो के आवरण मे आच्छादित कर दिया गया है। जबकि लेखको का राजस्थानी भाषा पर श्रीलाल नथमल जोशी की तरह पूर्ण अधिकार है तदपि ये आचलिकता के मोह मे अवश्य फस गये हैं। संभवत बीकानेर मे काफी समय तक का निवास ही मुख्य कारण हो।

सबडका[1]

समीक्षा —दो सौ छ पृष्ठीय इस संग्रह मे इकतीस रेखाचित्रो को स्थान दिया गया है। पुस्तक मे रेखाचित्रो के सबडके है। कुछ सबडके दो-तीन, कुछ आठ-नौ तथा कुछ १५-२० पृष्ठो के है। पाठको के लिए एक प्रकार मे सबडका के समान ही है अत इस संग्रह का नाम "सबडका" रखा गया है। वैसे हाथ के दोने द्वारा तरल खाद्य-पदार्थो को खाते समय जो मुह से आवाज निकलती है, उसे सबडका कहते है। फरीमल, गुलछर्रामल, फदडपच, रडवो, मस.णिया अचारजजी, भडै आळो बावो भोपीजी, धोवण भाभी और बूमो बरफ आळो इत्यादि रेखाचित्रो के नाम तो बडे ही हास्यात्मक एव सुन्दर है। हिन्दी के एक मान्य विद्वान् के अनुसार तो "मक्खण-सा" रेखाचित्र की टक्कर या जोडी का रेखाचित्र हिन्दी-साहित्य मे भी नही है। "गुलछर्रामल" तथा "फरीमल" की तो कई हिन्दी तथा राजस्थानी के समीक्षको ने बहुत प्रशसा की है। जोशीजी का रूप-वर्णन का कौशल अधिकाश रेखाचित्रो मे प्रकट हुआ है[2]—

"मसराइज धोती, मदरास मील रो कोट, पगा मे देसी पगरखी, कदेई-

1 ले० श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थानी साहित्य परिषद्, कलकत्ता।

2 सबडका गुलछर्रामल पृ स ३७

फदेई मोजा भी, माथै ऊपर टीपाटीप केमरिया पाघ, म्रावै ऊपर गमछो जिको जूता श्रर मू छो दोनू पूछण नै श्राडो आवै, वद मन्नामगी, डील-डौल गठीलो, अखाडै मे कुस्ती मू त्यार हुयोडो हुवै जिसो, मू छया भिडकावणी, चेरै ऊपर मुळक—ऐ है गुलछरमिल।"

रमतियो, डाकण, छैलजी, वाबूजी, भुश्राजी, उभराणा माजी, मारजा, व्यासजी, इन्द्रा, कामेरी. मा सा, जंवागेजी, लाधू, लाल वावो, काळू, मघजी, लिखमीनाथजी, घोवण भाभी भागचन्द, हरियो, लैरी, पट्टी माथली--रेखाचित्रो में कुछ का कलेवर वडा होने पर भी नीरसता से दूर है। हास्य की मात्रा इनमे अपेक्षाकृत कम है परन्तु मनोरजन का अभाव नही। सत्य घटनाग्रो पर आधारित होने पर भी इन रेखाचित्रो मे लेखक की मौलिकता के दर्शन पर्याप्त मात्रा मे होते है। मुहावरो, कहावतो एव उपमाग्रो का समावेश भी इस सग्रह मे हुग्रा है—ग्राख्या थोडी थोडी मारणै भैंसे जिसी, म्हाराज छाती ग्राडो भाटो दैय'र रैय जावै, सागी घोडो सागी मैदान, पगरखी रो ग्रजूणो करचोडो ई समझो, तेतीसा मनायग्या, माजनो भदरावै, बेटै री वऊ सू इसा वादै ज्यू ऊदरो मिन्नी सू। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के अतिरिक्त कुछ नये शब्द-रूप भी सामने आते है। भाषा मे स्वाभाविकता, सरलता, स्पष्टता, प्रवाहमयता तथा रोचकता के साथ हास्यात्मकता का स्वरूप कैसा विचित्र बन पडा है —[1]

"म्हाराज व्याव री बात माड'र मीठा सपना लेवणा सरू करै ग्नर परणीजै उजड्यो घर भाछो बसै, बीनणी रो छमछमाट घर मे सुणीजै, म्हारा हालरियैहूलरियै नै गोदी रमावै, पर लोडी ग्राय'र रबडी रै प्यालै री मनवार करै, जद म्हाराज रो सरीर द्वापर रै भीमसेन जिसो हुय जावै-ग्रा जागता सपना मे ग्राय'र कामरै री छात तई माथो टकराय'र उछलण लाग जावै, तो सेठ कैवै—'म्हाराज, वस करो हुवा व्याव हुयग्यो ग्रवै। व्याव नै कोई ध्याव। वडो व्याव बाकी रैयो है जिको म्हे कराँई लकडा मे कर ग्रासा।"

मक्खण-मा, बाबूजी, भुग्राजी, गुलछरमिल, फरमिल, डाकण, रमतियो, भागचन्द, काळू तथा लिखमीनाथजी इत्यादि रेखाचित्रो का कलेवर वडा होने के कारण, एकाध को छोड, नीरसता के वातावरण की सृष्टि करने वाले हो जाते हैं।

वानगी2

समीक्षा :—एक सौ अडतालीस पृष्ठीय इस संग्रह मे गद्य की अन्यान्य

1. सवडका रडवो पृ स ९८
2. लेखक—भवरलाल नाहटा, १९६५ ई० मे प्रकाशित

विधाओ के साथ सात रेखाचित्र भी है। नेहरूजी रो मनोरजण, बावो आसो दही वाटिया लासी, अजवघर रा क्यूरेटर बम्बई रा धडाका, बावन गाँव, मैघी गी वात तथा धन कवराजजी इन सात रेखाचित्रो मे अधिकाश सत्यता पर आधारित हैं। आने पृष्ठ से लेकर ढाई पृष्ठो मे बद्ध रेखाचित्र हास्यात्मकता को प्रकट कर मनोरजन प्रदान करने वाले हैं। नव शब्द-निर्माता तो लेखक है ही परन्तु हिन्दी एव सस्कृत के शब्दो का किंचित् प्रयोग लेखक की भाषा सहिष्णुता की प्रवृत्ति को भी प्रकट करता है जैसे-मनोरजन-प्रिय सकोच, झट, आनाकानी, पापी। घर मे फाका पडण लागग्या, बळती इसी बाजै जाणै भट्टी आगै ई ऊभा हुवै ज्यू इत्यादि आलकारिक-सौन्दर्य तथा मुहावरो-कहावतो का प्रयोग किया गया है।

पुस्तक मे लघु कथाओ के आधिक्य तथा रेखाचित्रो की न्यूनता के कारण पुस्तक का सन्तुलन विगड गया है। भाषा पर बीकानेरी बोली का अधिक प्रभाव स्पष्ट होता है।

उणियारा[1]

समीक्षा —इस सग्रह मे १५ रेखाचित्र हैं। नागजी, पूरणियो भगी, लालियो सैमी, आटियो बावो, हऊफानाथ, अमजो बावो, भतियो मारजा, ढोडियो, फकीरो, मिरचियो, धोकळियो और बिच्छूडो इत्यादि कई नाम बडे हास्यात्मक एव मनोरजन-वर्धक हैं। पत्ती रा रमार, भाडाघरजी, अमल टिडी (अफीमची), पीडी पक्कड, गरुजी-सा, गरीबदासजी, चौपनिया, बरफ आळो, कळी आळो रेखाचित्र भी बडे रोचक बन पडे है। रेखाचित्रो के अधिकाश पात्र निम्न वर्ग से ही लिए गए हैं, मध्यम एव उच्च वर्ग से नही। रेखाचित्रो के शीर्षक और इनके पात्रो के नाम राजस्थानी सस्कृति तथा सभ्यता के अनुकूल ही रखे गए हैं। चरित्र-प्रधान रेखाचित्रो का ही आधिक्य है। प्रत्येक रेखाचित्र के आरम्भ मे सुशिक्षा या मानवीय गुण-दोषो का जिक्र किया गया है। प्रत्येक रेखाचित्र मे नायक विशेष के रूप-रग एव उसकी वेश-भूषा का वर्णन बडा सजीव और सरस बन पडा है—

"कद रो ठिगणो। दाढी तो आवण रो सुवाल ई कोनी उठतो। तीखो नाक अर मूछया सफा चट्ट। ओछी टाग्या अर मोटी जाघ्या। माथो मतीरै ज्यू, धोळी टोपी, धोळा गाभा मोटी खदर रा। पगरखी च्यार रुपियै आळी टायर छाप। घर सू गरीब अर भोळै सभाव आळो हो मूलसा।'[2]

भाषा मे मुहावरे एव कहावतें हीरो की तरह जडे हुए हैं। राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो के आधिक्य से लेखक ने पुस्तक के सौन्दर्य मे वृद्धि की है—

---

1 लेखक—शिवराज छगाणी, कल्पना प्रकाशन, बीकानेर।

2 उणियारा बरफ आळो पृ स ५५

म्ग्गी, इगागी-उगागी, भुमळीजना, कदाम, चू चरा, पजाळी, घसळा, हत्ता-सत्ता, कँगई, हार्फई, ढोळँ-ढोळँ, अफडाई, रीदाळ ठिंगाळ, हापकी-देयकी, लूम-वलूम, गोच । आलकारिक-सौ दर्य भो भाषा मे विकीर्ण है—आख्या कक्की, केस कडकावडा राग भी कुवा गग ही, माथो मतीरै ज्यूं ।

अधिकाश पात्रो को शेक्सपियर के नाटको की भाँति अन्त मे मृत वताया है अत इन्हे रेख चित्रो की अपेक्षा सस्मरणो की श्रेणी मे रखा जाता तो उचित रहता । नागजी, पत्ती रा गमार पूरणियो भगी एव हुऊफानाथ इत्यादि रेखाचित्र तो मधुमती, राजस्थानी वीर और राजस्थान-भारती पत्रिकाओ मे प्रकाशित हैं जिन्हें पुस्तक मे स्थान देकर आवृत्ति का कार्य किया गया है। मूल्य का अधिक होना तथा भाषा पर वीकानेरी वोली का प्रभाव—ये भूलें भी मिलती हैं ।

अटारवा[1]

समीक्षा —इस सग्रह मे २१ सस्मरणात्मक रेखाचित्र हैं। गुसाईजी, काकूजी, दूलजी, मारजा, हाकम सा'व सेठाणी, जीमाकियो, धाड़ैती, योगानन्दजी, सेठ, न्यायमूर्ति और ठाकर साहव—इन रेखाचित्रो मे चारित्रिक विशेपताओ को स्थान दिया गया है। जवकि मास्टरजी, पहलवान साहव, सुगनजी, मुनीमजी, कुडछी कलार्क, वावू साहव पिडतजी, वकील सा'व और सनजी मे कार्यों पर दृष्टि डाली गई है। काकूजी, दूलजी, मारजा, जीमाकियो, सनजी और कुडछी कलर्क इत्यादि के अजीव शीर्षको मे लेखक को वडी प्रसिद्धि मिली है। अपने प्रारम्भ के दिनो मे वकील रहने के कारण लेखक इनमे सम्वन्धित प्रसगो मे दूर नही रह सका है—न्याय-मूर्ति, वकील साहव और हाकम साहव आदि का अकन कर ही डाला। कुछ ही रेखाचित्रो को छोड सभी मे हास्य-प्रसगो की उत्पत्ति हुई है—

(क) आळा-टाळा मत करो तुम आला रुस्तम ।
वालक पर किरपा करो, जी वाला परसाद ।।[2]

(ख) पास कर दो मुकरजी, हू मनाऊ सुकरजी ।[3]

(ग) "आवो रे भैरिया, गोरिया, काळिया, चूनिया, मूनिया, फूनिया, भालूडा· .... "[4]

(घ) "मारजा री पीडी एक दिन कुत्तै भाल ली, लारै सू आय'र। पण वा घाव सू पैली आप री पछियै जिसी मैलोडी धोती नै सभाळी अर सतोष सू कैयो— आई चोखी हुई कै धोती नई फाटी। चामडी तो फेर आय जासी।"[5]

---

1 ले० व्रजनारायण पुरोहित, राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, वीकानेर ।

2 से 5 अटारवा पृ स क्रमश २, २, १३ और २३

पुस्तक की भूमिका मे लिखे गए वाक्य पुस्तक के शीर्षक की सार्थकता प्रकट करने वाले है—'नामी अर विशेष व्यक्ति रै खातर 'अटारवो' शब्द प्रयुक्त हुवै। इण पोथी मे जिका चैरा सागै आवै, वै भी केई न केई कारण सू विशेष रह्या है। इण वास्तै पोथी रो नाव 'अटारवा' राखियो है।" कई रेखाचित्रों मे गद्यांशो एव सुन्दर कहावतो का प्रयोग हुआ है। जसे—गुमाईजी, काकूजो, पहलवान साहब, मारजा, सुगनजी, सेठाणी, मुनीमजी, बाबू साहब, धाईती, पिंडतजी और सेठ इत्यादि मे उदाहरण के रूप मे मिलने है। कई रेखाचित्रो मे लघु सवादो की सृष्टि हुई है। रूप-वर्णन से युक्त भाषा-शैली का सौष्ठव दर्शनीय है—

"केसरिया पेचो, सफेद झक्क बुगलै री जात रो कोट, जिकै मे सोनै री गु ढया लागियोडी छव, नील-पावडर दियोडी धोती—आसलेट, कडप दियोडो ऊजळो दुपट्टो अर चू चदार जूती वा रो पैरेस हो। वै नामी सेठ रामचन्द्रजी रा मुनीम हा। सेठ रै सूत रो धधो हो अर सागै ई खधी-किस्ती रो काम ई चालतो।"[1]

कुछ प्रतीकात्मक शब्दो की उत्पत्ति लेखक के स्वय की है। जैसे लालचन्दजी (लाल गेहूँ), आलचन्दजी (आलू), डालचन्दजी (डालडा), मिकराज (कैंची), रेडियोजी (जो स्वय की कहे और दूसरो की नही सुने), सू गौ-छम्म-बिच्छू खायोडो (सौ रूपयो वाला), अगरिया-मगरिया-चू किया (अगर-मगर एव चू कि) इत्यादि। रेखाचित्रो मे वर्णित कहावतो एव मुहावरो के उदाहरण सराहनीय है—भोरिया सो किरोडिया, मिट्टी रा माधो हा, कैरी सू सू ठ खाई है, मिनख कमावै आठ घण्टा अर रुपिया कमावै चौईस घण्टा, लडाई रो मूळ हासा अर रोग रो मूळ खासी, नूवी बात नव दिन अर खाची ताणी तेरै दिन भीत नै खाय आळो अर मिनख नै खाय साळो, मोको चूकी डूमणी गावै ताल बेताल, ठगावै जिको ई ठाकर हुवै, भोळै बामण भेड खाई'र खावै तो राम दुहाई, पोहटो पडै तो धूड लेय'र उठै, सिघ री गुफा मे स्यालिया किया वडग्या।

गुमाईजी, योगानन्दजी, सेठ आदि रेखाचित्रो मे रूप और वेश-भूषा-वर्णन को अत्यल्प स्थान देना, पहलवान साहब, मुनीमजी, बाबू साहब, वकील साहब, योगानन्दजी, टाकर साहब और न्यायमूर्त्ति इत्यादि मे हास्य का अभाव होना, पुस्तक के नाम के लिए अप्रचलित शब्द प्रयोग, "हुकम साहब" मे हिन्दी भाषा का अधिक प्रयोग, हास्यात्मक रेखाचित्रो की सख्या अधिक होने पर भी पुस्तक के नामकरण का हास्यात्मक नही होना, लघु सवादो मे न्यूनता, 'श और 'ष' का अधिक प्रयोग, अधिकाश रेखाचित्रो के पात्रो को मृत नहीं बताना (सस्मरणात्मक रेखाचित्र होने के कारण) तथा सस्कृत और उर्दू शब्दो का आधिक्य इत्यादि

---

1 अटारवा मुनीमजी पृ स ४१

रेखाचित्रकार की त्रुटियाँ हैं।

निष्कर्षत लेखक रेखाचित्रांकन में सिद्ध-हस्त है अतः तीन और रेखाचित्र-सग्रहो की सृष्टि सहज मे ही कर डाली है[1] जो राजस्थानी रेखाचित्र-साहित्य के विकास मे अत्यन्त ही सहयोगी हैं।

बारखडी[2]

समीक्षा —विविध विधाओ के साथ साथ पाँच रेखाचित्र भी इस सकलन मे सकलित हैं। वशी 'बावरा' के "लाकडा मेल्या" रेखाचित्र में मौसर के अवसर पर खाने तथा खिलाने वालो की भुक्खड प्रवृत्ति, विश्वम्भरप्रसाद शर्मा के "ठग लकडी" मे ठगो बदमाशो तथा लडाकू व्यक्तियो के विचित्र प्रभावो, देवकिशन राजपुरोहित के "वेमाता रा लेख" मे भाग्य की विलक्षणता, तपस्वीलाल बसल के 'देवी रो परचो" मे उपासको की देवी के प्रति सच्ची आस्था एव निष्ठा, शिवराज छगाणी के "काळा गुरु" मे काले गुरु के अनोखे चरित्र के विषय मे सकेत मिलते हैं। रेखाचित्रों की स्वाभाविकता इनमे मिलती है।

भाषा-शैली मे लघुवाक्यावलि, आलकारिकता, प्रवाहमयता, स्पष्टता एव सरसता विद्यमान हैं—[3]

'आ वाना ने आज दो वरस हुगा। दिनू गै रामूडो नाई धुणी माथै कह्यो लालजी बा! मानजी रै वेटा री वऊ चोथे धाडे आपरे पीर मे वेरा मे पडगी। कँवे है' क भावी पगां ही। लालजी री आख्या डवडबी हुगी। गळगळा हुय'र लालजी बोल्या—वैमाता रा लेख'र आपणी जातरा कायदा आगे किण रो जोर चाले। वापडो मानजी रूळग्यो। गजब व्हेगा। राम राम! सावरा ने ओ ईज मजूर हो।"

कई लेखको ने नए शब्दो के निर्माण की कला भी प्रकट की है। सस्कृत और उर्दू के शब्दो के किंचित् प्रयोग से भाषा-सहिष्णुता का भाव भी इनमे है। इतना होने पर भी भाषा ने क्षेत्र मे इनकी आचलिक प्रवृत्ति उभर पडी है। किसी पर मेवाडी बोली का असर है तो किसी पर बीकानेरी-नागौरी बोली का।

वकील साहब[4]

समीक्षा :—इस संग्रह मे एक सौ चौवीस पृष्ठों मे इकतीस रेखाचित्र निहित हैं। अधिकांश सस्मरणात्मक रेखाचित्र सच्ची घटनाओं एव जीवनियो पर आधारित हैं। गाय री पूंछ, माटेजी रो घर, लेखक वणनो, देसी गे पिछाण, काऊ-

---

1. "वकील साहब" "गोधा रै पंजा" "इक्कीसा"
2. सम्पादक-वेद व्यास, शिक्षा विभाग, राजस्थान (बीकानेर)
3. बारखडी : वेमाता रा लेख. पृ. सं. ९५
4. ले० ब्रजनारायण पुरोहित, राजस्थानी सादित्य अकादमी, उदयपुर।

साऊ, चार सौ वीस, वावनियो, कूए ऊपर कूकडी, जमराज नै कैद, डीगो, दूढै कू ...(गीत पर आधारित)—इत्यादि रेखाचित्रो मे हास्य एव व्यग्य कूट कूट कर भरा हुआ है। कुछ के तो नाम भी हास्यमय हैं। उपनाम महत्तम, रामदेव बावै रो खण, वकील साहव, मीटर रीडर वैदगी, एकामणो शीर्षक रेखाचित्रो ने तो व्यग्य तथा मनोरजन का भण्डार ही खोल दिया है। थाणेदार री थाणेदारी, गवाई थोडी-सी कसर, वखत री उखत, तगादगीर, फाडागर फाटको, नसै मे चूच, पैला वतावतो एक तारीख आदि रेखाचित्र समाज के लिए कुछ आदर्श प्रस्तुत करने वाले है। लूट खसोट, दातार, ओळखाण तथा डाक्टर साहव तो भाव और भाषा के क्षेत्र मे अत्यन्त ही सरस तथा सजीव बन पडे हैं। लघु सवादो से पूर्ण रेखाचित्र ही अधिक लिखे गए हैं। कुछ रेखाचित्र कथात्मक स्वरूप से युक्त हैं। नसै मे चूच, लेखक वणनो, एक तारीख आदि मे सक्षिप्त कविताएँ बडी रोचक बन पडी हैं।

सस्कृत और उर्दू-शब्दों का किंचित् प्रयोग लेखक की अन्यान्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव प्रकट करता है। आलकारिक-सुषमा तथा मुहावरो-कहावतो का प्रयोग यथास्थान उपलब्ध होता है। भाषा-शैली की सजीवता, स्पष्टता एव रोचकता सराहनीय है।

काऊ-साऊ, वखत री उखत, नसै मे चूच, वूढै कू .. आदि शीर्षक पाठको के लिए भ्रमात्मक हैं। पृष्ठ सख्या को देखते मूल्य अधिक है। वाक्-जाल, तथा-कथित जैसे सस्कृत के क्लिष्ट शब्दो का प्रयोग भी अनुचित है।

गोधा रै पजा[1]

समीक्षा —इक्कीस रेखाचित्रो के सग्रह का प्रकाशन अभी तक नही हुआ है। "गोधा" का अर्थ मा'ड (वैल) है। इस सग्रह का नामकरण अन्तिम रेखाचित्र के नाम पर हुआ है। गजटैड अफसरी, वे कीकर हालसी, वरस्यो पछै नस्यो घणो, मूरखा रो सरताज, सिक्को रा सिकार, ब्याव रो बखेडो अणजाण रो विस्वास, धोखेवाज, रिस्वत रेखाचित्र उपदेशात्मक प्रवृत्ति के साथ साथ हास्यात्मक वैशिष्ट्य से युक्त हैं। मुनमफ सा'ब, हुई थारै गाव री, कोट री पोट, पुजारी री हुसियारी, अै परीक्षक, गोठ, घटघटव्यापी, नाजम साव, वरियो, सुगनजी, मारजा और गोधा रै पजा रेखाचित्र अधिक मनोरजक, रोचक तथा यथार्थ वातावरण से पूर्ण है। अधिकाश रेखाचित्रों मे व्यग्य कूट कूट कर भरा हुआ है। कई रेखाचित्रो मे कुछ पद्याशो का प्रयोग कर उन्हे आकर्षक बनाया गया है—2

---

1. ले. व्रजनारायण पुरोहित पाण्डुलिपि में प्राप्त।

2. गोधा रै पजा ले व्रजनारायण पुरोहित पृ. स १९

भूल गई ग्ग राग, भूल गई छन्डी ।
तीन वात याद रैई, तेल, लूण लकडी ॥

भापा की सरलता, स्पष्टता सजीवता एव प्रवाहमयता के गुण लेखक मे पर्याप्त मात्रा मे हैं । हक्की वक्की हुयगी टौला मान्तौ हो, ढव ढूकियौ नही, अफसरी किरकिरी हुयगी इत्यादि कइ रनो मुहावरो का स्थान-स्थान पर प्रयोग हुआ है । भापा-सौष्ठव मे वृद्धि ही लेखक का कार्य रहा है ।

इक्कीसा1

समीक्षा —कुल २१ रेखाचित्रो के सग्रह को "इक्कीसा" नाम देना सार्थक है । अधिकाश रेखाचित्रो मे सम्वन्धित व्यक्तियो के रूप-वर्णन और चरित्राकन पर अधिक जोर दिया गया है । ऐसे रेखाचित्रो मे ये हैं-गुरुजी, गोळूजी, प्रोफेसर साहव, वकील साहव, मुरलीधरजी 'राजस्थानी' । वकील साहव और एडवोकेट साहव दोनो के भावो और शीर्पको मे एक-मे दिखाई देने पर भी रेखाचित्रकार ने इन दोनो की सामग्री मे काफी अन्तर रखते हुए वर्णन किया है । एडवोकेट साहव मे सवादो का आधिक्य भी है । चिक्कणजी, पोलियो, गुलजी, माईजी, ऊदरी काकी रेखाचित्रो के शीर्पको के अनुसार इनमे हास्याधिक्य भी हैं । भण्डारीजी, वैदजी, कुंजरू साहव, जज साहव, शास्त्रीजी, महामना, जीवणरामजी हाजीजी, दीवान-जी, और डाक्टर साहव रेखाचित्र अत्यन्त ही मनोरजक एव सजीव हैं । इनमे अधिकाश मे रूपवर्णन पर भी वल दिया गया है । सस्कृत, हिन्दी और उर्दू के शब्दो का प्रयोग भी यथोचित मात्रा मे किया गया है । लघु वाक्यावलि, आलकारिकता तथा मुहावरो-कहावतो से पूर्ण भापा के प्रयोग मे लेखक ने सावधानी वरती है ।

लेखक पर वीकानेरी वोली का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है जो स्थान विशेप के कारण ही हो सकता है । कई रेखाचित्र पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित भी हो चुके हैं ।

जूना वेली : नु वा वेली2

समीक्षा .—गद्य की अन्यान्य विधाओ के साथ साथ इसमे ७ रेखाचित्र सकलित हैं । कुतिया रो मैलो, कुमाणस, मूँ वी मैन्नूण मे गयो, माड्यो अर माथै मार्‌यो रेखाचित्र व्यग्य के कारण सर्वश्रेष्ठ उतरे हैं । 'दर्पण री करामात" मे लेखक का काफी गहरा ज्ञान तथा अथाह अध्ययन प्रकट होता है । "कवि पोकरो" तथा "लाच्छनरामजी डोकरी" मे रूप-वर्णन तथा चरित्र का सौष्ठव सराहनीय वन

1 ले. व्रजनारायण पुरोहित, पाण्डुलिपि मे प्राप्त ।
2. स. शिवरतन थानवी तथा पुरुषोत्तम तिवाड़ी, शिक्षा विभाग, वीकानेर ।

पडे हैं। साहस, उपकार, मानव का मूल्य आदि उद्देश्य इनके हैं। कई स्थलों पर हास्यात्मकता के दर्शन भी हो जाते हैं। ओम अरोडा, श्रीनन्दन चतुर्वेदी, विश्वम्भर-प्रसाद शर्मा, अमोलकचन्द जांगिड तथा मोहन पुरोहित के रेखाचित्रों को ही इस सकलन मे स्थान दिया गया है। मुहावरो, कहावतो तथा आलकारिकता की छटा भी इनमे है—रणवासा मे उल्लू बोलवा लागा आपणो उल्लू सीधो करै, म्हारी ही ही कोई अकल मारी गी छै, थारा लत्ता ले ले लो, ऊवा चूच दी नै चुग्गो भी देयसी, डूगर बळता सूझै पगा बलतो कोनी।

कुछ स्वाभाविक राजस्थानी के शब्दो का प्रयोग भी हुआ है। जैसे—धिगाणै, धिणाप, आगै सारु, अगमभखरा, मुवार, इकसार, गोडा। भाषा-शैली का सौष्ठव दर्शनीय है[1]—

"मैल मे मन्नै कुण सीडायो, मोनगी सू म्हारी रडकां कुण कढाई, सावण नै सिलगार म्हारी काया कुण वाळी, पाणी नै पटा'र म्हारो रूगतो रूंगतो कुण गाल्यो। अै सै थारा ही तो करम है।"

दर्पण री करामात तथा माळ्यो अर मायै मार्‍यो को लक्षणो के आधार पर निबन्ध तथा "कुमाणस" को वार्तालाप की श्रेणी मे रखना था। ण' का प्रयोग, विराम-चिन्हो के प्रयोग मे असावधानी, कुछ शब्दो के प्रयोग मे गलती करना, 'डोकरी' नामक उपाधि मे भ्रम होना, आचलिक प्रभाव का आधिक्य तथा सस्कृत के शब्दो के प्रयोग पर बल देना—पुस्तक के कुछ दोष हैं।

राजस्थानी मे मुख्यत चरित्र-प्रधान रेखाचित्र ही उपलब्ध होते है। अपने अधिक सम्पर्क मे आए अथवा आसपास के वातावरण मे विचरते व्यक्तियो को ही किसी विशिष्टता के कारण लेखको ने अपने रेखाचित्रो का आधार बनाया है। राजस्थानी रेखाचित्रकार जिन परिस्थितियो के कारण प्रभावित हुए हैं उनके आधार पर राज-स्थानी के इन रेखाचित्रो का विभाजन इस प्रकार से किया जा सकता है—

(१) सामाजिक विषयो पर आधारित (२) व्यक्ति विशेष पर आधारित
(3) इतिहास पर आधारित (4) व्यग्य और हास्यप्रधान रेखाचित्र
(5) अन्यान्य विषयो पर आधारित रेखाचित्र

डा० किरण नाहटा ने राजस्थानी रेखाचित्रो का विभाजन इस प्रकार से किया है[2]—

(1) श्रद्धा-स्नेह समन्वित (२) सवेदनात्मक (3) तथ्यात्मक रेखाचित्र

---

1 जूना वेली नुवा वेली कुमाणस, पृ म १६
2 शोध-ग्रन्थ—"आधुनिक राजस्थानी साहित्य प्रेरणा-स्रोत और प्रवृत्तियाँ" के "रेखाचित्र" अध्याय मे

मामाजिक विषयो पर आधारित रेखाचित्रो मे वशी वावरा का "लाकडा मेल्या" विश्वम्भरप्रसाद का "ठग लक्डी" देवकिशन का "वेमाता रा लेख" सुरेश राठी का "व्याव री वन्सगाठ" भवरलाल नाहटा के "नेहरूजी रो मनोरजण" "वातो आमी दही वाटियो लाग्नो" "वम्वई रा घडाका" तथा "मैंधी री वात" जगदीश माथुर का "जीमण" श्रीलाल नथमल जोशी के "लै'री' तथा "पट्टी माथली" व्रजनारायण पुरोहित के 'थोडी-सी कसर' वखत री उखत, फाटको, लेखक वणनो, देसी री पिछाण, नमे मे चूंच, पैला वतावतो, एकासणो, कूए, ऊयर कूकडी, एक तारीख, गजटेड अफसरी वे वीवर हालसी, हूंई थारै गांव रो, अणजाण रो विस्वास, कोट री पोट, पुजारी री हुसियारी, गोठ, सिक्को रा सिकार, व्याव री वखेडो तथा "सिफारिश" विशेष उल्लेखनीय हैं। इनमे सामाजिक विषयो की दृष्टि से यद्यपि ये रेखाचित्र कोई अधिक प्रभावी एव उत्कृष्ट नही वन पडे हैं तथापि अल्पावधि मे अन्यान्य विषयो एव व्यक्ति विशेष के चरित्र पर आधारित रेखाचित्रो की भरमार वास्तव मे राजस्थानी रेखाचित्रकारो का एक सफल एव सराहनीय कदम है।

राजस्थानी मे व्यक्ति विशेष के चरित्र पर आधारित रेखाचित्र अधिक मात्रा मे लिखे गए हैं जिनमे अमोलकचन्द जागिड का "कवि पोकरो" मोहन पुरोहित का "लाच्छनरामजी डोकरी" सुरेन्द्र अचल का "लाडेसर" विश्वम्भरप्रसाद का "एक कवर लाडली हरखी" सत्येन जोशी का "गवरू माव" मुरलीधर व्यास तथा मोहनलाल पुरोहित के रेखाचित्र[1], मुरलीधर व्यास के 'सिरदार रगारो" "भगदत्त भाई" एव 'जोसीजी" शिवराज छगाणी के रेखाचित्र[2], दामोदरप्रसाद का "दो भाई अर दो चितराम" श्रीलाल मिश्र का 'गरीबदास ममखरो पाटण रो" भवरलाल नाहटा का "मत्री अर करमचन्दजी वछावत" सूर्यशकर पारीक का "सम्पादकजी" जगदीश माथुर का "होळी रा गैरिया किशनरामजी" श्रीलाल नथमल जोशी के रेखाचित्र[3], सवाईसिंह धमोरा का "सासूजी" ओकार पारीक का "वुलकी वातेरण" दीनानाथ खत्री का "अग्रजी रेडी आलो" मूलचन्द 'प्राणेश' का "चौधरी दादो" व्रजनारायण पुरोहित के "वकील साहब" "अटाग्वा" "गोधा रै पंजा" तथा 'इक्कीमा" सग्रहो के अधिकाश रेखाचित्र विशेष श्लाघ्य रहे हैं। इन रेखाचित्रो मे जहां एक ओर प्रस्तुत पात्रो का कठोर, श्रमयुक्त, सरल एव सात्विक जीवन लेखकीय स्नेह का पात्र वना, वहां समाज द्वारा उनकी उपेक्षित एव दयनीय स्थिति

1. 'जूना जीवना चितराम" रेखाचित्र-सग्रह।
2. उणियारा : रेखाचित्र-सग्रह।
3. सवडका : ,, ,, ,, ।

भी लेखकीय सहानुभूति तथा करुणा का आधार बनी। इस कोटि के रेखाचित्रों में मुरलीधर व्यास तथा मोहनलाल पुरोहित के "रामलो भगी" नन्दो ग्रोट, मनजी मचका वाळो, भीखो भटियारो, सुगनो वट्टी भाट, रग्घो गल्ला गाठगिरो, गनो ठठारो, भीलियो खवास, मोतियो डाकोत, बीजो खाती, सिणगारी मैमण तथा हुसेनो गूजर" ग्रोर शिवराज छगाणी के "पूरणियो भगी" "तालियो मैमी" "कळो ग्राळो" एव "गरीबदासजी" इत्यादि रेखाचित्र ग्रत्यन्त ही उत्कृष्ट हैं।

इतिहास तथा ग्रन्यान्य विषयों या प्रसगो पर ग्राधारित रेखाचित्र राजस्थानी मे ग्रत्यल्प मात्रा मे प्रकाशित हुए हैं। इसका दोष यहाँ की सभ्यता, सस्कृति एव वातावरण को ही दिया जा सकता है। सुरेन्द्र 'अचल' का "सूरज री उगाळी" जगन्नाथ सिंधी का "गोधा" सत्येन जोशी का "समझ रा भाड" ग्रन्नाराम "सुदामा" का "सुलतान" ग्रोम ग्ररोडा के "दरपण री करामात" तथा "म्हू दी सैलुण मे गियो" श्रीनन्दन चतुर्वेदी का "माख्यो ग्रर माथै मार्‌यो" विश्वम्भरप्रसाद का "कुमांणस" विनयकुमार का "पीढी रो ग्रातरो" उमाचरण का "कि ग्रोर की" भवरलाल नाहटा के "ग्रजवघर रा क्यूरेटर" बावन गांव" तथा "ग्रन कवराजजी" सूर्यशकर पारीक का "एवाळिया" ग्रोकार पारीक का "दरबार ग्रस्पताल मे" "कृष्णगोपाल का "घूम चकेरिया रै बीच जिनगाणी रा छिण" व्रजनारायण पुरोहित के 'उपनाम महातम" रामदेव बात्रै रो खण, जमराज नै कैद, "थोडी-नो क्मर" 'ग्रणजाण रो बिस्वास" तथा "पुजारी री हुसियारी" इत्यादि रेखाचित्र इस दृष्टि से सरस एव मर्मस्पर्शी बन पडे हैं।

हास्य ग्रोर व्यग्य की प्रवृत्ति राजस्थानी रेखाचित्रो मे विशेषत मुखर रही है। ऐसे रेखाचित्रो मे श्रीलाल नथमल जोशी, शिवराज छगाणी तथा व्रजनारायण पुरोहित का विशेष योगदान रहा है। इनके सग्रहो के ग्रधिकाश रेखाचित्र इसी श्रेणी मे ग्राते है। हास्य ग्रोर व्यग्य की ग्राशिक छटा सुदामा के "तस्कर सडक सू ससद ताई "हेडाऊ के "ग्रसली हिन्दुस्तान रो वासी" ग्रमोलकचन्द के 'कुतिया रो मैलो" भवरलाल नाहटा के "ग्रजवघर रा क्यूरेटर" सूर्यशकर पारीक के "फगडल" जगदीश माथुर के "चमचाबाज हो SSS" ग्रोकार पारीक के "कागगाज' दाऊदयाल जोशी के "भैसो होय नै मिनख री बोली बोलै' रेखाचित्रो मे देखने को मिल जाती है। ऐसे रेखाचित्रो मे जोशीजी के 'फरीमल" गुलछर्रामल, फदडपच, रडत्रो, शोपीजी, डाकण लै'री "उभराणा म.जी" भागचन्द, धोनए भाभी तथा "लाडू' व्रजनारायण पुरोहित के "काऊ साऊ" चार सौ बीस, गजटेड ग्रफसरी, हुई थारै गाव री, कोट रो पोट, मूरखा रो सरताज, गोधा रै पजा, ऊदरी काकी गोळजी पोलियो, चिकणाजी, काकूजी, जीमाकियो तथा "कुडछी कलक" इत्यादि रेखाचित्र पाठको को ग्रनायास हसी के फव्वारे छोडने को विवश कर देते है। हास्य ग्रोर व्यग्य के साथ साथ इन रेखाचित्रकारो मे पात्रो के रूप-वर्णन की

विलक्षण एव अनुपम शक्ति से रेखाचित्रो मे अपार सरसता तथा सजीवता की वृष्टि सहज मे ही हो गई है। ऐसे लेखको मे तीसरा महत्त्वपूर्ण स्थान शिवराज छगाणी को है जिसके भाडागरजी, पीडी पक्कड, हऊफानाथ, ठाकुर तथा "आटियो बावो" आदि रेखाचित्र पाठक के मन को बरबस खीच लेते हैं।

जोशीजी के हास्यमूलक रेखचित्रो का आलम्बन कोई ऐतिहासिक या पौराणिक पात्र अथवा कोई असाधारण घटना नही रही है। पात्रो की शारीरिक बेडौलता या कुरूपता के आधार पर हसाने का प्रयास नही हुआ है अपितु पात्रो के विशेष कार्य-कलापो के वर्णन से ही पाठक हसे बिना नहीं रह सकता है। इनमे हास्य के साथ साथ कही कही व्यग्य के तीखे स्वर भी उभरते हुए स्पष्टत देखे जा सकते हैं। इस क्षेत्र मे सूर्यशकर पारीक, दाऊदयाल जोशी तथा विश्वेश्वरप्रसाद के नाम भी विशेष महत्त्व रखने वाले हैं। विश्वेश्वरप्रसाद का "आ भाटा पै महल बणसी" रेखाचित्र हास्य-व्यग्य का एक अनोखा नमूना है। इसमे आज के छात्र पर तीखा व्यग्य-प्रहार है।

कथात्मक, वर्णनात्मक, सवादात्मक तथा सम्बोधनात्मक शैलियो पर आधारित रेखाचित्र होते हुए भी कथात्मक एव वर्णनात्मक—इन दो शैलियो की ही राजस्थानी रेखाचित्रो मे प्रमुखता रही है। कथा की तरह अपनी बात को सरस एव रोचक ढग से प्रस्तुत करने तथा किसी पात्र की चारित्रिक विशेपताओ को उभार कर प्रकट करने की प्रवृत्ति के कारण रेखाचित्रकार कथात्मक शैली का ही विशेपत सहारा लेता है। वैसे भी कहानी और रेखाचित्र का काफी निकट का सम्बन्ध रहा है। इस शैली के रेखाचित्रो मे जोशीजी के "फर्रामल" तथा "गुलछर्रामल" आदि अधिक सरस एव मनोरजक सिद्ध हुए हैं। कथात्मक शैली का एक अन्य भेद आत्म-कथात्मक शैली है। इसमे पात्र स्वय ही आत्मकथा के रूप मे अपने जीवन की किसी घटना विशेष का या जीवन-चर्या का रोचकता के के साथ वर्णन करता है। ऐसे रेखाचित्रकारो मे दाऊदयाल जोशी तथा विश्वेश्वरप्रसाद तिवाडी के रेखाचित्र भी आते है।

वर्णनात्मक शैली मे लेखक अपेक्षित पात्र या घटना का स्वय ही वर्णन करता चलता है। बीच बीच मे पात्रो के गुणावगुणो पर भी प्रकाश डालता जाता है। मोहनलाल पुरोहित, मुरलीधर व्यास, शिवराज छगाणी, व्रजनारायण पुरोहित तथा भवरलाल नाहटा ने इसी शैली का अनुसरण किया है। शैली एक होते हुए भी इन सभी का प्रस्तुत करने के ढग पृथक् अस्तित्व रखते हैं। मुरलीधर व्यास, मोहनलाल पुरोहित, शिवराज छगाणी, श्रीलाल नथमल जोशी, भवरलाल नाहटा तथा व्रजनारायण पुरोहित के रेखाचित्र-सग्रह[1] इस अन्तर के सच्चे प्रतीक हैं।

---

1 "जूना जीवता चितराम" "उणियारा" "सबडका" "बानगी" "वकील साहब" "अटारवा" "गोधा रा पजा" तथा "इक्कीसा"—रेखाचित्र-सग्रह।

राजस्थानी मे सवादात्मक शैली मे लिखे गए रेखाचित्रो का अभाव नही किन्तु न्यूनता अवश्य है। इस शैली मे पात्रो की बातो के माध्यम से कोई रम्य-सा शब्द-चित्र खडा किया जाता है। रेखाचित्रो मे इस शैली का प्रयोग करने वाले मुरलीधर व्यास, श्रीलाल नथमल जोशी तथा डा ब्रजनारायण पुरोहित ही हैं। आद्यन्त सवाद-शैली मे लिखित रेखाचित्र तो राजस्थानी मे नहीं मिलता है परन्तु अधिकाश स्थानो पर सवादो का प्रयोग कर पात्रो के चरित्रो को उभारने के इन तीन रेखाचित्रकारो के प्रयास ही श्लाघनीय रहे हैं।

सम्बोधनात्मक-शैली मे लिखित राजस्थानी का उल्लेखनीय रेखाचित्र है—जोशीजी का "पट्टी माथली" लेखक ने दिल्ली के किसी फुटपाथ पर एक सजील नयनो वाली,कृशकाय, श्यामवर्णा भिक्षुणी को देखा था। उसके व्यक्तित्व के आकर्षण मे आकर लेखक उसके जीवन के अज्ञात रहस्यो को जानने हेतु पुन दिल्ली जाता है किन्तु वहाँ उसे न पाकर उसे सम्बोधित करता हुआ उसका मर्मस्पर्शी एव सजीव चित्र अपने सग्रह "सवडका" के "पट्टी माथली" रेखाचित्र मे खीचता है।

इस समूचे विवेचन से राजस्थानी रेखाचित्रो के बारे मे कुछ सामान्य बातें उभर कर सामने आती हैं। राजस्थानी रेखाचित्रो मे ऐतिहासिक पात्र या घटना-क्रम तथा प्राकृतिक दृश्य या मनोवृत्ति विशेष की प्रधानता से युक्त रेखाचित्रो की अत्यन्त ही कमी रही है साथ ही सूक्ति, डायरी एव तरग-शैली के उपयोग का अभाव भी। कालावधि की दीर्घता को देखते हुए राजस्थानी कहानी की तुलना मे रेखाचित्रो के विकास की गति काफी धीमी रही है। फिर भी स्वतन्त्रता-काल के पश्चात् राजस्थानी गद्य-साहित्य मे इस विधा के प्रवेश के कारण राजस्थानी गद्य-लेखको का इस विधा की ओर सन्तोषजनक ध्यान गया है। इसी के फलस्वरूप आज हमारे सामने रेखाचित्रो के कुछ पुस्तकाकार रूप भी प्रस्तुत हुए हैं। पत्र-पत्रिकाओ का प्रयास तो इस दिशा मे सराहनीय रहा ही है।

सस्मरण-साहित्य

सस्मरण तथा इसका अभिप्राय —साहित्य-शास्त्रियो ने जीवन-चरित्रो के कई प्रकार बताये हैं। इनमे जीवनी, आत्मकथा और सस्मरण—ये तीन प्रकार प्रधानत साहित्य मे व्यवहृत होते हैं। जीवनी कोई दूसरा लिखता है, आत्मकथा स्वय के द्वारा लिखी जाती है और सस्मरण मे जीवन के किसी भी महत्त्वपूर्ण भाग या घटना का वर्णन होता है। कुछ लोग सस्मरण स्वय अपने बारे मे लिखते हैं तथा कुछ दूसरो के बारे मे। सस्मरण मे लेखक अपने समय के इतिहास को लिखना चाहता है पर इतिहासकार के समान नही। इसमे समूचे जीवन का चित्रण न होकर किसी एक या अधिक घटनाओ का स्मरणीय एव रोचक वर्णन होता है। सस्मरण मे अन्तर्जगत् की अपेक्षा बहिर्जगत् प्रधान होता है इसलिए देश-काल का

वर्णन भी इसमे आ जाता है। वर्णनीय घटना के साथ अन्य स्वानुभूत घटनाओ का भी सस्मरण मे पाठक योग करता है। महापुरुषो से लेकर साधारण व्यक्तियो तक की जीवन-घटनायें लेखक के सम्पर्क मे आकर सस्मरण का रूप ग्रहण कर लेती हैं। निष्कर्षत: जब हम किसी साधारण या विशिष्ट व्यक्ति से सम्बन्धित किसी सवेदनशील स्मृति को अकित करने का प्रयत्न करते हैं तो उस रचना को "सस्मरण" कहते है। सस्मरण के कई प्रकार हैं--यात्रा-सस्मरण शिकार-सस्मरण तथा व्यक्ति-सस्मरण इत्यादि।

राजस्थानी-सस्मरण : एक सामान्य परिचय :—रेखाचित्र की तरह राजस्थानी सस्मरण का इतिहास भी कोई अधिक पुराना नही है। रीति से सस्मरण-लेखन का कार्य स्वतत्रता के बाद से प्रारम्भ हुआ है। अधिकाश रेखाचित्रकारो ने सस्मरणात्मक रेखाचित्र लिखे है जिनमे शिवराज छगाणी, मुरलीधर व्यास, मोहनलाल पुरोहित, भवरलाल नाहटा, श्रीलाल नथमल जोशी एव डा. व्रजनारायण पुरोहित इत्यादि। १९६५ ई. मे भवरलाल नाहटा[1] तथा १९७५ ई. मे अन्नाराम 'सुदामा'[2] के सस्मरण-सग्रह प्रकाशित हुए। इनमे पूर्व हो स्फुट रूप मे कई सस्मरण हरावळ, ओळमो, मरुवाणी अणिमा, राजस्थानी वीर, ईसरलाट, मधुमती, राष्ट्र-पूजा, जागती जोत, म्हारो देस, वाणी, राजस्थान-भारती, कुरजाँ, जळमभोम, वैचारिकी लाडेसर और मूमल इत्यादि राजस्थानी एव हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ तथा कई सकलनो[3] के माध्यम से प्रकाश मे आए है। सभी पत्र-पत्रिकाओ मे "राजस्थानी वीर" का १९४३ ई., "ओळमो" का १९५४ ई. तथा "मरुवाणी" का १९५६ ई. से प्रकाशन-कार्य प्रारम्भ हुआ है अत सस्मरण का उद्भव-काल "राजस्थानी वीर" पत्र के प्रकाशन-वर्ष से ही माना जा सकता है। स्वातत्र्योत्तर-काल के पश्चात् तो पूर्वोक्त पत्र-पत्रिकाओ मे शताधिक सस्मरण अपनी सरसता और सजीवता के साथ प्रकट हुए है। रामनाथ व्यास 'परिकर' भवरलाल नाहटा, रामेश्वर टाटिया तथा अन्नाराम 'सुदामा' के नाम विशुद्ध सस्मरण-लेखको के रूप मे शिरोमणि या सर्वोपरि रखे जा सकते हैं। पत्र-पत्रिकाओ तथा अन्यान्य सस्मरण-सकलनो मे राजस्थानी सस्मरण इन रूपो मे प्रकाश मे आए हैं—

(1) व्यक्ति विशेष पर आधारित (2) प्राकृतिक उपादानो पर आधारित
(3) यात्रा सस्मरण (4) इतरेतर विषयो से सम्पृक्त सस्मरण

राजस्थानी सस्मरण एक गहन अध्ययन —स्फुट-रूपीय सस्मरणो की

1. बानगी ले. भवरलाल नाहटा
2. दूर-दिसावर ले अन्नाराम 'सुदामा' : यात्रा-सस्मरण
3. माळा राजस्थानी मणिमाळा : राजस्थानी गद्य : विकास और प्रकाश।

जानकारी प्रकाशित दो संस्मरण-संग्रहों की समीक्षा के बाद ही करनी उपयुक्त होगी। दोनों संग्रहों की समीक्षा एवं इनका मूल्यांकन इस प्रकार से है —

बानगी[1]

समीक्षा —विविध गद्य-विधाओं के इस संग्रह में 14 व्यक्ति विशेष पर आधारित संस्मरण हैं। सुरगवासी ओझाजी, पिंडत केसरीपरसादजी, लाभू बाबो, रावतियो नाई, मोतीलालजी नाहटा, लबू सेठ, प्रेमसुखजी नाहर, शाहजी नेमीचन्द-जी कोचर, बिरखो ठाकुर, गजू बामण, जीमण-जम मुरो भुक्कड, गारबदेसर रै ठाकर री भगती और गारूराम सरकार—ये सभी संस्मरण प्राय सत्यता के निकट हैं। इनमें राजस्थानी सभ्यता तथा संस्कृति की विशेषताएँ समाविष्ट हैं। अधिकांश संस्मरण प्रभावोत्पादक हैं। भाषा सरल, प्रवाहमय एवं स्पष्ट है। ये एक पृष्ठ से तीन पृष्ठों तक के कलेवरों से युक्त हैं। भाषा-सहिष्णुता का भाव लेखक में है। लेखक ने मध्यम और उच्च वर्ग के चरित्रों को ग्रहण किया है। रूप-वर्णन इस संग्रह में भी कई स्थानों पर उपलब्ध होता है।

दूर-दिसावर[2]

दस अध्यायों में विभक्त चौरानवे पृष्ठीय इस संस्मरण में लेखक के कलकत्ते की यात्रा का वर्णन है। लेखक मित्र के पुत्र की शादी में कलकत्ते के लिए रवाना होता है। छोटी बाई (गाँव की औरत) तथा एक बच्चो (उसकी दोहती) भी साथ होती हैं। रास्ते में कई तकलीफें होती हैं। रेलगाड़ी में कई बदमाशों के कृत्य देखने को मिलते हैं। अन्त में कलकत्ते पहुँचते हैं। कुछ समय वहाँ रहकर लेखक वापिस गाँव आता है। छोटी बाई भी साथ रहती है। राह में लेखक की तबियत खराब हो जाती है। छोटी बाई सेवा करती है। लेखक लोरी से बीकानेर पहुँचता है। वहाँ अपने मिलने वालों को कलकत्ते के जीवन की झलक देता हुआ अपना यात्रा-संस्मरण समाप्त करता है।

समीक्षा —राजस्थानी भाषा में इतना बड़ा यात्रा-संस्मरण इससे पूर्व नहीं लिखा गया था इसलिए लेखक का इस क्षेत्र में प्रयास बड़ा सराहनीय रहा है। संस्मरण की सभी बातें स्वाभाविकता के साँचे में ढली हुई हैं। पृष्ठ ८१-८२ पर प्रकट दार्शनिक विचार लेखक की भावुकता पर बल देने वाले तथा पुस्तक की शोभा बढ़ाने वाले हैं। पुस्तक में हास्यात्मक विचारों की भी कोई कमी नहीं है—

(क) "दिनूगै उठता ही जे मूंडो कीं लुप लगायोडी लुगाई रो का की नसबदी

1. ले भंवरलाल नाहटा, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।
2. ले अन्नाराम 'सुदामा' धरती प्रकाशन, उदयरामसर।

करायै मिनख री देखरोडो हुवै ।"[1]

(ख) "फोन करस्यू चूनीलाल नै अर आ बैठसी नूनीलाल ।"[2]

(ग) 'दूसरो बोल्यो, "म्हारै डोरो ले'र गाठ बाध दो भाईजी, जिको दो च्यार घटा मूतरण सू लारो छूटै म्हारो, इमो जी दोरो हुवै तो फस्ट मे आरणो हो थाले ।"[3]

(घ) "केई दफै केई चीजा परिया सू रळी आवै जिसी लागै, कनै गया जै-रघनाथजीरी-पैरी ओढी डोकरी परिया सू अपमरा-सी दीसै, कनै गया बोदी टटेर रै हाथ रा बोरिया ही को भावै नी ।"[4]

(च) "मिट दो एक नै एक टटेर निकल्यो गैस अर टीवी री मासी सो, दूसरोडै झट माय बड'र कूटो दे लियो । हू तो रो लियो भळै अध घटा ताई ।"[5]

पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है । जैसे रास्ते मे मिले कुली, साधु-सन्यासी, सिपाहियो और जमादारो की भाषा बिगडी हुई हिन्दी रखी है । सुन्दर कहावतो एव मुहावरो ने लेखक की भाषा की श्री-वृद्धि की है—काना रै उस्तरी हुवै, पावली कुत्ती अर पूछ मे कागसियो, लाडी आवै न पाडी, गाव बसायो वाणियै पार पडै जद जाणियै, एक आख रो काई तो ढकणो अर काई मीचणो, रामदेवजी नै मिलया जिका सै ढेढ ई ढेढ, डाकण बेटा देवै क लेवै, चेरै री हवा उडगी, नर चीती नही होत है हर चीती ततकाळ, नागी काई निचोवै अर काई धोवै, वै ई घोडा अर वै ई मैदान ।

सुन्दर सवादो की छटा भी द्रष्टव्य है[6] —

"बाबा किसो गाव है ? मैं पूछयो ।

राणीसर ।

जात ?

नायक ।

बीकानेर कित्तो अठै सूं ?

कोसडा च्यारेक समझो कवळा-कंवळा ।

साढ भाडै करस्यो ?

कर लेस्यूं, सवारी कित्ती है ?

१८ पृष्ठो तक तो लेखक कलकत्ते जाने के विषय मे सोचता है । पृष्ठ ३५ पर लेखक यात्रा हेतु गाडी पकडता है । ९४ पृष्ठो की इस पुस्तक मे ३४-३५ पृष्ठ

---

1 से 6. दूर-दिसावर . ले. अन्नाराम 'सुदामा' पृ. स क्रमश. ५, १७, ३६, ५४, ६७ और २५ ।

व्यर्थ के वर्णन मे ही खो दिये गए हैं। "नाक नीठै गध लेई जित्तो" मे अश्लीलता[1] का प्रयोग है। शोभा, दोपी, शावाशी, पुरश्चरण, राष्ट्रपति, शुद्धि, राग, श्रद्धा, श्रम, शका, विष्णु और सन्तोष आदि शब्दो मे 'श' और 'ष' का प्रयोग हुआ है। लेखक ने पुस्तक के शीर्षक मे ऐसी भूल नही की तो यहाँ कैसे की? सस्कृत के शब्दो का अधिक प्रयोग मिलता है—पुरश्चरण, राष्ट्रपति, शुद्धि, निश्छल, व्यस्त, ब्रह्मानन्द, कोषाध्यक्ष, अन्त करण अह आदि। अग्रेजी शब्दो के आधिक्य के साथ-साथ लेखक ने कुछ स्थानो पर राजस्थानी शब्दो के प्रयोग मे भी भूलें की है—जैसे-"अध कोस निठ आया हुस्या।"[2] इसमे 'निठ' के स्थान पर "नीठ" तथा "हुस्या" के स्थान पर "हुवैळा" के प्रयोग उपयुक्त थे। मूल्य भी पुस्तक का अधिक है।

कुछ दोष होते हुए भी इस क्षेत्र मे लेखक का मौलिक प्रयास राजस्थानी के सस्मरण-साहित्य को एक विलक्षण देन है।

राजस्थानी मे व्यक्ति विशेष पर आधारित सस्मरणो मे निजाम का "पाब्लो पिकासो सुरगवास' वनमाली के "वलराज साहनी" "गजाधर सोमाणी रो सुरगवास" तथा "मोहन राकेस रो सुरगवास" घनश्यामलाल का 'नाथूरामजी खडगावत हरिकिशन का "सगीतकार वी एल माथुर" विमला का "कुमारी प्रभा शाह" अमोलकचन्द का "वातो कू जडो" सोहनदान का "डा एल पी तेस्सीतोरी" नारायणसिंह 'पीथल' का "मनुज देपावत" दीनदयाल ओझा का "चमेली" हरनत चौहान का "मीनाकुमारी फिलमस्तभ" दीनानाथ पारीक का "स्व प हीरालाल शास्त्री" भगवतीलाल का "मा एक सस्मरण" चित्रलेखा का "यूरोप रै नयै अध्यातम मारग री गुरु सुन्दरी" सत्यप्रकाश जोशी के "ओळू आवै आपरी" "गजाधर सोमाणी रो सुरगवास" तथा "छायाकार गणपतसिंघ" ओकार पारीक का "हेमी" मोहनलाल पुरोहित का "राकस नगरी मे कानासर रो जाट" रामनाथ व्यास के "सुजाना" तथा "समरकद रो जतर-मतर जैसिंघ अर उलूगवेग" श्रीलाल नथमल जोशी का 'श्रीमती इदिरा गाधी रै नाव" भवरलाल नाहटा के "सुरगवासी ओझाजी" "पिडत केसरीपरसादजी" "लाभू वावो" 'रावतियो नाई" "मोतीलालजी नाहटा" लखू सेठ, प्रेमसुखजी नाहर, शाहजी नेमीचदजी कोचर, विरखो ठाकुर, गजू वामण, जीमण-जम मुखो भक्कड, गारवदेसर रै ठाकर री भगती, गारूराम सरकार, रतन तथा "आसकरणजी वावाजी" नेमनारायण जोशी के "सुरजो नायक" तथा "कूदण वावो" रामेश्वर टाटिया के "मोती काको" भूरी री नानी, हमीदखा भाटी, सती, लिछमा दरोगण, हजारी दरोगो तथा "लिछमी वाई" मनोहर शर्मा के "पनजी भगत" वैजो छैल

1. दूर-दिसावर ले 'सुदामा' पृ स ३०
2. ,, ,, ,, , पृ स. २२

तथा "भगत किसनसिघजी" पुरुपोत्तम छगाणी का "अनाथ सोमाचल री याद—वर्माजी" श्रीगोपाल का "फफला मारजा" मूलचन्द 'प्राणेश' का "खत्री बुधरजी" जगदीशचन्द्र का "स्व प श्रीमहादेवप्रसादजी दाधीच ज्योतिस विद्या रा लूठा विद्वान हा" शिवसिंह का गुमनावा री याददास्त" किशोर कल्पनाकान्त के "स्व. रामप्रसादजी भवर एक कला-प्रेमी जूण री भाकी" तथा "गुरुजी" शुकदेव का "साईना री याद" सुरेन्द्र अचल का 'एकल मू छालै सिघ री वात" विष्णु प्रभाकर का "अणजाण्या देसा माय अणजाण्या साथी ' श्रीसत्यनारायण गोयनका" सीताराम महर्षि का "स्व डा उपा मुल्लर सिमरत्या री रेखडचा" सवाईसिंह धमोरा के "ओळू आवै आपरी (भवरसिंह शेखावत फौजी)" तथा "वानै किया भूला" देवेन्द्रसिंह गेहलोत का ' राजस्थानी भासा रा एक सवला समर्थक सुरगवासी श्री-जगदीशसिंह" गजाधर सोमाणी का "सरधा-जोग भाई हनुमानप्रसादजी पोद्दार" सूर्यशकर पारीक का "छोटूलाल" तथा वदरीप्रसाद साकरिया का "मुरलीधर व्यास. एक सस्मरण" इत्यादि सस्मरण वडे मार्मिक, मनोरजक एव रमणीय वन पडे हैं। इनमे विशेषत मृत व्यक्तियो के ही चरित्रो को उभारा गया है तथा उन्ही पर घटित प्रसगो या उन्ही के सम्पर्क मे आगत तथ्यों का ही अकन किया गया है। इन सस्मरणो मे वातो कू जडो, मा एक सस्मरण, चमेली, यूरोप रै नए अध्यातम मारग री गुरु सुन्दरी, हेमी, राकसनगरी मे कानासर रो जाट, सुजाना, श्रीमती इदिरा गाँधी रै नांव, सुरजो नायक, कूदण बावो, एकल मू छालै सिघ री वात, वानै किया भूला तथा छोटूलाल सस्मरण भाषा और भावो की दृष्टि से अत्यन्त ही उत्कृष्ट वन पडे हैं। सरल, सरस एव प्रवाहमय भाषा के प्रवाह मे पाठक इतना तन्मय हो जाता है कि वह इनमें वर्णित भावो से मुक्ति पाना चाहता है पर ऐसा वह कर नही सकता। क्योकि भावो का वेग भी कोई कम मनोरजक नही है।

व्यक्ति विशेष पर आधारित सस्मरणो के वाद यात्रा-सस्मरणो का स्थान प्रमुख है। इस क्षेत्र मे श्रीकृष्ण का "जापान अर अगूणा देस एक अनुभव" विश्वम्भरप्रसाद का "कीडी-नगरो" जगदीश माथुर के "आवू रै पाहडा मे" तथा "धोरा वाला देस माय" सुल्तानसिंह का "गगानगर स्यू गगा-तट तक" रामनाथ व्यास के "साहित्यकारा रो तीरथ · गोरकी रो घर" ' म्हारी मास्को री साहित्य-यात्रा" तथा ' सैलानी भवर परदेसा मे··· " श्रीलाल नथमल जोशी का ' त्रिवेणी रै तीर" अन्नाराम 'सुदामा' का "मालव, तू मोटो" लक्ष्मीकुमारी चूडावत के "म्हारी जापान-यात्रा," तथा "सोवियत सघ री साहित्यिक जातरा" जुगलसिंह का ' मेरी लदन यात्रा" तथा गजानन वर्मा का "आसाम ओजू सै" आदि सस्मरण उल्लेखनीय रहे हैं। इनमे से मालक तू मोटो, सोवियत सघ री साहित्यिक जातरा, त्रिवेणी रै तीर, साहित्यकारा रो तीरथ . गोरकी रो घर,

गगानगर सू गगा-तट तक, आबू रै पाहुडा मे , धोरा वाला देस म.य व डी नगरो तथा जापान अर अगूणा देस एक अनुभव उत्कृष्ट कोटि के सस्मरणो मे स्थान पाते हैं।

प्राकृतिक उपादानो तथा इतरेतर विपयो पर आधारित सस्मरणो की सख्या कोई सन्तोपजनक तो नही है तथापि राजस्थानी गद्य-साहित्य को अभाव के कलक मे अवश्य बचाने का प्रयास है। ऐसे सस्मरणो मे तपस्वीलाल का "देवी रो परचो" सत्येन जोशी का ' म्हैं भुगत र्यो हू भइसा री दीयोडी सजा" दाऊदयाल जोशी का "लोग कंय, कमावै कोयनी कणै कमावा वीरा!!" भगवतीप्रसाद का 'सस्मरण ऊजळा अर काळा" मोहनलाल पुरोहित के "सिस्टर कै वैन ' मैं कागलो देख्यो, भूत या भटका मारती आत्मावा तथा 'अवला कै सवला' कोमल कोठारी एक सस्मरण नाव फगत नांव" रामनाथ व्यास के "कसूमल घोडो" सूखो नगर-लेनिनवाद तथा "सोवियत सघ रो सूखो लेनिनवाद" अन्नाराम 'सुदामा' का "कंई जिकी कर दिखाई" नेमनारायण जोशी का "गोगाजी रा घोडा" रामेश्वर टाटिया के "धरम री समाधी" चोर, आत्माभिमान, उतार-चढाव, सनेव-सूत और "दान' मुरलीधर व्यास का "परदेसियो" ओमदत्त जोशी का "पति-परमेसर" मूलचन्द 'प्राणेश' के "साप सू सग्राम" तथा 'मुकाबलो एक चोर सू ' भवरलाल स्वर्णकार का "व्याव रो सरूप" विजयसिंह का "कदमाली पार" सुशीला का "हू कुण हू ?" यशोधरा का "जवाहर रै टावरपण री झलकिया" सवाईसिह धमोरा का "एक तीरथ नु वो भी पुराणो भी", दीनदयाल ओझा का "सहायता कैम्प" और झूमरलाल का "उवा दुख भरी वारता" इत्यादि सस्मरण अपने प्रवाहमय, मार्मिक, सरस और सजीव भावो तथा भापा के प्रभाव से पाठको को वरवस आकृष्ट करने वाले हैं।

इनके अतिरिक्त हास्य और व्यग्यमूलक सस्मरण भी राजस्थानी गद्य-साहित्य मे अवतरित हुए हैं जिनमे विश्वम्भरप्रसाद का "कोडी-नगरो" अमोलकचन्द का "वातो कू जडो" सत्येन जोशी का "म्हैं भुगत रयो हू भइसा री दीयोडी सजा ' दाऊदयाल का "लोग कैय, कमावै कोयनी, कणै कमावा वीरा !!" भगवतीप्रसाद का "सस्मरण ऊजळा अर काळा" मोहनलाल के "सिस्टर कै वैन" "मैं कागलो देख्यो" तथा "अवला कै सवला" कोमल कोठारी का "एक सस्मरण नाव फगत नाव" जोशीजी का "त्रिवेणी रै तीर" भवरलाल नाहटा के "लवू सेठ" विरखौ ठाकुर, जीमण-जस मुखौ भवकड तथा "गारूराम सरकार" अन्नाराम 'सुदामा' का "कंई जिकी कर दिखाई" नेमनारायण जोशी का ' कूदण वावो" रामेश्वर टाटिया के ' चोर" लिछमा दरोगण तथा "हजारी दरोगो" और श्रीगोपाल का "फफला मारजा" सस्मरण हास्य एव व्यग्य को मूर्त्त रूप देने मे सफल रहे हैं।

बहुत लोकप्रिय रही है। वहीं से यह हिन्दी तथा बाद मे राजस्थानी मे आई।

समय समय पर आने या होने वाले युद्धो, बाढो, अकालो, सम्मेलनो तथा खेल-कूदो आदि के जो विवरण तैयार किए जाते हैं उन्हे रिपोटिंग कहा जाता है। रिपोटिंग का कलात्मक एव साहित्यिक रूप ही रिपोर्ताज है। इसमे श्रव्य और दृश्य दोनो का मेल रहने के कारण रिपोर्ताजकार पत्रकार और कलाकार दोनो ही होता है। इसमें लेखक का विवरण, रेखाचित्र का अकन तथा सस्मरण का आत्मीय भाव रहते हैं। मूलत इस विधा का सम्बन्ध पत्रकारिता से है। यह एक प्रकार से विशिष्ट घटनाओ से सम्बन्धित समाचारो का ही रूप होता है।

राजस्थानी रिपोर्ताज एक गहन अध्ययन — राजस्थानी गद्य-साहित्य किसी भी विधा से अछूता न रहे, यह जानते हुए रिपोर्ताज ने राजस्थानी गद्य-साहित्य मे अपना नगण्य प्रभाव छोड रखा है। अगुलियो पर गिने जाने वाले और सख्या में अत्यन्त ही न्यून प्रकाशित रिपोर्ताज राजस्थानी साहित्य मे अपना किंचित् प्रभाव रखते हैं।

इस विधा का प्रारम्भ हिन्दी-साहित्य मे भी द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद हुआ है। तत्पश्चात् स्वातन्त्र्योत्तर-काल तक यह विधा इतरेतर भाषाओ मे अपना स्थान बनाने में समर्थ हुई। महायुद्ध के इस भयकर वातावरण से राजस्थानी रिपोर्ताज इतना प्रभावित भी नही हो सका जितना कि अन्यान्य भारतीय भाषाओ के रिपोर्ताज। दूसरा कारण यह भी है कि सभवत· राजस्थानी लेखकों ने जनरुचि का अधिक ध्यान रखा होगा। यहाँ की सभ्यता, सस्कृति एव जनरुचि कथा-साहित्य की तरफ ही अधिक झुकी हुई रही हैं अत रिपोर्ताज विधा अन्य विधाओं से बहुत अधिक पिछड गई। ऐसा लगता है कि मानो राजस्थानी लेखको ने रिपोर्ताज की नीरसता के कारण इससे सन्यास-सा ले लिया हो। यही कारण है कि राजस्थानी रिपोर्ताज विधा की आशिक उन्नति ही हो पाई है और इस क्षेत्र मे कोई भी विशेष उल्लेखनीय और प्रभावी रिपोर्ताजकार पाठको के सामने नहीं आ पाया है। वैसे मरुवाणी, कुरजाँ, मधुमती, और जागती-जोत पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से कुछ रिपोर्ताज प्रकट हुए हैं जिनमे विनोद सोमानी का "एक दिन आप रो" कुशलकरण का "आवो हताई करा" श्रीगोपाल का "एक कजियो" उमाचरण का "मिनख" रामनिवास शर्मा का "तीन बयान" पुरुषोत्तम छगाणी का "हाथ करीदो—दिल रो दरियाव" माधव शर्मा का "बजार पट्टै चोर्ड जेब कट्टै" तथा नवोदित रिपोर्ताज-लेखक मुरलीधर शर्मा 'विमल' का "नगर मगरै रो . अजबघर मनडै रो" इत्यादि रिपोर्ताज विशेषत सराहना के योग्य रहे हैं।

शैली की दृष्टि से सभी रिपोर्ताज वर्णनात्मक शैली को ही ग्रहण किए हुए हैं। कुछ रिपोर्ताजकारों ने भाषा के प्रवाह मे मार्मिकता, प्रवाहमयता एव सरसता

का समन्वित रूप ला खडा किया है। कुशलकरण के रिपोर्ताज की भाषा का एक नमूना देखिए—"चुपचाप भर दो लाटरी। श्रा वात है ठाट री। हळद लागै न फिटकडी। इनाम मे बग्गो लखपती। दिनरात खेलो चौपड-पासा नै कूटो बावन पत्ता। बात बात मे मारो राजा-राणी। नैला-दैला गुलाम बण घूमो चढ इक्का। दाणा खावो अमरीकी। दूध रा पीवो डब्बा। भाव मत पूछो, मूंगाई री मत बात करो।"[1]

कुछ रिपोर्ताजो मे हास्यात्मकता तथा व्यंग्यात्मकता की झलक भी मिलती है किन्तु सीमित मात्रा मे ही। निष्कर्षत. इस विधा के भविष्य मे और अधिक विकास की सभावना तथा आशा नही है। रिपोर्ताज की समृद्धि मे लेखको की अरुचि, कथा-साहित्य की निरन्तर वृद्धि एव राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के प्रकाशन की कमी इत्यादि बाधाएँ आज भी प्रत्यक्ष मुँह खोले खडी हैं। फिर भी राजस्थानी गद्य-साहित्य को स्वय को गौरवान्वित ही समझना चाहिए कि इस नगण्य एवं अप्रचलित विधा का राजस्थानी-साहित्य मे पदार्पण या बीजारोपण हो गया है जो अवसर पाकर उत्तरोत्तर उन्नति की सीमा का स्पर्श भी कर सकती है।



1. आवो हताई करा : रिपोर्ताज—"मरुवाणी" पत्रिका, वर्ष १० अंक ३।

अध्याय ७

निबन्ध-साहित्य

पृष्ठ-भूमि —पाश्चात्य-साहित्य के प्रभाव के कारण निबन्ध हिन्दी की भाँति राजस्थानी मे भी एक स्वतन्त्र साहित्यिक विधा के रूप मे प्रस्तुत हुआ है। निबन्ध के अन्तर्गत समीक्षा सम्पादकीय, सामान्य वर्णन, लेखक के स्वतन्त्र विचारो की अभिव्यक्ति आते हैं। निबन्ध का क्षेत्र इतना विस्तृत हो गया है कि गद्य की जो भी रचना अन्य किसी साहित्यिक विधा मे उपयुक्त नहीं बैठे उसे निबन्ध की सज्ञा दी जा सकती है। इसी कारण निबन्ध को परिभाषा मे बाँधना कठिन हो गया है। अत आलोचको ने "निबन्ध वह है जो निबन्धकार की रचना है" कह कर सन्तोष की साँस ली है। लेखक के व्यक्तित्व का समावेश और उसके प्रस्तुतीकरण की निजी शैली ही किसी सामान्य विचार या घटना-प्रसग या वर्णन को निबन्ध बनाती है। इसके विपरीत जहाँ केवल वर्णन मात्र हुआ हो या स्थिति का तटस्थ प्रस्तुतीकरण मात्र हुआ हो या भावनाओ से परे हट कर केवल बौद्धिक धरातल पर किसी विषय का प्रतिपादन हुआ हो, उन सबको लेख की श्रेणी मे रखा जा सकता है। इस प्रकार लेख और निबन्ध के आशिक अन्तर को स्पष्ट किया जा सकता है।

'कनक-सुन्दर' और 'फाटका जजाल नाटक' शिवचन्द्र भरतिया की कृतियो की भूमिकाओ मे राजस्थानी निबन्ध का प्रारम्भिक रूप देखने को मिलता है। इनमे लेखक ने विस्तार से अपने समय की समस्याओ पर तर्कपूर्ण-शैली मे विचार प्रकट किए हैं। इसी समयावधि मे शोलापुर तथा अहमदनगर से प्रकाशित होने वाले क्रमश 'मारवाडी भास्कर' तथा 'मारवाडी' जैसे पत्रो मे छपे लेखो मे भी राजस्थानी निबन्ध के प्रथम चरण को देखा जा सकता है। परन्तु दुर्भाग्यवश इन पत्रो के अनुपलब्ध रहने के कारण निश्चित रूप मे नहीं कहा जा सकता कि राजस्थानी निबन्धो का प्रारम्भिक चरण किस स्थिति मे था। तदनन्तर कावेरीकान्त का 'सादगी सू फायदा' ब्रिजलाल बियाणी के 'मोगरा कली' 'गुलाब कली' 'वडी फजर को दीवो' तथा "मारवाडी बोली" धनुर्धारी का "बस म्हानै स्वराज्य होणो" तथा "सत्यवक्ता का 'धनवाना की लक्ष्मी' जैसे हास्यात्मक; ललित, व्यग्य- विनोदात्मक तथा विचारपूर्ण निबन्ध पत्र- पत्रिकाओ[1] के माध्यम से पाठको के सामने आए। वर्णित

---

1 मारवाडी हितकारक धामणगाव से वि स १९७६ से प्र आरम्भ।
पचराज नासिक सिटी से वि स १९७२ से प्रकाशित।

पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन इतर प्रान्तों में जहाँ प्रवासी राजस्थानी रहते थे, होता था। राजस्थान में ऐसे साहित्यिक पत्रों का प्रकाशन काफी समय बाद प्रारम्भ हुआ। तदनन्तर राजनीतिक चेतना जागृत करने वाले समाचारों पर अधिक बल देने वाले पत्र "आगीवाण" में भी "लिछमीजी म्हाकी भी तो सुण लो" तथा 'आगे काई चाहिजे" जैसे ओज-पूर्ण निबन्ध भी प्रकाशित हुए हैं। तत्पश्चात् कई अन्यान्य पत्रों[1] में भी कुछ लेख प्रकाशित होते रहे हैं किन्तु किसी भी पत्र के नियमित प्रकाशन के अभाव में राजस्थानी लेखक को निबन्ध के विकास-पथ पर बढ़ने का अवसर ही नहीं दिया जा सका।

राजस्थानी निबन्ध : एक सामान्य परिचय —स्वतंत्रता के बाद मरुवाणी, ओळमो, जळमभोम, म्हारो देस, लाडेसर, कुरजां, सरवर, राष्ट्रपूजा, हेलो, जागती जोत (बीकानेर), राजस्थान भारती, अमर-ज्योति, मधुमती, ईसरलाट, हरावळ, मूमल, वरदा राजस्थानी वीर और दीठ इत्यादि पत्र-पत्रिकाओं में गद्य की अन्यान्य विधाओं के साथ साथ निबन्ध भी काफी मात्रा में प्रकाशित हुए। परन्तु यह निर्विवाद स्वीकार करना होगा कि इन पत्रों के सम्पादकों का ध्यान कविताओं और कहानियों के प्रकाशन की ओर ही अधिक रहा। परिणामतः स्तर के निबन्ध काफी कम आ पाये हैं। इन पत्रों में ज्यादातर किसी उत्सव आदि के अवसर पर लिखे गए परिचयात्मक लेख ही निकले हैं या फिर साहित्यकार अथवा साहित्यिक कृतियों से सम्बन्धित परिचयात्मक लेख। इतना होने के बावजूद इनमें सुन्दर एवं सशक्त साहित्यिक निबन्ध भी पर्याप्त मात्रा में प्रकाशित हुए हैं। स्वातंत्र्योत्तर-युग में साढे तीन सौ के लगभग निबन्धकार पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से साहित्य-मर्मज्ञों के सामने प्रकट हुए हैं। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि इतने निबन्धलेखकों के होते हुए भी पुस्तकाकार में निबन्धों के अभी तक केवल दो-तीन संग्रह या संकलन[2] प्राप्त हुए हैं।

राजस्थानी निबन्धों की उत्पत्ति और उनके विकास-क्रम की संक्षिप्त झाँकी के बाद उक्त दोनों संग्रहों तथा एक संकलन-ग्रन्थ की समीक्षाएँ करना अप्रासंगिक नहीं होगा—

---

1. जागती जोत . पत्रिका—कलकत्ता और जयपुर से प्रकाशित
   मारवाड़ी : ,, —जोधपुर से प्रकाशित
   राजस्थानी : ,, कलकत्ता ,, ,,
2. राजस्थानी निबन्ध-संग्रह—सम्पादक चन्द्रसिंह, १९६६ ई.
   रोहिड़ै रा फूल—ले. मनोहर शर्मा, १९७३ ई. में प्रकाशित
   बारखड़ी—सम्पादक—वेद व्यास, १९७४ ई. में प्रकाशित।

राजस्थानी निबन्ध-सग्रह[1]

समीक्षा —एक सौ दस पृष्ठीय इस सग्रह मे सोलह निबन्धकारो के सोलह निबन्धो को स्थान दिया गया है। दामोदर शर्मा के "मारवाडी समाज' मे देश-विदेश मे मारवाडी-समाज के कृत्यो तथा इसके महत्त्व या स्थान, जोशीजी के 'सच बोल्या किया पार पड़ै' मे सत्य पर व्यंग्य, मनोहर शर्मा के 'लोकयात्रा' मे यात्रा के महत्त्व, गगाराम के 'देस-दिसावर रा लोग' मे प्रवासी जन-समूह पर हृदयोद्‌गार, शक्तिदान कविया के 'मातभाषा में शिक्षा अर राजस्थानी' मे मातृभाषा के महत्त्व एव सम्मान, मदनगोपाल के 'मिनख जमारो' मे मानव-योनि की प्रशसा, सुमेरसिंह के 'राजस्थान अर उण रो जीवण-दरसण' मे राजस्थानवासियों के जीवन की झाकी, गिरिराज के 'पणघट री साझ' मे प्राकृतिक-सुषमा, मिश्रीलाल के 'आपा काई खावा हा' में व्यग्य-वृष्टि, लक्ष्मीकुमारी के 'मेवाडी फागण' मे फाल्गुन के पर्वो तथा उन दिनो के खेलो की मस्ती, रावत सारस्वत, के 'थोथी वाता' मे ढोगी-आडम्बरियो के विचारो पर तीक्ष्ण प्रहार, रामनाथ 'परिकर' के 'भारतीय एकता रा सूत्र' मे भारतीय-ऐक्य मे सहायक वातो, कृष्ण कल्ला के 'काव्य री परख' मे वास्तविक काव्य के लक्षणो, रामचन्द्र के 'रै मानखा !' मे मानव की कुत्सित और दयनीय स्थिति, ओकार पारीक के 'नुई कविता रै गोखै सू' में नई कविता के महत्त्व तथा गोवर्धन शर्मा के 'साहित अर उण रा भेद' मे साहित्य की व्याख्या और उसके भेदोपभेदो—इत्यादि का निरूपण किया गया है। सच बोल्या किया पार पड़ै, आपा काई खावा हा, रै मानखा, पणघट री साझ तथा थोथी वाता व्यग्यात्मक निवन्ध हैं। काव्य री परख, साहित अर उण रा भेद, नुई कविता रै गोखै सू तथा मातभासा मे शिक्षा अर राजस्थानी, साहित्यिक निवन्धो की श्रेणी मे आते हैं। शेष निवन्ध राजस्थानी सभ्यता और सस्कृति मे घुले हुए हैं। सभी निवन्धो की भाषा सरल, स्पष्ट, सजीव, सरस एव रोचक है। कहावतो-मुहावरो तथा अलकारो की शोभा स्तुत्य है।

एकाध निबन्धकार को छोड शेष सभी आंचलिक प्रभाव से दूर नही रह सके हैं। कुछ निवन्धो का कलेवर ९-१० पृष्ठों मे होने के कारण नीरसता लाने वाले बन गए हैं। फिर भी राजस्थानी मे निवन्ध-विधा की न्यूनता की पूर्ति मे यह सग्रह सक्षम है।

रोहिड़ै रा फूल[2]

समीक्षा —अट्ठानवे पृष्ठीय इस सग्रह मे २३ व्यग्यात्मक निबन्धो को स्थान दिया गया है। रोहिड़ै रा फूल, मुसीजी रो सुपनो, गादड-पट्टो, आजादी

1 सम्पादक—चन्द्रसिंह, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।

2 ले. म[illegible], राजस्थानी भाषा सा[illegible] सगम, बीकानेर।

री लूट, अल्ला री मा रो चाळीसो, कागद रो रिपियो, सिरी अटल छत्र री जय, तनै धरती ऊपर आकास, बगीचै रो कागलो, खेद-दिवस तथा काळू रो अभिनंदन जैसे निबन्धों मे कथा का सहारा लेते हुए इनकी रोचकता मे वृद्धि की है। अनोखो अनुभव, आजादी री लूट, अल्ला री मा रो चाळीसो तथा सिरी अटल छत्र री जय जैसे अधिकाश निबन्धो का प्रारम्भ सभाओ के आयोजनो द्वारा किया गया है। निबन्ध सख्या ६, ७, ९, ११, १६, २०, २१, २२ और २३ मे 'आजाद-सभा' का ही जिक्र किया गया है जो लेखक को या तो अधिक प्रिय रही होगी या अन्य कोई नाम ध्यान मे नही आया होगा। बोरड़ी री साख, वचन-वीर, गडक धन, राजस्थान रो साहित्यकार कुण, देव गया परदेस, सरकारी सूवो, एक लोककला केन्द्र रो उदघाटन, एक शोध-प्रबन्ध री रूप-रेखा, आत्म-समीक्षा, खेद-दिवस, एक अलिखित नाटक री सार-समीक्षा निबन्ध वास्तविक निबन्धो की श्रेणी मे आते हैं। कुछ निबन्धो का प्रारम्भ एव अन्त भाषणो के माध्यम से करते हुए मौलिकता को स्थान दिया गया है। निबन्ध सख्या १८, १९ एव २० मे हास्य का पुट है तो २३ मे व्यग्य का। स्वतत्रता के बाद देश के हाल, देश के लोगो की परिवर्तित नीयतें तथा रोहिडे के फूल का गुलाब का स्थान लेना—इत्यादि समस्याओ पर इन निबन्धो के माध्यम से चर्चा की है।

कई निबन्धो[1] मे सस्कृत एव अन्य भाषाओ की उक्तियो का प्रयोग किया गया है—किम् आश्चर्यमत परम्, सा मा पातु सरस्वती भगवती नि शेषजाड्यापहा, राजा कालस्य कारणम्, गुरु सुवा जेही पथ दिखावा, ते हि नो दिवसा. गता, ऊधो मन माने की बात इत्यादि। राजस्थानी की कहावतो एव मुहावरो से निबन्धो का सौन्दर्य बढा है—रूप री रोवै करम री खावै, दिन मे खोयोडो ईमर साझ पडया आखर घर मे आय पूग्यो, आप रो हाथ अर जगन्नाथ, मान बडो कै तान, टीकाकारा रा टाका तोड चुक्या हा, खेती धणिया सेती।

भाषा-शैली का सौष्ठव द्रष्टव्य है[2]—

"रात अधारी ही। आगै सी जायर पाचू धाडेती चूकगा अर मारग भूलर धन रै खोजा ऊजड चाल पडया। सारी रात ऊजड चालता-चालता भाख फाटी तो एक गाव नेडो दीख्यो। गाव रै बारणै करतो एक घर न्यारो ई हो। नया धाडवी आखी रात रा थाकता हुयोडा हा।"

कुछ निबन्धो के शीर्षक हिन्दी, उर्दू और सस्कृत के शब्दो मे हैं जैसे खेद-दिवस, आत्म-समीक्षा, वचन-वीर, एक शोध-प्रबन्ध री रूपरेखा।

1 खेद-दिवस, सरकारी सूवो, देव गया परदेस तथा बोरडी री साख' निबंध

2. आजादी री लूट . पृ. सं. २०

"आजादू सभा रै चौवारै मे सनिवार री मिज्या नै भायला री मइली जुड़गी" इस वाक्य की कई निवन्धो मे ज्यो की त्यो आवृत्ति हुई है। पृष्ठ २९ पर 'कागद रो रिपियो' निवन्ध मे जब चौधरी ने सभी चारो रुपयो मे एक चाँदी का रुपया खरीद लिया तो दुकानदार को देने हेतु उसके पास तीन रुपए कहाँ से आए ? यदि पहले से ही उसके पास तीन रुपए थे तो फिर चौधरी ने वाजार मे कागज के रुपयो पर इतना आश्चर्य क्यो किया ? कुछ निवन्धो का व्यग्यात्मकता से दूर रहना, 'श' और 'प' का अधिक प्रयोग, कुछ निवन्धो का पुनरुक्ति दोष से युक्त रहना, विशुद्ध हिन्दी-वाक्यो का प्रयोग, कुछ निवन्धो को अनावश्यक स्थान देना, पुस्तक का मूल्य अधिक रखना, कई निवन्धो मे कथाओ के आश्रय मे निवन्ध-तत्त्व की कमी आना—इत्यादि खटकने वाले तथ्य है। अनुसन्धानकर्ता, द्रवित, आशुतोष, विजयोत्सव, विक्रेता, श्रोता, तत्काल, बुद्धिप्रदा, तथाकथित, हार्दिक, कृतज्ञ, आजन्म, अल्पाहार आदि सस्कृत के शब्दो का अधिक मात्रा मे प्रयोग करना राजस्थानी के विषय मे अल्पज्ञता का द्योतक है।

पुस्तक सदोप होते हुए भी श्लाघनीय वन पडी है। निवन्ध-सग्रहो की अति-न्यूनता ऐसे सग्रहो से कम हुई है।

वारखडी[1]

समीक्षा —इस सकलन मे अमोलकचन्द का "कुचरणी" तथा श्रीनन्दन का "अखियाती कोट" को स्थान दिया गया है। प्रथम मे कुचरणी तथा इससे मिलते-जुलते अन्य शब्दो का विश्लेपण तथा द्वितीय मे अपने जीर्ण-शीर्ण कोट के माध्यम से दरिद्रता पर तीखा प्रहार है। नव शब्द-निर्माण का कौशल, भाषा की सरसता तथा लघु वाक्यावलि का विचित्र स्वरूप इन दोनो निवन्धो मे है। उर्दू एव सस्कृत के शब्दो का किंचित् मात्रा मे प्रयोग लेखको की भाषा के प्रति सहिष्णुता की भावना को प्रकट करता है।

चतुर्वेदी पर हाडौती तथा जोगिड पर झुझुनू की बोली का विशेष प्रभाव है।

राजस्थानी का स्वातन्त्र्योत्तर-काल का निवन्ध-साहित्य अधिकाशत पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम मे ही प्रकट हुआ है। राजस्थानी मे सर्वाधिक रूप से वर्णनात्मक निवन्ध ही लिखे गए हैं। ऐसी रचनाएँ लेख के अधिक निकट होती हैं। ज्यादातर सास्कृतिक धरातल पर आधारित वर्णनात्मक निवन्ध ही प्रकाशित हुए हैं। पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित ऐसे निवन्धो मे लक्ष्मीकुमारी चूडावत के 'मेवाडी फागण', मेवाडी दीवाली, मेवाड री तीज, राजस्थान री सस्कृति, राजस्थानी वीरागना तारा दे,

---

1. सम्पादक—वेद व्यास, १९७४ ई मे प्रकाशित।

यशोधरा का 'गरणगौर-पूजरा' रामचरण महेन्द्र का "सुतन्तर भारत खातर नुवा त्यू वार' भंगी देवी पारीक का 'गोर गौर गणपती ईसर पूजै पारवती' भूरचन्द जैन के 'राजस्थान रौ जैन तीरथ नाकोडो' तथा 'चौहठरा रो कपलेसर महादेव' पदमाराम का 'राजा महाराजावा रा अनोखा सौख' सौभाग्यसिंह शेखावत के 'लोकमान वीर तेजो जाट' सूजोजी चहुवारा मुडेटी रौ, केसरिया वनडा, कवर रामसिंह मीरडी रो तथा 'राखी रो त्यू हार' हरिकृष्ण का 'लोक-निरत' रमेशकुमारी पारीक का वनडी पूज रैई गरागौर' मदनसिंह देवडा के 'तीरथराज पुष्कर' बाडमेर तथा 'राठौडा री पुराणी राजधानी खेरपुर' एन के उपाध्याय का 'म्हारै ववाजी रै माडी गणगौर' जोरावरसिंह के 'राजस्थानी काव्य माय दीवाळी री झिलमिल' तथा 'कथा मती चुकावज्यो तीज्यां तणो तिवार' उदयवीर शर्मा का 'होळी रै हुडदग मे वसन्तोत्सव रो रूप' रामदत्त शर्मा के 'देसनोक री करणी माता' तथा 'राजस्थान रौ तीरथ गळताजी' हरमन चौहान का' 'जैपुर गुलाबिया भरम री नगरी' सुबोधकुमार का 'चुरु की होळी' रतनलाल का 'रोहिडो मरुधर रौ सिणगार' रावत सारस्वत के 'भादवै रा सास्कृतिक परव' सावण रा वरत त्यू हार, एव 'सुरगो रुत आई म्हारै देस' वेद व्यास का 'आबू तीजो लोक' मोहनलाल गुप्ता का 'अलवर रो रो सिलैखानो' रामावतार का 'होळी एक नू वो रूप' नाथूलाल का 'हाडोती मे गणेश-पूजा' भैरवसिंह का 'सूजोजी चौहाण भुत्रासै रा' श्रीलाल नथमल जोशी के 'बीकानेर में होळी' और 'होळी पैली अर अबै' दीनदयाल ओझा के 'आवो पिया रम होळी खेलो' रगीलो पर्व होळी'र उणरी परम्परा तथा 'गणगौर पर्व'र-आलेखरा-कला' शकरदयाल का 'दीवाळी रा नानकिया दिवला रो सन्देस' किशनशकर पारीक का 'बीकानेर मे खेला रो लोक-दरसण' घनश्यामलाल का 'बीकानेर रो भईयो-परिवार' रामनिवास 'मयक' का 'वनडी पूज रैई गणगोर' भवरलाल नाहटा का 'आबू रा जैन मन्दिर' किशोर कल्पनाकान्त के 'लाग्यो लाग्यो मा, सावणियै रो मास, तीज त्यू हारा वावडोजी' एव 'फागण आयो रे' राहुल का 'गावा मे दीवाळी मनावरण री रिवाज' प्रतापसिंह का 'राजस्थान का सास्कृतिक आदर्श' बद्रीप्रसाद पुरोहित का 'फागण आयो रे' राधाकृष्ण वशिष्ठ का "मेवाड मे चितराम माडवा री परम्परा रो विकास' रामवल्लभ के 'पदमणी री ऐतिहासिकता' तथा 'भटोर रा पडिहार राजा' सुमेरसिंह का राजस्थान अर उण रो जीवण-दरसण' निर्मला मिश्र के 'गोरी रै बदन पर कुण मारी पिचकारीजी" आयी पना मारू पै'ल सावण री तीज तथा 'राजस्थान री लुगाया आपरो आपो सामै' जयसिंह 'नीरज' का 'राजस्थानी चितराम कला—मेवाड़ी-कलम' रामगोपाल विजय के 'चौमासे रा राजस्थानी चित्र' राजस्थानी चित्रकला, बूदी री कलम, कोटे री कलम, तथा 'राजस्थानी चित्रकला : उदयपुर री कलम' महेन्द्र भानावत के 'राजस्थान री पड चितरामकारी'

तथा 'स्रीनाथजी' मनोहर शर्मा के 'लाखनमाव' ग्रौर 'धाडवी' ग्रौर नरेन्द्र भानावत का 'पाबूजी' इत्यादि ऐतिहासिकता के पुट के साथ अवतीर्ण हुए हैं। भावुकता एव वर्णनात्मकता तो इनमे है ही। ऐसे निबन्धो मे कई अन्वेषण या शोध पर आधारित निबन्ध भी प्रकाश मे आए हैं। साहित्यिक रचनाओं, साहित्यकारो एव महत्त्वपूर्ण पुरुषो पर लिखित निबन्धो मे अगरचन्द नाहटा के 'भगत कवि पीरदान लालस' कवि लिछमण रो देवी विलास, मेहडू रिवदान री रचनावां, कवि दुरसाजी आढा री किरतार बावनी, मारवाडी भाषा रा साचा अर मोटा सेवक प रामकरण-जी आसोपा, महाराजा रायसिंघजी रो रचित रतनमाला बालावबोध, अमीर खुसरो रा ढकोसला, मातृभासा रा साचा सेवक श्रीशिवचन्द भरतिया, हस कवि रचित थली-वर्णन गीत, धरम-मूरत अर विरल विभूति—राजेन्द्र बाबू कवि बखतावर रा आठ अप्रकाशित पद, जती जयचन्द कृत माताजी री वचनिका, जोसी राय रचित पचदड री वारता, कुसलधीर अर वा री रचनावा, कवि सीधर रा मसम री रा छन्द, गजनामा ख्यात मे पृथ्वीराज तथा ईसरदास रो एक प्रसग, कवि रामदास लालस रै भीमप्रकाश मे छव ॠतु वर्णन तथा 'राजस्थानी रा माणीता'र समर्थ लेखक अर लूठा हिमायती श्रीव्यासजी' नरेन्द्र भानावत का 'करमसी रुणेचा री किसनजी री वेलि' मनोहर शर्मा का 'भूगर रा घेसला' कन्हैयालाल सहल का 'समालोचक पारीकजी' देव कोठारी का 'मेवाड रा सन्त कवि बावजी चतरसिंघजी' मुरलीधर व्यास का 'सत सेठ रामरतनजी डागा' किरण नाहटा का 'निबन्धकार श्रीब्रिजलाल बियाणी' मुनि महेन्द्रकुमार 'प्रथम' का 'जम्बू स्वामी री लूर' सत्यप्रकाश जोशी के 'नन्दकुमार सोमाणी' अमृत नाहटा, महाराजा डा० करणीसिंघजी तथा 'राजस्थानी कविता ग्रौर जोधा रो चसमो' अम्बू शर्मा के "राजस्थानी रा साचा सेवक व्यासजी" दिनूगै रा भूल्या मनोहर शर्मा पाछा वावडया तथा 'मनोहर शर्मा रो कलक इतिहास री अमरवस्तु है' कृपालसिंह का 'चीतारा रवीन्द्रनाथ' सीताराम महर्षि के 'आधुनिक राजस्थानी रा निर्माता श्रीकिशोर कल्पनाकान्त तथा 'ओळखाण श्रीश्यामसुन्दर गोयनका' कृष्णगोपाल शर्मा के 'श्रीमहर्षि रै कृतित्व'र व्यक्तित्व उपरा अतरग बत-लावण' तथा समीक्षक टी एस इलियट श्रीलाल नथमल जोशी के "मरुधर रा गिरधर' सित्तर बरसारा जवान-मुरलीधरजी व्यास, 'महाकवि भारवि' दीनदयाल ओझा के 'सेठ जमनालाल बजाज' ग्रौर 'मानीजता देशभक्त, अथक मैनती, महान त्यागी गोपालकृष्ण गोखले' गोविन्दशकर का 'लोक-कवि श्यामलाल कावरा' माधव शर्मा का 'कवि भूगर' श्रीलाल मिश्र का 'साहित्य रा सूरमा श्रीपारीकजी' किशोर कल्पनाकान्त के 'मायड भासा रा लाडला सपूत श्रीघनश्यामदास बिडला' ग्रौर 'कालीदास अर रुत-सहार' सूर्यशकर पारीक के 'राजस्थान रा एक महापुरुष' तथा 'श्रीभूगर अर उण रा घेसला' जयनारायण आसोपा का 'प रामकरण आसोपा'

लक्ष्मीकुमारी चूंडावत के 'कविराजा करणीदानजी' तथा 'तैस्सितोरी' भीमसेन का 'विश्वनाथ मध्यावकरलु' सवाईसिंह का 'मानसिंघ सलैदी रो' निजाम का 'पाव्नो पिकासो' जीवानन्द का 'डूगजी जवारजी' सौभाग्यसिंह शेखावत के 'महादान महडू रो व ह्यो भीमप्रकाश' कदर रामसिंह मीटडी रो, 'चारण कवि नादण अर गोगैजी रा छद' बी डी सुरेका का श्रीसत्यनारायण तुलसी-मानस-मन्दिर' मुरली राकावत का 'म्हारा मैमावान गुरुदेव श्रीकिशोर कल्पनाकान्त' वनमाली का 'बलराज साहनी' राजकृष्ण दूगड का 'कविया करणीदान व्यक्तित्व अर कृतित्व' सत्यनारायण स्वामी के 'श्रीशिवचन्द्र भरतिया' राजस्थानी रा तपस्वी अर समर्थ साहित्यकार व्यासजी एव 'लाखीणा मिनख हा 'मानखो' लिखणिया गिरधारीसिंहजी' उदयवीर शर्मा के 'अगरचन्द नाहटा' शेखावाटी रा एक कवि—वालजी तथा 'डा० मनोहर शर्मा' दामोदरप्रसाद का 'तुलसीदासजी' नरोत्तमदास स्वामी का 'श्रीमुरलीधर व्यास' रावत सारस्वत के 'वाकीदास री ख्यात' महादान महडू तथा 'रवीन्द्र अर राजस्थान' उदयराज के 'दलपत-विलास' तथा 'हिंगलाजदान कविया' सत्यनारायण जाजू का 'समाज रा गौरवस्वरूप श्रीमोहनलाल गट्टाणी' भैरवसिंह का 'सूजोजी चौहाण भुवासैरा' निबन्ध समय-समय पर निरन्तर राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होकर विशेष उल्लेखनीय वन पडे हैं। ढोला मारु मे मारुणी रो विरह, वरखा रुत रा लोक-गीता मे सिणगार री रमवन्ती, जैन गीता री रसधार, समीक्षक टी एस इलियट, राजस्थानी रो वेलि-साहित्य, शोभाचन्द जम्मड का 'राजस्थानी अर रगमच'' दीनदयाल ओझा का 'राजस्थानी लोकगीतो मे खनिज पदार्थ' नन्द भारद्वाज का 'राजस्थानी रै लोकगीता मे विविध कलावा रो चित्रण' मूलचन्द 'प्राणेश' के 'राजस्थानी रो युवा-सर्जन · एक झलक' 'राजस्थानी पद्य-साहित्य : परम्परा अर प्रगति' एव 'राजस्थानी री कुछ साहित्य-सेवी सस्थावा' सूर्यशकर पारीक के 'राजस्थानी झटूकला' तथा 'राजस्थानी लोक-साहित्य री ओळखाण' नाथूराम मस्कर्ता का 'राजस्थानी साहित्य अर ठाला' सुकन्या का 'गुजराती लोकगीता री रसधार' कल्याणसिंह शेखावत के 'राजस्थानी लोक साहित' और 'राजस्थानी साहित रा जूना पाना : राजस्थानी लोक साहित' गिरवरदान का 'विरहण विरखा' रावत सारस्वत के 'साहित्य मे चौमासो' 'राजस्थानी सस्कृति' तथा 'राजस्थानी रो 'सांस्कृतिक सर्वेक्षण' श्रीचन्द राय का 'राजस्थानी री उत्पत्ति' तथा मुरलीधर-व्यास का 'राजस्थानी लोकगीता मे नारी' निबन्धो मे साहित्य के किसी पक्ष विशेष का उद्घाटन हुआ है।

राजस्थानी मे विचारात्मक या विवेचनात्मक निबन्ध भी लिखे गए हैं। ऐसे निबन्धों को दो श्रेणियो मे विभक्त किया गया है—

(क) साहित्यिक विवेचनात्मक निबन्ध।

(क) साहित्येतर अन्यान्य समस्याओ से सम्बन्धित विवेचनात्मक निबन्ध।

द्वितीय प्रकार के निबन्धों में शिवचन्द्र भरतिया की राजस्थानी कृतियों की भूमिकायें, ब्रिजलाल वियाणी का 'लुगाया मे दानधर्म' धनुर्धारी का 'मूजी और स्वार्थी-विद्वान' सत्यवक्ता का 'धनवाना की लछमी' अनन्तलाल का 'समाजोन्नति का मूलमत्र' मदनगोपाल का 'मिनख-जमारो' रावत सारस्वत का 'थोथी वाता' और सुमेरसिंह का 'राजस्थान अर उण रो जीवण-दरसण' आदि रखे जा सकते हैं।

साहित्यिक विषयो पर आधारित विचारात्मक निबन्धों मे पारस अरोड़ा का 'राजस्थानी कविता मे नवबोध रा स्वर' सावलदान का 'डीगलगीत सास्तर' जिज्ञासु का 'राजस्थान री सन्त-साहित्य' गोवर्धनसिंह शेखावत का 'नूवी कविता रो मिजाज' कन्हैयालाल सहल का 'राजस्थानी लोकगीता मे बापू' गोवर्धन शर्मा के 'कविता' साहित रो रूप, साहित री रेखा, साहित अर उण रा भेद तथा साहित्य' पन्नालाल लाहोटी का 'मारवाडी समाज अर साहित्य' गणपतलाल का राजस्थान मे नाटकां रो इतिहास' मुरलीधर व्यास का 'राजस्थानी लोकगीता मे नारी' किरण नाहटा के 'सातवें दशक री राजस्थानी कहाणी' तथा 'राजस्थानी भासा री औपन्यासिक प्रवृत्तियाँ' ओंकार पारीक का 'नुई कविता रै गोखैसू' प्रेमचन्द का 'राजस्थानी काव्या मे सरद रुत' शक्तिदान कविया का 'लारला २५ वरसा मे डिंगल काव्य' कृष्ण कल्ला का 'काव्य री परख' श्रीगोपाल का 'विरखा अर बिरहणी' रतन शाह का 'राजस्थानी गद्य की एकरूपता रा कुछेक निर्णय' रामगोपाल अग्रवाल का 'विचारो गरीब हिन्दी-साहित्य' बद्रीदान का राजस्थानी गीता मे रूपक' पुरुषोत्तमलाल मेनारिया का 'मीरा मगल' कृष्णगोपाल शर्मा के 'इगलैण्ड रा काव्य नाटक एक विवेचणा' सरद काव्य रात रो उछब एक सरस आयोजण, नूवी सिरजण अर नूवो साहित्यकार तथा 'पूनर्मूषको भव' दीनदयाल ओझा के 'राजस्थानी साहित्य रो सक्राति काल' राजस्थानी काव्य-परम्परा रो ऊजळो रूप तथा 'सन्त साहित्य मे पसु-पक्षी' गोविंदशंकर का 'ढूढाडी का अवार का साहित्यकार' नन्द भारद्वाज के 'सन्त-साहित्य मे वात्सल्य भाव' राजस्थानी लोकगीता मे राईको, तथा 'राजस्थानी रै लोकगीता मे विवध कलावा रो निरूपण' मूलचन्द 'प्राणेश' के 'राजस्थानी पद्य-साहित्य परम्परा अर प्रगति' तथा 'राजस्थानी री युवा-सर्जन, एक झलक' विश्वेश्वर का राजस्थानी नुवै बोध री गंगा धारा' रामचन्द्र का 'राजस्थानी साहित्य मे हास्य अर व्यग्य' मनोहर शर्मा के 'राजस्थानी-साहित्य रो एक उपेक्षित अग बाल-साहित्य' साहित्य-जीवी, पारिवाद, राजस्थानी साहित्य री एक झाकी, राजस्थानी री नाटक-साहित्य, राजस्थानी साहित्य रो महत्त्व तथा 'राजस्थानी रा लोकगीत' सूर्यशकर पारीक के 'राजस्थानी में व्यग्य' राजस्थानी साहित्य माय नूवा प्रयोग तथा 'राजस्थानी लोक-साहित्य री ओळखाण' लक्ष्मीकुमारी चूडावत के ''दूहा री करामात' तथा 'राजस्थानी री

महत्व' सरक्षता का राजस्थानी साहित्यकार अर ठाला' भूपतिराम का 'साहित्य री मूल प्रेरणाओं एक विवेचन' मूलचन्द का 'राजस्थानी रा उपन्यास' सुकन्या का 'गुजराती लोकगीता री रसधार' श्याम महर्षि का राजस्थानी साहित्य माय चुरू जिले रो योगदान' जोरावरसिह का 'राजस्थानी काव्य माय दीवाळी री झिलमिल' कल्याणसिंह शेखावत का 'राजस्थानी गद्य री एक झळकतो नमूनो' दामोदरप्रसाद के 'संस्कृत-साहित्य री सिक्षा अर राजस्थानी साहित्य' 'कनक सुन्दर री नवल कथा' नरोत्तमदास स्वामी के 'अणोरणीयान् महतो महीयान्' तथा 'साहित्य रो प्रयोजन' रावत सारस्वत के 'आज रा कवि' 'पंजाबी साहित रो इतिहास एक जाणकारी' दूहा री दुनिया, साहित्य मे चौमासो नई पीढी रै साहित्यिका सू तथा 'जैन गीता री रसधार' वेद व्यास का '१९७३ रो राजस्थानी साहित्य' तथा अगरचन्द नाहटा का 'राजस्थानी साहित्य अर जैन-साहित्य' इत्यादि उत्कृष्ट कोटि के निबन्ध है। साहित्यिक विषयो पर आधारित भूमिकाओ तथा सम्पादकीयो के रूप मे प्रकाशित गरापतिचन्द्र भण्डारी का 'राजस्थानी एकाकी' किशोर कल्पनाकान्त का 'ओळमो का कविता अक' रावत सारस्वत का 'आज रा कवि' मूलचन्द 'प्राणेश' के 'जळमभोम के प्रतिनिधि कथाकार' तथा 'प्रतिनिधि कवि अक' और तेजसिंह जोधा का 'राजस्थानी एक' इत्यादि समीक्षात्मक निबन्ध भी विशेष श्लाघ्य रहे है।

व्यग्य और हास्य-मूलक निबन्धो की भी राजस्थानी मे कमी नही रही है, भले ही उनमे उच्च कोटि के व्यग्य एव हास्य की कमी रही हो। ऐसे निबन्धो मे कावेरीकान्त का 'मादगी सू फायदा' धनुर्धारी का 'वस म्हाने स्वराज्य होणो' मनोहर शर्मा के सग्रहों' के अधिकाश निवन्ध, वैजनाथ पवार का निबन्ध-सग्रह,[2] कृष्णगोपाल शर्मा के 'ऐनक' चोळो, आरजू-पुराण, उतरयोडा घडा, वाई-घड्डा तथा 'राजस्थानी भाषा साहित्य सगम' कितरो वेमानी, कितरी खोखली चिन्तणा रो एक थोप्योडो अजूबो' मिश्रीलाल का 'आपा काई खावा हा' श्रीलाल नथमल जोशी के 'साच बोल्या किया पार पडै' 'आवा मू घा कीया हुग्या' तथा 'चिडया, कबूतर, कागला' कान्तिचन्द्र का 'म्हारी मजूर हुई थीसिस' बुद्धिप्रकाश पारीक का 'पेट्ट' देसळाई और नाक' सूर्यनारायण का 'विनोद मिल्स अनलिमिटेड' सीताराम पारीक का 'पिरजातन्तर की भेडा' मस्कत्ता का 'सूई रो इलाज' रामदेव का 'वकरे को झटको' आनन्दकरण के 'बूढा वीद अर टावर वीनणिया' तथा 'लोग दाढी क्यू राखै' कृष्ण कल्पित का 'धोळा अर काळा मिनख' चन्द्रशेखर का 'नेता अर गळत काम' सौभाग्यसिंह के 'चिरणो' 'न्यू तो' तथा 'माया मोगी जोगी लाडूनाथ' श्याम

1 'रोहिडै रा, फूल' 'फूला माळगा' प्रथम पुस्तक-रूप मे तथा द्वितीय 'वरदा' त्रैमासिक पत्रिका मे प्रकाशित।

2. अकल विना ऊट उभाणो : राजस्थानी सस्कृति परिषद्, जयपुर।

महर्षि का 'दोय किरोड जणां री वाणी गज-निजर में मूक' राधाकृष्ण शर्मा का 'एम्प्लायमेंट' विमल रानी का 'भूत पलीता री वारता जिस्यो राजस्थानी म हिन्द अकादमी रो युग' गोविन्द अग्रवाल का 'सुनार अर मोनो' दामोदरप्रसाद का 'काळा चसमो' अशोककुमार का 'मिनख ई जिनावर है' सुबोधकुमार का 'जिण विण नै समझाइए कुवै ई भाग पडी' मोहन आलोक का 'मत्रीजी भासण करै हा मोहन-दान चारण का 'फगडा' शिवशकर का 'मिनी स्कर्ट दुनिया नागी व्है है' कस्तूर का 'आवो नागा हो जावा' किशोर कल्पनाकान्त के 'भींटियो पूगो भेंट कर लीनी याह्या सू भेंट' भीटियो बगला देस माय मुगलीवाहणी रै सारी रळ'र जूझ रैयो है, चाल म्हारी डामकी डमाकडम, एक नासमझ बादरी एक जीवतो जागतो ऐनाण, मानखै रो बलि, अधरबम लटकीजगोडै लोकतन्त्र रा चुनाव, अनेक रूप-रूपाळा भीटियो है भीटियो, आवला रै देस हाथी आयो है साथ, राजस्थानी सगम बनाम एक और वाटरगेट काड, साप सीढी से खेल मगम मार भीटयै रा भीटा अन्नन्मैनू ऊभा होयग्या, अै उणियारा अर सुभाव किण सू मेल खावै, 'भीड भीड, भीड, मिलावट .. नकलीपणो' निक्सन, चाबू-माबू अर भुट्टो सू भेंटा, कर्मठ र कर्म ठोक रै बीचलो आतरो भीटियो अर काकभुसुण्ड आयग्या है, ई भुवै रै कारणै भतीजा रैग्या नागा, भीटियागम जिन्दावाद, भीटियो एक जोग'र मानीतो उमेदवार, भीटियै री दिल्ली-जातरा चुनावा रा लडाक सुखाडियाजी अर भीटियो साहित्य अकादमी'र भीटियो 'नक्सलपथी भीटियो दामोदरजी व्यास' तथा 'सिरकारी घाटैवाजी टूवडी रो नाळ' सूर्यशकर पारीक के 'धोल बतळावणा' राजस्थानी साहित्य मा ऐ नूवा प्रयोग' तथा 'न्यारा न्यारा सुभाव नै न्यारी न्यारी वानगी' जगदीशचन्द्र शर्मा के 'राजस्थानी री छाती उपरा पळतो पाखड · राजस्थान साहित्य अकादमी' चाल म्हारी डामकी डमाकडम, धान मागणो आज म्हारी विदेस-नीति बणगी है तथा 'गोनिया रै तहलकै तलै रू धीजतो लोकतन्त्र' रामगोपाल गोयल का 'माजणो मारेडी लुगाया अर उण रा बदळा' नागराज शर्मा के 'ऐ शेखावाटी रा बीटनिक' तथा बीनणी, हांमी, खांमी अर उबासी' जुगल परिहार का 'नूवा मोरिया' गोवर्धन हेडाऊ के दो दो हाथ गरीबी सू' तथा 'उतर भीखा म्हारी बारी' के शीर्षक से युक्त अनेक निबन्ध जैसे मोडा री माल मसखरा खाय, एक मेहतर री माग, कचरो-कबाडी-कल्चर, अम्बू शर्मा के 'लाल किलै री या धरती आज पैलीपोत चन्दन अर कपूर बणी' तथा 'केन्द्रीय साहित्य अकादमी रै नासमझ निर्णय री मत्र-परीक्षा' विजयदान देथा का 'नकटा देव नै सुरडा पुजारी' निर्मला मिश्र का 'गाधीजी फंसग्या' रामेश्वर टाटिया के 'कान्ति नै झालो देवती अमीरी' 'आ भूख अर आ अय्यासी' 'अंगरेज गया पण अंग्रेजी को गई नीं तथा अै विदेशी पूतळा' इत्यादि निबन्ध स्तुत्य रहे हैं।

भावप्रधान शैली मे लिखित ललित निबन्ध राजस्थानी में बहुतायत से मिलते है। इनमे अधिकाश निबन्धकारों ने वर्णन एव आत्मनिवेदनात्मक शैलियो को ही अपनाया है। ऐसे निबन्धों मे लेखक स्वय श्रोता का स्थान ग्रहण करता है अधिकाश निबन्धो की भाषा भी सहज रूप से सस्कृतनिष्ठ हो गई है। राजस्थानी निबन्धकारो ने विज्ञान, इतिहास, कहावतो एव पद्याशो पर आधारित तो कुछ निबन्ध लिखे ही है साथ ही ये अपनी मातृभाषा के मोह से भी परे नही हटते हुए शताधिक निबन्ध पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से प्रकाश मे ले आए हैं। कई निबन्धकार बालोपयोगी निबन्धो को भी विस्मृत नहीं कर पाए है।

बालोपयोगी तथा पद्याशो-कहावतो आदि पर आधारित निबन्धो मे कमला का 'जिकरी करू चाकरी वी री भरू हाजरी' श्रीकृष्ण धूत का 'सालो साल दीवाळी आवै नई नई उमंगा लावै' किशोर कल्पनाकान्त के 'ई मूवा रै कारण भतीजा रैग्या नागा' 'नानी बाई रै मायेरै री ठाकुरजी नै लाज' तथा 'बाबो मरग्यो टीमली जाई गैया तीन रा तीन, प्रिवीपर्स खुस्या राजां रो, हुया दीन वे दीन' नेजाराम का 'अरे! वाह रे!! मतीरा!!!' बद्रीप्रसाद पुरोहित का 'बिरछ-लगाव तक आमणे बादळी भरू भूखी मन जाय' बैजनाथ का 'नीप्यो पोत्यो आगणो पैगी ओछी नार' सवाईसिंह का 'गरमावै तन गूदडा का पाणी का पीव' भौरी देवी पारीक का 'गोर गोर गणपति ईसर पूजै पारवती' लालचन्द का 'मुह मे राम बगल मे छूरी, कितरा दिन रैसी आ दूरी' पुष्पलता का 'मैं मानखै रै मायली आवाज बणणो चाहू हू' विवेकज्योति का 'देसान्तरो' अरुणकुमार का 'सूली ऊपर सेज पिया की' सत्यभामा का 'दोपै उगणो देस जिण रो साहित जगमगै' जोगवर्सिह का 'कथा मती चुकावज्यो तीज्या तणो तिवार' तथा शारदा का 'टावरा रा साथी' इत्यादि निबन्ध राजस्थानी के स्वातन्त्र्योत्तर-युगीन निबन्ध-साहित्य को देदीप्यमान करने वाले है।

राजस्थानी निबन्धकार चाहे वे प्रवासी राजस्थानी रहे हो या अपनी ही मातृभूमि के दर्शन कर स्वय को सौभाग्यशाली बनाते हुए इस मरुधरा पर ही जन्म से अद्यावधि तक रहे हो, अपनी मातृभाषा के मोह का त्याग करने मे असमर्थ रहे हैं। अपनी ही भाषा के असीम मोह ने काल के अन्तराल मे प्रविष्ट राजस्थानी भाषा के इसी विषय मे सम्बन्धित निबन्धो का अखण्ड भण्डार भरने मे कोई कसर नही उठा रखी है। समय-समय पर केन्द्र-सरकार से अपनी मातृभाषा हेतु सघर्ष करते हुए अन्ततोगत्वा इसके सिर साहित्यिकता का किरीट रख कर ही छोडा—यह कोई कम महत्त्वपूर्ण बात नही है। इसी के फलस्वरूप स्वातन्त्र्योत्तर-युग के प्रारम्भ से ही राजस्थानी भाषा से सम्बन्धित अनेक निबन्ध पत्र-पत्रिकाओ मे फूट पडे। केन्द्र सरकार से राजस्थानी भाषा को साहि-

[62]
त्यिक भाषा स्वीकार कराने का मुख्य श्रेय तो केन्द्र में सर्वप्रथम इस भाषा को मान्यता दिलाने की सुदृढ़ माग करने वाले सासद, बीकानेर के महाराजा करणीसिंह तथा लक्ष्मीकुमारी चूडावत को है। तदनन्तर इस भाषा के साहित्य को पुष्ट करने वाले राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादको तथा विविध साहित्यकारो को है। इस प्रसग से सम्बन्धित निबन्धो या लेखो मे शक्तिदान कविया का 'मातभाषा मे शिक्षा अर राजस्थानी' केशव पथिक का 'राजस्थानी री नुवी पीढी नै जागणो पडसी' अमोलकचन्द का 'स्वतन्त्रता री रजत-जयती अर मायड भासा री हेलो' लक्ष्मीनारायण का 'राजस्थानी साहित्यकारा नै हेलो, परिस्थितया नै समभणा री दरकार है' सीताराम का 'राजस्थान अर राजस्थानी भासा', अनिल सर्राफ का 'राजस्थान रा चुनाव लडणिया नै अर वोटरा नै एक नौजुवान रो हेलो' पन्नालाल बारूपाल का 'अग्रेजी ......? हिन्दी ... ! राजस्थानी ... !!' रामनाथ व्यास 'परिकर' के 'राजस्थानी री मानता रो सवाल', तथा विनोबाजी सू राजस्थानी चर्चा' गुलाबचन्द का 'मारवाडी भाषा अर लिपि' देवेन्द्रसिंह का 'राजस्थानी ही राजस्थान री मायड भासा है—सेवा पैला करा' सौभाग्यसिंह का 'राजस्थानी अर राजस्थानी' मुरली राकावत का 'राजधानी दिल्ली माय पैलो राजस्थानी कवि-सम्मेलण' श्रीमन्तकुमार का 'थारी मातरी भासा नै ऊची उठावो' मदनसिंह देवडा का 'राजस्थानी साहित्य अर कला री सोध री कीरत ठाण राजस्थानी सोध सस्थान, जोधपुर' कल्याणसिंह शेखावत का 'राजस्थानी साहित्य-सम्मेलन रा काम-काज' पुष्पा केडिया का 'मायड भासा जीवण री जोत' विमला माहेश्वरी का 'मावा नै मायड भासा रा काम माय जीव-ज्यान सू लाग ज्यावणो चायै' दामोदरप्रसाद का 'मायड भाषा राजस्थानी री भणाई' नरसिंह राजपुरोहित के 'राजस्थानी री जूनी पीढी बनाम नवी पीढी' तथा 'राजस्थानी रा सुळगता सवाल' रावत सारस्वत के 'राजस्थानी री तीन जरूरता' 'राजस्थानी नै बचाओ' 'राजस्थानी री माग—नई पीढी नयो खून' राजस्थानी रै नाव पर' एव 'मातभासा रो गुमेज' भवानीशकर का राजस्थानी रा हिमायतिया सू' अगरचन्द नाहटा के 'राजस्थानी भासा की एकरूपता' 'प्रवासी भाया री मातर भासा सेवा' तथा राजस्थानी भासा री मान्यता अर मातृभासा-प्रेमिया रो कर्त्तव्य' पुरुषोत्तम छगाणी का 'राजस्थानी भासा एक विचार' श्रीलाल नथमल जोशी के 'मायड भासा राजस्थानी' तथा 'राजस्थानी री एक पोथी खरीदो' दीनदयाल ओझा का 'राजस्थानी साहित्य रो पाठक अर लेखक रो दायित्व' नन्द भारद्वाज का 'एकरूपता री अबखाई' दीपक का 'राजस्थानी बनाम हिन्दुस्तानी' गोविन्दनारायण का 'मारवाडी रो भविष्य चोखो है' मूलचन्द 'प्राणेश' का 'आपणी बात' बालकृष्ण लाहोटी का 'मर कर भी राजस्थानी री रक्षा करो' भवरलाल नाहटा का 'राजस्थानी' किशोर कल्पनाकान्त के 'सामरथ विहूणा पूता री सामरथवान मायड भासा' 'राजस्थानी स

हितु-हिमायत्या रै नाव हेलो' 'लोकसभा माय डा. करणीसिह अर राजस्थानी' 'राजस्थानी भासा साहित्य सगम री थरपणा' 'घर, समाज'र कक्षा री भासा एक होवणी च ईजै' 'राजस्थानी रा हिमायती श्रीनथमल लोढा' 'राजस्थान रा साहित्य-कार आपरै आत्मगौरव नै ओळखै' 'राजस्थान री लोकभासा सागै एक घटिया'र बेहदा मजाक' 'हवा रो रुख अर ऊघता साहित्यकार' 'चक्रव्यूह रा नुवा पैतरा रा प्रहार राजस्थानी नै मटियामेट करण रा छळ नै ओळखो' 'आकासवाणी उपरा राजस्थानी री दुरगत' 'राजस्थानी रो उद्देश्य आपाधापी माय गमग्यो चौरटा सू छुडावो' 'जनगणना अर राजस्थानी' 'राजस्थान रा साहित्यकारा नै जुगबोध तो जुगबोध ! निजबोध भी कद होसी' 'तस्करी साहित्यकारा नै दकाल' 'आकास-वाणी अर साहित्यकार' 'दोय करोड लोगा री कठवाणी मायड भासा रै आन्दोलण नै सूर्य बणावो तथा 'मायड भासा राजस्थानी' सूर्यशकर पारीक के 'राजस्थानी तथा 'राजस्थानी भासा हिन्दी सू न्यारी' जयनारायण आसोपा का 'राजस्थानी भासा अर बी रो स्थान' लक्ष्मीकुमारी चूडावत के 'तीन करोड पूतां री मां—राजस्थानी भासा' 'राजस्थानी रो महत्त्व' तथा 'राजस्थानी री मानता अर साहित री महत्व' जगदीशचन्द्र शर्मा के 'भासा ! समस्या ? समाधान !' राजस्थानी भासा री जुभारू पूतां नै हेलो' 'राजस्थानी भासा—राजनीति . रणनीति' 'विनती नी, वल बपराया राजस्थानी भासा आपरी सागी ठौड विराजसी' 'राजस्थानी भासा री मानीजना ताई बधो' 'राजस्थानी भासा रो आगै बधतो आन्दोलण' 'राजस्थानी रै नाव ऊपरा ब्रडपण पावणिया नै' 'किणी प्रदेस रो लोकतत्र अर विकास उण प्रदेस री भासा अर सास्कृतिक धरोड रै पाण बध सकै' 'राजस्थानी सू टव्ठ'र किणी दूजी भासा माय राज चलावणो लोकतत्र सू टव्ठो है' 'राज-स्थानी भासा री साहित्यिक मानता रो जिको प्रस्ताव हो, वो एक मरचोडो कागद हो' 'राजस्थानी भासा भावना री बात नी पण एक चावती दरकार है' तथा 'राजस्थानी नै दुकारणिया राष्ट्र रै चिरत रो हनन करण रा दोसी है' दिनेश मित्र का 'हेलो राजस्थानियां रै नाव' पारस अरोडा का-'राज-स्थानी भासा : टेढा सवाला रा सीधा उत्तर' राजेन्द्रशकर का 'कलकत्ते रा राजस्थानिया नै आप री सस्कृति सम्हाली राखणी चायै' वेंकटलाल का 'मारवाडी भासा रो प्रथम छापो' कमला वर्मा का 'भापा मे आम बोलचाल रा सबद वापरो' गणपति स्वामी का 'पारीकजी री राजस्थानी सम्बन्धी योजना' गजानन वर्मा का 'आकासवाणी री भासा नीति अर राजस्थानी' रेवतदान चारण का 'राजस्थानी साहित्यकारां नै चुनोती' बी. आर प्रजापति का 'राजसरकार रो रवैयो' कन्हैयालाल सहल के 'राजस्थानी भासा पर श्रीमेघाणीजी रा विचार' तथा 'राजस्थानी स्वतत्र भासा है' प्रेमजी 'प्रेम' का 'राजस्थानी साहित्यकार सम्मेलण' पन्नालाल लाहोटी

का 'मारवाडी समाज अर साहित्य' बदरीप्रसाद साकरिया का 'मायड़ भासा री उपेक्षा' जगदीशसिंह का 'आपा री राजस्थानी भासा' ओंकार पारीक के 'राजस्थानी भासा री मान्यता रो आन्दोलण : अधार पख . चानण पख' तथा 'राजस्थानी भाषा खतरे माय' शिवस्वरूप शर्मा का 'राजस्थानी भाषा को परिचय-मित्र' वि ो - कुमार का 'राजस्थानी भाषा रो सुवाल' शक्तिदान कविया का 'मातभासा में सिक्षा अर राजस्थानी' सत्यप्रकाश जोशी के 'राजस्थानी रो नयो आदमी' 'राजस्थान साहित्य अकादमी अर उणरा प्रकाशित कियोड़ा राजस्थानी ग्रथ' तथा 'राजस्थानी में बधता सभावना रा खितिज' रतनशाह के 'मातृ भासा अर राष्ट्रभासा' और 'राजस्थानी गद्य री एकरूपता रा कुन्द्रेक निर्णय' अम्बू शर्मा के 'आन्दोलन अर सृजन' 'आगलै दस बरस मे कलकत्तै माय राजस्थानी भासा रो 'र' भी ल्हाधै नीं' 'राजस्थानी प्रचारिणी सभा' और 'राजस्थानी अर मारवाडी छात्र' कृष्णगोपाल शर्मा के 'ओळखाण . लेखण आन्दोलण' तथा 'नुवी सिरजणा अर नुवो साहित्यकार' निर्मला मिश्र का 'आतमघाती विरती कानी आगू च राजस्थानी साहित्यकार' मनोहर शर्मा का 'एकरूपता रो सवाल उठाणिये लोगा नै राजस्थानी भासा री जरा सी भी जाणकारी कोनी' इत्यादि निबन्ध प्रशसा के योग्य बन पड़े हैं। इस क्षेत्र में 'ओळमो' तथा 'हेलो' के सम्पादक किशोर कल्पनाकान्त तथा जगदीशचन्द्र शर्मा विशेष साधुवाद तथा सराहना के पात्र है। इनके अतिरिक्त सूर्यशकर पारीक, लक्ष्मीकुमारी चूडावत, श्रीलाल नथमल जोशी, मनोहर शर्मा, कन्हैयालाल सहल तथा 'मरुवाणी' के सम्पादक रावत सारस्वत का भी अपूर्व सहयोग रहा है।

राजस्थानी निबन्ध-साहित्य की भित्ति को पुष्ट करने में विशेषत राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ—मरुवाणी, ओळमो, हेलो, हरावळ, जळमभोम, लाडेसर, कुरजा, जागती जोत, मारवाडी, ईसरलाट, चामल, मूमल, दीठ, और राष्ट्रपूजा तथा राजस्थानी भाषा के दिग्गज - साहित्यकारो—किशोर कल्पनाकान्त, जगदीशचन्द्र शर्मा, रावत सारस्वत, सत्यप्रकाश जोशी, अम्बू शर्मा, रतन शाह, सूर्यशकर पारीक, श्रीलाल नथमल जोशी, कृष्णगोपाल शर्मा, रामेश्वर टाटिया, सौभाग्यसिंह, अगरचन्द नाहटा, दामोदरप्रसाद, हरमन चौहान, दीनदयाल ओझा, कन्हैयालाल सहल, लक्ष्मीकुमारी चूडावत तथा नन्द भारद्वाज का असीमित एव अपार सहयोग रहा है। राजस्थानी की निबन्ध-विधा का पत्र-पत्रिकाओ में उद्गम हुआ और इन्ही से प्रस्फुट एव विकास की सीढियो से गुजरती हुई प्रगति के शिखर पर पहुची। न केवल निबन्ध-विधा के क्षेत्र मे ही अपितु राजस्थानी-साहित्य की लगभग सभी विधाओ के क्षेत्र मे भी नि स्वार्थ, त्यागी एव राजस्थानी के सच्चे सेवक किशोर कल्पनाकान्त ने अपने पत्र 'ओळमो' के माध्यम से बहुत कुछ कार्य किया अत ये भूरि-भूरि प्रशसा के पात्र हैं।

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से राजनीति, विज्ञान, इतिहास, व्यक्ति विशेष एव अन्यान्य विषयो पर आधारित कई वर्णनात्मक एव विचारात्मक निबन्ध या लेख राजस्थानी के प्रिय पाठको के समक्ष प्रकट हुए है जिनमें मुख्यत श्रीनन्दन का 'अखियाली कोट' डाकू मोहरसिंह का न्याय नी मिलै' पचां सूं जग्गा धाडवी नीं बणा तो के करा' दीनदयाल ओझा का नुवै भारत रा निर्माता लोकमान्य तिलक' शोभालाल का 'भील नेता' श्रीतेजावत' शकरलाल का 'त्रिया रो सांचलो स्वरूप' पूर्णानन्द का 'खेती खड़िया रो त्यूंहार' भवरलाल सुथार का 'पुराणी पीढ़ी रो मोह' ओमप्रकाश का 'अनोखा विद्व न बणावणिया कलाकार—मालचद' लता का 'किशे-रसानि' रामचद्र वोडा के रै मानखा !' तथा 'हाथिडो सुणजो बीनती साभल लो थारी' छत्रपतिसिंह का नुवी आस्थावा नुवा दीठीकोण' अमोलकचन्द के कुचरणी' 'गळचट' एव ताजमहल' बैजनाथ का "लुगायां अर गाधीजी" शिवदानसिंह के 'राजस्थानी जनता रा भावी वारिस' तथा 'भारतीय भासावा री मेळप हरिमोहन का 'मिनख ई मोसम मे नीका कैया रहे मकै छै लक्ष्मीनारायण का 'लोकतात्रिक विकन्द्रीकरण री संभावनावा' सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या का 'राजकवरी सोगी ही' दौलतराम सारण का 'केवट्यो किराणो है' व्रजनारायण पुरोहित का 'गवाई' 'रामचरण का 'सुतन्तर भारत खातर नुवा त्यू वार, जुगलसिंह खीची के 'सवाल ऐकू है पण जबाव दो' तथा 'लन्दन रै एक कालेज में पैलो दिन अर पैलो गुरू' जगदीश चतुर्वेदी के 'जुग-पूत म्हे' तथा 'पत्रकारिता अर मेरी की माननावा' गीडाराम का 'म्हारो सास्कृतिक ह्रास' नानूराम सस्कर्त्ता का 'राजस्थानी गांवा सूं नावा : एक जूनी त्योलो' जगरामसिंह का राजस्थान अर फिल्मी ससार' प्रकाश परिमल के 'आतमा री खेप' 'आख सम्बन्धी राजस्थानी मुहावरा' तथा 'ज्योति-द-किंग' भूपतिराम साकरिया का 'राजस्थान रो भीष्म' मूलचन्द सेठिया का 'अगनपरीक्षा' पन्नालाल बारूपाल का 'सामाजिक पचायता नै उणरी न्याय-प्रद्धति अर अबार री न्याय-व्यवस्था' मूरचन्द का 'सीमाडै रा उद्योग-धन्धा' आशा विद्यालकार के 'आज रो जुग · भारत री नारी' तथा 'मावा नै सिक्षा विभाग माय अरज्या लिखणी चायै' मोहनलाल 'मयक' का 'स्थितप्रज्ञ हाळा पुरस रा लक्षण' त्रिलोकसिंह का 'गवाळा महरा खानी क्यू भागै' ओंकारलाल का 'सैक्स-सैक्स—सैक्स' परसराम पारीक का 'कोड रो रोग · रोकथाम रा उपाय' 'रामनाथ 'परिकर' के 'जनता बनाम राजनीति बनाम साहित्य' 'मास्को नगर रा सात अचभा' तथा 'भारतीय एकता रा सूत्र' रमेशचन्द्र का 'ओळमो बापू रो' गणेश्वरानन्द का 'वेद समूंची मिनखाजू णरै कल्याण मारू आद्र ग्रथ है' जयदयाल डालमिया के 'धरम अर संस्कृति : नुवी पुराणी निजर' तथा 'मिनख रो सत्पोत रो अर सुमा-विक ग्राह्य' रामनारायण का 'तीन खेमा चौरासी मूंटा' जहूर ला के 'मोहर्रम'

'चौखड' 'हथाई' 'राजस्थान रै इतिहास मांयं भूगोल रो अगर' और मारवाड़ी री प्राचीनता' विमल भण्डारी क 'हर दो सेकड मे एक टाबर' गिरधरलाल शास्त्री का 'ओळमो' कृष्ण कल्पित के 'चमण री कला रो कारीगर' तथा 'फ्रस्ट्रेशन सू ऊथोडा जिनगानी रा दो छिण' जीवानन्द के 'भारतीय लोकराज रै निरमाण माय मतदाता रो जोगदान' तथा 'वेदा माय सिस्टी रो ऊपना रो वखाण' आदिल भगत का 'उघाडं जीव री अरथशास्त्र पवन सहगल का 'कोकाकोला' लाभचन्द का 'स्वराज्य रै दरपण माय राज' र समाज' सौभाग्यसिंह का 'वर्तमान भारत री लोकदेवी सू क' हरिकृष्ण का लोक-निरत' श्रीमन्तकुमार का 'मजब री ओट मे राजनीति खेलणी चोखी कोयनी' रामनारायण का करसै री मीणत नुवो सिरजण रो ऊदो' दीनानाथ का वखत' मोहनलाल पुरोहित का 'भारतीय अतिथि-सत्कार—मधुपर्क, एक ओळखाण' अरविन्दकुमार का 'बाल-साहित्य अर अन्तरराष्ट्रीय संयोग' भूरसिंह का 'आपणै राजकाज री बाता' जगदीशसिंह का 'जळमभोम' राजेन्द्रशकर का 'राजस्थान दिवस नुवै सकल्प रो दिन' मदनसिंह देवडा के 'दादीजी राणी सती' 'सगती री साधना रो परव नौरतो' और 'राठोडा री पुराणी राजधानी खेरपुर' राधाकृष्ण शर्मा के' सगम रै लेखै मिनखपणै रो मोल' 'जाति री बाता' 'माट्रियल मे ओलम्पिक' तथा 'तीजो महायुद्ध अर भारत' नन्दकिशोर का जी मजूर अर मालक' किरणदेवी का 'जच्चा रो जीमण' सत्यदेव का मायता री मायती' कल्याणसिंह शेखावत के 'नोबेल इनाम' अरब-इजराइल झगडो', 'लुगाया री दुनियो' खेल रो खेल तमासा रो तमासो' तथा 'अमरीका रो सातवो बेडो आखिर केडो' स्नेहलता का 'मावा मांय चेतणा री दरकार' सुरेश चक्रवर्ती का 'बगाल रा ग्राम-गीत' आनन्दसिंह कछवाहा का गरीबा रै रैवास री समस्या' उदयवीर शर्मा के 'मीठा सपना खारा गीत' तथा 'काळी बगा' जगन्नाथ विश्व का 'मालवै री धरती रा टाबर गावै' गिरवरदान का 'बिरहण बिरखा' मुनि रतन-विजय का 'पाप री मूळ आतमवचना' के एम पनिकर का 'राज री सगती सुखी पिरजा' छोटूसिंह का 'चपादे भटियाणी' विजयनारायण का 'अठेई सुरग अठेई नरक' हरमन चौहान के 'मधुकर राजस्थानी . कलम सूं खापणताई' 'जोधपुर एक रूखोडो सहर !' 'नकली हेमा असली हेमलता' 'कित्तो प्यार झेल सकै एक आदमी' राजस्थान साहित्य अकादमी' कुश्ती मे आज भी म्हारी ललकार है। चदगीराम' 'प्रवीणकुमार' और 'मन बावळो है म्हारो तो' 'दामोदरप्रसाद के 'चड चाल्यो राव रूणीचै रो' 'सस्कृत-साहित्य री सिक्षा अर राजस्थानी साहित्य' 'मारवाडी समाज' और 'इतिहास रो ओ अध्याय भावी पीढी री समझ मे स्यायद ई आवै' विनोद सोमानी के 'दायजे री रीत' तथा 'लीजै सुगन विचार' जगदीशचन्द्र मागाल का 'तृण' अरुणकुमार का 'कामणगारो बुढापो' नरपतसिंह का 'रेगिस्तान मे खेती रो विकास' सूरज खण्डेलवाल का 'बीटल वलाय'

विनोदकुमार अग्रवाल का राजस्थान रा खामची कारीगरा री हाथकला री जादू' अमोलक गाधी का 'परम गै सुख' मधु कावरा का 'फिल्मां री पिछोकड़ गायक सुरेश राजवसी' अवरनाथ का 'दुख वटावण री कला' गोपालसिंह का 'जानवरां री प्रीत रामगज का 'नया सिनेमा री दो दिसावा' नन्दलाल का 'अगूतो लेखन अर आफरो' नरेन्द्र भानावत का 'घणो हेत टूटण नै' महेन्द्र भानावत का 'जैपुरी रगत रा ख्य ल' तथा पागडी' तेजसिंह जोधा का 'वीकानेर मे प्रौढ सिक्सा रौ काम : नु वौ सकळप' निर्मल कोठारी का महान लोगा री सही वटोवणी' भगवतसिंह का 'माया री कमेडी' मातादीन गोयल का 'विहार प्रान्तीय मारवाडी सम्मेलन' अन्ना-राम सुदामा' का 'सह-अस्तित्व' विश्वेश्वर शर्मा का 'लिछमी-पूजन-विधि' रतन-लाल मिश्र का 'रोहिडो मरुधर रौ गिरधर' श्रीकृष्ण अग्रवाल का 'जापान अर अगूणा देस ' एक अनुभव' दुर्गादत्त के 'वाइस्कोप' तथा 'पढणै रा रसिया' अजीत-सिंह का 'पाकिस्तान अर भारत गी हवाई ताकत' रामदत्त साकृत्य का 'सुरसती' एस पी. माथुर का व्लैक सितम्वर' जानकीनारायण का 'रेगिस्तान री जातरावा' भगवानदत्त के 'पढणो अर पढ़ाणो' 'देस भगत रो वलिदान' तथा 'गैंडो . एक भारतीय साधारण पसु' रावत सारस्वत के 'मार्क ट्वेन री भारत यात्र' 'सूरजकरण पारीक जयन्ती' 'लेखकां री पाठसाला' 'लाखपसाव रा पात्र—मळयाली कविजी शकर कुरुप्पु' 'तारो टूट्यो' 'नवी पीढी ' नवो खून' 'मरदा मे मरद' 'प्रकासण धधो अर सेवा' 'रवीन्द्रजयन्ती' 'राष्ट्र भासा रो झगडो' 'काम थोडो रोळो घणो' मरुवाणी रै नए वरस री नई योजना' 'आज रा कवि' 'राजस्थान मे पुरातत्व री खोज' 'नाग पाचै' एवं 'यो मे वाच श्रेष्ठा जिघासति' वेद व्यास का 'साहित्य मे १९६१ रो नोवल पुरस्कार' गिरिराज भवर का 'रूप-अरूप' मोहनलाल गुप्त के 'चित्रकला री मुगल कलम' और 'खडहरा री गोद में—नीलकठ' हणूतसिंह देवडा का 'राजस्थानी साहित्य रा मांझी' रेवाशकर का 'नागरिक सजगता' अगरचन्द नाहटा के 'विजै विलास री अधूरी प्रति' 'दीवाळी रो एक प्रसिद्ध लोकगीत' 'दीपावळी रो एक प्रसिद्ध जैन भजन' 'दीवो परतख देवता' 'अखलाक अळमी हसनी रो राजस्थानी अनुवाद' 'पचाख्यान रो राजस्थानी अनुवाद' 'पचाध्यायी रो राजस्थानी अनुवाद' 'रामजळम' 'किसन जळम अर वाल क्रीडा' तथा 'स्वतन्त्रता'र वर्तमान भारत' पुरुषोत्तम छगाणी का 'फैरामोन्स . सकेत देवणियौ पदार्थ' कौशलकिशोर का 'गैरो फूल गुलाव को जी' श्रीलाल नथमल जोशी के 'मौत' वड रो पेड' 'अळगै सू : नेडै सू : विवेक सू' 'लगन' और 'भगवान री लीला' धनश्यामलाल जोशी का' आत्मा की पुकार' भास्कर का 'ससम : जाळ जजाळ सू डरपेडो' दीनदयाल ओझा के 'झीमा चारणी' 'राजस्थानी प्राचीन काव्य परम्परा री ऊजळी रूप' 'पिरथी परमेसर री सारी' 'सतां री खेती' और 'ओळखाण' नन्द भारद्वाज के 'संक्रमण री

दौर अर सूर्यकरण पारीक' 'सीमाड़ै रो जीवरण' और 'बुनियादी बदळाव रै हक मे' गायत्री का 'लुगाई री जूण' प्रभा का 'लुगाई मोट्यार सू कमती कोनी' अक्षयचन्द्र शर्मा का 'राजस्थान रा किरचा कोनी होणद्या' अमीचन्द का 'बापू अर उण रा पूत' राजेन्द्रप्रसाद का 'आकाश मे आपणो पाडोसी —मगळ ग्रह' सुमेरसिह चौहान का 'अणु विस्फोट पोकरण मे पळको' नारायणसिंह भाटी का 'गढ मयूरध्वज' विश्वम्भरप्रसाद का 'जीवती देवळ्या' जगदीश माथुर के 'नदिया तर आवजो' 'समै री माग परिवार-नियोजन' 'जोवनिया एक'र फिर आवरे' और 'आढ्या' गौरीशकर का राष्ट्र-निर्माण' श्रीलाल मिश्र के 'याद जिकी भुलाई कदे कोनी भूलै' तथा 'वै राजस्थान रा सीवरी रूखाला' भवरलाल नाहटा का 'पाळी नी थी' किशोर कल्पनाकान्त के 'भगमान महावीर' 'लुगाई रो चिरत' 'म्हारी श्रेष्ठ रचणा (विश्वनाथ सत्यनारायण-तेलुगु)' अबार रै तेलुगु-साहित्य री एक महान विभूति, भक्त्यजली, 'तानसेन' 'लोकतन्त्रीय विकेन्द्रीकरण क्यू' 'नागौर जठै लोकतन्त्रीय विकेन्द्रीकरण रो उदघाटन होय रैयो है' 'सिक्षक सरधामान • कर्त्तव्य' आजादी री पच्चीसवी वर्षगाठ, 'अधारै घर माय उजियाळो छाइजग्यो' 'खूनी क्रान्ति आसी देश माय तोफान आसी' 'बगला देस एक नुवै गण-प्रजातन्त्र रो ऊदो' 'मैंगाई सू तूटतो चिन्तित मानखो' 'राजस्थान कदे हरयो-भरयो हो' 'बीसवै वरस रै प्रवेस उपरा मन री बतलावण' 'आग्रो, आपा हिंवाळै रा ऊचा-सिखरा हेम-मिनख नै ढूढण नै चाला' 'मानीता समाजसुधारक श्रीसेखसरिया रो अभिनन्दन' 'करा रो वागो पैरया बीन बण्योडो समाजवाद' 'करम करो रे नरा नाहरा' और 'सुराज री धुरी पचायत' गोविन्द शर्मा का 'म्हारै पढणैरी कळा' सूर्यशकर पारीक के' 'न्यारा न्यारा सुभावा री बानगी' गोगामेडी एक ऐतिहासिक विवेचना' 'कुदरत रो सिणगार' तथा 'धोरा रो धोरी एक अरथ विवेचन' शिवसिह का 'जूना परवाना अर चिट्ठिया जयनारायण आसोपा का 'राजस्थान री उन्नति सारु सुझाव' विश्वनाथ शर्मा का 'मजो आ ज्यावे जे विसवास उठ जावै' लक्ष्मीकुमारी चूडावत के 'दिवलो बळै' 'नग नग पैडी दीनानाग, 'आमोद-प्रमोद' 'दूहारी करामात' 'जीवतो भूत' 'एकर तो अमराणै घोडो फेर' 'कुण कै है डूगजी जवारजी धाडायत हा' तथा 'जूझै आउवो' जगदीशचन्द्र शर्मा के 'एक ओर कैम्प-गांव' 'भारतीय महाद्वीप रो अन्तर विग्रह दुनियारी छळिया राजनीति रो ऐनाण' तथा 'साभलो ! १५ अगस्त कै कंवे' रामपाली के '५' तथा 'भोला सकर काई पूछो जात हमारी' ज्ञानप्रकाश का 'अन्तरिक्ष मे तैरती व्योम-प्रयोगशाला' पारस अरोडा के 'वेतारीख डायरी रा पाना' 'हथकडिया रो दुसमण' 'अकाळ' तथा 'जस-दिवस माथै' अर्जुनसिह का 'वगत री मोल' राजेन्द्रशकर का 'कलकत्त रा राजस्थानिया नै आपरी सस्कृति सम्हाली राखणी चायै' शशि जोशी का 'सवसू पैली महाभारत क्यू' खुमानसिह का 'खुमान री चिट्ठी इदिरा गाधी रै नाम जो प्रधान-

मत्री भी है अर मा भी' कमला वर्मा का 'ठहरो थोडा सोच समझ'र बोलो' सुखवीर का 'काळो धन' भगीरथ का 'राजस्थान री श्रो अकाळ बगाल रै राजस्थानिया रै राज-थानी होवण री असली परीक्षा है' गणपति स्वामी का 'पारीक जी री जीवण-झाकी' भवरलाल दवे का 'जरूरत मन्द विद्यार्थिया रै खातिर सहयोग जोडणो भारतीय सस्कृति री परम पवित्र आदत है' गजानन वर्मा का 'मारवाडी समाज रा ये बदलता रग कै कोटकड सलगा'र आ नु ई म्हारणी' रामसिह तवर के 'राजस्थान रा सूरज' तथा 'प्रेमाश्रय' दीनदयाल कुन्दन का 'स्वर्गीय गिरधारी-सिह पडिहार जिण री याद ही सेम बची है' सगतसिह का 'राजस्थान रै जालोर जिला रो एक लोकप्रिय गीत मडलाकानजी' पतराम गौड के 'मू घी कलम सू' 'लोकगीता पर पारीकजी' तथा 'वाता रा समालोचक पारीकजी' गरुड का 'गढ मयूरध्वज' नारायणदत्त का 'भारतीय ज्योतिप' मदनमोहन का नगर उजाडो गाँव बसाओ' तथा मिलावटी राजनीति' कन्हैयालाल सहल के 'इतिहास रो बोध' 'राजस्थानी लोकगीता मे 'बापू' 'दूहाँ री जात' एव 'राजस्थान री एक ऐतिहासिक ओखाणो' रामकरण जालान का 'धन कमावण रा उपाय' हिरण्यमय का 'जे थाने कविता लिखणी हुवै' तेजसिह का 'राजस्थान रै आन्दोलन री एक-एक घटना' अजीतसिह बन्धु' का 'मनैजरूरत है' शाता का 'म्हारो मार्ग' शाता पुरोहित का 'रसोईघर री पैली पढाई' 'गोवर्द्धन हेडाऊ का 'राजस्थानी लेखका रो सुख राजस्थानी रो नु वो भूगोल' उमेशकुमार का 'आजादी री रजतजयन्ती' बद्रीनारायण का 'सबदा सू वाता' त्रिलोक गोयल का' 'क्यू री मुसीबत' परमेश्वर के 'अभिनन्दन' तथा 'जोधपुर आगै बढसी' प्रेमजी 'प्रेम' का 'काळारग बोध' रामेश्वर टाटिया के 'बलिदान री परम्परा' 'नींव रा पत्थर' नुवी पीढी' 'बखत बदळीजग्यो . आपा की बदळीज्यानी' रामकुमार के 'साच अर निरभैताई' 'देस माय आर्थिक' र चारित्रिक सकट' तथा 'निष्काम कर्म अर सेवा' निर्मला मिश्र का 'पापग्रह सू अस्योडी आजादी' कृष्णगोपाल शर्मा के 'भिस्टाचार' तथा 'जुगबोध ! दिसाबोध ! अघखडबोध !' सीताराम महर्षि के 'भारत इगलैण्ड टैस्टसिखला : ओळखाण' 'सन् ७२ रै बरस ने निमस्कार' 'अकाळ सू जूझतो राजस्थान . अकाल राहत काम' और 'तिरसार' र तिरपत रै बीच भटकीजती म्हारी जिनगानी' कुम्भाराम का 'समाज रा बैरी ऐ तीन' शम्भूलाल का 'नवा मनावा री चावना' मनोहर प्रभाकर का 'गोरीशकर री गोद मे' मांगीलाल का'गाडिया लुहार'चडीदान का 'बारा महीना रा बारा दूहा' अरविन्द का 'रवीन्द्र सगीत' रामगोपाल का 'एक पानो—राजपूतां रै इतिहास रो' शम्भू शर्मा के '१४ सितम्बर : राजस्थान मे खूनी क्रान्ति रो दिन' 'लाल फीतासाही' 'मारवाडी समाज री ऐ लगनसील लुगाया' 'अकाळ रा काळ बणो' तथा 'गांधी सताब्दी पर एक लाखीणो प्रस्न'रतनशाह का'मारवाडी समाज नु वो चिन्तण नु वी चुनौती'

सत्यप्रकाश जोशी के सूरा नै सिलाम, हुस्यार लोगा रा दिमागी खेल, 'राजस्थान री राजस्थानी सरकार' 'सम्पादक रो हेलो' 'मारवाडी ग्लिफ सोसायटी कलकत्ता' 'नयो वरस नई व्यवस्था' 'ससार री एक महान कविता' 'क्रान्ति केती दूर' तथा 'पूरण पुरुस किसन' गगाराम का 'देस दिसावर रा लोग' श्रीगोपाल का 'विरखा अर विरहणी' गिरिराज का 'पणघट री साझ' 'चन्द्रसिंह के 'पत्रकार बनाम साहित्यकार' तथा 'आपरी बात' श्रवणलाल का 'मा रो दूध' रामवल्लभ का 'लकुलीस मत' रेवतीलाल का 'विज्ञान री वाता' वृन्दा के 'बरावरी रो हक अर नारी' 'नारी रो महत्वपूर्ण स्वरूप मा' तथा 'वसीकरण-विद्या' कामनाथ के 'काम री बात . डरो तो करो क्यू' तथा 'लुगाया रो खतनो' पुरुषोत्तम स्वामी का 'तत्वा री कथा' लक्ष्मीकमल का 'राजस्थानी और हिन्दी मे विभक्तियाँ' जयचन्द्र के 'रावणहत्थो' 'कीलियो वारियो नाच' तथा 'गाणो पडचो अडाणै' बदरीप्रसाद साकरिया के 'जीवण री कला' 'लक्ष्मी नै कृपण' और 'सौ ईणा रो एक मत' मुरलीधर व्यास के 'राजस्थानी मुहावरा' तथा 'रवीन्द्र-वाणी' विद्याधर शास्त्री का 'पीपल रो गट्टो' गणपतलाल डागी का 'भारत री रामलीलावा मे राजस्थानी कलाकार' श्रीकृष्ण धूत के 'आज रा समाज री परिस्थिति' 'चालू चर्चा' 'आजकल की बोल बतळावण, रेण-सेण, पैरवास तथा खाणे-पीणे को ढग' और 'जावा जठे वेई वाता' इत्यादि निबन्ध उत्कृष्टता की श्रेणी मे आते हैं।

निष्कर्ष—राजस्थानी मे वर्णनप्रधान परिचयात्मक निबन्धो के अतिरिक्त विवेचनात्मक, समीक्षात्मक, वैचारिक, वैयक्तिक, ललित एव हास्य-व्यग्यप्रधान निबन्धो का क्षेत्र भी अत्यन्त विस्तृत रहा है। राजस्थानी निबन्ध-साहित्य की अपुष्ट स्थिति तथा उसकी न्यूनता का बखान करने वाले आलोचको से मैं बिल्कुल सहमत नहीं हूँ। राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं मे तो निबन्धो की अपूर्व एव अक्षुण्ण गगा प्रवाहित हुई है। आज के समय मे भी यह नदी सूखी नही है। समय तथा परिस्थितियो को देखते हुए हिन्दी आदि भाषाओ के साहित्य से राजस्थानी साहित्य की तुलना अनुपयुक्त है। राजस्थानी निबन्ध-साहित्य को समृद्ध बनाने मे ओळमो, हरावळ, कुरजा, हेलो मरुवाणी, लाडसर, म्हारो देस जलम भोम, मूमल, जागती जोत, ओळखाण, सरवर तथा ईसरलाट पत्र-पत्रिकाओ का सराहनीय योगदान रहा है। साथ ही 'ओळमो' तथा 'ईसरलाट' पत्रो के सम्पादको के प्रयास भी, जिन्होंने इस क्षेत्र मे पुरुष-वर्ग के साथ साथ महिला-वर्ग मे भी एक चेतना जागृत की है, श्लाघ्य हैं। महिला-वर्ग को प्रोत्साहन का श्रेय विशेषत 'ओळमो' के सम्पादक एव राजस्थानी के सर्वदर्शी विद्वान् किशोर कल्पनाकान्त को ही दिया जा सकता है। लगभग २५ वर्षो से नि स्वार्थ साहित्य-सेवी 'ओळमो' मे कोई तीसो महिलाओ एव कन्याओ के लेख प्रकाशित हुए हैं। राजस्थानी मे ऐसे अन्य पत्रो के दर्शन अत्यन्त ही दुर्लभ है।

अध्याय ८

गद्य-काव्य, जीवनी एव अन्यान्य साहित्य

राजस्थानी गद्य-काव्य: पृष्ठभूमि—हिन्दी और राजस्थानी मे गद्यकाव्य का अर्थ सस्कृत से कुछ भिन्न है। गद्यकाव्य मे अलकरण की प्रवृत्ति का प्राधान्य रहता है किन्तु हिन्दी और राजस्थानी के गद्यकाव्यो मे भावो का। डा. अष्ट-भुजाप्रसाद पाण्डेय ने गद्यकाव्य की प्रमुख विशेषताएँ प्रकट करते हुए लिखा है[1] —

"अन्विति के साथ गद्य की भाषा मे भावो का वह प्रकाशन जिसमे रमणीयता, आह्लाद, प्रभावोत्पादकता, चारुत्व, आध्यात्मिकता, अलौकिक आनन्द तथा पर्याप्त स्वरता होती है, गद्य-काव्य की संज्ञा प्राप्त करता है। इस प्रकार की रचना मे छन्द तो नही होते पर भावो की सबलता, विश्व-संगीत की लय, वक्रोक्ति, ध्वनि, साकेतिकता आदि विशेषताये रहती हैं।"

निष्कर्षत. गद्य-काव्य सुललित गद्य लिखने की शैली है जिसके माध्यम से भावुकतापूर्ण क्षणो मे उदय होने वाली विभिन्न भावनाओ और विचारो को कवित्व पूर्ण ढग के साथ व्यक्त किया जाता है।

राजस्थानी गद्यकाव्य· एक सामान्य परिचय:—राजस्थानी गद्य-काव्य का प्रारम्भ भी रेखाचित्र की भाँति १९४६ ई मे हुआ। सर्वप्रथम 'सीप' नाम से चन्द्रसिह के कुछ गद्य-गीत या काव्य प्रकाशित हुये।[2] उसी समय से 'राजस्थान भारती' मे भी कन्हैयालाल सेठिया, मुरलीधर व्यास, चन्द्रसिह इत्यादि लेखको के गद्य-काव्य प्रकाशित होने लगे। स्वतन्त्रता के बाद मरुवाणी, ओळमो, जाणकारी, सरवर, मारवाडी, हरावळ, जागती जोत, हेलो, मरुश्री, वाणी, म्हारो देस, वरदा, मधुमती, राजस्थानी वीर, जळमभोम, कुरजा, राजस्थानी गद्य · विकास और प्रकाश तथा 'माळा' इत्यादि पत्र-पत्रिकाओ एवं विविध सग्रहो मे अनेकानेक राजस्थानी गद्यकाव्यकार पाठको के समक्ष प्रकट हुए। 'वरदा' त्रैमासिक पत्रिका में अकेले डा० मनोहर शर्मा ने 'फूला मालण' 'मीमाखो' 'रोहिडै रा फूल' तथा 'सोनल भीग' शीर्षको से अलंकृत ४४ गद्य-गीतो या काव्यो के साथ अन्यान्य पत्र-पत्रिकाओ मे 'कुण जाणै' 'हिरदै करो च्यानणो' तथा 'माधना रो इमरत' आदि गद्यगीत प्रकाशित करवाए। इनके अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाओं से हरमन चौहान का 'देवालियै रै थान'

---

1 हिन्दी गद्य-काव्य का उद्भव और विकास पृ सं. २४

2. राजस्थानी भाग २ : स. नरोत्तमदास स्वामी, १९४६ ई०, कलकत्ता

सुबोधकुमार का 'झरझरकथा' कन्हैयालाल सहल का 'राजस्थानी सूरवीर' रामगोपाल विजय का 'अजी श्रो बादळा जी !' अम्बू शर्मा का 'दम मारो दम' शकुन्त का 'दो गद्य-काव्य' सुमेरसिंह का 'जुग-बोध' अमोलकचन्द के 'ताजमहल' और 'लीक लोकोळिया' सवाईसिंह का 'सरद पूनम री रात नै, डोलां आवै देव' सत्यप्रकाश जोशी का 'अरदास' रामसिंह के 'वदनमाल' सवळप' 'मातृभूमि रो सदेश' तथा 'प्रेमाश्रम' कन्हैयालाल सेठिया के 'मनै मौत सोरी आणी चाहिज' 'गळगचिया' और 'भाठो नै धूळ' जगदीशचन्द्र शर्मा का 'ए मेरी री जोत' रामप्रसाद शर्मा का 'स्वर्गीय सोहनलाल वैद' दीनानाथ खत्री का 'हू साहित्यकार हूँ' विजयदान देथा के 'भावना' 'एक निजर' 'झबको' ममझै मौ मरै' दुनिया, आरसी रो उजास, सुख अर दुख, 'बावळो पिडत' सूयशकर पारीक का 'पारीकजी रै प्रति' माणक तिवारी का 'ऊधा-पाधरा' मुरलीधर व्यास का 'देश-प्रेम' यादवेन्द्र शर्मा का 'मोहमाया फुटरापो तथा मौ' सगतसिंह का 'मूरख!!' भवरलाल नाहटा का 'सावण री तीज' वैजनाथ पवार के 'परजापत' 'म्हारा विधाता' 'सिरजनहार' 'ओ म्हारा विधाता' 'राजस्थान' 'वो आयो अर चल्यो गयो' 'बादळ'र विजली' तथा 'भवर थे क्यो आया नी' प्रकाशकुमार का 'मरुवाणी' लक्ष्मीकुमारी चूडावत के 'मातभोम' और 'मिलणवेळा' उमाचरण का 'होणी माता नै नमस्कार' कुम्भाराम का 'मुरगो मावण' सुशीला का 'चाय और छाछ' विश्वनाथ के 'सुवाद लागी' 'एक कवर लाडली हरखी' 'तू कै करै ! तू कै करे !' 'वहा ! वहा सुवाद हुया' 'ओळख को आतरो' 'जागण जोर को लाग्यो' और 'सीख' किशोर कल्पनाकान्त के 'दो किरोड सपूता री मा खून रा आंसू रोवै......' 'जोत-गीत' 'बावनी उजाड रो गीत' 'दीवा, एक बात सुण' तथा 'हे गणतन्त्र-दिवस रा सुरजी !' बजरग शर्मा का 'छोरे रो अचड्यो' सुन्दरलाल के 'मगरा' तथा 'जिण री खावा बाजरी विण री बजावा हाजरी' विश्वम्भरप्रसाद के 'सुमाणस' और ओळ्यु' विद्याधर शास्त्री का नागर-पान' तथा गोवर्द्धन शर्मा का 'पाटवी' इत्यादि गद्यकाव्य पढने को मिले हैं। अद्यावधि दो गद्यकाव्य-सग्रह[2] ही पुस्तको के रूपो मे प्राप्त हुए हैं। इनमे से 'बालसाद' पूर्णत गद्यकाव्य-सग्रह नही है।

राजस्थानी गद्य-काव्य विशिष्ट परिचय —यहाँ सर्वप्रथम उक्त दोनो सग्रहो की समीक्षाएँ कर आगे बढते हैं—

---

1 सेठिया का 'गळगचिया' शीर्षक से एक गद्यकाव्य-सग्रह भी प्रकाशित।

2, गळगचिया ले कन्हैयालाल सेठिया, वि स. २०१७ मे प्रकाशित।
बाल्मसाद ले चन्द्रसिंह, वि स २०२५ मे प्रकाशित।

गळगचिया[1]

समीक्षा —अस्सी पृष्ठीय इस पुस्तक मे ६४ गद्यगीतो को स्थान दिया गया है। प्राय सभी गद्यगीत प्रकृति के उपकरणो पर आधारित हैं, जैसे दूव, पून, रूख, विरखा, वायरो और डूगर आदि। तावै रो कळसो, डूगर री चोटी परा, कोरी मटकी मे भरयोडो पाणी, वादळवाई रो दिन, पानडो झर'र पाणी—' पानडा कयो, नानकी री मा, झूपडी रो आडो, आख रै दो वेटा, डोरो कैयो, आकडै री जीभ नै कावू मैं इत्यादि गद्य-गीत कलेवर मे कुछ बडे हैं तथा गद्यगीतो की श्रेणी मे भी आ जाते हैं। सिझ्या हूता ही, सूई तू फूला रो, एक छाट पड़ी'र, मैणवत्ती कैयो, वापडी रात, रूखडै परा पखेरू, चमकीलो हीरो, रूख रै पत्ता मे, पखेरू कैयो, बन्दूक उठा'र, चौमासे मे, आभै रै सूनै, अमावस'र पून्यू, आगियो पूछियो, आसोज रो महीनू, विरखा आई, पिणघट परा पडी, जगत रो दीप, काटै री नोक परां, एक दिन पुन्न, तैली रो नारो, कुम्हार घडो ल्यायो, दही पूछयो, हसतो हसतो ही, दिवलै रो निरमोही, दिन रै छोरै रै, रूख नै अडोलो कर'र, नैणा रै मै'ल मे, मिनख आपरी जरूरत स्यू तथा नीमडै रो रूख गद्यगीत अत्यन्त ही सारगर्भित उपदेशप्रद एव मनोरजक वन पडे हैं। लेखक ने प्रकृति के सहारे से ही उपदेशात्मकता प्रकट की है। कुछ गद्यगीत मानवीकरण के आवरण मे उपदेश देते नजर आते है जैसे-वायरो कयो, दूवडी कयो, पून कयो, पानडा कयो, तूंतडा वोल्या, काटो वोल्यो, वास कयां आदि। पग कयो, हसी वोली, दही पूछयो, पखेरू कयो, डोरो कयो आदि गद्य-गीतो मे उपदेशो की प्रधानता है। भाषा, सरल, सजीव एव प्रवाहमय है। कही कही कहावतो का प्रयोग भी किया गया है जैसे—सूरडा देव गरसूरडा पुजारी। भाषा-शैली के सौष्ठव के उदाहरण—[2]

(क) 'गेलो पगा पडसी जद मजलां मतै ही मु डागे आ ज्यासी' (पूरा गद्य-गीत)

(ख) 'पान पीला पडता देख'र माळी रो चैरो पीळो पडग्यो।
फळ पीळा हूता देख'र माळी रै मूंडै परा ललाई आ'गी॥'

(ग) 'वापडी रात तो तारा नै पाल्या-पोस्या पण ओ सूरजियो कुळनासी है।

(घ) 'चमकीलो हीरो धूळ मे पड'र आधो हुयग्यो। गुदमैलो वीज धूळ मे पड'र आख्या खोल'र उपरा आ'ग्यो'

दूवडी कयो, तिरिया मिग्यिा भरी तळाई, आभै रै अगूणै पळसै, वास कयो, काळजा मोत्या रा ही, काटो वोल्यो, हसी वोली, पग कयो, गाछ स्यू कळी रो मन, वापडी रात, चमकीलो हीरो, गेलो पगा पडसी अमावस'र पून्यू, वीज जमीन नै, हाथी मो अनेरो, आस्यां वहरी है, पान पीळा पडता देख'र, टावर रै काळूस

---

1. लेखक—कन्हैयालाल सेठिया, वि स २०१७ मे प्रकाशित।
2. गळगचिया पृ, सं ३०, ३२, ३५ तथा ३८

लगायो'क इत्यादि गद्य-गीत आदर्श वाक्यो या सुभापितो श्रेणी मे ही आ सकते हैं। एक-दो पक्तियो मे कोई गद्यगीत थोडे ही होते हैं। अधिकाश गद्यगीतो का 'मरु-वाणी' तथा 'ओळमो' पत्रिकाओ मे प्रकाशित होना, मूल्य का अधिक रखन, अधिक कागज का उपयोग करना आदि गद्यकार मे त्रुटियाँ रही हैं।

फिर भी राजस्थानी भापा मे सेठिया का यह प्रथम प्रयास सराहनीय रहा है भले ही इस सग्रह मे कुछ त्रुटियाँ रही हो।

आलसा :[1]

समीक्षा —सत्तर पृष्ठीय इस सग्रह मे विविध विधाओ के साथ चार गद्य-गीत भी हैं। इनका कलेवर अत्यन्त ही लघु हैं तथा ये शीर्षको मे रहित भी हैं। सुभान तेरी कुदरत, मिनख मिनख सूँ एक, कोरियै घडै रो पाणी, बाईजी री खैरात तथा बिल्ली रो पजो—ये लघु कथाएँ हैं परन्तु भावो एव शैली की दृष्टि से ये गद्यगीतो की तरह लक्षित होती हैं अत इन्हे भी गद्यगीतो की श्रेणी मे रखा जा सकता है। सगलिया, छडछडीलो, घोचा, इतरा, आलणो इत्यादि राजस्थानी भापा के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग श्लाघ्य रहा है। 'ऊमर रा दिन ओछा करै' जैसे मुहावरो का समावेश भी इनमे हैं। आदी, अचानक, बिल्ली बालक, छाती, आख इत्यादि सस्कृत और हिन्दी के शब्दो कर प्रयोग का अन्यान्य भापाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव प्रकट किया गया है। भापा लघु वाक्यावलि—पूर्ण सरल, स्पष्ट एव प्रवाहमय है—

"बापडी कबूतरी निरा दिना सू एकली। छाती नीचै दो इडा। इतरो सो परिवार। उण पर सारी आस। चार पाच बाका-बावळा घोचा सू बण्यो वै रो आलणो। पाडोस्या रो प्यार जिण सू ऊमर रा दिन ओछा करै।'[2]

तीस वर्षो की कालावधि को देखते हुए राजस्थानी के गद्य-गीतो की सख्या अत्यन्त सीमित तो नहीं पर कुछ न्यून अवश्य है। राजस्थानी के गद्य-काव्यो को निम्नलिखित रूपो मे वर्गीकृत कर सकते हैं—

(१) चिन्तन एव विचारप्रधान गद्य-काव्य
(२) प्रकृति के कार्यकलापो पर आधारित गद्यकाव्य
(३) देश विषयक गद्यकाव्य
(४) अन्यान्य विषयो या तथ्यो पर आधारित गद्यकाव्य

राजस्थानी के चिन्तन एव विचारप्रधान गद्य-काव्यकारो मे कन्हैयालाल सेठिया, मनोहर शर्मा, चन्द्रसिंह, बैजनाथ पवार तथा लक्ष्मीकुमारी चूडावत विशेष स्थान रखते हैं। सेठिया अपने विचारक एव चिन्तक रूप के प्रवाह मे बहने के

---

1 लेखक—चन्द्रसिंह, वि स २०२५ मे प्रकाशित।
2 बालसाद बिल्ली रो पजो पृ स ६९

कारण 'गळगचिया' गद्य-काव्य-सग्रह मे विचार-पुष्प सूक्तियो के अधिक निकट पहुँच गए हैं। इनके गद्य-गीतो मे अन्योक्ति के सहारे मानवेतर प्रकृति के कार्य-कलापो के माध्यम से काल्पनिक जाल से युक्त विचार ही अधिक हैं, नीति तथा सूक्ति-कथन कम। 'आसोज रो महीनू' 'नानकी री मा कयो' 'जीभ नै कावू मे' इत्यादि गद्य-गीतो[1] मे व्यग्य की रश्मियाँ विकीर्ण हुई हैं। इनके वाद मनोहर शर्मा का नाम विशेषत लिया जाता है। इनके विचारप्रधान गद्यकाव्य अधिकांशतः आत्मकथात्मक एव सवाद-शैली मे हैं। प्रथम पुरुष (मैं) शैली मे लिखित गद्यगीत लेखक के जीवन की घटनाओ से सम्वन्धित है जिनमे 'मन मे उमग उठी' 'एक वर मे एक फूटी' 'वाजार मे भीड' 'एक वर मे वाजार जावै' तथा 'सारै दिन' गद्यगीत प्रमुखत. हैं। ये गद्यगीत त्रैमासिक पत्रिका 'वरदा' मे प्रकाशित हो चुके हैं। चन्द्रसिंह तथा मुरलीधर व्यास के अधिकाश गद्यगीत विचारप्रधान हैं। मुरलीधर व्यास की रुचि वर्तमान सामाजिक समस्याओ पर लघुकथात्मक गद्यकाव्य लिखने की रही है परन्तु चन्द्रसिंह ने सामयिक समस्याओ के साथ साथ कुछ शाश्वत प्रश्नो की ओर भी इगित किया है। वैजनाथ पवार और लक्ष्मीकुमारी चूंडावत ने आत्मा और परमात्मा के प्रणय-सम्वन्ध के आश्रय से कुछ दार्शनिक भावो से सम्पृक्त गद्यगीत भी लिखे है। इन दोनो के गद्य-गीतो मे प्रिय-वियोग की तडफन और प्रिय-मिलन की उत्कण्ठा के दर्शन हो जाते हैं। वैजनाथ पवार के इस गद्य-गीत मे प्रिय के न मिलने पर उपालम्भ, आगत प्रिय से स्वय की अज्ञानता से न मिलने पर भारी दुःख तथा चिर-वियोग के वाद मिलन की मधुर घडियो के हर्षोल्लास के दर्शन हो जाते हैं—[2]

"पण तू कठै ? कद आवेलो ? आस री उमग अळसायगी।
मनडै रो मोद मोळो पडग्यो तेरी उडीक मे—
सरदी सिरकगी—पाळो ढळग्यो
डाफर वीतगी—रुत वदळगी
वोदा पान झडग्या—तू वी कूपळ फिरगी।
गिरमी रा भभूळिया—लूवा रा लपका चाल्या
सुपना री सेज में गरद चढगी—मन रो मिरगलो घणो भटक्यो पण तूं कठै ?
आभो गरणावै, वादळ झाला देवै—वीजळ परळाटा सूं सैन करै
विरखा री झडी लागगी—अव नई आवसी तो भळे कद ?"

ऐसे गद्यकाव्यो मे सत्यप्रकाश जोशी का 'अरदास' जगदीशचन्द्र शर्मा का 'ए मेरी री जोत' विजयदान देथा के 'दुनिया' 'सुख और दुख' तथा 'भावना'

1. गळगचिया : ले. कन्हैयालाल सेठिया : इस सग्रह से उद्धृत।
2. मधुमती . पत्रिका—अगस्त—सितम्वर अंक १९७०

लक्ष्मीकुमारी चूडावत का 'मिलरण-वेळा' वैजनाथ पवार के 'ओ म्हारा विधाता' उमाचरण का 'होणी माता नै नमस्कार' विश्वनाथ का 'सीख' मनोहर शर्मा के 'कुरण जारणै' 'साधना रो इमरत' तथा 'हिरदै ो च्यानणो' किशोर कल्पनाकान्त के 'जोत-गीत' तथा 'दीवा, एक बात सुरण' और विश्वम्भरप्रसाद का 'ओळ्यू' गद्यगीत उच्चकोटि मे स्थान पाते है।

प्रकृति ने अपने कोमल और विकराल दोनो ही रूपो मे मानव-मन को आकृष्ट किया है।राजस्थानी गद्यकाव्यकार भी इनसे नही बच पाए हैं। प्रकृति का आश्रय लेने वाले गद्यकाव्यकारो मे विशेषत सेठिया, मनोहर शर्मा, चन्द्रसिंह, माणक तिवारी, तथा शान्तिदेव शर्मा आदि हैं। सेठिया के 'गळगचिया 'सग्रह के अधिकाश गद्यगीत, कुम्भाराम का 'सुरंगो सावण' चन्द्रसिंह के 'सीप' तथा 'वालसाद' संग्रह के गद्यगीत, विद्याधर शास्त्री का 'नागर-पान' मनोहर शर्मा के 'वरदा' पत्रिका मे प्रकाशित अधिकाश गद्यगीत, भवरलाल नाहटा का 'सावण री तीज' रामगोपाल विजय का 'अजी ओ वादळा जी' सवाईसिंह का 'सरद पूनम री रात नै डीला आवै देव' और शान्तिदेव शर्मा का 'विचारो दिनकर' प्रकृति के रम्य एव भयावह दोनो ही रूपो को प्रकट करने वाले गद्यगीत हैं। देश एव मातृभूमि विषयक गद्य-गीतो की मात्रा अत्यन्त ही सीमित हैं फिर भी कुछ गद्यकाव्यकारो ने इस ओर अपने प्रयास किए हैं। इस दृष्टि से कन्हैयालाल सहल का 'राजस्थानी सूरवीर' रामसिंह का 'मातृभूमि रो सदेश' वैजनाथ पवार का 'राजस्थान' मुरलीधर व्यास का 'देशप्रेम' प्रकाशकुमार का 'मरुवाणी' लक्ष्मीकुमारी चूडावत का 'मातभोम' और किशोर कल्पनाकान्त के 'हे गणतन्त्र-दिवस रा सुरजी' तथा 'दो किरोड सपूता री मां खून रा आंसू रोवै' गद्यगीत रोचक एव मनोरंजक बन पडे हैं।

अन्यान्य विषयो या तथ्यो पर आधारित गद्यकाव्यो मे विश्वनाथ के 'सुवाद लागी' 'एक कवर लाडली हरखी' तू कै करै ! तू कै करै !' 'बडा ! बडा सुवाद हुया' 'ओळख को आतरो' तथा 'जागण जोर को लाग्यो' मनोहर शर्मा के 'हिरदै करो च्यानणो' 'कुरण जाणै' किशोर कल्पनाकान्त का 'बावनी उजाड रो गीत' विश्वम्भरप्रसाद के 'सुमाणस' तथा 'ओळ्यू' सुन्दरलाल के 'मगरा' तथा 'जिण री खावा बाजरी विण री बजावा हाजरी' सेठिया के 'गळगचिया' सग्रह के कुछ गद्यगीत, गोवर्धन शर्मा का 'पाटवो' हरमन चौहान का 'देवालियै रै थान' सुबोध-कुमार का 'जुगबोध' अमोलकचन्द के 'ताजमहल' तथा 'लीक लीकोळिया' रामसिंह के 'वदनमाल' 'सकळप' तथा 'प्रेमाश्रम' दीनानाथ खत्री का 'हू साहित्यकार हू' विजयदान देथा के 'झबको' 'एक निजर' 'समझै सो मरै' 'दुनिया' तथा 'बावळो पिडत' सूर्यशकर पारीक का 'पारीकजी रै प्रति' मुरलीधर व्यास का 'माणसै रो अहकार' यादवेन्द्र शर्मा का 'मोहमाया : फुटरापो तथा मा' सगतसिंह का 'मूरख ! !'

वैजनाथ पवार के 'परजापत' तथा 'भवर थे को आयानी' सुशीला का 'चाय और छाछ' इत्यादि गद्यगीत राजस्थानी गद्यकाव्य-विधा मे महत्त्वपूर्ण स्थान रखते है।

राजस्थानी गद्यकाव्य शिल्प और शैली की दृष्टि से हिन्दी से अपना पृथक् अस्तित्व रखता है। कलेवर की लघुता राजस्थानी गद्यकाव्य की सबसे बडी विशेषता रही है। राजस्थानी के प्राय सभी गद्यकाव्यकारो मे यह प्रवृत्ति प्रमुखत रही है। कुछ गद्यकाव्यकारो ने तो अपने गद्यगीतो को दो तीन वाक्यो या एक प्रश्न और एक उत्तर मे ही समाप्त कर दिया है। ऐसे गद्यगीत कन्हैयालाल सेठिया के 'गलगचिया' सग्रह मे अधिक मात्रा मे मिलते हैं। शेष लेखको ने भी अपने गद्य-गीतो के कलेवर आधे पृष्ठ से लेकर डेढ पृष्ठ तक की सीमा मे ही रखे हैं।

राजस्थानी गद्यकाव्यकारो ने सवादात्मक, कथात्मक एव सम्बोधनात्मक शैलियो को ही विशेषत. अपनाया है। सेठिया के अधिकाश गद्यगीत सवादात्मक शैली मे ही लिखे गए है। माणक तिवारी, सुशीला गुप्ता तथा मनोहर शर्मा ने भी कुछ गद्यगीत इसी शैली मे लिखे हैं। कथात्मक शैली मे लिखित गद्यकाव्यो मे मनोहर शर्मा के अधिकाश गद्यकाव्य, मुरलीधर व्यास के सामाजिक समस्याओ पर लिखित गद्यकाव्य, शान्तिदेव शर्मा का 'विचारो दिनकर' तथा सेठिया के कुछ गद्यगीत आते हैं। ऐसे गद्यगीतो मे साधारणत अन्योक्ति की प्रधानता रहती है। सम्बोधनात्मक शैली राजस्थानी गद्यकाव्यकारो को विशेप प्रिय रही है। कभी उपालम्भ के रूप मे तो कभी निवेदन के रूप मे अपनी वात कहते मे ये गद्यकाव्यकार विशेप प्रयत्नशील रहे हैं। वैजनाथ पवार के 'वसन्त आयो' तथा 'स्याम' लक्ष्मीकुमारी चूडावत का 'मातभोम' और प्रकाशकुमार का 'मरुवाणी' गद्यगीत इस दृष्टि से अधिक सफल रहे है।

निष्कर्षत राजस्थानी गद्यगीत लघु कलेवर वाले, कथात्मक एव सवाद शैलियो मे वर्णित, विचार और चिन्तनप्रधान, प्राकृतिक-सौन्दर्य से सम्पृक्त और आत्मा-परमात्मा के प्रणय-प्रसग से ओतप्रोत ही उपलब्ध होते हैं। पूर्वोक्त दो सग्रहो के गद्यगीतो को छोड शेप सभी गद्यगीत स्फुट रूप मे पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से ही फूट पडे हैं।

राजस्थानी जीवनी-साहित्य

राजस्थानी का जीवनी साहित्य अन्य भापाओ के साहित्य की अपेक्षाकृत निर्धन है। जीवनी भी गद्य-साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा है। जीवनी को जीवन चरित या जीवन-चरित्र भी कहते हैं। इसमे लेखक द्वारा किसी प्रसिद्ध व्यक्ति के जीवन का पूर्ण या आशिक वर्णन प्रस्तुत किया जाता है। व्यक्ति के जीवन की स्थूल घटनाओ और उसके चरित्र की विशिष्टताओ का अंकन भी इसमें होता है।

राजस्थानी जीवनी-साहित्य का सूत्रपात स्वातन्त्र्योत्तर-युग में प्रकाशित होने वाली पत्र-पत्रिकाओ मे ही हुआ है । ओळमो, 'मरुवाणी, हैलो, मारवाडी तथा 'हरावळ' पत्र-पत्रिकाओ मे ही छोटे-मोटे कलेवर के साथ स्फुट रूप मे जीवनियाँ प्रकाशित होती रही हैं । पुस्तकाकार मे अद्यावधि प्राप्त जीवनी-साहित्य कुछ कुछ सन्तोषजनक है । इसके गुण-दोषो का विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

आपणा बापूजी[1]

समीक्षा —लेखक ने इस जीवनी-ग्रन्थ को तीन खण्डो मे बाँटा है—

(क) जीवनी (ख) साधन (ग) वाणी

जीवनी मे गाँधीजी की संक्षिप्त जीवनी, साधनों मे-सत्य और अहिंसा तथा वाणी मे-- अखबार, अशिक्षा, ईश्वर ईसा, उर्दू, अंग्रेजी ऋषि, काम, गुण्डा, गोखले, अपमान, अभिमान, अन्तर्नाद, डा असारी, दहेज, छुआछूत, जमीदार, देशभक्ति ,प्रेम,स्वराज्य, सर्वोदय, धर्म और ब्रह्मचर्य इत्यादि९२विषयोपर विस्तृत विवेचना की गई है। गाँधीजी की विस्तृत एव उनके गहरे विचारो को लेखक ने बडे चातुर्य से इस १६० पृष्ठीय पुस्तक मे व्यक्त करने का सफल प्रयास किया है । अर, अकरै, भण्या, कूड, मोकळो, वापरचो, सागीडो, खूटगी, माडाणी इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग पुस्तक मे है । भाषा पर बीकानेरी क्षेत्र का किंचित् प्रभाव होते हुए भी अन्य क्षेत्रों की बोलियो के साथ इनकी सहिष्णुता है । लघु वाक्यावलि, मुहावरो-कहावतो आदि का चमत्कार पुस्तक में पर्याप्त मात्रा मे है । भाषा-शैली का उदाहरण—[2]

"पैली वाँ लाफटन नै झालनै गाधीजी सू अलगो करयो । फेर वा गाधीजी माथै भाटा ईटया अर रद्दी ई डा फैंकणा सरू करया । कोई पाघडी उतारनै लेयग्यो तो केई मुक्का अर ठोकरा मारण लागग्या । गाँधीजी बेहाल हुयग्या । एक घर रै आगळा छड झालनै सास लेवण खातर ऊभग्या । पण ऊभण कुण देवतो । मुक्का अर लातारी विरखा ।"

जीवनी की विशेषताओ की कमी, उर्दू और सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य और 'श' एव 'ष' का स्थान स्थान पर प्रयोग—लेखक की कुछ भूलें दृष्टिगत होती हैं । फिर भी इस क्षेत्र मे इनका प्रयास बडा सफल एव श्लाघ्य है ।

शिवचन्द्र भरतिया[3]

समीक्षा.—राजस्थानी नाटक और उपन्यास के प्रणेता एव जन्मदाता को

1. लेखक—श्रीलाल नथमल जोशी, १९६९ ई० मे प्रकाशित ।
2 आपणा बापूजी . ले श्रीलाल नथमल जोशी, पृ स. ४८
3 ले० किरण नाहटा. स० रावत सारस्वत, राजस्थान प्रचार सभा, जयपुर, १९७० ई

पाठको के समक्ष प्रकट करने का लेखक का प्रयत्न बडा अच्छा रहा है। लेखक ने उनके ग्रन्थो मे लिखित प्रमाणो से ही भरतिया की जीवनी को प्रामाणिक बनाने की चेष्टा की है। राजस्थानी भाषा मे जीवनियो की न्यूनता की पूर्ति हेतु मातृभाषा-प्रेमी किरण नाहटा का इस रूप मे उत्साह सराहनीय रहा है।

पुस्तक के मूल्य का अधिक होना, भरतिया की सभी कृतियो का उल्लेख नही करना, 'विश्रान्त-प्रवासी' की अपूर्ण कथा मे ही इतिश्री समझना, भरतिया की जीवनी को केवल १४ पृष्ठो मे बद्ध कर शेष ५० पृष्ठों मे उनकी कृतियो के सार आदि का विवरण देना, हिन्दी की 'भारतेन्दु-ग्रन्थावली' की नकल पर भरतिया-ग्रन्थावली' को लिखने की कुचेष्टा करना, सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य, भरतिया के ग्रन्थो का पूर्ण विवरण न देना, 'श' और 'ष' के प्रयोग की अधिकता इत्यादि जीवनीकार की भूलें है। सस्कृत के बाणभट्ट की तरह दीर्घ वाक्यावलि का प्रयोग भी स्थान स्थान पर मिलता है—[1]

"अगरेजी राज रै तपतै सूरज री वेला भरतियाजी रो ओ कथन वारी निडरता रो तो परचो देवै है ई पण साथै साथै वारे मन री इण टीस नै चौडै करै है कै अगरेज अठै सू धन लेग्या'र आपारै देस नै गरीब कर रैया है अर इण स्थिति नै रोकण रो एकई उपाव हो सकै है अर वो ओ ई है कै सब लोग स्वदेसीरो उपयोग सरू करा।........"

देश रा गौरव[2]

समीक्षा.—छप्पन पृष्ठीय, मूमल प्रकाशन, जैसलमेर से प्रकाशित इस बालोपयोगी पुस्तक मे १८ जीवनियो को स्थान दिया गया है। इसमे राममोहनराय, दयानन्द, महादेव गोविन्द रानाडे, तिलक, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन, श्रद्धानन्द, गोखले, लाजपतराय, चितरजनदास, मोतीलाल नेहरू, जवाहरलाल नेहरू, गांधीजी, बोस, राजेन्द्रप्रसाद तथा पटेल—इनकी सक्षिप्त जीवनियाँ राजस्थानी भाषा मे मिलती हैं। समाज-सुधारको तथा राजनीतिज्ञो की समन्वयात्मक जीवनियों को लिखने का प्रयास बड़ा सार्थक रहा है। भाषा मे सरलता है।

सस्कृत और हिन्दी के शब्दो का अधिक प्रयोग तथा 'श' एव 'ष' का भी प्रयोगाधिक्य जीवनीकार के आंशिक दोष हैं।

छोटी ऊमर मोटा काम [3]

समीक्षा :—इकतालीस पृष्ठीय इस पुस्तक मे १० जीवनियो को स्थान

1. शिवचन्द्र भरतिया : पृ सं. ७
2. ले. दीनदयाल ओझा, १९७२ ई. मे प्रकाशित।
3. ले. दीनदयाल ओझा, मूमल प्रकाशन, जैसलमेर।

दिया गया है। गोखले, तिलक, लाजपतराय, चितरजनदास, गांधीजी, वोम मोतीलाल तथा जवाहरलाल नेहरू, राजेन्द्रप्रसाद और पटेल—इनकी जीवनियाँ पुस्तक मे हैं। सभी लघु कलेवर वाली वालोपयोगी जीवनियाँ हैं। भाषा सरल, लघुवाक्ययुक्त, स्पष्ट एव प्रवाहमय है—[1]

"सुभाष बाबू री बुद्धि वडी तेज ही। बात उण दिना री है जिण दिना आप स्कूल मे पढता हा। परीक्षा रा दिन। परीक्षा मे अंग्रेजी रो पर्चो हो। कोई सवाल इसो नहीं जिको आपनै नहीं आवै।"

सस्कृत और हिन्दी के शब्दो का ज्यो का त्यो प्रयोग करना, 'श' एव 'ष' का प्रयोग, सभी जीवनियो की आवृत्ति मात्र करना—इत्यादि जीवनीकार ने कमियाँ रख दी हैं।

भारत रा निरमाता[2]

समीक्षा —वत्तीस पृष्ठो मे वद्ध इस पुस्तक मे राममोहनराय, दयानन्द, महादेव गोविन्द रानाडे, तिलक, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन तथा श्रद्धानन्द की जीवनियाँ हैं। यह भी वालोपयोगी पुस्तक है। भाषा सरल एवं स्पष्ट है।

प्रकाशित जीवनियों की आवृत्ति, 'श' और 'ष' का प्रयोगाधिक्य, हिन्दी एव संस्कृत के शब्दो की भरमार—लेखक इन कमियो से परे नही रह सका है।

इतना होते हुए भी लेखक का जीवनी-लेखन का कार्य वडा प्रशसनीय रहा है। राजस्थानी भाषा मे ऐसी वालोपयोगी पुस्तको की कमी रही है।

महावीर री ओलखाण[3]

समीक्षा —महावीर स्वामी की विस्तृत जीवनी तथा उनके गहन विचारो को छोटी-सी पुस्तक के द्वारा प्रकट करने मे लेखिका को काफी सफलता मिली है। पुस्तक के वारह अध्यायों के नामकरण वडे सुन्दर हैं। 'महावीर री वाणी' अन्तिम अध्याय मे प्राकृत भाषा के अशो का भी राजस्थानी भाषा मे अनुवाद किया गया है। पुस्तक का शीर्षक उपयुक्त है।

प्राकृत के अशो का स्वाभाविक राजस्थानी मे अनुवाद नही होना, सस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य, मूल्य अधिक होना, कई वातो की आवृत्ति करना, कुछ अध्यायो को दो पृष्ठो तक मे सीमित रखना, 'महावीर-वाणी' मे प्राकृत के अशो को अनावश्यक स्थान देना, भाषा मे स्वाभाविकता का नही रहना, काल रो पहियो तथा चवदह कुलकर जैसे अनावश्यक अध्यायो को स्थान देना, 'श' एव

1 छोटी ऊमर मोटा काम पृष्ठ सख्या ३३
2 ले दीनदयाल ओझा, मूमल प्रकाशन, जैसलमेर।
3. लेखिका—शान्ता भानावत, १९७५ ई मे प्रकाशित।

'प' का अधिक प्रयोग करना तथा लेखिका द्वारा इस कृति को (महावीर स्वामी पर)' प्रथम कृति मानना—इत्यादि त्रुटियों का बाहुल्य रहा है।

कतिपय दोषों के रहते हुए भी महिला वर्ग की लेखन-कार्य के प्रति रुचि एव लगन एक विशिष्ट बात है। एक विस्तृत चर्चा या सामग्री को सक्षेप मे बाधने का प्रयास कोई हसी-खेल का काम नहीं है।

समूचे जीवनी-साहित्य का अध्ययन करने के बाद ज्ञात होता है कि राजस्थानी जीवनी-लेखको ने महापुरुषो, साहित्यकारो, राजनीतिज्ञो, पौराणिक अवतारो इत्यादि पर ही जीवनियाँ अधिक मात्रा मे लिखी हैं। स्फुट रूप मे समय समय पर पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित जीवनियो मे रावत सारस्वत के 'रवीन्द्र जीवणकथा' तथा 'उदयराज ऊजल' कल्याणसिह शेखावत के 'नोबेल इनाम पावणिया साहितकार पैट्रिक व्हाइट' 'टीटो' 'सुमनेसजी अवै नी रिया' तथा डा. 'कुर्ट वाल्दहाइम' मदनसिह देवडा का 'स्वर्गीय घनस्यामजी पखावज' घनश्यामलाल माथुर का 'नाथूरामजी खडगावत' तेजसिह जोधा का 'प्रेमचन्दर गोस्वामी' सोहनदान चारण का 'डा एल. पी. तेस्सीतोरी' निर्मलानन्द का 'श्रीपानुगटी लक्ष्मी नरसिहराव' अध्यापकप्रसाद का 'श्रीकुन्दनमल सेठिया' जगदीशचन्द्र शर्मा का 'डा राममनोहर लोहिया' पारस अरोडा का 'प्रिस क्रोपाटकिन' गजानन वर्मा का 'सरोदवादक दामोदर कावरा' नारायणसिह पीथल का 'मनुज देपावत' पुरुषोत्तम छगाणी का 'जालिम दीवान सालमसिघ' और किशोर कल्पनाकान्त का 'मानीता उद्योगपति श्रीगजाधर सोमाणी रो सुरगवास' जीवनी-लेख विशेषत उत्कृष्ट कोटि के बन पडे हैं।

निष्कर्षत. राजस्थानी जीवनी-साहित्य के गहन अध्ययन के पश्चात् दो तीन बाते सामने आती हैं। प्रथम तो यह कि राजस्थानी मे प्राय. सभी जीवनियाँ वर्णनात्मक शैली मे ही लिखी गई हैं। द्वितीय—जीवनी-लेखन के समय पाठक के मनोरजन की बात जीवनी-लेखक के मस्तिष्क से परे रहने के कारण इनमे तथ्य या प्रसग की दृष्टि से रोचक या मनोरजक, तत्त्व का अभाव-सा रहा है। तृतीय-राजस्थानी की अधिकाशत जीवनियाँ शिल्प की दृष्टि से लघु कलेवर वाली ही हैं। पत्र-पत्रिकाओं मे प्रकाशित जीवनियो के अतिरिक्त कुछ जीवनी-सग्रहो की जीवनियाँ भी अत्यन्त लघु कलेवर वाली हैं। जीवनीकार दीनदयाल ओझा मे विशेषत यह प्रवृत्ति मिलती है। चौथी-किरण नाहटा, दीनदयाल ओझा, श्रीलाल नथमल जोशी तथा शान्ता भानावत जैसे उत्कृष्ट कोटि के जीवनीकार राजस्थानी गद्य-साहित्य मे अवतरित हुए हैं।

राजस्थानी का अन्यान्य प्रकीर्ण साहित्य

अब तक वर्णित विधाओं मे अवशिष्ट गद्य-साहित्य को अन्यान्य प्रकीर्ण गद्य-साहित्य मे सम्मिलित किया जा सकता है। स्वतंत्रता के पश्चात् से ही यह

साहित्य विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो रहा है। इसका उद्‌गम-स्थल राजस्थानी पत्र-पत्रिकायें ही हैं। इन पुष्ट प्रमाणो के आधार पर १९५६ ई० से ही इस साहित्य का उद्‌गम-समय माना जा सकता है।

ऐसे साहित्य मे हास्यात्मक लघु कथन, चुटकले, लघु सूचनाएँ एव वार्त्ताएँ, सूक्तियाँ, सक्षिप्त चर्चाएँ, व्यंग्य कथन, व्यग्यात्मक पत्र, कहावतो आदि का विश्लेपण, कुछ गप्पें तथा प्रहेलिकाएँ इत्यादि नाना प्रकार के गद्य-साहित्य के रूप आते हैं। ऐसे साहित्य का पृथक् रूप मे कोई सकलन या सग्रह-ग्रन्थ अद्यावधि उपलब्ध नही हुआ है। यह तो ओळमो, हरावळ, मरुवाणी, राजस्थानी वीर, सरवर, ओळखाण, म्हारो देस, ईसरलाट, चामल, जळमभोम तथा कुरजाँ इत्यादि राजस्थानी एव हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओ के द्वारा प्रकाश मे आया साहित्य है। इतरेतर भाषाओ के साहित्य के उत्तरोत्तर विकास का प्रभाव सभवत राजस्थानी साहित्यकारो पर भी पडा होगा जिसके परिणामस्वरूप ऐसा अप्रचलित साहित्य राजस्थानी साहित्य मे, भले ही प्रभावहीन हो, अपना स्थान पृथक् रूप से वना सका है। 'हास्या हरि मिलै' शीर्षक से अलकृत कुछ चुटकले व्रजनारायण पुरोहित, नृसिह राजपुरोहित, हरिनायरायणशर्मा, लिखमीचन्द तथा गजेन्द्रनाथ आसोपा ने पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित कराये हैं तो 'चुटकला' शीर्पक के रूप मे अनिल खेतान, धनसुख वोहरा, वैजनाथ पवार, प्रदीप अग्रवाल, महेशकुमार, उमा राशि तथा राजेन्द्रसिंह ने कतिपय चुटकले पाठको को पढने हेतु जुटाए हैं। 'ल्योसा, थे भी हसल्यो' द्वारा यशोधरा तथा प्रेमसिंह विश्नोई, 'देख हसज्यो मती' द्वारा कल्याणसिह राजावत, 'थोडा हस लीज्यो सा' द्वारा शिवसिंह चोयल ने पाठको को हसाने का भरसक प्रयास किया है। पाठको के हसने की सीमा यही समाप्त नही हुई है इसलिए 'काई सा, हसोला काई'' द्वारा नृसिंह राजपुरोहित, 'म्हारो टिंगस' द्वारा निर्मोही व्यास, 'कवि री आप वीती' द्वारा कल्याणसिह राजावत, 'जी सोरै रा लैरका' द्वारा मुरलीधर व्यास, 'खळखळी' द्वारा मूलचन्द 'प्राणेश' 'गिरगिराट अर चिरमिराट' द्वारा जगदीशप्रसाद, 'छू गळ्या अर गळगळी' द्वारा अशोककुमार, 'छ वादशाही चुटकला' तथा थोडा सा राजस्थानी चुटकला' द्वारा अगरचन्द नाहटा ने वार वार हसाते हुए पाठको के जीवन की अनेकानेक समस्याओ से वोझिल मस्तिष्क को हल्का कर लोट-पोट होने को वाध्य किया है। हाडौती-प्रेमी अशोककुमार 'वाप' के एक चुटकले का प्रभाव द्रष्टव्य है—[1]

"कवि-सम्मेलन मे एक कवी आया ज्याँ को नाव छो नन्दविहारी 'पिताजी'। सयोजकजी वोल्या—अव आपक' आग' पिताजी कविता वाळ'गा। खोटी तकदीर सू सयोजक का पिताजी सुणवा हाला म सू उठ अर मच प' आग्या।

'म्हन अस्या खोटा करम खद सीखल्या' र' छगन्या' वोल्या अर सयोजकजी क' थपडा लगावा लाग्या।"

---

1 चामल पत्रिका . वर्ष २ अक २

इधर सवादात्मक शैली मे प्राणेशजी के चुटकले का प्रभाव कोई कम नही है—[1]

"एक वटाऊ—चौधरी ! खेत मे काई बीजै है ?

चौधरी—जा जा, को वताऊनी।

वटाऊ—भला ही मत वताय, ऊगसी जद देख लेसा।

चौधरी—राम करै, उगै ही ज नही।

प्राणेशजी ने 'खळखळी' नाम से कोई पचासो चुटकले पाठको के मनोरजनार्थ जुटाए हैं। कल्याणसिह राजावत तथा गजेन्द्रनाथ आसोपा ने भी इस मार्ग को नही छोडा है।

चुटकलो के क्षेत्र से परे हट कर अब यहाँ पूर्वोक्त प्रकीर्ण साहित्य के विभिन्न स्वरूपो पर दृष्टि डालना भी जरूरी है। यह साहित्य भी पत्र-पत्रिकाओ से प्राप्त होता है। रावत सारस्वत के 'राजस्थानी सम्मेलन एक विगत' 'मार्ग ट्वेन री सूक्तियाँ' 'बोलिया अर पोथिया' तथा 'जन मुगती सग्राम अर साहित्य' नारायणदत्त के 'ओळमो दीवाळी रो' तथा 'हिचकिया' जयशकर देवशकर शर्मा का 'माग्यां सूं भी वेसी दान' गणपतलाल डागी का 'सुरगरो मालपुवो' हिमकर का 'निहालदे अर कुरजां' मूलचन्द 'प्राणेश का 'धोरा री धरती सू' चन्द्रकुमार का 'मिलै वेटा रामलखन नै' रामसिह का 'वदनमाल' और नारायणदास धूत का 'मारवाड रा ओखाणा' इत्यादि लघु कथन, गप्पे, सूचनाएँ, वार्ताएँ, चर्चाएँ, समाचार, कहावतां विश्लेषण समय समय पर पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से पाठको को पढने को मिले हैं। विलम्ब से विकास की ओर अग्रसर राजस्थानी मे ऐसे प्रयोगात्मक साहित्य का प्रवेश कुछ विलक्षण-सी वात ही है। इसमे राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ की ही प्रशसा करनी होगी जिन्होंने इस प्रकार के साहित्य को एकत्र कर राजस्थानी के गद्य-साहित्य के भण्डार मे अपूर्व वृद्धि की है। इसके अतिरिक्त 'ओळखाण' जैसी पत्रिका मे राजस्थानी की कुछ पहेलियाँ देखी गई हैं। इस कार्य मे कल्याणसिंह शेखावत का योगदान श्लाघ्य है। राजस्थानी के व्यग्य-कथनो की भाषा मे नारायणदत्त श्रीमाली का उदाहरण प्रस्तुत है जो अधिक सजीव एव प्रवाहमय है—[2]

"दारु सू नैणा लाल चिट्ट होयग्या। हिरदो झूम रैयो अर मन पातर रै पगां री छणकार माथै नाच रंयो, नाच'र सहर री परसिद्ध पातर गगा मिनख रै खनै वैठगी। थारै विना म्हासू एक दिन ई काटणो पहाड़ लागै गगा ! कैवता कैवता मिनख ई गगा नै खीच लीनी।"



1. जलमभोम पत्रिका : वर्ष १ अंक ४

2. मरुवाणी: पत्रिका वर्ष ९ अक ७ 'ओळमो दीवाळी रो' से

अध्याय ६

समीक्षा-साहित्य

समीक्षा समालोचना का ही पर्याय है। समीक्षा शब्द सम् + ईक्षा से बना है तो समालोचना सम् + आलोचना से। ईक्षा संस्कृत की क्रिया ईक्षण का ही रूप है जिसका अर्थ देखना होता है तो लोचना संस्कृत की क्रिया लुच् का रूप है। इसका अर्थ भी देखना होता है। दोनो मे ही सम् उपसर्ग है दोनो के ही अन्त मे टाप् प्रत्यय लगा है। समालोचना मे सम् के बाद आङ् उपसर्ग अधिक लगा है। वैसे देखा जाय तो दोनो ही शब्दो के अर्थ समान ही है। इनका तात्पर्य है सन्तुलित दृष्टि से किसी रचना के गुणावगुणो का विवेचन करना। आलोचना मे रचना विशेष के दोषो पर ही बल दिया जाता है परन्तु सामालोचना या मे गुणो एव दोषो दोनो ही को सन्तुलित रूप मे देखा जाता है।

युग विशेष मे समीक्षा का स्वरूप बदलता रहता है किन्तु उसके सिद्धान्त अपरिवर्तनशील रहते हैं। हिन्दी-साहित्य मे इसी कारण से रीतिकालीन, भारतेन्दु द्विवेदी, शुक्ल एव शुक्लोत्तरयुगीन समीक्षा-प्रणालियाँ निर्मित हुई। राजस्थानी मे इस दृष्टि से अत्यल्प परिवर्तन हो पाया है। समालोचना या समीक्षा के मुख्यत ये उद्देश्य हैं —

(१) भाषा विशेष के साहित्य की देन के साथ साथ उसके कलात्मक पक्ष का भी निरूपण करना। (२) समाज के लिए साहित्य की देन पर विचार करना। (३) कुरुचिपूर्ण या अश्लील साहित्य की वृद्धि पर रोक लगाना। समालोचना मे दोषों का आधार-स्तम्भ समालोचक —

प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दो के निर्णय की क्षमता न होना, शब्द-शक्ति के ज्ञान की कमी, साहित्य की आत्मा की पहचान नही कर पाना, विषय और मानदण्ड का ध्यान न रखना, लक्ष्य की अनभिज्ञता, लक्ष्य की अनन्यता और आसक्ति से दूर रहना, अस्पष्टता, अर्थ-ज्ञान से अनभिज्ञ रहना, अतिभावुकता और रूढि या पक्षपात का दृष्टिकोण रहना—समालोचना के दोषो का प्रवेश समालोचक की कमियों के कारणस्वरूप ही हो पाता है। अत एक सत्समालोचक मे निम्नलिखित गुणो का होना अत्यावश्यक है —

(१) प्रकृति और जीवन के नियमों का पालन करना (२) अभिमान और दलबन्दी से दूर रहना (३) आलोच्य कलाकार के उद्देश्यो और प्रयोजनो को दृष्टि मे रखना (४) सम्पूर्ण कृति का अध्ययन कर अपना मत देना (५) रचना-

निर्माण के समय उसकी परिस्थितियो को ध्यान मे रखना। (६) भावुक बुद्धि से पूर्ण रहते हुए एकाएक निर्णय न करना। (७) केवल भाषा का ही नहीं अपितु काव्य की आत्मा का भी ध्यान रखना। (८) श्रेष्ठ रचनाओ को मान्यता देना। (९) सहृदयता, सहानुभूति, निष्पक्षता तथा दार्शनिक-वृत्ति से युक्त होना। (१०) ग्रहण की क्षमता, तर्क-शक्ति, बहुज्ञता, लोक-व्यवहार की कला, व्याकरण का समुचित ज्ञान, प्रकृति-प्रेम, गुण-ग्राहकता, आचरण, सत्यप्रियता आदि विशेषताओ से युक्त होना।

इन गुणो से युक्त समालोचक की समालोचना दोषपूर्ण नही हो सकती है। क्योंकि सत्समीक्षक की समालोचना मे दोषो को कोई अवसर नही मिल पाता है।

समीक्षा के प्रकार :—

भारतीय और पाश्चात्य दोनो के ही समन्वित विचारो के आधार पर समालोचना के मुख्यत ये प्रकार सामने आते हैं —

(१) व्याख्यात्मक समालोचना (२) निर्णयात्मक समालोचना (३) प्रभाववादी समालोचना (४) सैद्धान्तिक समालोचना (५) तुलनात्मक समालोचना (६) मनोवैज्ञानिक समालोचना (७) शास्त्रीय समालोचना (८) ऐतिहासिक समालोचना (९) प्रगतिवादी समालोचना।

व्याख्यात्मक समीक्षा मे समीक्षक रचनाकार के भावो को, सम्यक् रूपेण समझते हुए व्याख्या करता है तो निर्णयात्मक समीक्षा मे स्वय पर पड़े प्रभावो से युक्त होकर रचनाकार को साहित्य मे स्थान देने का निर्णय लेता है। प्रभाववादी समीक्षा कुछ मे विशेष प्रकार के प्रभावो के अनुभव को प्रकट किया जाता है तो सैद्धान्तिक समीक्षा मे सामाजिक नियमो का निर्धारण होता है। शास्त्रीय समीक्षा मे साहित्य के शास्त्रीय नियम या मानदण्ड काम मे आते हैं तो तुलनात्मक समीक्षा मे दो या दो से अधिक रचनाकारो का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाता है। ऐतिहासिक समीक्षा रचनाकार के समय के इतिहास तथा तत्कालीन परिस्थितियो का ध्यान रखती है परन्तु मनोवैज्ञानिक समालोचना रचनाकार की अन्तर्प्रवृत्तियो या अन्त: प्रकृति का विश्लेषण करती है। प्रगतिवादी समीक्षा का आधार समाजवादी यथार्थवाद है।

राजस्थानी समीक्षा : एक सामान्य परिचय.—राजस्थानी मे अभी तक समालोचना पर स्वतन्त्र रूप से कोई भी ग्रन्थ उपलब्ध नहीं होता है। समालोचना की धारा का उद्गम राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ से हुआ और उसकी अजस्र धारा भी इन्ही पत्र-पत्रिकाओ ने प्रवाहित की है तथा आज भी कर रही है। स्वतन्त्रता के पूर्व की पत्र-पत्रिकाओ मे ही समीक्षा का बीजारोपण हो चुका था जिसका विकसित रूप स्वतन्त्रता के पश्चात् की राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे ही देखा जा

सका है। स्वातंत्र्योत्तर-काल मे राजस्थानी की अनेकानेक पत्र पत्रिकायें प्रकाशित हुई ,कई पत्रिकाओ का प्रकाशन वन्द हुआ तथा कई की गति मन्द हुई। इतना होने के उपरान्त हमे ओळमो, हरावळ, ओळखाण, मरुवाणी जळमभोम, दीठ, जागती जोत, चामल, म्हारो देस, लाडेसर, सरवर, कुरजा मारवाड़ी, जाणकारी इत्यादि राजस्थानी पत्रिकाओ के अतिरिक्त राजस्थानी वीर, राजस्थान-भारती, वरदा, मधुमती, परम्परा आदि हिन्दी-पत्रिकाओ मे शताधिक स्फुट रूप मे समीक्षाये प्रकट हुई हैं। सच पूछा जाय तो राजस्थानी साहित्य की समीक्षा विधा की प्रगति और उसकी शाश्वतता पत्र-पत्रिकाओ पर ही पूर्णत निर्भर है। इसलिए पत्रिकाओ को अविकसित साहित्य का प्राण भी कहा जाता है। परन्तु यह राजस्थानियो का दुर्भाग्य है कि आज केवल तीन-चार राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ का ही प्रकाशन जारी रह सका है। शेष पत्रिकाएँ विश्रान्ति के क्षणो मे काल-यापन करती हुई सहसा मृत्यु को प्राप्त हो गई हैं। फिर भी उपलब्ध सामग्री के आधार पर हमे पर्याप्त स्फुट समीक्षायें हस्तगत हो जाती हैं। पत्र-पत्रिकाओ के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि राजस्थानी मे शताधिक समीक्षको मे से मूर्द्धन्य समालोचक तो नाम मात्र के ही हैं। किशोर कल्पनाकान्त, सत्यप्रकाश जोशी मनोहर शर्मा, कल्याणसिंह शेखावत, कृष्णगोपाल शर्मा, नन्द भारद्वाज, रामेश्वरदयाल श्रीमाली, नरेन्द्र भानावत, रावत सारस्वत, अगरचन्द नाहटा, श्रीलाल मिश्र, दामोदरप्रसाद, रामवक्ष जाट, पारस अरोडा, कनकराज सोनी, तेजसिंह जोधा, हरमन चौहान इत्यादि समीक्षक राजस्थानी साहित्य के शिरोमणि समालोचको मे से हैं।

राजस्थानी मे समीक्षा का स्वरूप हिन्दी से कुछ भिन्न है। इसका एक कारण दोनो के इतिहासो मे अन्तर होना है। जहाँ हिन्दी को साहित्यिक तथा राष्ट्रभाषा के रूप मे मान्यता दिलाने हेतु कोई खास संघर्ष नही करना पडा वहाँ राजस्थानी को साहित्यिक भाषा के रूप मे मान्यता पाने तथा सविधान मे भारत की इतरेतर प्रादेशिक भाषाओ के मध्य प्रतिष्ठित होने के लिए बहुत कुछ संघर्ष करना पडा। इस संघर्ष का प्रभाव राजस्थानी साहित्यकारो पर भी पडा। इतनी कठिन परिस्थितियो मे भी राजस्थानी भाषा ने साहित्य की प्रत्येक विधा मे महत्त्वपूर्ण प्रगति कर ली है। राजस्थानी मे पूर्वोक्त समीक्षा-पद्धतियो मे से केवल ये रूप ही ज्यादातर देखने को मिलते हैं —(१) व्याख्यात्मक समीक्षा (२) प्रभाववादी समीक्षा (३) ऐतिहासिक समीक्षा (४) सैद्धान्तिक समीक्षा (५) निर्णयात्मक समीक्षा।

विषय-वस्तु की दृष्टि से राजस्थानी मे प्राप्त समीक्षाओ को केवल दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है —(१) साहित्यिक समीक्षाएँ (२) साहित्येतर विषयो पर आधारित समीक्षाएँ

प्रथम प्रकार की समीक्षाओ मे राजस्थानी पुस्तको एव पत्र-पत्रिकाओ की समालोचना के आधार-बिन्दु के साथ साहित्य की प्रधानता रही है तथा द्वितीय प्रकार की समीक्षाओ मे राजनीति, देश तथा राजस्थानी भाषा को मान्यता दिलाने के प्रश्नों का प्राधान्य रहा है।

राजस्थानी समीक्षा-साहित्य : एक विशिष्ट परिचय—

साहित्य पर आधारित समीक्षाओ मे प्रतापसिंह राठौड की राजस्थानी वीराख्यानो मे कबन्ध-युद्ध, चचल पूगलिया की मेरे पति मेरे देवता उर्फ साहिबगज रो अजातशत्रु, कोमल कोठरी की ओझा निबन्ध-सग्रह, 'वाणी' का बानगी अक, रामनाथ व्यास 'परिकर' की लोक-सम्पर्क, साधना, परम्परा तथा गुणवन्ती पत्रिकाओ के विशेषाक, प्रेम रा दूहा, डू गजी ज्वारजी रो गीत, चूंटक्या, अकल बिना ऊट उभाणो, कल्याणसिह शेखावत की जामण देवै हेलो, प्रेतात्मा री प्रीत, मिनखा जूण रो मोल, रोहिडै रा फूल, थारा के त्याहां, रतनसी वीरम-देवोत रा कवित्त, कृष्णगोपाल शर्मा की चार खेमे. चौसठ खू टे, पद्मिनी का शाप, परमवीर शैतान के प्रति, उषा मुस्करा उठी, माझी पतवार और किनारा, राधा, सहकारी गीतमाला, मेगास्थनेस का परिभद्र पलिब्रोथ, श्रीमद् देवचन्द्र स्तवनावली; राजस्थान-भारती रो सिरजण अक एक जहरी डक, काव्याजलि एक दादी रो मटको, कल्याण रो अग्निपुराण अक, 'राजेन्द्र मिश्र की तूंबी धारा तू वा रतन, निर्मलानन्द वात्स्यायन की त्रिसूलम्, वैजनाथ पवार की चूटक्या, राजस्थानी गू ज, जगदीश माथुर'कमल' की वरदा और अनोखी आन, अम्बू शर्मा की ओजू पैलो अंक—'मानखो' रतनलाल जोशी की स्वर्णजयन्ती स्मृति-ग्रन्थ, रामचरण महेन्द्र की वह कम्यूनिस्ट था, निर्मला मिश्र की रामतीर्थ-'मगलदीप' रावत सारस्वत को मूमल प्रथम दो अक, राजस्थानी कविता, माझलरात,रामदूत, मेघदूत,सतपकवानी, नटो तो कहो मत, प्राचीन राजस्थानी गीत, समयसुन्दर कृत कुसुमाजलि, वागडनो वरात, रामचरित, रसमयी, शकुन्तला काव्य, गढगीत, बहुनामी री वेलि, सबडका, राजस्थान के रावल, राजस्थान के भवाई, झिडियो, बन्दीमोचन, नयो साहित्य, राजस्थान की रसधारा, वरस गांठ, आभैपटकी, झूमको, वेद व्याख्या, जीत समझोतरी, पिरोळ मे कुत्ती ब्याई, मिनखपणा रो मोल, रग रा दूहा, सेक्सपियर री का'णिया परमवीर शैतान के प्रति, पीरूसिंघ री वेलि, अमरसिंघ री वेलि, पाबूजी री वेलि, गोविन्दसिंघ री वेलि, राणैं रैंवत रो रग,फुलवाडी,बावी, राजस्थानी साहित्य कुछ प्रवृत्तियाँ, दीवा कापै क्यू , मरुमयक, परमवीर, राज-स्थान के कवि, दलपत विलास, डिंगळ गीत, हरिरस, महादेव पार्वती वेलि, मदायण, हम्मीरायण, उदयराजजी रो काव्य, पुन्न रो काम, समय बायरो, द्रौपदी-विनय, बटोही, देल्या रो दिवलो, राजस्थान का हृदय तथा गीत कथा, चखो वीरो, इब तो चेतो, राजस्थानी लोककथाएँ, जानकारी, परम्परा, लोककला, मरुभारती, मधुमती, विश्वम्भरा और वागवर पत्रिकाओ के विशेषाको की समीक्षाएँ,

कृष्णगोपाल कल्ला की 'राजस्थानी काव्य—एक निरख एक परख' जगदीश-चन्द्र शर्मा की 'गीत कलम मे बन्द है' रामप्रसाद दाधीच की 'राजस्थानी मे नव सिरजण रो रूप' रामेश्वर टांटिया की 'कुछ देखी कुछ सुनी' अगरचन्द नाहटा की वरद वरणाव अर भूंगलरासो, जीवण कल्है री रचो गीत भासा, राम रासो री एक अनोखी प्रति, जोसी राइकृत दपति विनोद, महड़ रिवदान री रचनावा, नेतोजी माथुर री गीता अर भागवत भासा, कवि दुरसाजी अढा री किरतारबावनी, चारण कवि दानै आसियै री विरद प्रकास, अजीत विलास री दूजी प्रति अभयकुसल री भरतरी सतक बालावबोध, ढूढाडी गद्य ग्रथ अमृत सागर खोडा अर चोटियाली दूहा, कवि लधमल री देवी विलास, भूंगल रा दूहा, सत्यनारायण प्रभाकर 'अमन' की 'वेद व्यास कृत कीडो-नगरो' रामदत्त साकृत्य की 'आभैपटकी' सीताराम शर्मा की 'कळप'रा कवि—डा॰ नारायणसिह भाटी' नथमल केडिया की 'ढोला मरवण' कनकराज सोनी की किरकिर, ओळूं री ओळ्या, जीण माता, हम तुम और वह, टमकोली, विरखा बीनणी, कीडी नगरो, शेखर का सोरठा, बाता ही चालै, मनवार, बालोत्सव, कूकू टमरक टू, मरुवाणी, राम मिलाई जोडी, ताराप्रकाश जोशी की 'राजस्थानी एक की लारै रैयोडी बाता' भवर भादानी की 'राम मिलाई जोडी' नारायणसिह भाटी की रसीलै राज रो साहित, सोहनदान चारण की'करसै अर मजूर री चित्रामा री पोथी'चेतमानखा'अरुणकुमार की'विमलेस री कविता म्हनै क्यू हसावै' प्रकाश परिमल की 'राजस्थानी एक' हरीश भादानी की 'अधार पख जूंझता रैवण री जात्रा' नन्द भारद्वाज की हास्या हरि मिलै, प्रेतात्मा री प्रीत, आदर्स री सीवा मे कैद सेठिया री कविता, कळप री काइसिस, काव्या-जळि, मौक्तिक, वन्दना, भारमली उछाळो दवियोडी माटी री, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की बग भारसी, आधै नै आख्या, उस्ताद री कवितावा राजस्थानी एक, जळमभोम, आज री कहाणी एक सिधु राग री धुन मे, शिवराज छगाणी की आधै नै आख्या, पिरोळ मे कुती ब्याई, अन्नाराम 'सुदामा' की जैन शोध अर समीक्षा, बदरीप्रसाद साकरिया की चेत मानखा, गोवर्द्धन हेडाऊ की एकल गिड दाढ़ाळै री वात, नरेन्द्र भानावत की मरु महमा, छीजण, गाधी प्रकास, परमेश्वर बगडका की हेमाणी परम्परा पत्रिका का विशेषाक, मनोहर शर्मा की ढोला मारू रा दूहा मे काव्य-सौष्ठव, सस्कृति एव इतिहास, भडाण गाम रो पीर, एक राज-स्थानी वात, आज रा सरपच—लोककथा विवेचन, पदम कला री वात—एक विवेचन, वरखा रुत रा लोकगीतां मे सिणगार री रसवती, श्रीलालमिश्र की हू गोरी किण पीव री, कौटिल्य, गाधी प्रकास, राम मिलाई जोडी, मैंकती काया मुळकती धरती, किरण नाहटा की 'कन्यादान' सुमनेश जोशी की मनवार, मोरपख, गोवर्धन सिह शेखावत की 'मणि मधुकर री कवितावा' उदयवीर शर्मा की परशुराम-सागर, नुवी कविता अर कवि भूंगर,

मोहिनी देवी की वग्मगाठ, वेद व्यास की ग्राज रा कवि, पारखी की सपनो, जागती जोत त्रिशेपाक, राजस्थानी साहित्य सम्मेलन री स्मारिका, भगवतीलाल व्यास की अधार पख भावी उजास रो सनेसो, गुणाढ्य की लोक-साहित्य की सास्कृतिक परम्परा, गोविन्द कल्ला की लील टास साहित रो सुगन, बी. ग्रार. प्रजापति की उकळता ग्रातरा सीला सास, गोपालनारायण बोहरा की ढूढाड महातम, रसराशि की मीरा पदावलि, राजेन्द्र बोहरा की ग्राखरमाळ, के ग्रार. केवळिया की सूरज-रु डाळो, भूपतिराम साकरिया की साहित्य री मूल प्रेरणावा-एक विवेचन, जिज्ञासु की देवकिसन राजपुरोहित री तीन रचनावा, शालिवाहन की राजस्थानी कविताक, दामोदरप्रसाद की कनकसुन्दर री नवल कथा, कनकसुन्दर 'नवल कथा' री ग्रौपन्यासिकता रो विवेचन, कवियो की सूर्यमल्ल विशेपाक ('परम्परा' पत्रिका) सत्यवती शर्मा की खाग्या वाळण जोगा, गौरीशकर 'ग्ररुण' की उणियारा, सूचक की डा. टैसीटोरी का राजस्थानी ग्रंथ सर्वेक्षण अक ('परम्परा' पत्रिका) चन्द्रदान चारण की रामदूत, लिपिसुन्दर की ग्राचार्य श्रीविनयचन्द्र ज्ञान भडार ग्रथ-सूची भाग १, जनार्दनराय नागर की बोवजी रो बोल, दीनदयाल ग्रोझा की 'मधुमती . राजस्थानी भाषा का कथा अक एक विवेचन' बद्रीप्रसाद पचोली की भूमक्या जागी, स्नेही की ग्रापणा बापूजी, राधाकृष्ण शर्मा की डाक्टर रो ब्याव, छिद्रान्वेपी की राजस्थानी मणिमाला, जगदीश उज्ज्वल की उणियारा, हेतालू की घर की रेल, घर की गाय, मुरलीधर व्यास की जागती जोता, नवबोध की किरकिर, हाली की कू कू, रामनिवास शर्मा की नागदमण, काकोसा की ग्रोळू री ग्रोळ्या, ग्रद्‌भुत शास्त्री की श्रीमेनारियाजी की राजस्थानी साहित्य की रूप-रेवा, रतनशाह की गीत कलम मे वद है, जाणकारी (पत्रिका का विशेपाक), हेलो (पत्रिका का विशेपाक) चातक की ढोला मारू रा दूहा · एक विवेचन, प्रहलाद ग्रोझा की हास्या हरि मिलै, रोहिडै रा फूल, प्रेमजी 'प्रेम' की ग्रण वाच्या ग्राखर, झंणकार, हरमन चौहान की बोल भारमली, धनजय वर्मा की परदेसी री गोरडी, दस दोख, हियै तणा उपाय, सूरज कू डाळो, एकल गिड दाढाळै री वात, राजेश की ग्रमर वगलो, तेजसिंह जोधा की कूंकू, कळप, चेतन री धूणी, पणिहारी, छोजण, किरकिर, जनकवि, उस्ताद स्मारिका, हाडौती अचल के राजस्थानी कवि, तास रो घर, रोहिडै रा फूल, ग्रटारवा, सत्यप्रकाश जोशी की जनकवि उस्ताद, रामनाथ व्यास 'परिकर' की राजस्थानी साहित्य ग्रकादमी ग्रर गुवारपाठो कू कू, राममिलाई जोडी, गरम हवा : एक रिसतो घाव, मरुवाणी, सत्येन जोशी की राजस्थानी एक · चर्चा, मूलचन्द सेठिया की राजस्थानी री नूवी कविता, रामवक्ष जाट की ग्रांधी ग्रर ग्रास्था, झळ, रोहिडै रा फूल, ग्रटारवां, अधार पख नू जूझतो राजस्थान रो नूवो ग्रादमी, इतिहास ग्रर इतिहासिक उपन्यास, हेमाणी रै हवाळै नू उठता सवाल, पारस ग्ररोड़ा की कंवळ-पूजा : निजू विचार, तगादो, जस-दिवस : एक परिचय, जागती-

जोत के अंक की समीक्षा, रामनारायण न मोमाणी की वोन भाग्मली राजस्थानी कविता मे सैक्स रो जलम, हणमानसिंह शेखावत री ढोला मारू मे मारुणी रो विरह, गुणनिधान याज्ञिक की वाळसाद, काळजै रो कोर, दिलीप, विनयकुमार की महाकवि सूर्यमल्ल अर उण री वीर सतसई, किशोर कल्पनाकान्त की रातवासो, आधुनिक तेलुगु साहित्य, ओळू री ओळ्या एक लूठी काव्य कृति, रवीन्द्र री कविता, अम्बू शर्मा की थीसू हजारो मु वी वानगी, दात कथावा अर वरजूडी रो तप, मरहवा ए देस—बगला, मरहवा ! मरहवा !, चुरू पत्रिका अर लोर विगुल, ग्योहो, वाग्वर, मनन, समीक्षाएँ विशेष उल्लेखनीय रही हैं।

कुछ साहित्येतर समीक्षायें जिनमे इतिहास, राजस्थानी भाषा के मान्यता के प्रश्न सम्बन्धी, फिल्मो, राष्ट्र तथा अन्यान्य समस्याओ विषयक विचारो का प्रवाह प्रवहित हुआ है, पूर्वोक्त राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से प्रकट हुई है। इन स्फुट रूप मे प्राप्त साहित्येतर समीक्षाओ मे शकरदयाल चौऋषि की छात्र अनुसासनहीणता एक विचारण जोग राष्ट्रीय समस्या, राहुल साकृत्यायन की राजस्थान री शिक्षा-समस्या, राजेन्द्र मिश्र की तिरसा राजस्थान का वासन्तिक पर्व गणगोर, कल्याणसिंह शेखावत की रोटी, कपडा ओर मकान, वाटरगेट काड, देस रा हाल चाल, आज री मायावी दुनिया, कृष्णगोपाल शर्मा की लोकतत्र एक दरकार—एक दरसण, साहित्यिक उपेक्षा री धिनावरी विरती रो शिकार चुरू जिला, अम्बू शर्मा की आपा चाये जनता में वैठणिया अथवा मच सू दूकणिया पण हा तो राजस्थानी के ?, चीन रो ओछोपण, हिसा अर अहिंसा, राजस्थानी वोली नी-भासा है, सत्येन जोशी की हिन्दी रै दलाला रो राजस्थानी भासा मे पेट-पालू पापी रुजगार, कल्याणसिह राजावत की बाग'र बारा चौवीस जणा, श्याम महर्षि की राजस्थानी साहित्य अकादमी माय भिझोक घालणिया कुण ? अशर्फी देवी राजगढिया की घडल्या म्हारा अजब लुहारचा दिवलोजी, रावत सारस्वत की साहित्यिक सगठण, म्हारी वात, राजस्थानी री मानता, मुद्दे री वाता, एक लाख रिपिया रो इनाम, टावरा री पढाई अर भासावाद, जयपुर मे साहित्य सेमीनार, लाज मरू ए माय, राजस्थानी भासा अर राजस्थान सरकार, ए तीनू दिन मरण रा, आज रा कवि, राजस्थानी गद्य रै रूप-निर्माण री समस्या, राजस्थानी भासा बनाम राजस्थान सरकार, नई पीढी रा भरूटिया, अरुण माहेश्वरी की इरमाला हूस अर मनोरजन, जगदीशचन्द्र शर्मा की राजस्थानी भासा रो जूझारू पुत्रा नै हेलो, रामेश्वर टांटिया की आजकल रा पढेसरी, जिनेन्द्रकुमार की समाजवाद री दिसा कानी आगूच वधता कदम, जयदयाल डालमिया की धरम अर सस्कृति नु वी पुराणी निजर, शकर सारस्वत की १५ अगस्त १५ वरस, वैरीशालसिंह की विसरचा जद वाघ नै, नारायणसिह राजगुरु की राजस्थानी फिल्म—गोगाजी पीर, रेवतदान चारण की राजस्थानी साहित्यकारा नै चुनौती,

एस पी मथुर की खलनायकी रा नू वा तेवर, त्रिभुवन माथुर की 'फिर भी —अगा जवान व्हैतो हिन्दी-सिनेमा, शवर भादानी की आन्दोलन री सरुआत सू पैली, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की आघा व'ळो एटमवमा नै, यम हसन की भारतीय लेखण मौजूदा परिपेख मे, नन्द भारद्वाज की नुंवै लेखण री फौरी अवखाया वावत, लेखण रै एडै छेडै, असली लडाई अर भाषा री सवाल, नृसिह राजपुरोहित की राजस्थानी रा सुलगता सवाल, वदरीप्रसाद साकरिया की वरखा री प्रार्थना, गोवर्द्धन हेडाऊ की नूवै सिरजण री सरूप, कचरौ कवाड़ी : कल्चर, मनोहर शर्मा की राजस्थान रो साहित्यकार कुण, गोवर्धनसिंह शेखावत की असली लडाई अर भासा रौ सवाल, म्हैं सोचू हू, सीताराम महर्षि की आरती रा वोल, वेद व्यास की एक वदळाव आळा कार्यक्रम री दरकार, मोहन श्रोत्रिय की भासा रौ सवाल अर आपा गै मकसद, रमेश उपाध्याय की असली लडाई अर जन-सिक्सा रौ माध्यम, कृष्ण कल्पित की सवाल ठडो नी व्है जावै, वी. आर प्रजापति की भासा रौ सवाल अर नकली लडाई, राज सरकार रौ रवैयो, करणीदान वारहठ की भासा सारू लूठी लडाई री जरूरत, लीला मानवीय की वाट जोवतो सवाल रौ निसाण, कमला वर्मा की भासा रौ सवाल उठावण सूं पैली, राजेन्द्र वोहरा की कटघरै मे ऊभौ राजस्थानी री लिखारौ, विनोदकुमार साकरिया की राजस्थानी भासा री सुवाल, भूपतिराम साकरिया की षड्यत्र एक राजपाल रौ, अरविन्द जोशी की 'अकुर' एक और भारतीय फिलम, दामोदरप्रसाद की राजस्थानी री लोकप्रियता खातिर के यौन साहित्य रो सा'रो लेणो पडैगो, सम्पादक री समस्या, वद्रीप्रसाद पुरोहित की राजस्थानी लोकजीवण मे वरखा रुत, चन्द्रसिह की राजस्थानी री मानता अर केन्द्रीय साहित्य अकादमी, सुगनी की प्रकृति सू वर्षा ज्ञान, कौमुदीकार की कम्यूनिस्ट साहित्य, शान्तिसिंह की आया मनोहरजी-गया मनोहर जी-आया श्रीलालजी-गया श्रीलालजी, राणा सेर प्रताप की 'काची मोत . राजस्थानी भासा री सविधानिक मान्यता री अर गाणां वजाणां उणरै मायतांरा, शिवकुमार भुवाणिया की अै पुरस्कार केवल राजस्थान मांय रैवणिया साहित्यकारा वास्तै हैं, मारवाडी-समाज कठीनै चाल्यो रे, ओकार पारीक की आखर-चिन्तण, मणि मधुकर की भचीड खाया ठा पडैला, अनिल जालान की इशाराजी री फिल्मा री आलोचना, अद्भुत शास्त्री की राजस्थान री भाषा और वोल्या, राजस्थानी सू ही राजस्थान री उन्नति, रतन शाह की राजस्थानी रै जन-आन्दोलन रो ज्वालामुखी कद भी फूट सकै, मूलचन्द 'प्राणेश' की आपणी वात, हरमन चौहान की सुररियलिजम फिल्मा मे सैक्स अर चूमणी, राजस्थान साहित्य अकादमी, अरुणा ईरानी, तेजसिंह जोधा की दीठ ३ की सम्पादकी, 'राजस्थानी एक' की सम्पादकी, तीतर फर्र ऽ ऽ ऽ, नवा छापारी हलचल, सत्यप्रकाश जोशी की राजस्थानी रा दोयण कुण, सूमण पूछै

प्रथम प्रकार की समीक्षाओ मे राजस्थानी पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओ की समालोचना के आधार-विन्दु के साथ साहित्य की प्रधानता रही है तथा द्वितीय प्रकार की समीक्षाओ मे राजनीति, देश तथा राजस्थानी भाषा को मान्यता दिलाने के प्रश्नो का प्राधान्य रहा है।

राजस्थानी समीक्षा-साहित्य : एक विशिष्ट परिचय.—

साहित्य पर आधारित समीक्षाओ मे प्रतापसिंह राठौड की राजस्थानी वीराख्यानो मे कवन्ध-युद्ध, चचल पूगलिया की मेरे पति मेरे देवता उर्फ साहिवगज रो अजातशत्रु, कोमल कोठरी की ओझा निवन्ध-सगह, 'वाणी' का वानगी अक, रामनाथ व्यास 'परिकर' की लोक-सम्पर्क, साधना, परम्परा तथा गुणवन्ती पत्रिकाओ के विशेपाक, प्रेम रा दूहा, डूंगजी ज्वारजी रो गीत, चूंटक्या, अकल विना ऊट उभाणो, कल्याणसिंह शेखावत की जामण देवै हेलो, प्रेतात्मा री प्रीत, मिनखा जूण रो मोल, रोहिडै रा फूल, थारा के त्याहा, रतनसी वीरम-देवोत रा कवित्त, कृष्णगोपाल शर्मा की चार खेमे· चौसठ खू टे, पद्मिनी का शाप, परमवीर शैतान के प्रति, उषा मुस्करा उठी, माझी पतवार और किनारा, राधा, सहकारी गीतमाला, मेगास्थनेस का परिभद्र पलिव्रोथ, श्रीमद् देवचन्द्र स्तवनावली, ...न-भारती रो सिरजणा अक एक जहरी डक, काव्यांजलि एक दादी रो ...ो, कल्याण रो अग्निपुराण अक, राजेन्द्र मिश्र की नूंवी धारा नूवा रतन, ...न्द वात्स्यायन की त्रिसूलम्, वैजनाथ पवार की चूटक्या, राजस्थानी ...गदी... माथुर'कमल' की वन्दा और अनोखी आन, अम्वू शर्मा की ओजूं पैलो ...नख' रतनलाल जोशी की स्वर्णजयन्ती स्मृति-ग्रन्थ, रामचरण महेन्द्र की ...था, निर्मला मिश्र की रामतीर्थ-'मगलदीप' रावत सारस्वत की ...दां अक, राजस्थानी कविता, माझलरात, रामदूत, मेघदूत, सतपकवानी, कहो मत, प्राचीन राजस्थानी गीत, समयसुन्दर कृत कुसुमाजलि, , रामचरित, रसमयी, शकुन्तला काव्य, गढगीत, वहुनामी री वेलि, ...ान के रावल, राजस्थान के भवाई, झिडियो, वन्दीमोचन, नयो ...ा की रसधारा, वरस गाठ, आभैपटकी, झूमको, वेद व्याख्या, , पिरोळ मे कुत्ती व्याई, मिनखपणा रो मोल, रग रा दूहा, ...िया परमवीर शैतान के प्रति, पीरूसिंघ री वेलि, अमरसिंघ ...ी वेलि, गोविन्दसिंघ री वेलि, राणै रैवत रो रग, फुलवाडी, वावी, - कुछ प्रवृत्तियाँ, दीवा कांपै क्यू, मरुमयक, परमवीर, राज-...त विलास, डिंगळ गीत, हरिरस, महादेव पार्वती वेलि, , उदयराजजी रो काव्य, पुन्न रो काम, समय वायरो, द्रोपदी-रो दिवलो, राजस्थान का हृदय तथा गीत कथा, चखो वीरो, ...ी लोककथाएँ, जानकारी, परम्परा, लोककला, मरुभारती, और वरवर पत्रिकाओ के विशेपाको की समीक्षाएँ,

सका है। स्वातन्त्र्योतर-काल मे राजस्थानी की अनेकानेक पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित हुई ,कई पत्रिकाओ का प्रकाशन बन्द हुआ तथा कई की गति मन्द हुई। इतना होने के उपरान्त हमे ओळमो, हरावळ, ओळखाण, मरुवाणी जळमभोम, दीठ, जागती जोत, चामल, म्हारो देस, लाडेसर, सरवर, कुरजा मारवाडी, जाणकारी इत्यादि राजस्थानी पत्रिकाओ के अतिरिक्त राजस्थानी वीर, राजस्थान-भारती, वरदा, मधुमती, परम्परा आदि हिन्दी-पत्रिकाओ मे शताधिक स्फुट रूप मे समीक्षायें प्रकट हुई हैं। सच पूछा जाय तो राजस्थानी साहित्य की समीक्षा विधा की प्रगति और उसकी शाश्वतता पत्र-पत्रिकाओ पर ही पूर्णत निर्भर है। इसलिए पत्रिकाओ को अविकसित साहित्य का प्राण भी कहा जाता है। परन्तु यह राजस्थानियो का दुर्भाग्य है कि आज केवल तीन-चार राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ का ही प्रकाशन जारी रह सका है। शेष पत्रिकाएँ विश्रान्ति के क्षणो मे काल-यापन करती हुई सहसा मृत्यु को प्राप्त हो गई हैं। फिर भी उपलब्ध सामग्री के आधार पर हमे पर्याप्त स्फुट समीक्षायें हस्तगत हो जाती हैं। पत्र-पत्रिकाओ के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि राजस्थानी मे शताधिक समीक्षको मे से मूर्द्धन्य समालोचक तो नाम मात्र के ही हैं। किशोर कल्पनाकान्त, सत्यप्रकाश जोशी, मनोहर शर्मा, कल्याणसिंह शेखावत, कृष्णगोपाल शर्मा, नन्द भारद्वाज, रामेश्वरदयाल श्रीमाली, नरेन्द्र भानावत, रावत सारस्वत, अगरचन्द नाहटा, श्रीलाल मिश्र, दामोदरप्रसाद, रामवक्ष जाट, पारस अरोडा, कनकराज सोनी, तेजसिंह जोधा, हरमन चौहान इत्यादि समीक्षक राजस्थानी साहित्य के शिरोमणि समालोचको मे से हैं।

राजस्थानी मे समीक्षा का स्वरूप हिन्दी से कुछ भिन्न है। इसका एक कारण दोनो के इतिहासो मे अन्तर होना है। जहाँ हिन्दी को साहित्यिक तथा राष्ट्रभाषा के रूप मे मान्यता दिलाने हेतु कोई खास सघर्ष नहीं करना पडा वहाँ राजस्थानी को साहित्यिक भाषा के रूप मे मान्यता पाने तथा सविधान मे भारत की इतरेतर प्रादेशिक भाषाओ के मध्य प्रतिष्ठित होने के लिए बहुत कुछ सघर्ष करना पडा। इस सघर्ष का प्रभाव राजस्थानी साहित्यकारो पर भी पडा। इतनी कठिन परिस्थितियो मे भी राजस्थानी भाषा ने साहित्य की प्रत्येक विधा मे महत्त्वपूर्ण प्रगति कर ली है। राजस्थानी मे पूर्वोक्त समीक्षा-पद्धतियो मे से केवल ये रूप ही ज्यादातर देखने को मिलते हैं —(१) व्याख्यात्मक समीक्षा (२) प्रभाव-वादी समीक्षा (३) ऐतिहासिक समीक्षा (४) सैद्धान्तिक समीक्षा (५) निर्णयात्मक समीक्षा।

विषय-वस्तु की दृष्टि से राजस्थानी मे प्राप्त समीक्षाओ को केवल दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है —(१) साहित्यिक समीक्षाएँ (२) साहित्येतर विषयो पर आधारित समीक्षाएँ

मोहिनी देवी की वरसगाठ, वेद व्याम की आज रा कवि, पारखी की सपनो, जागती जोत त्रिशेपाक, राजस्थानी साहित्य सम्मेलन री स्मारिका, भगवतीलाल व्यास की अधार पख भावी उजास रो सनेसो, गुणाढ्य की लोक-साहित्य की सास्कृतिक परम्परा गोविन्द कल्ला की लील टास साहित रौ सुगन, बी. आर. प्रजापति की उकळता आतरा सीला सास, गोपालनारायण वोहरा की ढूढाड महातम, रसराशि की मीरा पदावलि, राजेन्द्र वोहरा की आखरमाळ, के आर. केवळिया की सूरज-कू डाळो, भूपतिराम साकरिया की साहित्य री मूल प्रेरणावा-एक विवेचन, जिज्ञासु की देवकिसन राजपुरोहित री तीन रचनावा, शालिवाहन की राजस्थानी कविताक, दामोदरप्रसाद की कनकसुन्दर री नवल कथा, कनकसुन्दर 'नवल कथा' री औपन्यासिकता रो विवेचन, कवियो की सूर्यमल्ल विशेपाक ('परम्परा' पत्रिका) सत्यवती शर्मा की खाग्या वाळण जोगा, गौरीशकर 'अरुण' की उणियारा, सूचक की डा. टैसीटोरी का राजस्थानी ग्रथ सर्वेक्षण अक ('परम्परा' पत्रिका) चन्द्रदान चारण की रामदूत, लिपिसुन्दर की आचार्य श्रीविनयचन्द्र ज्ञान भडार ग्रथ-सूची भाग १, जनार्दनराय नागर की वोवजी रो वोल, दीनदयाल ओझा की 'मधुमती . राजस्थानी भाषा का कथा अक एक विवेचन' बद्रीप्रसाद पचोली की भूमक्या जागी, स्नेही की आपणा वापूजी, राधाकृष्ण शर्मा की डाक्टर रो व्याव, छिद्रान्वेपी की राजस्थानी मणिमाला, जगदीश उज्ज्वल की उणियारा, हेतालु की घर की रेल, घर की गाय, मुरलीधर व्यास की जागती जोता, नववोध की किरकिर, हाली की कू कू, रामनिवास शर्मा की नागदमण, काकोसा की ओळू री ओळ्या, अद्भुत शास्त्री की श्रीमेनारियाजी की राजस्थानी साहित्य की रूप-रेखा, रतनशाह की गीत कलम मे वद है, जाणकारी (पत्रिका का विशेपाक), हेलो (पत्रिका का विशेषाक) चातक की ढोला मारू रा दूहा एक विवेचन, प्रहलाद ओझा की हास्या हरि मिलै, रोहिडै रा फूल, प्रेमजी 'प्रेम' की अण वाच्या आखर, झणकार, हरमन चौहान की बोल भारमली, धनजय वर्मा की परदेसी री गोरडी, दस दोख, हियै तणा उपाय, सूरज कू डाळो, एकल गिड दाढाळै री वात, राजेश की अमर वगलो, तेजसिंह जोधा की कू कूं, कळप, चेतन री वुणी, पणिहारी, छीजण, किरकिर, जनकवि, उस्ताद स्मारिका, हाडौती अचल के राजस्थानी कवि, तास रो घर, रोहिडै रा फूल, अटारवा, सत्यप्रकाश जोशी की जनकवि उस्ताद, रामनाथ व्यास 'परिकर' की राजस्थानी साहित्य अकादमी अर गुवारपाठो कू कू, राममिलाई जोडी, गरम हवा : एक रिसतो घाव, मरुवाणी, सत्येन जोशी की राजस्थानी एक : चर्चा, मूलचन्द सेठिया की राजस्थानी री नूवी कविता, रामवक्ष जाट की आंधी अर आस्था, झळ, रोहिडै रा फूल, अटारवा, अधार पख सू जूंझतो राजस्थान रो नुंवो आदमी, इतिहास अर इतिहासिक उपन्यास, हेमाणी रै हवाळै सूं उठता सवाल, पारस अरोड़ा की कवळ-पूजा : निजू विचार, तगादो, जस-दिवस : एक परिचय, जागती-

कृष्णगोपाल कल्ला की 'राजस्थानी काव्य—एक निरख एक परख' जगदीशचन्द्र शर्मा की 'गीत कलम मे बन्द है' रामप्रसाद दाधीच की 'राजस्थानी मे नव सिरजण रो रूप' रामेश्वर टाटिया की 'कुछ देखी कुछ सुनी' अगरचन्द नाहटा की वरद वरणाव अर भू गलरासो, जीवण कल्है री रचो गीत भासा, राम रासो का एक अनोखी प्रति, जोमी राइकृत दपति विनोद, महड़ रिवदान रो रचनावा, नेतोजी माथुर री गीता अर भागवत भासा, कवि दुरसाजी अढा री किरतारबावनी, चारण कवि दानै आसियै रो विरद प्रकास, अजीत विलास री अधूरी प्रति, अभयकुसल रो भरतरी सतक बालावबोध, ढूढाडी गद्य ग्र थ अमृत सागर खोडा अर चोटियाली दूहा, कवि लघमल रो देवी विलास, भू गल रा दूहा, सत्यनारायण प्रभाकर 'अमन' की 'वेद व्यास कृत कीड़ी-नगरो' रामदत्त साकृत्य की 'आभैपटकी' सीताराम शर्मा की 'कळप'रा कवि—डा॰ नारायणसिंह भाटी' नथमल केडिया की 'ढोला मरवण' कनकराज सोनी की किरकिर, ओळू री ओळ्या, जीण माता, हम तुम और वह, टमकोली, विरखा बीनणी, कीडी नगरो, शेखर का सोरठा, बाता ही चालै, मनवार, बालोत्सव, कू कू टमरक दू, मरुवाणी, राम मिलाई जाडो, ताराप्रकाश जोशी की 'राजस्थानी एक की लारै रैयोडी वाता' भवर भादानी की 'राम मिलाई जोडी' नारायणसिंह भाटी की रसीलै राज रो साहित, सोहनदान चारण की'करसै अर मजूर री चित्रामा री पोथी'चेतमानखा'अरुणकुमार की'विमलेस री कविता म्हनैं क्यू हसावै' प्रकाश परिमल की 'राजस्थानी एक' हरीश भादानी की 'अधार पख जू झता रैवण री जात्रा' नन्द भारद्वाज की हास्या हरि मिलै, प्रेतात्मा री प्रीत, आदर्स री सीवा मे कैद सेठिया री कविता, कळप रो क्राइसिस, काव्याजळि, मौक्तिक, वन्दना, भारमली उद्याळो दवियोडी माटी रो, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की वग भारसी, आधे नै आख्या, उस्ताद री कवितावा राजस्थानी एक, जळमभोम, आज री कहाणी एक सिंधु राग री धुन मे, शिवराज छगाणी की आधै नै आख्या, पिरोळ मे कुती व्याई, अन्नाराम 'सुदामा' की जैन शोध अर समीक्षा, बदरीप्रसाद साकरिया की चेत मानखा, गोवर्द्धन हेडाऊ की एकल गिड दाढ़ाळै री वात, नरेन्द्र भानावत की मरु महमा, छीजण, गाधी प्रकास, परमेश्वर वगडका की हेमाणी परम्परा पत्रिका का विशेपाक, मनोहर शर्मा की ढोला मारू रा दूहा मे काव्य-सौष्ठव, सस्कृति एव इतिहास, भडाण गाम रो पीर, एक राजस्थानी वात, आज रा सरपच—लोककथा विवेचन, पदम कला री वात—एक विवेचन, बरखा रुत रा लोकगीता मे सिणगार री रसवती, श्रीलालमिश्र की हू गोरी किण पीव री, कौटिल्य, गाधी प्रकास, राम मिलाई जोडी, मैकती काया मुळकती धरती, किरण नाहटा की 'कन्यादान' सुमनेश जोशी की मनवार, मोरपख, गोवर्धन सिंह शेखावत की 'मणि मधुकर री कवितावा' उदयवीर शर्मा की परशुराम-सागर, नुवी कविता अर कवि भू गर,

एस पी मथुर की खलनायकी रा नू वा तेवर, त्रिभुवन माथुर की 'फिर भी —अंगा जवान व्हैतो हिन्दी-सिनेमा, शवर भादानी की आन्दोलन री सरुआत सूं पैली, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की आधा वाळो एटमवमा नै, यम हसन की भारतीय लेखण · मौजूदा परिपेख मे, नन्द भारद्वाज की नुंवै लेखण री फौरी अवखाया वावत, लेखण रै एड छेडै, असली लडाई अर भाषा रो सवाल, नृसिंह राजपुरोहित की राजस्थानी रा सुलगता सवाल, वदरीप्रसाद साकरिया की वरखा री प्रार्थना, गोवर्द्धन हेडाऊ की नूवै सिरजण रौ सरूप, कचरौ . कवाडी · कल्चर, मनोहर शर्मा की राजस्थान रो साहित्यकार कुण, गोवर्धनसिंह शेखावत की असली लडाई अर भासा रौ सवाल, म्हैं सोचूं हू, सीताराम महर्षि की आरती रा वोल, वेद व्यास की एक वदळाव आळा कार्यक्रम री दरकार, मोहन श्रोत्रिय की भासा रौ सवाल अर आपा रो मकसद, रमेश उपाध्याय की असली लड़ाई अर जन-सिक्सा रौ माध्यम, कृष्ण कल्पित की सवाल ठडो नी व्है जावै, बी. आर प्रजापति की भासा रौ सवाल अर नकली लडाई, राज सरकार रौ रवैयो, करणीदान वारहठ की भासा सारू लूठी लडाई री जरूरत, लीला मानवीय की वाट जोवतौ सवाल रौ निसाण, कमला वर्मा की भासा रौ सवाल उठावण सूं पैली, राजेन्द्र वोहरा की कटघरै मे ऊभौ राजस्थानी रौ लिखारौ, विनोदकुमार साकरिया की राजस्थानी भासा रौ सुवाल, भूपतिराम साकरिया की षड्यन्त्र एक राजपाल रौ, अरविन्द जोशी की 'अकुर' एक और भारतीय फिलम, दामोदरप्रसाद की राजस्थानी री लोकप्रियता खातिर के यौन साहित्य रो सा'रो लेणो पडैगो, सम्पादक री समस्या, वद्रीप्रसाद पुरोहित की राजस्थानी लोकजीवण मे वरखा रुत, चन्द्रसिंह की राजस्थानी री मानता अर केन्द्रीय साहित्य अकादमी, सुगनी की प्रकृति सू वर्षा ज्ञान, कौमुदीकार की कम्यूनिस्ट साहित्य, शान्तिसिंह की आया मनोहरजी-गया मनोहर जी-आया श्रीलालजी-गया श्रीलालजी, राणा सेर प्रताप की 'काची मोत : राजस्थानी भासा री सविधानिक मान्यता रो अर गाणां वजाणां उणरै मायतांरा, शिवकुमार भुवाणिया की अै पुरस्कार केवल राजस्थान मांय रैवणिया साहित्यकारा वास्तै हैं, मारवाडी-समाज कठीनै चाल्यो रे, ओकार पारीक की आखर-चिन्तण, मणि मधुकर की भचीड खाया ठा पडैला, अनिल जालान की इशाराजी री फिल्मा रो आलोचना, अद्भुत शास्त्री की राजस्थान री भाषा और वोल्या, राजस्थानी सू ही राजस्थान री उन्नति, रतन शाह की राजस्थानी रै जन-आन्दोलन रो ज्वालामुखी कद भी फूट सकै, मूलचन्द 'प्राणेश' की आपणी वात, हरमन चौहान की सुररियलिज्म, फिल्मा मे सैक्स अर चूमणो, राजस्थान साहित्य अकादमी, अरुणा ईरानी, तेजसिंह जोधा की दीठ ३ की सम्पादकी, 'राजस्थानी एक' की सम्पादकी, तीतर फर्र ऽ ऽ ऽ, नवा छापारी हलचल, सत्यप्रकाश जोशी की राजस्थानी रा दोयण कुण, सूमण पूछै

जोत के थक की समीक्षा, रामनारायण न सोमाणी की बोल भाग्मली राज-स्थानी कविता मे सैक्स री जलम, हणमानसिंह शेखावत की ढोला मारू मे मारूणी रो विरह, गुणनिधान याज्ञिक को वाळसाद, काळजै री कोर, दिलीप, विनयकुमार की महाकवि सूर्यमल्ल अर उण री वीर सतसई, किशोर कल्पनाकान्त की रातवासो, आधुनिक तेलुगु साहित्य, श्रोळू री श्रोळ्या एक लूठी काव्य क्रिति, रवीन्द्र री कविता, अम्बू शर्मा की यीसू हजारो नु वी वानगी, दात कथावा अर वरजूडी रो तप, मरहवा ए देस—वगला, मरहवा ! मरहवा !, चुरू पत्रिका अर लोक विगुन, ग्योही, वाग्वर, मनन, समीक्षाएँ विशेष उल्लेखनीय रही हैं।

कुछ साहित्येतर समीक्षायें जिनमे इतिहास, राजस्थानी भाषा के मान्यता के प्रश्न सम्बन्धी, फिल्मो, राष्ट्र तथा अन्यान्य समस्याओ विषयक विचारो का प्रवाह प्रवहित हुआ है, पूर्वोक्त राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकट हुई हैं। इन स्फुट रूप मे प्राप्त साहित्येतर समीक्षाओ मे शकरदयाल चौऋषि की छात्र अनुसासनहीणता एक विचारण जोग राष्ट्रीय समस्या, राहुल साकृत्यायन की राज-स्थान री शिक्षा-समस्या, राजेन्द्र मिश्र की तिरसा राजस्थान का वासन्तिक पर्व गणगोर, कल्याणसिंह शेखावत की रोटी, कपडा और मकान, वाटरगेट काड, देस रा हाल चाल, आज री मायावी दुनिया, कृष्णगोपाल शर्मा की लोकतत्र एक दरकार—एक दरसण, साहित्यिक उपेक्षा री विनावरी विरली रो गिकार चुरू जिला, अम्बू शर्मा की आपा चाये जनता मे वैठणिया अथवा मच सू दूकणिया पण हा तो राजस्थानी के ?, चीन रो श्रोछोपण, हिंसा अर अहिंसा, राजस्थानी बोली नी-भासा है, सत्येन जोशी की हिन्दी रै दलाला रो राजस्थानी भासा मे पेट-पालू पापी रुजगार, कल्याणसिंह राजावत की वाग'र वारा चौवीस जणा, श्याम महर्षि की राजस्थानी साहित्य अकादमी माय भिभोक घालणिया कुण ? अशर्फी देवी राजगढिया की घडल्या म्हारा अजब लुहारघा दिवलोजी, रावत सारस्वत की साहित्यिक सगठण, म्हारी वात, राजस्थानी री मानता, मुद्दै री वाता, एक लाख रिपिया रो इनाम, टावरा री पढाई अर भासावाद, जयपुर में साहित्य सेमीनार, लाज मरू ए माय, राजस्थानी भासा अर राजस्थान सरकार, ए तीनू दिन मरण रा, आज रा कवि, राजस्थानी गद्य रै रूप-निर्माण सी समस्या, राजस्थानी भासा वनाम राजस्थान सरकार, नई पीढी रा भरूटिया, अरुण माहेश्वरी की इरमाला बूस अर मनोरजन, जगदीशचन्द्र शर्मा की राजस्थानी भासा रो जूझारू पुत्रा नै हेलो, रामेश्वर टाटिया की आजकल रा पढेसरी, जिनेन्द्रकुमार की समाजवाद री दिसा कानी आगूच वधता कदम, जयदयाल डालमिया की धरम अर सस्कृति नुवी पुराणी निजर, शकर सारस्वत की १५ अगस्त १५ वरस, वैरीशाल-सिंह की विसरघा जद वाघ नै, नारायणसिंह राजगुरु की राजस्थानी फिल्म—गोगाजी पीर, रेवतदान चारण की राजस्थानी साहित्यकारा नै चुनौती,

साहित्येतर विषयों पर आधारित समीक्षा मे लक्ष्मीकुमारी चूडावत की प्रवाहमयी भाषा का स्वरूप इस रूप मे देखा जा सकता है —

"हिरोसिमा लाय री लपटां मे समाय गियो । हरिया भरिया जगल सहर राख री ढिगलो व्हे गियो । इण कयामत मे लोग-लुगाई, टाबर-टीकरा री दुर्दसा व्ही उणरी बात तो कैवण जोगी ई कोयनी । आखिया देखियोडा हाल वठा वाळा सुणाय रिया हा, म्हारा मे तो वाने सुणवा री हीमत ई कोयनी ही । काळजो कांप काप जावतो । लपटां आभा रै अड री ही, मिनख बळाय रिया, टाबर बरळाय रिया, कुण किणरो सुणे । कुण किणने बचावे । मरिया, बळिया । लपटा मे भसम । इण भयकर काड री याद सू ई ज मिनख री चेतना मरी जावे ।[1]"

निष्कर्ष —विभिन्न पत्र-पत्रिकाओ मे स्फुट रूप मे प्रकाशित सम्पूर्ण समीक्षाओं का अध्ययन करने पर राजस्थानी समीक्षा-साहित्य मे कुछ विशिष्ट तथ्य सामने आते है । प्रथम, कई समीक्षको ने तो कुछ सीमित पुस्तको की समीक्षाओ मे पिष्टपेषण तथा पुनरावृत्ति का कार्य ही किया है । कू कू, किरकिर, उणियारा, हाम्या हरि मिलै, रोहिडै रा फूल, राम मिलाई जोडी, ओळू री ओळ्या तथा राजस्थानी एक की समीक्षाएँ कई समालोचको ने की है । द्वितीय, पुस्तको तथा पत्र-पत्रिकाओ के विशेषाको की समालोचनायें ही अधिकाशत प्राप्त होती है । तृतीय, जहाँ कुछ समीक्षायें उच्च-स्तर का अकन करती दृष्टिगत होती है वहाँ अनेक समीक्षायें अपने घटिया स्तर को प्रकट करती दिखाई देती है । चतुर्थ, सविधान तथा केन्द्रीय साहित्य एकाडेमी, नई दिल्ली मे राजस्थानी भाषा को साहित्यिक तथा राजभाषा के रूप मे मान्यता दिलाने का नाद करने वाली समीक्षायें भी प्रचुरता मे देखी जाती है । अन्तिम 'हरावळ' तथा 'ओळखाण' पत्रिकाओ मे कई फिल्मी समीक्षायें भी प्रकाशित होती रही है जो राजस्थानी पत्रकारिता-परम्परा को नई दिशा प्रदान करती है । निष्कर्षत स्फुट रूप मे प्राप्त राजस्थानी का समीक्षा-साहित्य सम्पन्न है, समृद्ध है और धनी है । निश्चय ही इस क्षेत्र मे पत्र-पत्रिकाओ का योगदान श्लाघ्य एवं स्तुत्य है । वह समय आयेगा, एक दिन राजस्थानी समीक्षा-साहित्य अन्यान्य भारतीय भाषाओ के समक्ष एक प्रतिद्वन्द्वी के रूप मे खडा हो सकेगा ।



---

1. 'राजस्थान भारती' अक ३ वर्ष ८ पृ सं ४६

सूमसू. .., मोती चुगता हसला, राजस्थानी पोथ्या नै पुरस्कार, सम्पादकीय काई लिखां ? राजस्थानी मे वधता सम्भावना रा खितिज, उपलब्धियां रो लेखौ-जोखौ, जीत्योडा रा ढोल घुराय, लारलै दिना, अनुवाद, इनफ्लूएस अर भायली, वाई बदळा, सम्पादक रो विखो, मूरख पूछ्या पाँच सवाल, टूटणी धारा सू, दिया लागै डाम, राजस्थानी भासा रो सकट, सत्येन जोशी की मोडी उठायो गयो एक मद्दी सवाल, रामवक्ष जाट की सवाल असली मक्सद रो है, गैर-जिम्मेदार सिरकार री जोरामरदी, पारस अरोडा की लवी लडाई अर लेखका की जिम्मेदारी, अनुभूती अर अभिव्यक्ति रैं वीचली छेती, रेवतीलाल शाह की गरीब झूठ री उमर, श्रीलाल नथमल जोशी की राजस्थान री प्रान्तीय भासा हिन्दी नई-राजस्थानी है, किशोर कल्पनाकान्त की नू वा सम्दर्भ. जूना प्रतीक, अकल रो मीडको, कूपमडूकजी बारै पधारिया, व्यवस्था रो दूध'र अव्यवस्था रो पाणी, राजस्थान रा साहित्यकार आपरै आत्मगौरव नै ओळखै, नागर नै अकादमी रैं अध्यक्ष पद सू हटावो—उणरी मनमानी री उच्च स्तरीय जाँच करावो, दुरभिसधि रा चक्रव्यूह माय फस्योडी राजस्थानी भासा, सनम गोरखपुरी, प्राचीन भारत मे गोमास—एक समीक्षा, राजस्थानी सम्मेलन एक कमजोर हेलो, हरावळ रो रीत-नेम प्रकासण मार्च सू सरू, जयचन्द्री मनोहर शर्मा, समीक्षाएँ रोचक और मनोरम वन पडी है।

साहित्य पर आधारित समीक्षा करने वाले समालोचको ने भाषा-शैली तथा भावो मे कैसी मीठी चुटकियाँ ली हैं—[1]

"आकाश लगडो क्यू ? लगड रो धरम है लगडा'र धीरै-धीरै चालणो। पण आकाश तो थिर है। उण मे चालणै रो भाव आरोपित किया हो सकै ? सुरजी (सूरज) आंधो किया ? सूरज रो धरम है हर जगा समान भाव सू प्रकास करणो। जे वो समान भाव छोडै तो आंधो या फेर मिनख रो अणचायो तावडो प्रकास करै तो उण रै भावै आंधो। पण रोजीनै उगण आळै सूरज नै भूखा मरतो मिनख भी आंधो किया कह सकै। सूरज रो प्रकास तो वो ले ई सकै।"

"एक खूनी षड्यत्र चार यू मेर ऊणा-खूणा टोवतो दीसै राजस्थान री भासा अर साहित री नुई ओळखाण नही होण देवण रो। साची जाणै कै सगला वूढ़िया अर चुकियाडा लोगा रा सोसक हाथ मायड भासा रै सोसण मे ऊडा डुवियोडा है। ए ही वे लोग है जो सरकारी मीटिंग, राजस्थानी साहित समारोहा, अकादम्या, विधान-सभा अर ससद ताई राजस्थानी रा रजिस्टर्ड प्रतिनिधि वणियोडा नजर आवै।[2]"

---

1 समीक्षक-नवबोध, 'मरुवाणी' अक ४ वर्ष ९ पृ स १७ 'किरकिर' से।

2 समीक्षक-प्रकाश 'परिमल' राजस्थान भारती, अक २, वर्ष ५, पृ. स. ३६

दित कृतियो मे ही मूल्याकन किया जा सकता है। बगला, रूसी, सस्कृत तथा अग्रेजी भ पाओ के अनुवाद-कार्य की प्रवलता रही है।

राजस्थानी मे अनुवाद का इतिहास वास्तव मे स्वातत्र्योत्तर-काल से ही प्रारम्भ होता है। स्वतत्रता के बाद पुस्तकाकार एव स्फुट रूप मे राजस्थानी अनुवाद के दर्शन होते हैं। स्फुट रूप मे अनूदित रचनाए ओळमो मरुवाणी, हरावळ हेलो लाडेसर म्हारो देम, जागती जोत, ओळखाण, दीठ, ईसरलाट तथा मरवण इत्यादि राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ से प्रारम्भ होकर विकसित हुई हैं। इनमे से सर्वाधिक अनूदित रचनाए ओळमो, हरावळ और मरुवाणी पत्रिकाओ मे ही प्रकाशित हुई हैं। अत स्पष्ट है कि राजस्थानी मे अनुवाद-कला की उत्पत्ति १९५४ ई के लगभग ही हुई है। आज अनुवाद-कार्य विकास और प्रगति के शिखर को स्पर्श करने लगा है। राजस्थानी मे अनूदित रचनाओ मे उपन्यस, नाटक, एकाकी, कहानी, निवन्ध, रेखाचित्र, सस्मरण, गद्यगीत, लोककथा इत्यादि गद्य-साहित्य की प्राय सभी विधाओ के रूप देखने को मिल जाते हैं। १९५४ ई से प्रारम्भ होकर इतने अल्प समय मे इस क्षेत्र मे इतनी प्रगति करना कोई कम आश्चर्यजनक नही है। आज भी अनुवाद-कार्य की गति मन्द नही हुई है। इसका स्रोत तो अजस्र वह ही रहा है। राजस्थानी के मूर्धन्य अनुवादको मे किशोर कल्पनाकान्त गिरधरलाल शास्त्री, नृसिह राजपुरोहित, स्व० रामनाथ व्यास परिकर, ओकार पारीक नन्द भारद्वाज, गोविन्दलाल माथुर, हरीन्द्र चौधरी, व्रजमोहन जावलिया नारायणदत्त श्रीमाली, श्रीलाल नथमल जोशी, मोहन आलोक, सत्यप्रकाश जोशी, सावर दइया, देवदत्त नाग, अम्वू शर्मा तथा रावत सारस्वत स्थान पाते हैं। इन अनुवादको का लक्ष्य अनुवाद के वास्तविक लक्ष्यो की पूर्ति करना ही रहा है। केवल दिखावे के लिए ही इन्होने इस क्षेत्र मे पदार्पण नही किया है।

राजस्थानी का अनूदित गद्य-साहित्य एक विशिष्ट परिचय .— अव सर्वप्रथम पुस्तकाकार मे उपलब्ध राजस्थानी ग्रन्थो का विकासक्रमानुसार क्रमश मूल्याकन करना श्रेयस्कर होगा। इतिहास-क्रमानुसार राजस्थानी अनूदित ग्रन्थो की सक्षिप्त समीक्षाएँ इस रूप मे प्रकट की जा सकती हैं—

रामराज[1]

समीक्षा —नृसिह राजपुरोहित के इस लघु प्रवचन-सग्रह का शीर्षक वडा आकर्षक है। इसमे भाषा की सरलता, स्पष्टता, प्रवाहमयता एव सजीवता दर्शनीय है—[2]

"घणाखरा लोग आ सोचै कै धरम तो परलोक री चीज है। अठै धरम

1 अनु० नृसिह राजपुरोहित, १९६० ई० मे प्रकाशित।

2 रामराज : नृसिह राजपुरोहित · पृ स. १७

अध्याय १०

अनूदित गद्य-साहित्य

अनुवाद का तात्पर्य तथा इसके प्रकार —'अनुवाद' शब्द संस्कृत के अनु उपसर्ग लगा कर 'वद्' क्रिया (धातु) से बना है जिसका अर्थ होता है जो पीछे कहे अर्थात् अन्यान्य भाषाओं की बातों या उनके अन्यान्य प्रसगों को अनूदित भाषा कह देती है भले ही वह शब्दश कथन हो या भावों, छाया एव सार के रूप में हो। अनुवाद के मुख्य प्रकार ये हैं —

(१) छायानुवाद (२) सारानुवाद (३) भावानुवाद (४) शब्दानुवाद

राजस्थानी मे छायानुवाद को छोड शेष सभी प्रकार के अनुवाद बहुतायत मे प्राप्त होते हैं। छायानुवाद मे अनूदित रचना की छाया विशेष ही पडती है जबकि सारानुवाद उसके सार को प्रस्तुत करता है। शब्दानुवाद मे शब्दश अनुवाद की प्रक्रिया चलती है तो भावानुवाद मे रचना विशेष के भावों का अनुवाद ही प्रस्तुत किया जाता है। शब्दानुवाद कुछ राजस्थानी अनुवादकों ने प्रस्तुत तो किए हैं परन्तु इस कार्य मे उन्हें पूर्ण सफलता नहीं मिल सकी है। इसका कारण राजस्थानी भाषा मे शब्दकोश की कमी नहीं अपितु अनुवादकों मे शब्द-ज्ञान का अभाव ही है जिससे उन्होंने भाषा विशेष के शब्दों को यथास्थिति मे ही रख दिए हैं। ऐसे एक दो नहीं, अनेक उदाहरण हमारे सामने आए हैं। किसी भी भाषा में अनुवाद की आवश्यकता क्यों होती है? यह एक जटिल प्रश्न है। हमें इस बारे मे सरल दृष्टिकोण से सोचना है। प्रत्येक भाषा मे अनुवाद का क्या लक्ष्य है, इस विषय मे स्पष्टत नहीं कहा जा सकता किन्तु राजस्थानी भाषा मे अनुवाद के उद्देश्यों को इस प्रकार से जाना जा सकता है —

(१) इतरेतर भाषाओं के साहित्य का ज्ञान करना (२) निज भाषा के शब्द-कोश एव साहित्य मे वृद्धि करना (३) तुलनात्मक रूप मे साहित्य का मूल्याकन (४) निज भाषा की प्रगति को प्रोत्साहित करना (५) अन्यान्य भाषाओं मे स्वभाषा के महत्त्व का अकन करना।

राजस्थानी का अनूदित गद्य-साहित्य . एक सामान्य परिचय — राजस्थानी मे गुजराती, बगला, मराठी, अंग्रेजी, उर्दू, तेलुगु संस्कृत, कन्नड, रूसी, हिन्दी इत्यादि भाषाओं के ग्रन्थों का प्रचुर मात्रा मे अनुवाद किया गया है। अनुवादकों को इसमें कितनी और कैसी सफलता मिली है—यह तो उनकी अनु-

कराला तो आगोतर मे चोखो फळ मिलैला। कारण कै धरम इण लोक री चीज तो है नी। वा तो परलोक सुधारण री चीज है, पण आ इज एक मोटी नासमझी है।"

पुस्तक मूलत हिन्दी की है जिसका शब्दश अनुवाद नही है अपितु भावानुवाद का कौशल इसमे निहित है। संस्कृत और उर्दू भाषाओं के शब्दो का किंचित् मात्रा मे ही प्रयोग मिलता है।

'मिनखपणा री मोल'[1]

समीक्षा —सौ पृष्ठीय इस अनूदित पुस्तक मे ६ प्रवचनो को स्थान दिया गया है। पुस्तक मूलत हिन्दी की है जिसके लेखक मन्त्री पुष्कर मुनि है। मिनखपणो, आचार और विचार, संजम रो चमतकार, विवेक रो प्रकास, धर्म रो मर्म और जीवण रो इमरत, इन ६ अध्यायो ने पुस्तक की शोभा बढाई हैं। पुस्तक के मूल नाम 'जिन्दगी की मुस्कान' को परिवर्तित कर 'मिनखपणा रो मोल" बडा अच्छा नाम रखा गया है अपने ही ढंग की एक अलग गद्य की ऐसी कृति के अनुवाद मे राजपुरोहितजी ने बडी सतर्कता बरती है। पुस्तक का शब्दश अनुवाद नही होकर भावानुवाद ही है। पुस्तक मे भावो और भाषा—दोनो ही क्षेत्रो में काफी मौलिकता देखने को मिलती है। भाषा मे सारल्य प्रचुर मात्रा मे है। भाषा-शैली का एक उदाहरण[2]—

"मिनख रा खोलिया मे अर मिनख री सूरत मे रैवता थका ई जिण मिनख मे मिनखपणा रा लक्खण नी व्है, विवेक री जोत नी व्है, वी सही रूप मे मिनख नी है। ईसा जीवण नै फगत विवेक इज मिनख बणाय सकै। सेलडी रा सोठा नै मिनख ई खावै अर ढोर-डागर पण खावै। पण दोना रै खावण मे फरक है। मिनख सेलडी नै खूब चूस नै उणरो सार ले लेवै अर फूतरा नै फेक देवै।"

चमरी[3]

समीक्षा —चौसठ पृष्ठीय अनूदित नाटक रवीन्द्रनाथ टैगोर की बंगला कृति का ही रूप है। काफी स्थानो पर संवाद लघु ही है। नाटक मे ३ गीतो का समावेश कराया गया है। गीत सरल और मधुर बण पड्या हैं। आलकारिक-छटा की मौलिकता प्रशंसनीय है :—

समाव मे बिजली री सी तेजी, सुधासु री छातो तो जगी जहाज रो बॉयलर होरी है, दिनूगै री अरणसवारयो रूप भोर रे अळसाये चांद सो दीखै, यो मकान

1 अनु० नृसिंह राजपुरोहित, सम्यक् ज्ञान प्रचारक मण्डल, जोधपुर।

2 मिनखपणा री मोल पृ स १९

3 अनुवादक—रावत सारस्वत, राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर।

सहारा रै रेगिस्तान री ज्यूं सूनसान, अगन-सिखा री ज्यूं वसरी उठ'र खड़ी होगी।

अनूदित गीतों के सौष्ठव का प्रतीक इस गीत को देखिए—[1]

"अब तो पिनाक मे हुयी घोर टंकार—धरती रै पंजर मे कांपै है संका रा तार।
नभ मे खँड़ावै आंधी-सी प्रचन्डता करै त्रिपुर रा वखरा खंड विखंड।
परलैरी जय भेरी गरजै वज्जर ज्यूं घोर अपार। अब तो पिनाक।'

धिक, जठै, वित्तो, देसी, मिक्लाते, तरिया, वेरो, खाताई, मोक्यू, कनलै, सैमू दो, चाराचुकी, वीनै और सारसी इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दों का प्रयोग भी नाटक मे मिलता है।

विकृति, विद्रूप, मरीचिका, मर्मान्तिक आभिजात्य, अभिसारिका, खनित्र, गर्वित, निराहार, जठराग्नि, वाग्वादिनी, वाचस्पति, निर्विकार, प्रहसन और लोक-प्रवर जैसे संस्कृत के शब्दो का प्राबल्य, अंग्रेजी और उर्दू शब्दो का आधिक्य, आंचलिकता का प्रभाव, पूरे के पूरे हिन्दी के वाक्य का प्रयोग तथा अभी, अब, मैं, चराई, मत, नहीं, आप जैसे हिन्दी के शब्दो को भरमार—इत्यादि अनुवादक मे कमियां दृष्टिगत होती हैं। फिर भी बंगला के इस नाटक के अनुवाद मे अनुवादक ने अपने सम्पूर्ण भाषा-कौशल को आहुति देने का प्रयास किया है।

रवि ठाकर री वातां[2]

समीक्षा—रवीन्द्रनाथ टैगोर की २१ बंगला-कथाओं के भावानुवाद मे अनुवादिका ने दक्षता प्राप्त की है। नवशब्द-निर्माण की कला, संस्कृत-उर्दू और हिन्दी भाषाओं के साथ सहिष्णुता का भाव, मुहावरो-कहावतो एवं आलंकारिक सौन्दर्य की छटा तथा राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग इस अनूदित पुस्तक की विशेषताएं हैं जिनके विस्तृत रूप इस प्रकार से देखे जा सकते हैं—

उर्दू शब्द—जाहिर, गजव, तावेदार, अदव, फरियाद, वेकसूर, एतवार, हद, मजलिस, मजहब, इबादत। हिन्दी शब्द—प्रीत, धीरे-धीरे, नादवानी। संस्कृत शब्द—सन्निपात, अस्ताचल, परिच्छेद, राजद्रोह, स्वाधीन विन्यास, अतीत, कटाक्ष, दीक्षा। नव-शब्द-निर्माण की कला—पीजम, पुग्वस, आड-अटायत, तुड़गिया, घोघो, भीटी, ओलमझोल, अन्यामन्या, तीवरा, छँन, चरगठा, ओचबोच, नफाफड, ओरठे, रवदो पुघाडो, कीक्या, बीयाहोई।

मुहावरो-कहावतो एवं अलंकारो का प्रयोग—वहारी जैडी तीखी मुळक, म्हेल-माळिया जैडा धोळा धोळा वादला, दाद दीधा, रंग मे भंग करता, सपदा रो सूखियोडो तळाव, टाट पोली पड जावै सौख सरीरा ऊपजै दीधा, लागै डाम, रूंगटा ऊभा व्है जावता, ओछै मूंडै ऊंची वात, पगा नीचली धरती खिसकगी, मन

1. वसरी अनु रावत सारस्वत, पृष्ठ २९
2. अनुवादिका—लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर

पाकणा दुखणा री नाई, आंखिया लाल बूंद लोही रा टोपा जेडी व्हेय री ही, डील वळरियो वासदी ज्यू, आघ देखियो न थाघ, वा राड तो भतूळिया ज्यू भागती, कतरणी री नाई जीभ, मान न मान म्हूँ तो थारो मेहमान, नसा री नाई पकड लीधा, अत्त सूझे न गत्त, खाडा री धार जेडो तीखो नाक, पाणी अपछरा रा घू घराळा केसा री नाई।

संस्कृत के शब्दो का प्रयोगाधिक्य, 'श' और ष का स्थान-स्थान पर प्रयोग, भाषा पर क्षेत्रीयता या आंचलिकता का प्रभाव—इस पुस्तक के आंशिक दोष हैं जो असख्य गुणो मे छिप जाते हैं।

लघु वाक्यावलि से पूर्ण सरल भाषा के प्रयोग मे अनुवादिका पटु हैं।

वर राजा[1]

समीक्षा:— गुजराती के उपन्यास 'मीरा प्रेमदीवानी' को अनुवादक ने 'वरराजा' की सज्ञा दी है। यह अनूदित उपन्यास रतनगढ से प्रकाशित 'कुरजां' पत्रिका मे प्रकाशित हुआ जो अपूर्ण ही रह गया। उपलब्ध अश के आधार पर इस उपन्यास की समीक्षा करनी उचित रहेगी। अनुवादक ने सरल एव लघु वाक्यो के प्रयोग, सजीव सवादो का प्रस्तुतीकरण, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोगाधिक्य, उर्दू-सस्कृत के शब्दो के किंचित् प्रयोग एव नव शब्द-निर्माण की कला इत्यादि मे दक्षता प्राप्त की है। एक सरल लघुवाक्यावलि-पूर्ण सवाद को देखिए[2]

'वीनणी ? इण रो मतलब ? मा रो घाघरो पकडी साथै साथै दौडती मीरा बोली।'
जिका बीद राजा नै परणीजै।'
'ओ परणीजणो फेर काई मा ?'
'वीदराजा री वीनणी बणण।'
'मा, तो तूं परणीजियोडी है।'' दौडती मीरा पूछियो।
'सैंग लुगाया परणीजै।'

वावी [3]

समीक्षा — यह दो कथाओ का सग्रह है जिसमे अमेरिका निवासी वाल्ट डिज्ने की 'वावी' तथा चीन-निवासी लू-शुन की 'काला मिनख री डायरी' कहानियाँ अनूदित रूप मे मिलती है। मानव की नृशसता एव क्रूरता को प्रकट

---

1 अनु. भूपतिराम साकरिया, 'कुरजां' पत्रिका मे अपूर्ण प्रकाशित, वर्ष २ अक ५
2 कुरजां, वर्ष २ अक ५ पृ स १७
3 अनु —सत्यप्रकाश जोशी, रूपायन सस्थान, वोरून्दा

करने मे 'वाती' तथा मानव की ठगवृत्ति, चोरी और उसके धोखे, रक्त-शोषण, असत्य-भाषण आदि को प्रकट करने मे 'काळा मिनख री डायरी' को पूर्ण सफलता मिली है।

शब्द-निर्माण की कला, राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो के प्रयोग, कहावतो-मुहावरो एव अलकारो की छटा प्रकट करने मे अनुवादक को पूर्ण सफलता मिली है—

शब्द-निर्माण—अतावतळी, खमखरी, अकचकियो, चापळियोडी, ऊकराळयोडी।

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द—मझ, मुकळाई, ऐदी, हेज, घसळ, अडीजन्त, नेडी, ओळू-दोळू अतावळी, मयारै, थट, वगदी, भावड़, दपूचा, माहीमाह बोबाडा, सातरी, अगस, कावळ, मीठ, सिरावण।

कहावते—मुहावरे एव अलकार—सुध-बुध नी री, घै छिलग्या, पगा हेठै सू धरती खिसकगी, थावा मारतो हो, साव ढोलै काई बैठग्यो, ततैया मना, लातारा भूत वाता सू नी मानै, जाणै कोई लोहीरो वादळो घुमड आयो, विखारो पपाळ, चमगू घो व्है ज्यू पूतनी रै उनमान जमियो रह्यो, मूडो थाप खायग्यो। सरस और परिमार्जित राजस्थानी भाषा का उदाहरण—[1]

"चैत रा महिना मे मोमनी आमा रै तळै भाड, बाटका अर रूख आपरी हरियल मस्ती मे भोला खावण लागा। भात भात गे वेला अर भात भात का भाडका माथै भात भात रा पीळा, राता, धोळा, गुलाबी अर मोसनी फूल तारा री गळाई जगामग करण लागा। धरती माथे दी लग हरियाळी ई हरियाळी अर फूलई फूल।"

दरअसल, मजलिस, हिफाजत, बेतरतीब, आसार, मुद्रा, नसीहत, नैतिकता, क्रूरता, चिन्तनीय इत्यादि सस्कृत-उर्दू के शब्दो का प्रयोग कर लेखक ने अन्यान्य भाषाओ के साथ सहानुभूति रखी है।

सेक्सपियर री का'णिया[2]

एक सौ आठ पृष्ठीय इस अनूदित कथा-सग्रह मे अग्रेजी नाटककार शेक्सपियर के चार नाटको की कथाओ को सक्षिप्त रूप दिया गया है। यह सारानुवाद का उदाहरण है।

चार कथाओ के नाम बडे स्वाभाविक एव रोचक है—राई गो परवत, राजकुमार हैमलेट, राजा लियर, तूफाण। धर्मपत्नी, आपत्तिजनक, निर्देशना, दुष्ट, मृत्यु, आखिर, मौन, ताज्जुब, गैरवाजिब, नालायक, गुस्सा, जिन्दगी इत्यादि उर्दू एव सस्कृत के शब्दो का प्रयोग यथोचित ही रहा है। अनुवाद की सरल, स्पष्ट

1 वाती अनु सत्यप्रकाश जोशी : पृ. स. २१
2 अनु गोविन्दलाल माथुर, १९६४ ई० मे प्रकाशित

एवं प्रवाहमय भाषा को देखिए[1]—

"तूफांरा रै आवतांई जाज में खळबळी मच गई अर लोग तिराय तिराय करणै नै लाग गया। मोकली हिफाजत अर नीगै राखता-राखता ई ग्लोजों री जाज प्रोस्पेरो रै टापूरी चट्टानों में जा अर उठै फंस गई। मिरेन्डो इण रै पैली अैड़ो जबरदस्त तूफांरा कदेई नहीं देखियो हो।"

अंग्रेजी के शब्दाधिक्य के जाल मे फंस कर भी अनुवादक राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता को विस्मृत नहीं कर सका है।

नस्ट नीड[2]

समीक्षा—यह अस्सी पृष्ठीय उपन्यास रवीन्द्रनाथ टैगोर के बंगला-उपन्यास का भावानुवाद है। अनुवादक की शब्द-निर्माण की कला स्तुत्य रही है—रोजरणो, ब्यावरतो, मसणीगर, चूखळो, गेरणो, खड़जता, अणागळ, भुरका। राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का सौन्दर्य भी देखने को मिलता है—बावड, ठा' ईज, भाथ, साग्रीडो, वारचै, वोदो, इस्या-बिस्या, पूठी, वणगट, जेज, हेटी, अणकास, सगपण। उर्दू और हिन्दी-शब्दो का किंचित् मात्रा मे प्रवेश अनुवादक की अन्य भाषाओ के प्रति सहिष्णुता का भाव प्रकट करता है—दरकार, जिद्द, मजाक, मतलब, जरूरी, बाबत, बन्दोवस्त, अन्दाज, तकलीफ, खातिर, खयाल, तू, भी, मैं, ठीक इत्यादि। जुवानी री देळी, गुड गोबर होय जावैळा, मूंडो नो मण रो कर लीन्यो, सैंस पगाळा कीड़ा री ज्यूं, हाथ-पग हिवाळै री ज्यूं ठंडा पडग्या, लाज सूं राती पडगी, पीड रो एक गाछ, गुरु गुड ई रैयो अर चेलो सक्कर बणग्यो, छोभ री मारी वा काठ होयगी—इत्यादि मुहावरो-कहावतो एवं अलकारो ने अनुवादक की अनुवाद-कला की श्री-वृद्धि की है। अनुवादक की भाषा-शैली का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत है[3]—

"उण दिन भूपति कनै आप कानी सूं कोई कैवण नै, की देवण नै ही कोनी। वै रीता हाथा चारू कनै अरजी लेय नै आयो हा। प्रेम रै सुभाव मायं ई सका होवै। जै चारू भूपति रै मूंडै कानी ध्यान देवती अर उणनै प्यार भरैय सुर माय लेवती'क क्यूं काई बात होई?"

राजस्थानी मे विद्यमान होते हुए भी तू, मैं, भी, ठीक, हू इत्यादि हिन्दी शब्दो का प्रयोग करना, रतनगढ की तरफ की बोली का प्रभाव, संस्कृत के शब्दो के प्रयोग की भरमार इत्यादि अनुवादक के दोष हैं। के, वेरो, ओसी, वोळो, चिन्योसोक शब्द रतनगढ की तरफ प्रयुक्त होते हैं।

---

1 सेक्सपियर री काणियां अनुः गोविन्दलाल माथुर—पृ. स. ९२

2 अनु किशोर कल्पनाकान्त, "ओळमो" पत्रिका मे प्रकाशित।

3 नस्ट नीड पृ सं ५१

सेक्सपियर री वार्ता[1]

समीक्षा :—जूलियस सीजर, पतिव्रता, डाकण रो गुमान टूट्यो, हेमलेट, गरमी री अध रात रो एक अनोखो सुपनो—ये पाँच कथाएँ अंग्रेजी के शेक्सपियर के नाटक की संक्षिप्त राजस्थानी मे अनूदित कथाएँ हैं। सभी कथाओं में एक-दो चित्र देकर इन्हे अत्यन्त ही आकर्षक बनाई गई हैं। कुछ दुखान्त और कुछ सुखान्त कथाओ का चयन कर अनुवादक ने पश्चिमी और भारतीय संस्कृति के समन्वयात्मक दृष्टिकोण को अपनाया है। राफड, गेरण, फेरूई, वडोडी, बाईपुरो, इकलोण, अटाचित, पाण, विरै-विरै, देणसी इत्यादि लेखक के स्वनिर्मित शब्द हैं। अलंकारो, मुहावरो तथा कहावतों की रश्मियाँ भी विकीर्ण हैं—रड़क रैवती, पाणी फेर नाख्यो, जाणै प्राण ईज नीसरग्या होवै, बाईपुरो लक री जात होयगी, लाय पळीता लागग्या कठै, चन्नण अर कठै कादो, अटाचित पड'र ठंडो होग्यो। राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग करना भी अनुवादक नहीं भूला है साथ ही उर्दू और संस्कृत के शब्दो का यथेष्ट मात्रा मे प्रयोग कर उनके प्रति सहानुभूति के दृष्टिकोण को भी। भाषा के सरल रूप के दर्शन भी यत्र-तत्र हो जाते है।

राजस्थानी में विद्यमान शब्दो को भी हिन्दी मे लिखना, आँचलिकता पर प्रभाव, कथाओ के विस्तार मे असफल रहना, कोमा विराम-चिन्ह के प्रयोग पर अधिक बल देना—ये अनुवादक के अनुवाद की कमियाँ हैं जो अनेक विशेषताओं में छिपाई जा सकती हैं।

सकुन्तला[2]

समीक्षा :—संस्कृत के कवि—नाटककार कालिदास के "अभिज्ञानशाकुन्तलम्" का शब्दानुवाद राजस्थानी भाषा मे किया गया है। दुष्यन्त द्वारा गन्धर्व-विवाह, दुर्वासा का शाप, दुष्यन्त का शकुन्तला को विस्मृत करना, तिरस्कृता शकुन्तला को माँ मेनका द्वारा स्वर्ग मे ले जाना, 'भरत' नामक पुत्र की उत्पत्ति तथा दुष्यन्त का मिलन—प्रसंग बड़े अच्छे अनूदित हुए हैं।

कई श्लोको के अनुवाद तो बहुत ही उत्कृष्ट बन पडे हैं :—

(क) "राड तनै सूझ्यो कई, अरे मुंदडी हाय।
तज नै कूंळी आंगळी, जळ मे पेठी जाय[3] ॥

(ख) अणसूंघ्यो यो फूल कमळ रो, कूंळी कूंपळ अणचूंटी।
अणवींध्यो यो रतन अमोलक, मधरी अमृत अणजूंठी ॥
अणचाख्यो यो रतन पुण्य रो, फळ है रूप नही झूंठी।

---

1 अनु — किशोर कल्पनाकान्त, "ओळमो" पत्रिका मे

2 अनु गिरधरलाल शास्त्री, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर।

3. सकुन्तला : अनु गिरधरलाल शास्त्री, पृ. सं. ७१

कुण भोगेगा भाग्यवान, भगवान कणी ने दे तूठी ।[1]

सरल भाषा के प्रयोग, मेवाड़ी बोली के शब्दो पर बल देने एव संस्कृत के शब्दो के अत्यल्प प्रयोग में अनुवादक ने दक्षता दिखाई है ।

अनुवादक को शब्दश अनुवाद मे आंशिक सफलता मिल पाई है क्योंकि "यास्यति" (जायेगी) के स्थान पर "चाली" (चली) "अनास्वादिता" (नही चखा) के स्थान पर "अणाझू ठा" और "रसम्" के स्थान पर "अमृत" इत्यादि का प्रयोग बहुत बड़ा दोष है । ह्यों (हरा), कर्यो (किया), भर्यो (भरा) इत्यादि शब्दो का गलत प्रयोग किया गया है । मेवाड़ी बोली के साथ साथ 'श' और 'ष' के प्रयोग मे भी अनुवादक अधिक फुर्तीला रहा है ।

अन्ततोगत्वा इनकी भाषा सरल, स्पष्ट, प्रवाहमय एव रोचक है भले ही कुछ स्थानों पर अनुवाद मे कुछ कमी रही हो । क्योंकि अनुवाद का कार्य कोई सरल नही है ।

राजा राणी[2]

समीक्षा —पाच अकीय रवीन्द्रनाथ ठाकुर के "राजा ओ रानी" बगला नाटक का अनुवाद ब्रजमोहन जावलिया ने "राजा राणी" शीर्षक से अलकृत नाटक मे किया है । संस्कृत और उर्दू शब्दो के अत्यल्प प्रयोग से अनुवादक मे भाषा सहिष्णुता का भाव है । सातर, अणविस्वास, वारणो, बुभौवळ, रजैक, वारकूकटो, आछीतरा, धुत्यारो, आवध, कदेई इत्यादि नए शब्दो के निर्माण तथा राजस्थानी भाषा के स्वाभाविक शब्द-प्रयोग मे अनुवादक ने अत्यन्त सावधानी बरती है । वीरो, पडमी, म्हू, कोनै, कस्यो, नेस्यू, थाघू इत्यादि मेवाड़ी-मारवाड़ी बोलियो के शब्दो का प्रयोग कर अनुवादक ने उक्त बोलियो के नही अपितु राजस्थानी भाषा के ही अपने समुचित ज्ञान को प्रकट किया है । नाटक के ६-७ गीतो के अनुवाद-कार्य मे अनुवादक को काफी सफलता मिली है।

नाटक के दो-तीन संस्कृत के श्लोको के अनुवाद-काय मे अनुवादक को आंशिक सफलता ही मिल पाई है । भाषा का सारल्य स्तुत्य है ।

माटी री काया[3]

समीक्षा —मूलत यह हिन्दी एकाकी-सग्रह चन्द्रशेखर भट्ट द्वारा रचित है जिसका राजस्थानी मे रूपान्तर नारायणदत्त श्रीमाली ने किया है । ये सभी आठ एकाकी—माटी री काया, अगनीराग, जै एकलिंग री नवा नैण, जनम भोम, वदळो, दारु रो प्यालो तथा मिहगढ रो किलो—ऐतिहासिक है । इस अनूदित एका-

---

1 सकुन्तला अनु. गिरधरलाल शास्त्री पृ स २१

2 अनु. ब्रजमोहन जावलिया, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर ।

3 अनु नारायणदत्त श्रीमाली, १९६७ ई० मे प्रकाशित ।

की-संग्रह मे जोधपुरी बोली का विशेष प्रभाव लक्षित होता है। शब्दो को तोड़-मरोड़ कर नए शब्दो का निर्माण भी किया गया है। खेगाळो, दिब-दिब, हिवडो, भिकुटिया, मन्नै इत्यादि शब्द प्रमाणस्वरूप है। एकाकियो के अधिकाश पात्र मुस्लिम होने के कारण उर्दू भाषा के प्राबल्य मे अनुवादक ने रुचि ली है। वृद्धावस्था, सौभाग्य, प्राणदण्ड, क्षमा इत्यादि सस्कृत के शब्दो से अनुवादक की भाषा-सहिष्णुता की प्रवृत्ति झलकती है। भाषा मे सारल्य देखा गया है—[1]

"ठा है आछी तरिया। थू किसी मन्ने फासी माथे चढा देई। पण क ई ठा। थारो भरोसोई कोयनी। जको धणी रे वैरी रे माथू को व्याव कर ले तो वा बेटी ने भी फासी म थे चढा सके। हाए मा! थू किणी ही'र अब किणी है? कठे शेर'र कठे गीदड। कठे समदर'र कठे नाडी। कठे भोज'र कठे गगलो। थने लाज को आवैनी।"

स्थान स्थान पर मुहावरो का प्रयोग भी हुआ है।

सस्कृत तथा उर्दू के शब्दो का प्राचुर्य, 'श' और 'ष' के प्रयोग मे असावधानी—है, भी, मैं इत्यादि हिन्दी के शब्दो का यथास्थिति मे प्रयोग--ये अनुवादक की भूलें हैं जो अधिकाश अनुवादको मे देखने को मिल जाती हैं।

हितोपदेश[2]

समीक्षा—यह मूलत सस्कृत-ग्रन्थ है। अनुवादक ने भावानुवाद किया है। लालच खोटी बला है, विना विचारिया जो करै, लालच रो फळ, अकल बडी कै भैंस, करै कोई नै भरै कोई, आगै री सोचो, मूडा मे राम अर खाक मे छुरी, सगत रो असर, धोबी रो कुत्तो नी घर रो नी घाट रो इत्यादि ३८ कथाओ का अनुवाद बडा रोचक बन पडा है। कथाओ के शीर्षको की मौलिकता स्वय अनुवादक की निजी है। रीस, घणी, टणको, जैंडो, खोदणनै, कानी, आछै, सुरजी, आगती-पागती, उणरा, इणरा इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द भी प्रयुक्त है। भाषा मे लघुवाक्यावलि तथा सारल्य दर्शनीय है--[3]

"सिंघ नै घणी रीस आई। थोडी वेळा पछै उण सोचियो कै छोटा दुसमण रो टणको व्है जिको भी की कर सकै नी। उण नै नास करण रै वास्तै तो उण जैंडो हीज होणो चाहिजै। औ विचार आवता ई वो कन्दरा रै वास्तै एक बिलाव खोदणनै निकळियो खोदतो खोदतो वो एक गाव मे पूगो।"

बालोपयोगी अनुवाद को उत्कृष्टता की श्रेणी मे नही रखा जा सकता है। भाषा पर जोधपुरी क्षेत्र का अधिक प्रभाव तथा 'श' और 'ष' के प्रयोग मे भरमार--कुछ बातें अनुचित है जो ग्रन्थ मे समाविष्ट हैं।

---

1 माटी री काया. पृ स. ८५ (दारु रो प्यालो)

2 अनु गोविन्दलाल माथुर, १९६८ ई० मे प्रकाशित

3. हितोपदेश पृ. स. ५५ "सत्तारथ री समार" मे से

हरीन्द्र चौधरी की पाँच पुस्तकें[1]

समीक्षा—मूलत ये पुस्तकें रूसी भाषा मे हैं परन्तु लेखको ने इनके अंग्रेजी अनुवादों से राजस्थानी अनुवाद का कार्य किया है। सभी पुस्तकें कई अध्यायो में विभक्त हैं जिनमे मार्क्सवादी, क्रांति विषयक और जनतंत्रीय विचार प्रकट हुए हैं। गुचंला, मालमत्ता, सईका इत्यादि नए शब्द देखने को मिलते हैं। बेशक, अमीर, अर्जी, दौलत बुनियादी, मजबूरी इत्यादि उर्दू-शब्दो के प्रयोग मे अनुवादक की अन्य भाषाओं के प्रति सहानुभूति प्रकट होती है।

शब्दश अनुवाद के प्रयास मे संस्कृत-शब्दो का प्रयोगाधिक्य, 'श' और 'ष' की भरमार, लम्बी वाक्यावलि—ये अनुवादक की त्रुटियाँ रही हैं परन्तु ऐसे विचारों वाले साहित्य की राजस्थानी भाषा में कमी है जिसकी पूर्ति लेखकों ने जैसे-तैसे की है अत त्रुटियाँ रहते हुए भी लेखक प्रशसा के पात्र हैं।

लेनिन री जीवणी[2]

समीक्षा —अनुवादिका ने अंग्रेजी की पुस्तक "वी आई. लेनिन शार्ट बायो-ग्राफी" का अनुवाद १३ अध्यायों में बांट कर किया है। इसमे अंग्रेजी शब्दो का प्रयोग तो कोई खास नहीं है परन्तु संस्कृत-शब्दो का प्रयोगाधिक्य है। इसके अति-रिक्त 'श' और 'ष' के प्रयोग मे भी अनुवादक ने असावधानी रखी है। क्रान्तिकारी, मार्क्सवादी, अन्तर्राष्ट्रीयवाद, प्रतिरक्षा, सम्पादन, आन्दोलन, संघर्ष इत्यादि-संस्कृत के शब्दो के प्रयोग से अनुवाद की सरलता एव स्वाभाविकता को ठेस लगी है। मेवाडी बोली का अधिक प्रभाव होते हुए भी सारल्य, स्पष्टता, रोचकता एव मनो-रंजकता पर्याप्त मात्रा मे मिलती है—

'रूस रा हालात दिन दूणा रात चौगणा उबाळा खाय रिया। आरथिक दसा गड़बड़ायगी। रोटी, मास, खाद मिलणो दोरो व्हे गियो। काळ भूजा पसारिया, वाको फाडिया ऊभो। भू घवारी वधगी। बुर्जुवा तो जाण न हालात गदा कर रिया। निरलज्ज व्हे कैय दीधो कै क्राति में काळा रा फावा हेटे मसळ माराला।"[3]

---

1 (क) सर्वहारा क्रान्ति अर दगाखोर काउत्सकी—हरीन्द्र चौधरी
(ख) व्ला ई लेनिन . गावा का गरीवा सू —यही—
(ग) कम्युनिस्ट पार्टी रो ऐलाननामो —यही—
(घ) व्ला ई लेनिन राज अर क्राति—अनु हरीन्द्र चौधरी तथा श्यामराय।
(च) जनतान्त्रिक क्राति मां सामाजिक जनवाद री दो कार्य नीतिया—हरीन्द्र चौधरी।
उक्त सभी ग्रन्थ १९६९-७० में प्रकाशित हुए हैं।

2 अनुवादिका—लक्ष्मीकुमारी चूंडावत, १९७० ई० में प्रकाशित

3 लेनिन री जीवणी अनु लक्ष्मीकुमारी चूंडावत . पृ स. ८

मालविकाग्निमित्र[1]

समीक्षा —मूलत कालिदास के संस्कृत के नाटक का शब्दानुवाद छप्पन पृष्ठीय इस पुस्तक मे किया गया है। अनेक बाधाओ के उपरान्त मालविका एव अग्निमित्र का विवाह सम्पन्न हो जाने विषयक पूर्ण गाथा इसमे है। अणी, खमणो मनख, न्यावटा छलोक, हीदणो, अतरो, भावड, जशी, थकां, माजरी, कतरोक इत्यादि मेवाड़ी बोली के शब्दो की अधिकता रही है अत अनुवादक पर आचलिकता का प्रभाव स्पष्ट है। कूण हांयो ने कुण जीत्यो, अणा दिनां मे मालती रा फूल री नाई कुम्हलाइ री है, आकास पाताळ रो अन्तर है—इत्यादि मुहावरों एवं अलकारो का सौष्ठव इस ग्रन्थ में हैं। भाषा का सारल्य यत्र-तत्र देखा गया है।

अनुवादक शब्दानुवाद मे असफल-सा रहा है। क्योकि कई श्लोको के चरणो में शब्दों एवं वर्णो की कमी या अधिकता आ गई है। जैसे—[2]

हाथ हिलाय मनोहि करे अर होट दियां अंगुली डरपावे।
जवरी कर भेट बांथ भरो जद आंड करे कुच दोय छिपावे।।
पान करो अधरामृत रो जद फेर रहे मुख लाज बचावे।
यू करने पण प्यारि सदा पति रे मन सुख ही सरसावे।।

संस्कृत शब्दो के आधिक्य-दोष से अनुवादक नहीं बच सका है। स्थान-स्थान पर 'श' तथा 'ष' का प्रयोग, 'कुण' के स्थान पर 'कूण' का गलत प्रयोग तथा आचलिकता अनुवादक में पर्याप्त मात्रा में ऐसी त्रुटियां रही हैं। फिर भी अनुवादक का प्रयास श्लाघ्य रहा है।

स्सो की गळत हाथा से[3]

समीक्षा :—यह उपन्यासो के क्षेत्र मे एक नया ही प्रयोग है जिसमे कोई कथा न होकर देश की बिगडती स्थिति पर स्थान-स्थान पर व्यग्य की वर्षा की गई है। मूल लेखक श्रीकान्त चौधरी हैं। "हरावळ" पत्रिका के १३ पृष्ठो तथा ३२ परिच्छेदो मे प्रकाशित, इस उपन्यास मे राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो, नव शब्द-निर्माण की कला, कहावतो-मुहावरो एव अलकारो की सुषमा तथा भाषा का सरल रूप देखने को मिलते हैं। भायलापो, बिण, स्सो, हाक्रो, हरमेस, साबळ, मीट, तोडो सोराई, वत्तो, ठा, गैरी, गोडै इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द यत्र-तत्र देखे जाते है। अनुवादक मे नव शब्द-निर्माण की कला भी है—नकारचो, फीटट, वग्स्यो, उथप, नाकणूका, सक-सूबो। कहावतो-मुहावरो एव अलकारो का प्रयोग—तेल देखै अर तेल री धार देखै, फूटी आख नी देखणिया, दूध रा धुप्योडा, पोत उघाडै, बडै रै दांई, सिराध कर नाख्यो, जिके री लाठी वीरी भैंस। भाषा के सरल

1. अनु. गिरिधरलाल शास्त्री, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
2 मालविकाग्निमित्र . पृ स ४१
3. अनुवादक—सावर दइया, 'हरावळ' पत्रिका में धारावाहिक रूप से प्रकाशित

रूप का उदाहरण[1] —

"डायरी म्हैं पढ लीवी। सतोस कई दिना सू वार है। किणी उग्र सगठण रै निर्माण में लाग्योडी है। साच काई है, हाल म्हैं दावे सू नी कैय सकू। आ डायरी आज री जीवती इतिहास है। म्हारी राय वी नै वताबू ला ई।"

सस्कृत, उर्दू, हिन्दी और अग्रेजी शब्दो का अधिकाधिक मात्रा मे प्रयोग राजस्थानी की स्वाभाविकता पर आघात है। शब्दो के उदाहरण—

हिन्दी शब्द— टूठ, हरेक वातचीत, भी जो, सव, और, तो, मे, है इत्यादि। अग्रेजी शब्द—प्रोपर चेनल, फ्रेंच लीव, इम्प्रेसन, एप्रोच, सुपरसीड, सरप्लस, चासलर, गजटेड,ड्यूटी। सस्कृत शब्द—बौद्धिकता, बुद्धिजीवी, अभिव्यक्ति, क्षणभगुर, पारगत,उन्मोचन, सक्रिय, प्रभुत्व, अपव्यय। उर्दू शब्द- नाजायज, पस्तहिम्मत, ताल्लुकात, वफादार, फीसदी। बीकानेरी वोली का प्रभावाधिक्य देखा गया है। फिर भी राजस्थानी साहित्य मे उपन्यास की इस मौलिकता का समावेश अनुवादक के द्वारा हुआ है जिसके लिए अनुवादक का प्रयास श्लाध्य है।

देसी टोरडी पूरवी चाल[2]

समीक्षा —मूल लेखक मधुसूदन कालेलकर है। गुजराती मे यह नाटक १५० वार तथा मराठी मे ७० वार अभिनीत हो चुका है। मराठी भाषा के नाटक को राजस्थानी भाषा मे "देसी टोरडी पूरवी चाल" के शीर्षक से अभिहित किया गया है। नाटक मे राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता पर विशेषत ध्यान दिया गया है। अनुवादक ने इन विशेषताओ का नाटक मे ध्यान रखा है—

नव शब्द- निर्माण की कला—चोवग्या, चासी, उरळा, चैलकदमी, ध्यास्ती, कटालेडा, खडूस, कोचखो, ढवूमगा, लग्गड।

कहावतें मुहावरे —भटभेंटा मारस्यो, गया वारा का भाव सै, खा रै कुत्ता खीर, खसम मर्या पछै राड स्याणी होवै, आगै नाथ नै पीछै हाथ, हो ज्यावो अठै सै नौ दो ग्यारा, चादर गैल पग कोनी पसार्या, राई नै परवत मत वणावो, गू गातो रवै। भाषा-शैली का सौन्दर्य नाटक के ये अश्लील वाक्य प्रकट कर देते है[3]—

"(क)-ववीता—छी पति के साथ काम करणै मे के आणद है ? आपका पति से तो सिर्फ टावर ही पैदा करणा चायै-"

"(ख) मम्मी—पण पैली टावर तो पैदा करल्यो।

राजा—वो तो होसी ही, क्यू क टावर पैदा करणै कै लिए आपणी जमीन कल्पतरू की जै या वरदानकारक है।

---

1 रसो की गळन हाथा मे "हरावळ" पत्रिका १९७४, दीवाली-अक पृ स ३५

2 अनु दीनदयाल कुन्दन 'हरावळ" पत्रिका मे यह नाटक पूर्णत प्रकाशित।

3 देसी टोरडी पूरवी चाल हरावळ पत्रिका अप्रैल १९७३ का अक, पृ स २३

(ग) अनीता—औरत को मतलब बच्चा पैदा करणै की मसीन है......"

अंग्रेजी, संस्कृत उर्दू और हिन्दी भाषाओं के शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग राजस्थानी भाषा की स्वाभाविकता को ठेस पहुँचाने वाला हुआ है। अंग्रेजी शब्द--रिहर्सल, आरबीटेशन डिस्टर्ब्ड, ट्रेनिंग, इण्टरेस्ट। उर्दू शब्द—नौबत, इन्तजाम, नजाकत, सालाना, दाखिल। संस्कृत शब्द—पुनरावृत्ति, परिवर्तन, प्रतीक, सौजन्य, जीवनसंगिनी, युगयुगान्तर, सूत्रधार, कौटुम्बिक, मातृत्व, उपासक, प्रेयसी। हिन्दी शब्द—कई सर्वनाम तथा कारकों का यथावत् प्रयोग। भाषा पर क्षेत्रीय प्रभाव भी दिखाई देता है। जैसे--वेसो, अँ यालको, वैया वैया, तपासर्‌यो, कत्ता, थोवडा इत्यादि शब्द इसके प्रतीक हैं।

अनुवादक का इस क्षेत्र मे प्रथम प्रयास होने के कारण ये कमिया रह गई हैं जो क्षम्य हैं।

वैतियारा[1]

समीक्षा —मूलत यह फ्रांसीसी भाषा के अल्बेयर कामू के "ल स्ट्रेंजर" उपन्यास का अनुवाद है। यह सारानुवाद है। राजस्थानी भाषा के शब्द-निर्माण-कार्य मे भारद्वाज स्तुत्य रहे हैं—उप्पालै, अपरोखी, मिजळा, छैका-छैका, उजबक, असकेल, काठै, बिजोकलो, साबको, रिगस, अणभिप। आलंकारिक तथा मुहावरो-कहावतो का सौष्ठव भी उपन्यास मे है—गडक री पूछ री तरिया वारी घाटक्या कोजी तरिया घूजै ही, खुरस्या मे दब्या चाफल्या गोगना-सा बैठा हा, छकड़ी भुला दी, चारूं खाणैं चित, आपै सू वारे व्है जाणो, नव दो ग्यारा व्है जावैला, पाक्योड़ै सेव-सो उफस्योडो उणियारो, काचरी तरिया चीकणो समुदर, छोरिया जिसा हाथा आळो, दाल भात मे मूसलचन्द, आभै रा तैवर फेर वदल्या। फूटी आख नी सुहावै।

भाषा-शैली का एक उदाहरण—[2]

"वो आख्या फाड्या म्हनै देखतो रैयो, मूढै सू एक सबद भी नी निसर्‌यो। फेर हाथ जोड'र पूठो उठग्यो। बाद मे घणी ताळ ताई कमरै मे बीरै ईनै सू बीनै घुमण री अवाज आवती रयी। दीवारा रै उण पार सू हळवी-हळवी सूं सूं री अवाज आई तो मैं अन्दाजो लगायो कै ढैण गो रयो है।"

संस्कृत और उर्दू-शब्दो का अधिक मात्रा मे प्रयोग, "वैतियारा" शीर्षक का अनुपयुक्त होना, भारतीय संस्कृति के प्रतिकूल अश्लील बातो का विवरण, कई स्थानो पर 'मैं' का प्रयोग, बीकानेरी बोली का अधिक प्रभाव इत्यादि भारद्वाजजी की कमियाँ दृष्टिगत होती है जिनका निवारण सरलता से किया जा सकता था। इस उपन्यास के रूप मे अनुवादक ने राजस्थानी अनूदित साहित्य को अपनी महत्त्वपूर्ण सेवा प्रदान करने मे सफलता अवश्य पाई है।

---

1. अनु नन्द भारद्वाज, 'हरावळ' पत्रिका मे प्रकाशित उपन्यास

2, 'हरावळ पत्रिका जुलाई १९७२ का अक पृ स ९

पदमणी रो मराप[1]

समीक्षा —मूलत यह उपन्यास हिन्दी का है। जिसके लेखक रामनिवास बिड़ला हैं। शब्दश अनुवाद करने का अनुवादक का प्रयास कुछ कमियों के साथ काफी अशो मे सफल रहा है। राजस्थानी की अन्य बोलियो के साथ समन्वयात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है। अनुवाद-कार्य मे ये विशेषताएँ दृष्टिगत होती है—

राजस्थानी के स्वाभाविक शब्दो का प्रयोग—चीतळिया, डीघँ, आतरँसी, पूठो, कदे, ऐनाण, टुरग्यो, ढोरी, विसाई, चाणचूक, ढळा, हळाहोब, चिगदा, अजेम, नावसीक अपरोघी, रोही, मू भळ, जणी।

"ताई" प्रत्यय जोडकर शब्द-निर्माण करना—निमडताई, विसवादिताई, अस्लील-ताई, मुफळताई, नीचताई, आकुळताई।

नूतन शब्दो का निर्माण-कार्य—खिडल-मिडल, आसला-पासला, बोळगत, भाभळ-भळकै पोखी, किमखाब, चूळ, निढाळ, पछैंस, छबळका, वदळायीज्योडा, अजर-पजर, ठालप, चास्या।

मुहावरो-कहावतो एव अलकारो का प्रयोग —

होठ चटक-हिरमची रग रा, नारगी रग री आभा, जाघा गजसूड री ज्यू, हसणी-सरीखी मैंमत चाल, खीरा जिसी मिळगती आख्या, च्यारू मेर मुसाणा सरीखी सा-यत ही, घी रा दीवा चास्या, मूडै लाग्योडा नाक रा बाल हा, कितरी टेढी खीर है, फू क'र पग मेलणियो मिनख, तूती बोलती ही, पीळो पडग्यो, धिरघी वधीजगी, नाका चिणा चबाय दीन्या हा।

भाषा-शैली का सौष्ठव दर्शनीय है[2] —

"उण अवाज सू वै छोर्‌या सावचेत होयगी जिकी छानीमानी ऊभी ओ नि-जारो जोय रैयी। वा मायली एक जणी भट एक पोटली अलाउद्दीन रै खेमै रै माय वगाय दीनी, जिणनै वै एक बोरी माय ल्हुकोया ही। पछै दोनू जणी भाजगी। सुल्तान चिमक'र ऊभो होयग्यो। तळै विछ्योडै गलीचै उपरा एक पाच फुट लाबो काळो नाग पडयो हो।"

गृहित, अवज्ञा, प्रवक्ता, सत्रस्त, आदी, हताहत, स्तम्भित, निरुद्‌विग्न, पत-नोन्मुख, कपोतग्रीवा, अनवरत, मानवोसानभूत, अघिमामान्य, अप्रतिहत, अर्थातीत, दुरभिसधि जैसे सहस्राधिक सस्कृत के शब्दो तथा नाकाम, नजाकत, शहीद, तब्दीली, नफरत, खुशकिस्मत' वदतमोजी, नामुमकिन, जजवात, तवाही इत्यादि शताधिक उर्दू शब्दो के प्रयोग के कारण राजस्थानी के स्वाभाविक रूप को आघात पहुँचा है।

मैं,भी,हैं,पर इत्यादि का प्रयोग'श' और 'ष' का स्थान स्थान पर प्रभाव, भाषा मे

---

1 अनु किशोर कल्पनाकान्त 'ओळमो' पत्रिका मे प्रकाशित उपन्यास।

2 'ओळमो' अक १५ मई १९७४ के पृ स ६ मे से

क्षेत्रीयता का समावेश आदि अनुवादक में त्रुटियाँ रही हैं जो आश्चर्य का कारण है। राजस्थानी भाषा के दिग्गज लेखक मे ऐसी कमी का होना विस्मयकारी ही है।

सपनो[1]

समीक्षा —सस्कृत के नाटककार भास के नाटक "स्वप्नवासवदत्ता" का राजस्थानी अनुवाद "सपनो" है। ७२ पृष्ठो में वद्ध इस पुस्तक को शब्दानुवाद की श्रेणी मे ही रखा जा सकता है। कुछ श्लोको के अनुवाद तो अत्यन्त ही सुन्दर एव स्वाभाविक बन पडे हैं। जैसे[2]—

सीधी, लाम्बी, पातळी, ऊपर नीचै जाय।
सप्त रिषी मण्डल जिया, तिरछी कदेइ सुहाय।
काचल छोड्या नाग रै, सेत पेट ज्यू देख।
गगन-मण्डल नै वाटवा, माडी सीमा रेख॥

स्वाभाविकता से ओतप्रोत गद्यांश को भी उदाहरण के रूप मे देखिए[3]—

"महाराणीजी फरमायो है कै वासवदत्ता देवलोक हुया पण म्हारै अर महासेन रै लेखै ज्यू गोपालक अर पालक है, त्यू ईज आप हो। जिण नै म्है पहलाई म्हारो जवाई दाय कियो हो। इणीज सारू थानै उज्जयणी मे लाया हा।.......ओ चित्रफलक थारै कने मेलू हू। इण नै देख'र सायत धारण करो।"

दीकर, सायत, सनेसो, ऊछव, जोरामादी, हिवडो, नक्की इत्यादि राजस्थानी के स्वाभाविक शब्द आए हैं। सस्कृत और उर्दू के शब्द यथेष्ट मात्रा मे दिखाई दिए हैं। सरल राजस्थानी भाषा का रूप नाटक मे सर्वत्र देखा जा सकता है।

मैकवेथ[4]

अनुवादक ने ७१ पृष्ठीय नाटक का शब्दश अनुवाद करने का प्रयास किया परन्तु इस कार्य मे आंशिक सफलता ही मिल सकी है। इस नाटक मे राजस्थान का स्थानीय प्रभाव भी देखने को मिलता है[5] —

लैनोक्स— जैरामजी री।
मैकवेथ— दोनो नै जैरामजी की।

पृष्ठ २१२ पर 'कुम्भीपाक' नरक का जिक्र करना तथा पृष्ठ २२९ पर ऐसा लिखना अनुवादक की मौलिकता का परिचायक है—

1 अनु देवदत्त नाग, १९७४ ई० मे प्रकाशित।
2 "सपनो" पृ सं. ४३, अक चौथा।
3. "सपनो" पृ स ६७, अक छठा।
4. अनु. वृजलाल शर्मा, चिन्मय प्रकाशन, जयपुर। 'माध्यम' शिक्षा-विभागीय संकलन मे पूर्ण प्रकाशित। मूलत शेक्सपियर का अंग्रेजी नाटक।
5 'माध्यम' शिक्षा-विभागीय सकलन, १९७६ ई० पृ. स १८३

आलोक की किरडो, छींक, सिदर, वडा लोग छोटा लोग (अनू कथाएँ) 'हेलो' से नन्द भारद्वाज का कविता रो जळम (लेख) और 'हरवळ' पत्रिका से लाजमी सरकारी गासा बावत, साच और असलियत, जरूरी फैसला (लेख) आदिवासी वस्ती, वदळा रा तीन सौ वरस (कहानियाँ) बैंतियाण (एकांकी) लक्ष्मीकुमारी चूंडावत की 'राजस्थानी वीर' पत्रिका से उद्धार (कहानी) मरुवाणी स त्याग, वडै दिन री गांठ अर व्याव (कहानियाँ) 'मधुमती' पत्रिका से एलकार री कजा और छोरी काई ही वजराग ही (कहानियाँ) 'मरुवाणी' से नृसिंह राजपुरोहित की पाटक नार, गीगलो पाछो आयग्यो (कहानियाँ) 'हरावळ' तथा 'ओळमो' पत्रिकाओ से दुकान, चिडिया, ठौड कुठौड (कहानियाँ) 'लाडेसर' पत्रिका से ओंकार पारीक की शहर (रूसी कथा) 'हरावळ' मे धरम रो मरम (लेख) वै दोनू, 'मा, अमरजोडो, माच मन रो पछतावो (कहानियाँ) 'मरुवाणी' पत्रिका से सेर अर चकोरी (रूसी कथा) देवरूप टावर (अग्रेजी कथा) वेस्या री मोत एव पीजरै रो पछी (कथाएँ) विभिन्न स्वरूपो मे अनूदित साहित्य प्रकट हुआ है।

इन अनुवादको के अतिरिक्त 'हेलो' मे मेघराज शर्मा की आग तथा 'खुलै आभै हेठै' कहानियाँ, निर्मलानद का 'ओळमो' मे 'त्रिमूलत्र एकाकी, दामोदरप्रसाद क 'मरुवाणी' एव लाडेसर' मे 'अन्न री जोन' रेखाचित्र और 'तुलसीदासजी' निवन्ध, शक्तिदान कविया की 'मरुवाणी' मे 'कोयल अर गुलाव रो फूल' अनू कहानी, हरमन चौहान की 'मरुवाणी' मे 'सवदा री तिरस' कहानी, रमेश पोद्दार की म्हारो देस' मे 'आत्मछळ' कहानी, नारायण पीथल की 'जागती जोत' मे 'स्वार्थी दैत' कहानी, श्रीलाल मिश्र का 'मरुवाणी' मे मीनत री मान' निबन्ध, छोटाराम की 'हरावळ' मे 'सूरज कद ऊगैला' कहानी, रावत सारस्वत का 'मरुवाणी' मे 'उमरो उनमान' लेख, मदनमोहन माथुर के 'हरावळ' मे 'चिडियाघर री कहानी' तथा 'नक्कल' एकाकी जहूर खा का 'ओळखाण' मे 'पीकिंग पनपता मुलका सू पूजी कीकर लूटै है' लेख, निर्मला मिश्र की 'ओळमो' मे 'जेम्फीरा' कथा, तेजसिह जोधा के 'दीठ' मे 'नवी कविता रै हक मे एक वयान' तथा 'परम्परा अर वैयक्तिक प्रतिभा' निवन्ध, कृष्ण गोपाल शर्मा की 'ओळमो' मे 'हैमलैट' कहानी, रामचन्द्र पुरोहित की 'ईसरलाट' मे 'हीराँ रो हार' कहानी, श्रीलाल नथमल जोशी के 'ओळमो' तथा 'लाडेसर' मे 'राज रा खजाना' और 'हिन्दी अर मारवाडी' लेख तथा 'भेंटा' कहानी, उदयवीर शर्मा की मरुवाणी' मे 'राजपय री वात' कहानी, राजेन्द्र की 'हरावळ' मे एक वोरो चिरमिट' कहानी, सत्यनारायण स्वामी के 'हरावळ' और 'जागतीजोत' मे 'नारी घर री लिछमी' कहानी तथा पराजय' गद्यगीत, राजेन्द्र मिश्र की 'ओळमो' मे 'घोडो' तथा 'खुदा रै सामनै' कहानिया, कमाल की 'मरुवाणी' मे 'जीत री घडी' कथा, कान्ह मिश्र की 'ओळमो' मे 'फेरु सागी खेलो' कथा, रामनाथ व्यास 'परिकर'

ादाश्त, वफादारी, अहसानमन्द, मुसीबत, शायद, हैसियत, बिल्कुल, रस्म और आजाद।

हिन्दी के हूबहू शब्दों का प्रयोग—भी, मैं, तू, हालाकि, मेरी, है, और तरह। कुछ शब्दो का अशुद्ध प्रयोग—कह्यो, निर्दोषता, वाल, वोली, ओलमो इत्यादि। अनुवादक ने जहाँ 'श' और 'ष' के प्रयोग पर अधिक जोर रखा है वहाँ 'ळ' के प्रयोग पे असावधानी भी बरती है। राजस्थानी भाषा के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण 'ळ' वर्ण को अनुवादक ने बिल्कुल ध्यान मे ही नही रखा है।

'श' और 'ष' का प्रयोग—शान्ति, दोष, सन्तोष, भविष्यवाणी, ईष्ट, दोशी निर्दोषता, शैतान, दुष्टा, षड्यन्त्र, शक, दुश्मण, कोशिश, आकाश, दृश्य, हमेशां शामिल और आशीर्वाद। इसके अतिरिक्त शब्द विशेष में 'कोमा' के प्रयोग की आवश्यकता पर भी अनुवादक का ध्यान नही रहा है। कुछ त्रुटियो के उपरान्त अनुवादक का इस क्षेत्र मे प्रयास सराहनीय ही रहा है।

पुस्तक-रूप मे प्राप्त इस अनूदित साहित्य के अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से कुछ स्फुट रूप मे भी 'म्हारो देस' पत्रिका से किशोर कल्पनाकान्त की उडीकना तथा 'राजस्थानी वीर' से घोडो (बगला कहानियाँ) 'राष्ट्रपूजा' से छमक छल्लो (पजाबी कहानी) तथा 'ओळमो' पत्रिका मे राजीगो (इटेलियन कथा) मनै बंधावो पाग (गुजराती कथा) अन्धारै मे (रूसी कथा) खोयोडो जगल (अग्रेजी सस्मरण) अै मोच्यार भी किस्याक है (तेलुगु एकाकी) नीडै समदर री एक झाई (गद्यगीत) उगादि (तेलुगु निबन्ध) 'श्री-श्री' अर आधुनिक तेलुगु साहित्य (तेलुगु निबन्ध) हाथी भी दीवाळी मनाई (कहानी) लुगाई अर मोट्यार रो मजूरण मिलाप (लेख) दासी (अग्रेजी कथा) उण री प्रेमी (गोर्की की कथा) किरोध (पाल हेसी की अनू कथा) ओ किस्योक सगारथ, जमीदार रो बेटो, उडीक, अनास्वादिता तथा जिण री उडीकना ही (तेलुगु कथाए) बेनका (कहानी) अन्धारै माय (चेखव की अनू कथा) कैद माय टकसाल (हालिम की अनू कथा) निरभागियो (मोपासां की अनू कथा) प्राणमन, त्रिनोत्रा तथा पत्री री लडाई (बगला कहानियाँ) सोरठ री मावतरी और धन-धरणी-वीरपुर जै जलाराम (गुजराती कहानियाँ) ट्रोड, लाल झण्डी और साच री माख भगवान (रूसी कथाएँ) एक छोरी सात बरस री (कथा) गगा अजेम सूखी कोनी (तमिल कथा) साच रा दरसण (यूनानी कथा) केठा' काई रग लाग्यो (पजाबी कथा) सरवर' से अम्बू शर्मा की स्टीम बाथ (अनू कथा) 'म्हारो देस' से कूजडी रो घर (अनू कथा) तथा 'लाडेसर' पत्रिका से मातृभाषा अर राष्ट्र भाषा और राजस्थानी भाषा नै मानता दिवाण रै सम्बन्ध मे केन्द्रीय-साहित्य अकादमी नई दिल्ली द्वारा पूछ्या गया पांच प्रश्ना रा उत्तर (अनू लेख) 'हरावळ' पत्रिका से मांवर दइया की अगुवो, लाय, नीद, कहाणी कोनी, कम हुवती जागा, सूख्यौ दरखत आव रो (अनू कथाएँ) 'हरावळ' तथा 'मरुवाणी' पत्रिक ाओ सें

आलोक की किरडो, छीक, सिदर, वडा लोग छोटा लोग (अनू कथाएँ) 'हेलो' से नन्द भारद्वाज का कविता री जळम (लेख) और 'हरवळ' पत्रिका से लाजमी सरकारी भासा बाबत, साच और असलियत, जरूरी फैसला (लेख) आदिवासी वस्ती, वदळा रा तीन सौ वरस (कहानियाँ) वैतियाण (एकाकी) लक्ष्मीकुमारी चूडावत की 'राजस्थानी वीर' पत्रिका से उद्धार (कहानी) मरुवाणी स त्याग, वडै दिन री गोठ अर व्याव (कहानियाँ) 'मधुमती' पत्रिका से एलकार री कजा और छोरी काई ही वजराग ही (कहानियाँ) 'मरुवाणी' से नृसिंह राजपुरोहित की पाटक नार, गीगलो पाछो आयग्यो (कहानियाँ) 'हरावळ' तथा 'ओळमो' पत्रिकाओ से दुकान, चिडिया, ठोड कुठोड (कहानियाँ) 'लाडेसर' पत्रिका से ओकार पारीक की शहर (रूसी कथा) 'हरावळ' मे धरम रो मरम (लेख) वै दोनू, 'मा, अमरजोडी, माच मन रो पछतावो (कहानियाँ) 'मरुवाणी' पत्रिका से सेर अर चकोरी (रूमी कथा) देवरूप टावर (अग्रेजी कथा) वेस्या री मोत एव पीज रो पछो (कथाएं) विभिन्न स्वरूपो मे अनूदित साहित्य प्रकट हुआ है।

इन अनुवादको के अतिरिक्त 'हेलो' मे मेघराज शर्मा की आग तथा 'खुलै आभै हेठै' कहानियाँ, निर्मलानद का 'ओळमो' मे 'त्रिमूलन् एकाकी, दामोदरप्रसाद के 'मरुवाणी' एव लाडेसर' मे 'ब्रह्म री जोत' रेखाचित्र और 'तुलसीदासजी' निबन्ध, शक्तिदान कविया की 'मरुवाणी' मे 'कोयल अर गुलाव रो फूल' अनू कहानी, हरमन चौहान की 'मरुवाणी' मे 'सवदा री तिरस' कहानी, रमेश पोद्दार की म्हारो देस' मे 'आत्मछळ' कहानी, नारायण पीपल की 'जागती जोत' मे 'स्वार्थी दैत' कहानी, श्रीलाल मिश्र का 'मरुवाणी' मे मीनत रो मान' निबन्ध, छोटाराम की 'हरावळ' मे 'सूरज कद ऊगैला' कहानी, रावत सारस्वत का 'मरुवाणी' मे 'उमरो उनमान लेख, मदनमोहन माथुर के 'हरावळ' मे 'चिडियाघर री कहानी' तथा 'नक्कल' एकाकी जहूर खा का 'ओळखाण' मे पीकिंग पनपता मुलका सू पूजी कीकर लूटै है' लेख, निर्मला मिश्र की 'ओळमो' मे 'जेम्फीरा' कथा, तेजसिंह जोधा के 'दीठ' मे 'नवी कविता रै हक मे एक बयान' तथा 'परम्परा अर वैयक्तिक प्रतिभा' निबन्ध, कृष्ण गोपाल शर्मा की 'ओळमो' मे 'हैमलैट' कहानी, रामचन्द्र पुरोहित की 'ईसरलाट' मे 'हीरां री हार' कहानी, श्रीलाल नथमल जोशी के 'ओळमो' तथा 'लाडेसर' मे 'राज रा खजाना' और 'हिन्दी अर मारवाडी' लेख तथा 'भेंटा' कहानी, उदयवीर शर्मा की मरुवाणी' मे 'राजपथ री वात' कहानी, राजेन्द्र की 'हरावळ' मे एक वोरो चिरमिट' कहानी, सत्यनारायण स्वामी के 'हरावळ' और 'जागतीजोत' मे 'नारी घर री लिछमी' कहानी तथा पराजय' गद्यगीत, राजेन्द्र मिश्र की 'ओळमो' मे 'धोडो' तथा 'खुदा रै सामनै' कहानिया, कमाल की 'मरुवाणी' मे 'जीत री घडी' कथा, कान्ह मिश्र की 'ओळमो' मे 'फेरु सागी खेलो' कथा, रामनाथ व्यास 'परिकर'

के 'मरुवाणी' मे 'चन्दरहार' कहानी तथा रवीकार चोखे जे घूम आसे' गद्यगीत, आत्माराम की 'हरावळ' मे 'ग्यानी, मूरख अर गुलाम' 'एक मा रा बोल' तथा 'रद नै ओळखो' कहानिया, नरोत्तमदास स्वामी के 'जागती जोत' तथा 'मरुवाणी' म रामदासजी बाबाजी' सस्मरण तथा 'ढेढ रो बोल' कहानी, जमनाप्रसाद पचेरिया का 'मन्नै ब्या कोनी करणो' एकाकी, सत्यप्रकाश जोशी के 'हरावळ' मे 'मस्सी' एकाकी तथा 'दीठ' मे 'अलयूमो' और 'आत्मावा री मुगति सारु' कहानियाँ, पारग अरोडा की 'हरावळ' और 'मरुवाणी' मे 'म्हैं सोचे हो' आत्मकथाश तथा 'म्हारी आस्या री छैलो विदक' कहानी तथा 'किरगाट' कहानी, भगवतीलाल शर्मा का 'जागती जोत' मे 'मीठो जहर' लेख, जेठमल की 'हरावळ' मे 'मुलजिम' कहानी, मोहनदान चारण की 'हरावळ' मे 'वीर बालक तलेसिक' कथा, आनन्दकरण व्यास का 'हरावळ' मे 'सोवियत रूस मे ब्याव रा उच्छव' लेख, पुष्पा जैन का 'हरावळ' मे 'कलाकार बन्धुवा सू' सावरलाल तवर की 'लाडेसर' मे 'मौत रो डर : एक आखाण' कहानी तथा पुरुषोत्तम छगाणी के 'हरावल' मे प्रकाशित तीन बादरा' और 'मिरजा साहिबा' एकाकी भी स्फुट रूप मे अपने रोचक एव आकर्षक स्वरूप के साथ राजस्थानी के अनूदित-साहित्य की श्री-वृद्धि करने मे सफल हुए हैं।

निष्कर्ष — राजस्थानी के सम्पूर्ण अनूदित गद्य-साहित्य का अध्ययन करने के बाद निष्कर्ष रूप मे यह कहा जा सकता है कि राजस्थानी का अधिकाश अनूदित गद्य-साहित्य पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुआ है, विशेषतः 'मरुवाणी' 'हरावल' और 'ओलमो' मे ही। सारानुवाद तथा भावानुवाद का आधिक्य रहा है। विधा की दृष्टि से कहानी-विधा का ही अनुवाद प्रचुर मात्रा मे हुआ है, शेष विधाओ का अनुवाद अन्यल्प मात्रा मे ही देखा जाता है। किशोर कल्पनाकान्त, सावर दइया, नृसिह राजपुरोहित, ओकार पारीक, मोहन आलोक तथा लक्ष्मीकुमारी चूडावत का इस क्षेत्र मे काफी योगदान रहा है। यह साहित्य सस्कृत, बगला, अग्रेजी तथा रूसी भाषाओ के ही अत्यधिक प्रभाव मे रहा है।

'ष' और 'प' के प्रयोग मे असावधानी तथा सस्कृत और अग्रेजी शब्दो का प्रयोगाधिक्य—इन दोषो से युक्त रहते हुए भी राजस्थानी अनुवादको ने अनूदित साहित्य की वृद्धि मे एक अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है जिसकी भूरि भूरि प्रशसा किए बिना नहीं रह सकते। इन्होने अपने इस अनुवाद-कार्य मे अनुवाद-कला के लक्ष्यो की पूर्णत प्राप्ति की है साथ ही राजस्थानी-साहित्य के वृहत् भण्डार को विदेशी-साहित्य के समक्ष प्रकट करने का बडा साहसिक कदम भी उठाया है।



अध्याय ११

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाएँ

पत्रिकाओं का महत्त्व —

'न हि एकस्माद् गुरो ज्ञान सुस्थिर स्यात् पुष्कलम्'
(श्रीमदभागवतपुराणम्)

अर्थात् एक गुरु से स्थिर और अच्छे अधिक ज्ञान की प्राप्ति नही हो सकती। ज्ञान को विचारो मे व्यक्त किया जाता है। विचारो की अभिव्यक्ति तथा उनके प्रसारण के अनेक साधनो मे पत्र-पत्रिकाएँ भी एक साधन हैं। पत्रिकाएँ सामाजिक क्रियाशीलता के ज्ञान की प्राप्ति का भी साधन है साथ ही इनसे सभ्यता और सस्कृति भी पुष्ट होती हैं। पत्रिकाओ की मुद्रित सामग्री पर ही उनकी उपयोगिता और उनका महत्त्व निर्भर करता है। पत्रिकाओ मे जितनी सुन्दर, उपयोगी तथा उत्कृष्ट अध्ययन की सामग्री होगी वे पत्रिकायें पाठको के लिए उतनी ही उपयोगी होंगी। ऐसी पत्रिकाएँ ही साहित्य की आधार-शिला हैं। व्यक्ति की ज्ञान विषयक आवश्यकताओ की पूर्ति भी पत्रिकाएँ कर सकती हैं। नवीनतम अन्वेषण और विचारों की जानकारी भी पत्रिकाओ के माध्यम से प्राप्त है। सामान्यत पत्र-पत्रिकाओ को दो भागो मे विभक्त किया जा सकता है —

(१) सूचना देने वाली पत्र-पत्रिकाएँ (२) विचार-प्रदान करने वाली पत्र-पत्रिकाएँ

प्राय दैनिक पत्र समाचार-पत्रो की श्रेणी मे आते हैं। कुछ साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक समाचार-पत्र भी निकलते हैं, उनमे उस सप्ताह, पक्ष या मास की घटनाओ पर विचार किया जाता है। ऐसी पत्र-पत्रिकाओ का महत्त्व साधारणत अल्पावधि के लिए ही रहता है—ज्योही समाचार विशेष पढे त्योही दूसरे दिन के लिए उनका महत्त्व घट जाता है और ये समाचार के प्रयोजन की दृष्टि से अनुपयोगी सिद्ध हो जाती हैं। साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओ मे कुछ स्थायी स्तम्भ भी होते हैं जिनमे कहानी, कविता या कलात्मक चित्रो के द्वारा कुछ टीका-टिप्पणी की जाती है। ये स्थायी स्तम्भ साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। कुछ पत्रिकाओ मे कुप्रवृत्तियो को बढावा देने वाली बातो, अश्लील आलोचनाओं के साथ सत्साहित्य सम्बन्धी सामग्री भी मिलती हैं। जिन पत्रिकाओ मे पूर्णत साहित्यिक सामग्री मिलती हैं, वे ही साहित्यिक पत्रिकायें कहलाने योग्य हैं। साहित्य सम्बन्धी स्थायी स्तम्भों के अभाव वाली पत्रिकाओ को आंशिकरूपेण साहित्य की परिधि में लिया जा सकता है। ऐसी पत्रिकायें ज्ञान के साहित्य हेतु अधिक उपयुक्त हैं। ज्ञान और भावना दोनो ही तरह के साहित्य मे जनहित की भावना निहित है।

भावना का साहित्य उद्देश्य की ओर सकेत करता है जबकि ज्ञान का साहित्य उद्देश्य को स्पष्ट अभिव्यक्ति देता है।

साहित्य भी सार्वजनीन और सामयिक दोनो ही तरह का होता है। पत्रिकाओ का सामयिक महत्त्व अधिक है। साहित्यिक पत्रिकाये युग एव वातावरण की परिधि मे सीमित रहती हैं। किसी कवि या लेखक की अद्वितीय कृति की भाँति उनका स्थायी महत्त्व नही रहता है। सामयिक सामग्री के साथ साथ साहित्यिक सामग्री से युक्त विश्वविद्यालय, महाविद्यालय और शालाओ से निकलने वाली पत्रिकायें भी पूर्णत साहित्यिक पत्रिकाओ की श्रेणी मे नही आती हैं। निश्चित स्तर तथा स्थायित्व के अभाव मे कई सस्थानो तथा सार्वकारिक कार्यालयो से कविताओ कहानियो और अन्यान्य सामग्री के आकलन के साथ जो पत्रिकाएँ निकलती हैं, साहित्यिक पत्रिकाओ का रूप नही ले सकती हैं।

पत्रिकाओं का उद्देश्य —

सभवत प्रारम्भ मे पत्रिकाओ का उद्देश्य शिक्षा-प्रसार रहा हो। परिवर्तनशील युग मे उद्देश्य भी वदलते रहते हैं। युगानुकूल साक्षरता के वाद मनोरजन इनका उद्देश्य वना। मनोरजन के अन्य साधनो की प्रतिस्पर्धा मे यह उद्देश्य नही टिकने के कारण पत्र-पत्रिकाओ का झुकाव भापा, साहित्य, धर्म और सिद्धान्तो की तरफ वढा परन्तु यह उद्देश्य भी स्थिर नही रह सका तो वाद-विशेप की भावनायें लिए पत्रिकायें प्रकाशित होने लगी। स्वतन्त्रता-पूर्व की पत्रिकाओ के मुख्यत दो उद्देश्य थे-

(१) देश की स्वतत्रता के लिए प्रयत्न एव वैचारिक क्रान्ति उत्पन्न करना।

(२)भापा विशेप तथा देवनागरी लिपि का विकास।

पत्र-पत्रिकाओ के ये दोनो ही उद्देश्य सफल रहे। किन्तु स्वतत्रता के वाद की पत्र-पत्रिकाएँ स्वतन्त्र वातावरण मे विकसित होने लगी तो नवीन उद्देश्य सामने आये। नया वातावरण और नई समस्याये सामने आई। राजनीतिक, सामाजिक, साहित्यिक और आर्थिक मापदण्ड वदलने लगे। सम्पादको का उत्तरदायित्व भी वढा। स्वतन्त्र भारत की प्रजातन्त्रीय हवा मे पनपने वाली पत्रिकाओ के ये उद्देश्य हो गए —

(१) रचनाकारो की कुण्ठा को तिरोहित कर उनकी सृजनशीलता को जागृत करना (२) मुक्त वातावरण मे भारतीय सभ्यता एव सस्कृति का प्रसार करना (३) मानवीय भावनाओ को भावात्मक एकता हेतु सुदृढ करना (४) स्वतन्त्र भारत को नया दृष्टिकोण देना (५) भावात्मक ऐक्य की दृष्टि से सम्पूर्ण भारतीय भापाओ मे सामजस्य पैदा करना (६) नूतन उपलब्धियो एव विधाओ को प्रोत्साहन देना (७) जन-मानस की प्रगति और तर्कशील प्रवृत्ति को ध्यान मे रखते हुए पुराने साहित्यकारो की परम्परा को आगे वढाना (८) विदेशी शासन के फलस्वरूप भारतीय वाङ्मय के प्रति जो भ्रान्त और हेय धारणाये उत्पन्न हो गई थी, उनका निराकरण करना (९) भाषा-विशेप के साहित्य के भण्डार मे वृद्धि करना

पत्रिकायें नवीन साहित्य की उद्बोधक हैं। साहित्य में नए मोड़ तथा विधा-विशेष के प्रभुत्व को इन्ही के माध्यम से ही देखा जा सकता है। साहित्य की विविधता, विशालता और समग्रता की पृष्ठभूमि पत्र-पत्रिकाओ में ही तो निहित है।

पत्र-पत्रिकाओं की समस्यायें :—साहित्यिक पत्रिकाओं की अपनी समस्यायें भी कम नही हैं। यह नितान्त सत्य है कि साहित्यिक पत्रिकाओं को पढ़ने वाले इने-गिने व्यक्ति ही हैं। इसका कारण अरुचि नही अपितु बाहरी वातावरण और प्रतिपाद्य विषय मे मनोरंजन का अभाव है। कुछ ऐसा ढर्रा भी चल पड़ा है कि साहित्यिक पत्रिकाओं के अलावा छोटे धरातल की कहानियो और उपन्यासो मे लोग रम जाते हैं परन्तु पत्रिकाओ को छूत की बीमारी समझ बैठे हैं। जब तक किसी को पूरा जनमत नही मिल जाय तब तक यह सम्भावना लगातार बनी रहती है कि किसी पत्रिका विशेष का भविष्य धूल-धूसरित नही हो जाय। पूंजीपतियो की पत्रिकाओ पर तो यह लागू कम होता है परन्तु साधारण सम्पादक या पत्रिका के स्वामी पर तो इसका अत्यधिक असर पड़ता है। पत्रिकायें जितनी कम संख्या मे छपेंगी उतनी ही ज्यादा कीमती और महंगी पड़ेगी। केवल साहित्य के लिए पूंजी लगाने वाले तो विरले ही मिलते हैं। किन्तु पूंजी का प्रतिफल तो चाहते ही है। ग्राहको की कमी के कारण यह प्रतिफल ही तो नही मिल पाता है और इसके अभाव मे पत्रिकायें भारस्वरूप हो जाती हैं। स्थूल रूप मे पत्रिकाओ की ये समस्यायें हैं —

(१) पाठको तथा सम्पादको में गम्भीर चिन्तन का अभाव (२) संकुचित तथा संकीर्ण दृष्टिकोण से ओतप्रोत शिविरबद्धता (३) लेखको और सम्पादको के मध्य सहानुभूति का अभाव (४) ग्राहको की कमी, अर्थ-संकट और सामाजिक दायित्व (५) जन-साधारण मे साहित्यिक रुचि की न्यूनता (६) निजी प्रेसो का अभाव (७) कर्णधारो अथवा स्वामियो द्वारा निजी दृष्टिकोणो को थोपना (८) सम्पादको की अल्पज्ञता और सम्पादकीय अनुभव की कमी।

राजस्थानी पत्रिकायें सामान्य परिचय —

राजस्थानी भाषा में स्वतन्त्रता के पूर्व से ही पत्रिकायें प्रकाशित होती रही हैं। उस समय की पत्रिकाओ का श्रेय प्रवासी राजस्थानियो को ही विशेष रूप से है। परन्तु स्वतन्त्रता के बाद भी राजस्थान तथा इतर प्रान्तो जैसे महाराष्ट्र एवं पश्चिम बंगाल आदि से कई पत्रिकायें प्रकाशित हुई है जिनमे से अधिकांश का प्रकाशन तो अभी जारी है। कुछ पत्रिकायें आंशिक समय तक ही अपना अस्तित्व कायम रख सकी। राजस्थानी मे पाक्षिक, मासिक, द्वैमासिक, त्रैमासिक एवं वार्षिक पत्र-पत्रिकायें जिनमे अधिकांश साहित्यिक पत्रिकायें हैं—प्रकाशित होती हैं। राजस्थानी भाषा और साहित्य के विकास मे इन पत्र-पत्रिकाओ का विशेष योगदान रहा है। मातृभाषा-प्रेमी सम्पादको ने प्रकाशन की अनेक जटिलताओ के बावजूद कई राजस्थानियो मे लेखन-कला एवं सजनात्मकता के प्रति रुचि पैदा कर दी।

पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से हजारो की सख्या मे लेखक प्रकट हुए जिनमे से कई तो मातृभाषा के अनन्य पुजारी एव सेवक होने के कारण आज तक राजस्थानी भाषा की अनथक सेवा करते रहे हैं । इन्हे न तो अपनी रचनाओ के पारिश्रमिक का लोभ है और न ही सस्ती ख्याति का मोह । ऐसे ऐसे मातृभाषा के अनन्य सेवको और पत्र-पत्रिकाओ के सम्पादको ने अपनी मातृभाषा को सविधान मे मान्यता दिलाने हेतु प्रशसनीय प्रयास किए। फलस्वरूप आज राजस्थानी का गौरव बढ गया है। इसे केन्द्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली ने साहित्यिक भाषा के रूप मे मान्यता दे दी है। आकाशवाणी से भी कई कार्यक्रम राजस्थानी मे प्रसारित हो रहे है। माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा मे भी राजस्थानी को एक वैकल्पिक विषय के रूप मे प्रतिष्ठित स्थान मिल चुका है। इसका सम्पूर्ण श्रेय इन सम्पादको, मातृभाषा के पुजारी साहित्यकारो एव लेखको को ही दिया जा सकता है। राजस्थानी मे दो प्रकार की पत्रिकाएँ उपलब्ध होती है :—

(१) विशुद्ध राजस्थानी भाषा की पत्रिकायें ।

(२) हिन्दी और राजस्थानी के मिश्रित रूप वाली पत्रिकाये।

प्रथम प्रकार की पत्रिकाओ मे सम्पूर्ण सामग्री राजस्थानी भाषा मे प्राप्त होती है भले ही वह पाक्षिक हो या मासिक-त्रैमासिक पत्रिका। इसमे ओळमो, मरुवाणी, हरावळ, हेलो कुरजाँ, जागती जोत, ओळखाण, चामत्र, ईसरलाट, जाणकारी, मारवाडी, मूमल, जळमभोम, लाडेसर, मरवर, म्हारो देस, उजास, दीठ, राजस्थानी एक, राजस्थानी, राष्ट्रपूजा, वाणी इत्यादि उल्लेखनीय पत्रिकायें राजस्थानी-साहित्य की अमूल्य निधि हैं। द्वितीय प्रकार की वे पत्रिकायें है जो मुख्यत हिन्दी की है परन्तु समय-समय पर राजस्थानी भाषा मे कहानियाँ, लेख आदि प्रस्तुत करती रहती है। इनमे मासिक तथा त्रैमासिक पत्रिकाओ का ही बाहुल्य है। राजस्थानी वीर, राजस्थान-भारती, मधुमती, परम्परा, मरुश्री, वैचारिकी, वरदा, मरुभारती, चारण, लोक-सम्पर्क, आलोक, झाझरको, उत्थान चक्र, लोक-सस्कृति, अमरज्योति इत्यादि पत्रिकायें इस श्रेणी मे आती है जो अपने अन्तर्गत राजस्थानी के स्तम्भो को भी महत्त्व देती रही हैं। इनका अपेक्षाकृत महत्त्व कम है।

राजस्थानी पत्रिकाएँ एक विस्तृत अध्ययन :—राजस्थान मे जोधपुर, बीकानेर और जयपुर को ही पत्र-पत्रिकाओ के प्रकाशन-कार्य मे बहुलता के लिए सर्वोपरि स्थान दिए जा सकते हैं। अब यहाँ राजस्थानी की महत्त्वपूर्ण पत्र-पत्रिकाओ के योगदान को काल-क्रमानुसार प्रस्तुत किया जा रहा है —

मारवाडी[1]

अक्तूबर १९४७ से जोधपुर मे प्रकाशन आरम्भ होकर दो-तीन वर्षो को

1 पाक्षिक पत्र, सम्पादक—श्रीमन्तकुमार व्यास, जोधपुर

अवधि के पश्चात् वन्द हो गया। इसमें मुरलीधर व्यास की परभु गो धरम (कहानी) श्रीलाल नथमल जोशी की फर्रामल (रेखाचित्र) कन्हैयालाल सहल का इतिहास रो बोध (निबन्ध) श्रीमन्तकुमार व्यास का थारी मातरी भासा ने ऊँची उठावो (निबन्ध) गोविन्दनारायण आसोपा का मारवाड़ी रो भविष्य चोखो है (निबन्ध) कन्हैयालाल सेठिया के मनै मोत सोरी आणी चाहिजे तथा भाटो नै धूल (गद्य-गीत) अध्यापकप्रसाद की श्रीकुन्दनमल सेठिया (जीवनी) उल्लेखनीय रचनाएँ प्रकाश मे आई हैं।

ओळमो [1]

१९५४ ई० मे रतनगढ से प्रकाशन प्रारम्भ। दीर्घावधि तक निरन्तर सेवा के बाद १८७४-७५ ई० मे इसका प्रकाशन वन्द। इसके उपलक्ष्य मे 'राष्ट्र-पूजा' वार्षिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ। १९५४से१९६०ई तक यह मासिक पत्र रहा, वाद मे पाक्षिक। सह-सम्पादक—सीताराम महर्षि, रामप्रसाद चाकलान ,तथा लीला सर्राफ रहे। व्यवस्थापक-रामगोपाल मिश्र। सरक्षक-शिवकुमार भुवालका, श्यामसुन्दर गोयनका तथा देवीदत्त सर्राफ। सलाहकारमण्डल मे हनुमानप्रसाद पोद्दार, ईश्वरदास जालान, पूर्णानन्द मिश्र, सूर्यशकर पारीक तथा मानमल थर्ड रहे। जन्मदाता सरक्षक—घन-श्यामदास विडला।

इस पत्रिका मे कहानी निवन्ध, कविता, रेखाचित्र सस्मरण, गद्यकाव्य इत्यादि विधाओ के अतिरिक्त टावर-टोळी (पुस्तक-समीक्षा) नू वी धारा नूवा रतन, लीप्यो पोत्यो आगणो पैरी ओढी नार (नारी-स्तम्भ), चुटकलो, समाचार, चाल म्हारी डामकी डमाकडम (व्यग्यात्मक) इत्यादि स्तम्भो को स्थान दिया गया है। इस पत्र के इतिहास मे नानूराम सस्कर्त्ता की डफोळसख, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की अनोखा कवरजी, सेठ सेठाणी, चातर नार, किशोर कल्पनाकान्त की लुगाई रै पेट माँय वात नी खटावै, झेलम रै काठै कासमीर रो जळम, श्रीलाल नथमल जोशी की जिगरी भायला, रामदत्त साकृत्य की माखीचूस तथा मुरली रांकावत की मू छ्या री मरोड लोककथाएँ, भगवानदत्त गोस्वामी दी कूकड री वात, व्याव होयो, मोहन-लाल पुरोहित की पिडतजी राजाजी, सन्तोष पारीक की चिड़ोकलो सुभाव, लाख रो चूडो, किशोर कल्पनाकान्त की नारदजी गाणो वजाणो किण भात सिख्या, लूका वाई नै सात सिलाम, पुष्पलता मिश्र की पून क्यू चालै ? रामेश्वर टाटिया की मारणियै सू वचावणियो मोटो तथा दुर्गासिंह राठौड की अनोखो दानी शिशु एव नीति कथाएं, सूर्यशकर पारीक की भाड रो घर, मनोहर शर्मा की लाखै फूलाणी री वात, किशोर कल्पनाकान्त की राखी, नृसिंह राजपुरोहित की दुख रा दिनडा सुख

---

1 पाक्षिक पत्र, सम्पादक—किशोर कल्पनाकान्त, रतनगढ

री घडिया, लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत की जनाव को याद है ? श्रीलाल नथमल जोशी की मोलायोडी लाडी, सतवादी, मारवाडी मिनख नईं—देवता, रामस्वरूप 'परेश' की अढायी आखर रो मोल, रामेश्वर टाटिया की मजदूर से मालक, अपणेस, रामदत्त साकृत्य की सुपनो और मुरली राकावत की डोरो फळाप्यो कहानियाँ, कृष्णगोपाल शर्मा के भिस्टाचार, अँ उतरघोडा घडा, श्रीलाल नथमल जोशी का महाकवि भारवि, किशोर कल्पनाकान्त के तानसेन, फागण आयो रे, लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत का जीवतो भूत, वेद व्यास का १९७३ रो राजस्थानी साहित्य, मनोहर शर्मा का एक गीत दोय रूप, रामेश्वर टाटिया का अँ विदेसी पूतळा, सूर्यशकर पारीक का राजस्थानी साहित्य माय ऐ नु वा प्रयोग, जगदीशचन्द्र शर्मा का भासा ! समस्या ? समाधान ? अगरचन्द नाहटा का दीवो परतख देवता और पारस अरोडा का डायरी री तस्वीरा निवन्ध अच्छे बन पडे हैं।

रामेश्वर टाटिया के भूरी री नानी, मोती काको (सस्मरण), किशोर कल्पनाकान्त का गुरजी (सस्मरण) लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत का सोवियत सघ री साहित्यिक जातरा (सस्मरण), मोहनलाल पुरोहित का मैं कागलो देख्यो (सस्मरण) मुरलीधर व्यास के जोसोजी, भगदत्त भाई (रेखाचित्र), भवरलाल नाहटा का रावतियो नाई (रेखाचित्र) और सूर्यशकर पारीक का फगडल (रेखाचित्र) नारायणदत्त श्रीमाली का मा रै घर मे…………, सोमदेव शर्मा का धरती मुळकी तथा रामदत्त साकृत्य के सुरग री पुकार, देस रो हेलो एकाकी, वैजनाथ पवार की चूटक्या राजस्थानी गू ज, किशोर कल्पनाकान्त की रातवासो, कृष्णगोपाल शर्मा की "राजस्थान-भारती" रो सिरजण अक ' एक जहरी डक तथा जगदीश माथुर 'कमल' की वरदा अर अनोखी आन समीक्षाएँ, भवरलाल नाहटा का सावण री तीज (गद्य-गीत) सन्तोप पारीक की मैं राजस्थानी चोखी तरिया सीखग्यो (चुटकलापूर्ण कथा) यशोधरा के ल्योसा थे भी हसल्यो (चुटकले), किशोर कल्पनाकान्त की दीवा ! एक वात सुण (गद्यगीत), अँ मोट्यार भी किस्याक है ? (अनू एकाकी) साच रा दरसण (अनू कथा) खोयोडो जगल (अनूदित सस्मरण) तथा श्रीलाल नथमल जोशी का राजा रा खजाना (अनू. निवन्ध) इत्यादि प्रशसनीय रचनाएँ रही है।

इस प्रकार इस पत्र को दीर्घावधि तक जीवित रखने का श्रेय राजस्थानी के उद्भट विद्वान् सम्पादक किशोर कल्पनाकान्त को ही है। प्रत्येक अक मे स्वय की अनेक गद्य-विधाये तो प्रकाशित हुई ही हैं साथ ही अनेक व्यक्तियो मे लेखकीय प्रतिभा का सचार कर राजस्थानी भापा के प्रति गहरी रुचि उत्पन्न की है। समय समय पर "ओळमो" के वार्पिक तथा विशेपाको के सजीव एव सरस उपहार मिलते रहे हैं। धन्य है ऐसे नि स्वार्थ, परोपकारी, निर्मोह तथा निर्लोभ मातृभापा के अनन्य भृत्य को।

लाडेसर [1]

कलकत्ता से अप्रैल १९६७ से प्रकाशन आरम्भ, प्रकाशक—रतन शाह। राजस्थानी प्रचारिणी सभा, कलकत्ता से सरक्षित। अल्पावधि मे प्रकाशन बन्द। अर्द्ध-साहित्यिक पत्र। इसमे मनोहर शर्मा के राजस्थानी साहित्य री महत्त्व, नोकरा री का'खानो (व्यग्यात्मक), अगरचन्द नाहटा का स्वतत्रता'र वर्तमान भारत, ओकार पारीक का राजस्थानी भाषा खतरै माय, नागराज शर्मा का 'वीनणी, हाँसी, खाँसी अर उबासी' कन्हैयालाल सहल का राजस्थानी स्वतत्र भाषा है, उदयवीर शर्मा का काली वगा तथा अम्बू शर्मा का राजस्थानी अर मारवाडी छात्र निवन्ध, श्रीलाल नथमल जोशी की मा-बेटो अर बाप-बेटो, माणक तिवारी 'बधु' की असली अर गैला, अमोलकचन्द जागिड की बेटी नाक लेगी, सूरसिंह राठौड की मिनख को लास, मनोहर शर्मा की कागद रो रिपियो, यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की जूता और मूलचन्द 'प्राणेश' की घणो चातर चीखलै पडै (लोककथा) कहानियाँ, नारायणदत्त श्रीमाली का पुन रा पगल्या (एकाकी), अमोलकचन्द जागिड की मुळक्या सरसी (एकाकी) जुगलकिशोर खीची का मेरी लदन-यात्रा (सस्मरण) एव बदरीप्रसाद साकरिया का श्रीमुरलीधर व्यास एक मधुर सस्मरण, अम्बू शर्मा की मानखो समीक्षा, भूपतिराम साकरिया की साहित्य री मूल प्रेरणावा—एक विवेचन तथा मोहिनी देवी की श्रीमुरलीधर व्यास की बरसगाठ समीक्षाएँ, दामोदर-प्रसाद का तुलसीदासजी (अनूदित निबन्ध) अम्बू शर्मा का मातृभासा अर राष्ट्रभासा (अनू निवन्ध) ओकार पारीक की शहर (अनूदित कथा) भवरलाल नाहटा का नेहरूजी रो मनोरजण (हास्य कथन) विशेष सराहनीय रचनाएँ रही है।

हेलो [2]

रतनगढ से जून १९६८ से प्रकाशन प्रारम्भ। व्यवस्थापक—हनुमानप्रसाद शर्मा। अल्पावधि मे प्रकाशन बन्द। अर्द्ध-साहित्यिक पत्र। इसमे चाल म्हारी धामकी डमाकडम, समाचार, कहानी, समीक्षा, लेख, कविता इत्यादि स्तम्भ रहे हैं। इसमें प्रकाशित उल्लेखनीय सामग्री मे जगदीशचन्द्र शर्मा के गोळिया रै तहलकै तळै " धोजतो लोकतत्र, वधती आबादी . ओछी पडै जमी, गजानन वर्मा का आकास-वाणी री भासा-नीति अर राजस्थानी, अमीचन्द 'भूपेश' की बापू अर उण रा सपूत तथा भास्कर शर्मा का असम जाळ-जजाल सू हरपेडो निवन्ध, जगदीशचन्द्र शर्मा का ए मेरी गी जोत (गद्यगीत) एव डा राममनोहर लोहिया (जीवनी) और राम-दत्त साकृत्य का आभळदे (उपन्यास) आते हैं।

---

1 पाक्षिक पत्र, सम्पादक—अम्बू शर्मा, कलकत्ता

2 पाक्षिक पत्र, सम्पादक और प्रकाशक—जगदीशचन्द्र शर्मा

सरवर [1]

१५ मई १९७२ मे कलकत्ता से प्रकाशन आरम्भ किन्तु अल्प समयावधि मे ही प्रकाशन बन्द। प्रबन्ध सम्पादक—रामजीलाल अग्रवाल, समाचार तथा सिने-सम्पादक—शिवकुमार मिश्र तथा दिनेश चोखाणी। पता—नरेड़ी प्रकाशन, १३३ बी. के पाल एवेन्यू, कलकत्ता ५। अर्द्ध-साहित्यिक पत्र। इसमे प्रकाशित विशेष सामग्री मे विनोद सोमानी 'हस' की मोटो मिनख (शिशु कथा) ब्रजेश्वर पुरोहित की ऊँट कै साड (शिशुकथा) श्रीलाल नथमल जोशी की सूरज बाप रो जवाई (लोक कथा), फासी रो हुकम टल्यो (कहानी) अमोलकचन्द जागिड की बापू मैं तो सूई खाऊ हू (कहानी) और पुरुषोत्तम छगाणी की दँड न १६ (कहानी) रामगोपाल अग्रवाल का विचारो गरीब हिन्दी-साहित्य, शशि जोशी का सबसे पैं'ली महाभारत क्यू ? अम्बू शर्मा का आन्दोलन अर सृजन, अगरचन्द नाहटा का प्रवासी भाया री मातर भासा सेवा, उदयवीर शर्मा का शेखावाटी रा एक कवि (बालजी) तथा कामनाथ का लुगाया रो खानो निबन्ध, रावत सारस्वत की नई पीढी रा भरू टिया (समीक्षा) रामेश्वर टाटिया की कुछ देखी कुछ सुनी समीक्षा शिवकुमार भुवानिया की मारवाडी समाज कठिनै चाल्यो रे और अम्बू शर्मा की स्टीम-बाथ (अनूदित कथा) आती हैं।

म्हारो देस [2]

मई १९७२ मे भारत प्रकाशन, ६४ पथरिया गेट स्ट्रीट, कलकत्ता-६ से प्रकाशित। डेढ दो साल की अवधि मे प्रकाशन अवरुद्ध। साहित्यिक चयनकर्त्ता—शिवकुमार भुवाणिया तथा शान्तिसिह। व्यवस्थापक—चन्द्रकुमार जैन। इसमे उत्कृष्ट साहित्य-सामग्री को ब्रजेश गोयल की जाऊ तो जाऊ कठै, जयशकर देवशकर शर्मा की गैली, चेतना पारीक की कारी, श्रीलाल नथमल जोशी की बाधो, कमला शर्मा की 'ना, कोई पसन्द कोनी' नीलम माहेश्वरी की सील री माठ कहानियाँ, रविप्रकाश पारीक की काळ आया बचै कोनी (लोक-कथा) मुरलीधर व्यास की हकीमजी (शिशुकथा) तथा जशोदा देवी की धरम री बैन धरमा (शिशुकथा) अम्बू शर्मा का लाल फीताशाही, भवरलाल सुथार का पुराणी पीढ़ी रो मोह, विश्वेश्वर शर्मा का राजस्थानी नू वै बोध री गगा धारा तथा दीनदयाल ओझा का नू वे भारत रा निर्माता लोकमान्य तिलक निबन्धो, अम्बू शर्मा की ओजू पैलो अक (समीक्षा) श्रीमती शान्तिसिह को आया मनोहरजी गया मनोहरजी आया श्रीलालजी गया श्रीलालजी (समीक्षा) श्रीलाल नथमल जोशी का लै'री (रेखाचित्र) मोहनलाल पुरोहित का अबला कै सबला (सस्मरण) रमेश पोद्दार की आत्मछळ और किशोर कल्पनाकान्त की उडीकना अनू कथाओ के रूप मे देखा जा सकता है।

---

1. पाक्षिक पत्र, सम्पादक—अम्बू शर्मा, कलकत्ता
2. अर्द्ध साहित्यिक पाक्षिक पत्र, सम्पादक—अम्बू शर्मा, कलकत्ता

मरुवाणी [1]

वि. स २०१० मे राजस्थान भाषा प्रचार सभा, डी-२८२ मीरा मार्ग बनीपार्क, जयपुर से मुद्रित। प्रकाशनारम्भ के समय प्रबन्ध सम्पादक—चन्द्रसिंह तथा परामर्शमण्डल मे ८ सदस्य भी थे। प्रकाशन कार्य जारी है। इसमे प्राप्त उल्लेखनीय सामग्री मे श्रीलाल नथमल जोशी की प्रेम रो सौदो, दमडी रो दास, सैंनाणी, नृसिंह राजपुरोहित की भीमजी ठाकर, रातवासो, नानूराम सस्कर्ता की जसमल ओडणी, फदडपच, किशोर कल्पनाकान्त की किसन, लाल गाडी, रूपा, दामोदरप्रसाद की गाव रो धणी, चितराम, मनोहर शर्मा की ससकार, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की काचली, धरम री जै, सजीवण, सौभाग्यसिंह शेखावत की तीजा रो कोल, दाउदयाल की कुत्ता री गिरफ्तारी, प्रेमजी 'प्रेम' की आख्या माच्यो कीच, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की नानडियो, स्वामीभक्ति, रामप्रसाद चाकलान की 'अ' 'ब' 'स' जगदीश माथुर 'कमल' की भगडो, बैजनाथ पवार की गटकावडो, धापी भूवा, रामनिवास शर्मा की आतमबोध, अमोलकचन्द जांगिड की बेटी नाक लेगी, करणीदान बारहठ की गुमसुम कहानिया, भगवानदत्त गोस्वामी की मिन्नी मासी, चन्द्रसिंह की बिल्ली रो पजो, रावत सारस्वत की हेमो सत्तो, सूर्यशकर पारीक की समझ रो फरक और श्रीलाल मिश्र की धरम री जड सदा हरी लोककथाएँ, गोवर्द्धन शर्मा के साहित, कविता, रावत सारस्वत के रवीन्द्र अर राजस्थान, राष्ट्रभासा रो भगडो, राजस्थानी सस्कृति, कन्हैयालाल सहल का इतिहास रो बोध, मनोहर शर्मा के कळजुग मे सतजुग, (व्यग्यात्मक) भू गर रा घेसला, मरवण, अगरचन्द नाहटा का राजस्थानी भासा री एकरूपता, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की मेवाडी फागण, रामवल्लभ सोमाणी का पदमणी री ऐतिहासिकता और गिरिराज भवर का रूप-अरूप निबन्ध, मूलचन्द सेठिया की राजस्थानी री नू वी कविता, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की 'उस्ताद' री कवितावा, अगरचन्द नाहटा की 'रामरासो' की एक अनोखी प्रति और श्रीलाल मिश्र की मैंकती काया मुळकती धरती समीक्षाएँ, मुरलीधर व्यास का दर्प-दळण, दीनदयाल ओझा का रतनकु वरी, जगदीश माथुर 'कमल' का पितरा रो आगमण, गणेशीलाल उस्ताद की धरती उतरण एव गणपतलाल डागी की सासूजी एकाकी, माधव शर्मा का वजार पट्टै चोडै जेव कट्टै, कुशलकरण 'जोधपुरी' का आवो हताई करा (रिपोर्ताज) शुकदेव पाण्डे का साईना री याद, रामनाथ व्यास 'परिकर' का मुजाना, पुरुषोत्तम छगाणी का अनाथ सीमाचल री याद सस्मरण तथा श्रीलाल नथमल जोशी के गुलछर्रामल, फर्रामल (रेखाचित्र) बैजनाथ पवार का भवर थे को आयानी! (गद्यगीत) शक्तिदान कविया की कोयल अर गुलाब रो फूल (अनूकथा) रावत सारस्वत का उदयराज ऊजल, ओकार पारीक का एक किस्त और अनूदित एकाकी, मुरलीधर व्यास के जी सोरै रा लैरका (चुटकले) आते है।

1. साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—रावत सारस्वत, जयपुर

कुरजाँ[1]

फरवरी १९६० मे साधना प्रेस, रतनगढ से प्रकाशित। प्रकाशन-काल के तीन वर्षों की अवधि मे प्रकाशन बन्द। इसमे प्रकाशित उत्कृष्ट रचनाओ मे मदनलाल 'राज' की भूख भवानी, रामप्रसाद चाकलान की रोहा, चन्दा, घाव मे घोवो, जगदीश माथुर 'कमल' की रायजी राज बचायो, लाल हवेली भटकती आत्मा (कहानियाँ) देवी री सराप (लोककथा) वैजनाथ पवार की सूरजी तथा श्रीलाल नथमल जोशी की चपरासी अर अफसर, गोथली रा लाडू कहानियाँ, भवानीशकर शर्मा 'अरुणेश' की राजस्थानी गीतो की एक झलक (समीक्षा) सुशीला गुप्ता का चाय अर छाछ (वार्तालाप) भूपतिराम साकरिया का वरराजा (अनू. अपूर्ण-उपन्यास) मूलचन्द'प्राणेश' की घर.भिद्य.री वात(लोककथा) शिवसिंह चोयल की किएनै दीजै दोस एव भगवानदत्त गोस्वामी की सीख, छीदा नाचो, टमरक टू (शिशु कथाएँ) दीनदयाल ओझा का भीमा चारणी (रेखाचित्र) सूर्यशकर पारीक का राजस्थानी झट्टकला, अदभुत शास्त्री का राजस्थानी सू ही राजस्थान री उन्नति (निवन्ध) श्रीलाल नथमल जोशी का मसाणिया अचारजजी (रेखाचित्र) एव श्रीगोपाल गोस्वामी का एक कजियो (रिपोर्ताज) फफलामारजा (सस्मरण) प्रकाश मे आए हैं।

वाणी[2]

नवम्बर १९६० से जोधपुर से प्रकाशन प्रारम्भ। अल्पावधि मे ही प्रकाशन बन्द हो गया। पत्रिका के विभिन्न अको मे राजस्थानी भाषा की उल्लेखनीय सामग्री विजयदान देथा की अकल रो बोझ, अदल न्याव, मैगत सार, सावचेती, टकै रो गुळ, नवटा देव नै सुरडा पुजारी, मोदो, भावना, झबकी दुनिया, वावळो पिडत, गद्य-गीत, कोमल कोठारी की एक सस्मरण नाव फगत नाव, गुरुवचनम्, ईसप री पाच नीति कथावा (अनू कथाएँ) के रूप मे प्रकट हुई है।

जलमभोम[3]

स० २०२४ कातिक मे राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, ५,६०० कोटगेट बीकानेर से प्रकाशन प्रारम्भ, तीन साल के बाद प्रकाशन बन्द। सह सम्पादक भवरलाल छजलाणी तथा प्रवन्ध सम्पादक—ज्ञानप्रकाश जैन। इसमे विशेषत मानक तिवारी 'वन्धु' की निरभागण, शिवराज छगाणी की दुरासीस, विद्याधर शास्त्री री गैल, रामनिवास शर्मा की रोटी अर मौत, मूलचन्द्र'प्राणेश'की दोय कूकरिया, मोहनलाल शर्मा की पछतावो, नारायणदत्त श्रीमाली की शुक उवाच (कहानियाँ), सुमरलाल वर्मा की धनुप किण तोडयो, गोविन्द अग्रवाल की राजाजी री दिल्लटी

---

1 साहित्यिक मासिक पत्रिका सम्पादक—अद्भुत शास्त्री, रतनगढ

2. मासिक पत्रिका, स० विजयदान देथा तथा कोमल कोठारी, जोधपुर

3 साहित्यिक मासिक पत्रिका, स० मूलचन्द 'प्राणेश' बीकानेर

(शिशु कथाएँ) और सवाईसिंह धमोरा की पेमाबाई (लोककथा), बृन्दा वर्मा के नारी रो महत्त्वपूर्ण स्वरूप मा, वसीकरण विद्या, मनोहर शर्मा के लाल पताव, गळतो, नाथूलाल पाठक का हाड़ोती मे गणेश-पूजा तथा रामावतार शर्मा 'अनिल' का होळी एक नूवो रूप (निबन्ध) मुरलीधर व्यास का दीन-ईमान जळमभोम रै सागै (एकाकी) रामनिवास शर्मा की नागदमण समीक्षा, गोवर्द्धन हेड़ाऊ की समीक्षा एकल गिड दाढाळै री बात, मूलचन्द 'प्राणेश' के खलखळी (चुटकले) एव विश्वनाथ विद्यार्थी का सुवाद लागी (गद्यगीत) के रूप मे रोचक सामग्री की उपलब्धि हुई है।

हरावळ[1]

सह सम्पादक—नन्द भारद्वाज, व्यवस्थापक-मण्डल मे तीन सदस्य हैं। मार्च १९७० मे बम्बई एव जोधपुर से प्रकाशित। इसके विभिन्न अको मे की स्तम्भ रखे गए हैं—अैने ओळखो, म्हारा जूना जोसी हरिजी मिलण कद होसी, फिल्मी एव समाचार स्तम्भ, हास्या हरि मिळै, बाल स्तम्भ, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध एकाकी, सम्पादकीय, कविता स्तम्भ। इसका प्रकाशन अभी जारी है। सावर दईया की गळत आदमिया रै बीच, दीनदयाल कुन्दन की किक, ज्वालामुखी, पण कद तक, बैजनाथ पवार की भिटेरो, हरमन चौहान की सैकिण्ड हैण्ड दरद, रामनिवास शर्मा की आतमबोध, विनोद सोमानी 'हस' की खुद री लास, चुप्पी, मणि मधुकर की अकथ री उणियारो यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की अणबूझो, नन्द भारद्वाज की ठस्योडो मून, हनुमान पारीक की प्रेत, श्रीलाल नथमल जोशी की रूठी राणी (कहानियाँ) बातेरी की मिनख री मोल, ओम पुरोहित की घूघू (लोककथाएँ) भवरलाल सुथार की उडदो, किरण नाहटा की तिरवालो एव सूयशकर पारीक की भालू (शिशु कथाएँ), नन्द भारद्वाज का रामलीला रा पात्र, पुरुषोत्तम छगाणी का शरणागत (एकाकी) नेमनारायण जोशी का गोगाजी रा घोडा सोहनदान चारण का डा एल पी तेस्सीतोरी भगवतीलाल शर्मा का मा एक सस्मरण (सस्मरण) ओकार पारीक का बुलको बातेरण, सत्येन जोशी का गवरू साब, डा व्रजनारायण पुरोहित के पिडतजी, सिफारिस रेखाचित्र, राजेन्द्र बोहरा की आखरमाल परख, रामवक्ष की रोहिडै रा फूल अर अटारखा परख, कनकराज सोनी की किरकिर, सत्यप्रकाश जोशी की राम मिलाई जोडी, नन्द भारद्वाज की हाम्या हरि मिलै अर प्रेतात्मा री प्रीत एव नृसिंह राजपुरोहित की राजस्थानी रा सुळगता सवाल (समीक्षाएँ) रामदत्त शर्मा का देसनोक री करणी माता (निबन्ध) बुद्धिप्रकाश पारीक के नाक (हास्य लेख) देमळाई (निबन्ध) कृष्ण कल्पित का धोळा अर काळा

1. साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक एव प्रकाशक—सत्यप्रकाश जोशी, बम्बई तथा जोधपुर।

मिनख, सुबोधकुमार अग्रवाल का चुरु को होली, वेद व्यास का आबू तीजो लोक (निबन्ध) सोहनदान चारण का फगडा (व्यग्य लेख) एव नन्दलाल शर्मा का अणूतो लेखन अर आफरो (निबन्ध) पारस अरोडा की म्है सोचूं हो ‥ ‥ (अनू आत्मकथा) ओकार पारीक की मा, अमर जोडो (अनू कहानियाँ) लिखमीचन्द के हास्या हरि मिलै (चुटकले) सत्यप्रकाश जोशी का अरदास (गद्यगीत) तथा तेजसिंह जोधा की प्रेमचन्दर गोस्वामी (जीवनी) इस पत्रिका की रोचक सामग्री है।

इस प्रकार इस पत्रिका मे कई उपन्यास, नाटक और अनूदित साहित्य की विधाओ का आधिक्य रहा है। इतने अल्प समय मे ही इस पत्रिका ने करीब एक हजार से भी अधिक साहित्यकारो को प्रकाश मे लाने का प्रयास किया है।

मूमल[1]

सयुक्त सम्पादक—मानक तिवारी 'बन्धु' अक्टूबर १९७१ मे बीकानेर मे प्रकाशन प्रारम्भ परन्तु दो सालो की अवधि मे ही इसकी गति अवरुद्ध हो गई। इसमे प्राप्त उत्कृष्ट सामग्री के दर्शन हमे दामोदरप्रसाद शर्मा की विपदन्त रो बलिदान, श्रीलाल नथमल जोशी की सोनै रो हार, रामनिवास शर्मा की लैम्प पोस्ट कहानियाँ, गोविन्द अग्रवाल की बखत री सूझ एव अमोलकचन्द जांगिड़ की जाट अर मीयो लोककथाएँ, बात रो फेर, अजीतसिंह 'बन्धु' का मनै जरूरत है, मनोहर शर्मा का साहित्यजीवी तथा किशनशकर पारीक का बीकानेर मे खेला रो लोक-दरमण निबन्ध, सुरेन्द्र अचल का सूरज री उगाली व्रजनारायण पुरोहित का सुगनजी रेखा-चित्र, मूलचन्द 'प्राणेश' का साप सू सग्राम सस्मरण, गौरीशकर 'अरुण' की उगि-यारा तथा धनजय वर्मा की आधै नै आख्या समीक्षाएँ इस रूप मे होते हैं।

उजास[2]

अगस्त १९७२ मे बीकानेर प्रौढ शिक्षण समिति से प्रकाशन प्रारम्भ। विशेष उल्लेखनीय साहित्य की विधाएँ भवरलाल आचार्य का तार री मार, अशोककुमार मोहता के छोरी रो ब्याव, गधे रो बाप, एस एन. तोपनीवाल का सकर मैमनो रो देखभाल एकाकी, गोमा बाई की खोदे जको पडे (लोककथा) हरिदास हर्ष की अर्थ रो अनर्थ, गिरधारीदान की भणीज्योडै री च्यार आख्या, रामरतन हर्ष की आधै री माखी राम उडावै, भवरलाल की चतर हिरण, श्रवणकुमार की जाको राखे साइया, कैलाशचन्द्र की जिके रा काम बीरा जामा, व्रजेश जोशी की अजब बीमारी गजब इलाज बालकथाएँ, श्याम किराडू की की री करणी की री भरणी नीति कथा तथा अशोककुमार मोहता की राखी री आण ऐति कथा, कृष्णचन्द्र शर्मा रो प्रौढ सिक्षक गाधीजी, लिछमण रेखा, ग्रहण काई है ‥‥‥ ? गोकुलचन्द व्यास का

---

1. साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—महेन्द्र, बीकानेर
2. अर्द्ध साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—कृष्णचन्द्र शर्मा, बीकानेर

पढाई री जरूरत, हरिदास हर्ष की केमर हर विसार, सी एल हर्ष की मात कुमात भी होवै और शिवराज छगाणी का सियाळै मे भेड्या री बीमारथा निवन्ध के रूप मे प्रकाशित हुई हैं।

ओळखाण[1]

जनवरी १९७४ में जोधपुर से प्रकाशन आरम्भ। डेढ़ दो साल की अवधि मे प्रकाशन अवरुद्ध हो गया। उल्लेखनीय सामग्री का विवरण हमे नारायणसिंह भाटी 'नानण' का चेडी एकाकी, कल्याणसिंह शेखावत की हाडौती लोककथा, माखी-बूस शिशुकथा, मुरलीधर शर्मा की केसू रा मास्टरजी (व्यग्य कथा) तथा गोविन्दलाल माथुर की नर अर मादा में ज्यादा कुण अत्याचारी (नीति कथा), जहूर खा मेहर के मोहर्रम, मारवाड री प्राचीनता, सौभाग्यसिंह शेखावत का लोकमान वीर तेजो जाट निवन्ध, हरमन चौहान की बोल भारमली (समीक्षा) कल्याणसिंह शेखावत के लुगाया री दुनिया (निवन्ध) जामण देवै हेलो, देम रा हाल चाल समीक्षा, कल्याणसिंह राजावत के कवि री आप बीती, देखो हमज्यो मती चुटकले, कल्याणसिंह शेखावत की सुमनेसजी अवै नी रैया (जीवनी) तथा पारस अरोडा का विराट् (अनू अपूर्ण उपन्यास) के रूप मे मिलता है।

ईसरलाट[2]

जयपुर के महाराजा द्वारा फतेह टीबा पर विजय की खुशी मे खडा किया हुआ विजय स्तम्भ "ईसरलाट" कहलाया। पत्र का नामकरण इसी आधार पर हुआ है। प्रकाशन दिसम्बर १९७४ से प्रारम्भ, जयपुर से प्रकाशित, दो वर्षों की अवधि मे ही प्रकाशन वन्द। परामर्शमण्डल मे पाँच सदस्य हैं। इस पत्रिका के होली, जनम, वानगी, कडवारो इत्यादि विशेपाक भी प्रकाशित हुए हैं। इसकी प्रकाशित सामग्री मे विशेषत सीताराम पारीक की देवता रा हत्यारा कुण, विजयशकर शास्त्री की देसळाई री पेटी कहानियाँ, रविकान्त चौधरी के चपडामो-सत्र, उतरा पाव पसारज्यो एकाकी विनयकुमार शर्मा का पीढी रो आतरो (रेखाचित्र) दीनानाथ पारीक का स्व प हीरालाल भारतीय (सस्मरण) गुमानसिंह शेखावत की सुणो टाबरा (शिशुकथा) गोपालनारायण वोहरा की ढूढारी महातम (समीक्षा) रामचन्द्र पुरोहित की हीरा को हार (अनू कथा) रेवाशकर शर्मा का नागरिक सजगता, बुद्धिप्रकाश पारीक का पेट्ट तथा सीताराम पारीक का पिरजातन्तर री भेडा निवन्ध--यह सामग्री देखी जा सकती है।

1 साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—प्रकाशक—सरक्षक—कल्याणसिंह शेखावत, जोधपुर

2 साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—बुद्धिप्रकाश पारीक, जयपुर

जाणकारी[1]

संस्थापक—पारस अरोड़ा, व्यवस्थापक—हरमन चौहान। नवम्बर १९६७ मे रचना प्रकाशन, जोधपुर से प्रकाशित। लगभग ढाई साल की अवधि मे ही प्रकाशन कार्य अवरुद्ध। सरक्षक-मण्डल मे तीन सदस्य हैं। प्रकाशित उल्लेखनीय सामग्री इस रूप मे प्राप्त हुई है—पारस अरोडा की जरूरत (कहानी) वेतारीख री डायरी रा पाना, हथकड़िया रो दुम्मण (निवन्ध) अकाळ, राजस्थानी भामा . टेढा सवाला रा सीधा उत्तर (समीक्षाएँ) हरमन चौहान की वेजिटेरियन मछली (कहानी) देवलियै रै थान (गद्यगीत) लक्ष्मणसिंह पवार की दिवलै री जोत (कहानी) तथा शक्तिदान कविया की लारला २५ वरसा मे डिंगळ काव्य (निवन्ध)

दीठ[2]

प्रकाशन सवत् २०३० कार्तिक मास मे जोधपुर से प्रारम्भ। डेढ वर्ष के वाद मासिक वन गई। रुक रुक कर प्रकाशित होने वाली यह पत्रिका ढाई साल के अल्पकाल मे ही वन्द हो गई। पत्रिका से उपलब्ध साहित्य-सामग्री मे विशेष रोचक सामग्री अत्यल्प मात्रा मे ही उपलब्ध हो सकी है—विजयदान देथा की राजी नावौ, फाटक कहानियाँ, अल्पूरो अनू कथा, सावर दईया की हालन कहानी, प्रकाश 'परिमल' के आतमा री खेप, ज्योति द किंग निवन्ध, गोवर्धनसिंह शेखावत की मणि मधुकर री कवितावा समीक्षा एव तेजसिंह जोधा की तास रो घर, अटारवा समीक्षाएँ तथा परम्परा अर वैयक्तिक प्रतिभा (अनू लेख)

राजस्थानी एक[3]

अक्टूबर १९७१ मे जोधपुर से प्रकाशित। उपसम्पादक—विश्वम्भर वारहठ, किरण नाहटा तथा नन्दलाल शर्मा। प्रवन्ध सम्पादक वावूलाल शर्मा। प्रथम अक के साथ ही प्रकाशन अवरुद्ध। पाँच कवियो की कविताओ के सग्रह के रूप मे यह पत्रिका प्रकाश मे आई। पत्रिका से प्राप्त उल्लेखनीय समीक्षाये द्रष्टव्य है—तेजसिंह जोधा की तीतर फरै ऽ ऽ ऽ और सम्पादकी, गोरधनसिंह शेखावत की मैं सोचूं हू, मणि मधुकर की भचीड़ खाया ठा पडै ला, ओकार पारीक की आखर चिन्तण तथा पारस अरोडा की अनुभूती अर अभिव्यक्ती रै वीचली छेती।

जागती जोत[4]

राजस्थानी भाषा साहित्य सगम, वीकानेर से १९७३ में प्रकाशन आरम्भ

1 साहित्यिक द्वैमासिक पत्रिका, सम्पादक—पारस अरोड़ा एव हरमन चौहान, जोधपुर

2 साहित्यिक द्वैमासिक पत्रिका, सम्पादक—तेजसिंह जोधा, जोधपुर

3 साहित्यिक द्वैमासिक पत्रिका, सम्पादक—तेजसिंह जोधा, जोधपुर

4 साहित्यिक मासिक पत्रिका, सम्पादक—छ छ मासो से परिवर्तनशील, वीकानेर

प्रारम्भ में यह पत्रिका त्रैमासिक,बाद मे छः मासिक तथा अभी मासिक है। यह पत्रिका भी अपने विशेषाक निकालती रहती है। इसने कहानी निबन्ध एव कविता अक प्रकाशित करवा दिए हैं। पत्रिका मे उल्लेखनीय विषय-सामग्री—ब्रजमोहन जावलिया की कुण हारयो कुण जीत्यो, करणीदान बारहठ की बोखो, इयाही, मूलचन्द 'प्राणेश' की दायजै री दाभ, सावर दईया की सुलयोडो, कोट, यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र' की सुख रो सूरज, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की ईजतदार तथा मुरलीधर शर्मा विमल' की श्रोळखाण कहानियाँ, मुरलीधर व्यास की खरी जीत (शिशु कथा) उदयवीर शर्मा का मीठा सपना खारा गीत, नरेन्द्र भानावत का घणो हेत टूटण नै, किरण नाहटा का सातवें दशक री राजस्थानी कहाणी, दीनानाथ खत्री का वखत, राजकृष्ण दूगड का कविया करणीदान व्यक्तित्व अर कृतित्व तथा श्रीलाल नथमल जोशी का अळगै सू नेडै सू विवेक सू निबन्ध, रामनाथ व्यास 'परिकर' का म्हारी मास्को री साहित्य यात्रा, मोहनलाल पुरोहित का 'सिस्टर' के 'वैन' सस्मरण, ब्रजनारायण पुरोहित का गुलजी, दीनानाथ खत्री का अखजो रेडी आलो रेखाचित्र, दीनदयाल ओझा का मूमल, नरोत्तमदास स्वामी का सोराब और रुस्तम और भूपतिराम साकरिया का भणाई मे समाजवाद एकाकी, मनोहर शर्मा की एक अलिखित नाटक री सार समीक्षा, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की आज री कहाणी एक सिंधु राग री धुन मे समीक्षाएँ, रामसिंह का वदनमाल (गद्यगीत) तथा सत्यनारायण स्वामी का पराजय (अनू गद्यगीत)

हेलो[1]

अप्रैल १९७४ में बीकानेर से प्रकाशन प्रारम्भ। व्यवस्थापक—सूरजराज, सम्पर्क स्थान जन-जन कार्यालय, कोट गेट, बीकानेर। पत्रिका मे प्राप्त विशिष्ट सामग्री इस रूप मे द्रष्टव्य है —हरमन चौहान की नान्हो प्रोमिथियस मोहन आलोक की कुम्भीपाक कहानियाँ, अन्नाराम 'सुदामा' का तस्कर सडक सू ससद ताई, गोवर्द्धन हेडाऊ का असली हिन्दुस्थान रो बासो रेखाचित्र, दो दो हाथ गरीबी सू (लेख) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का नूवो जलम, अन्नाराम 'सुदामा' के मिली-भगत, उठती दूकान एकाकी, प्रहलाद ओझा की रोहिडै रा फूल अर हास्या हरि मिलै, यम हसन की भारतीय लेखण मौजूदा परिपेख मे समीक्षाएँ, मेघराज शर्मा की आग, खुलै आभै हेठै (अनू कथाएँ) तथा नन्द भारद्वाज का कविता रो जलम (अनू निबन्ध)

चामल[2]

कोटा की चर्मण्वती या चामल या चम्बल नदी के आधार पर नामकरण

1 साहित्यिक त्रैमासिक पत्रिका, सम्पादक—मेघराज शर्मा, बीकानेर

2 त्रैमासिक हाडौती अचल की पत्रिका, सम्पादक—प्रेमजी 'प्रेम' कोटा

चामल हुआ है। परामर्श-मण्डल मे ६ तथा सरक्षक मण्डल मे ३ सदस्य हैं। चामल साहित्य समिति, शिवदास घाट गली, कोटा-६ से जनवरी १९७४ मे प्रकाशन आरम्भ। विज्ञापन और अन्य तथ्यो पर जोर दिया गया है। पत्रिका का अधिकाश भाग हिन्दी की रचनाओ से पूर्ण रहता है। इससे उपलब्ध उल्लेखनीय साहित्यिक सामग्री इस रूप मे प्रकट की जा रही है —

जमनाप्रसाद ठाडा "राही" के पराछत, शेरवान्या, साचा देवता एकाकी, ब्रजमोहन मधुर' को एक छो सोनी (लोक-कथा) गिरिधारीलाल मालव की पाँती, जयपाल वो रूपा, अरुण सेदवाल की टेलीफून, बद्रीप्रसाद पचोली की भ्वौ भाग्यौ . मौत भागी कहानियाँ, हुक्मचन्द जैन को बूटा, सेटजी की तूद, अमरसिंह की दना को दरसाव (बाल कथाएँ) अशोककुमार 'वाप' के छु गट्या अर गळगळी (चुटकले) रामकुमार की असी लछमी (अनू कथा) प्रेमजी 'प्रेम' की झणकार, अण बाच्या आखर, रगबोध समीक्षाएँ बद्रीनारायण शास्त्री का सबदाँ सूँ बाता, गोविन्द कौशिक का हाडौती रो सूरमो : परथीराज (निबन्ध)

राष्ट्रपूजा[1]

सह सम्पादक—मुरली राकावत तथा चन्द्रप्रकाश 'सरल' व्यवस्थापक—गिरिधारी महर्षि तथा लीलाधर महर्षि और सलाहकार सम्पादक—किशोर कल्पनाकात। रतनगढ से १९७४ मे प्रकाशित। राजस्थानी की विशिष्ट साहित्यिक सामग्री इस रूप मे प्रस्तुत है —

रामप्रसाद चाकलान की बुच्ची, यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' की चीचड, सोमदेव शर्मा की उळझ्योडा प्रश्न कहानियाँ, किशोर कल्पनाकान्त की छमक छल्लो (अनू.कथा) सीताराम महर्षि की भारती रा बोल (समीक्षा) आधुनिक राजस्थानी रा निर्माता किशोरकल्पनाकान्त (लेख विधा) प्रभा गोयनका का लुगाई मोट्यार सू कमती कोनी (लेख) गायत्री अग्रवाल का लुगाई री जूण (निबन्ध) ओकार पारीक का हेमी (सस्मरण) भगवतीप्रसाद चौधरी 'शरद' का सस्मरण ऊजळा अर काळा तथा सीताराम महर्षि का लालडी एक फेरू गमगी (पूर्ण उपन्यास)

यहाँ तक पूर्णरूपेण राजस्थानी भाषा की पत्र-पत्रिकाओ का विवेचन किया गया है। अब उन हिन्दी पत्र-पत्रिकाओ का निरूपण भी करना उचित होगा जिनसे हमे राजस्थानी भाषा की विलक्षण और अपार साहित्य-सामग्री प्राप्त हुई है। इनमे से मुख्यत ये पत्र-पत्रिकायें हैं —

1. साहित्यिक वार्षिक पत्रिका, सम्पादक—परिवर्तनशील, प्रथमाक का सम्पादक—सीताराम महर्षि

राजस्थानी वीर[1]

कई अक पूरे के पूरे राजस्थानी भाषा मे प्रकाशित हुए हैं। वैसे लगभग सभी अको मे राजस्थानी भाषा की सामग्री उपलब्ध होती रही है। १९४३ ई मे ३६२ बुधवार पेठ, पूना-२ से प्रकाशन प्रारम्भ। पत्रिका के अको मे राजस्थानी भाषा की विषय-सामग्री इस रूप मे प्राप्त है—

मूलचन्द 'प्राणेश' की ज्यान ऊबरी लाखा पाया, श्रीलाल नथमल जोशी की दो बाळगोठिया, श्रीचन्द राय की लछमी माता रो वरदान शिशुकथाएँ, श्रीलाल नथमल जोशी की चादी री कटोरी, नोकरी, पोतै नै साभो, सुपातर, हे राम! हे घणस्याम! मनोहर शर्मा की घर की लिछमी, चिलको, वैजनाथ पवार की तीजी लुगाई, छातो टूटो, रामदत्त साकृत्य की सुपनो, नानूराम सस्कर्त्ता की धरती माता, शान्ता मू धड़ा की विद्या, सुशील, बुद्धिप्रकाश पारीक की साडू-सम्मेलन, फकीरचन्द व्यास की मतलबी मोडा,' लुकमीचरणी कहानियाँ, नारायणदास धूत की तप रे तवा तीन दिन, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की चौवोली तथा नृसिंह राजपुरोहित की परम्परा लोककथाएँ, लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत की आघा वाळो एटमबमा नै (समीक्षा) भोमराज भवीरू का ध्यानी बावाजी, बालकृष्ण लाहोटी का चालू दुनिया एकाकी, श्रीलाल नथमल जोशी के रडवो, फदडपच तथा शिवराज छगाणी का हडकानाथ रेखाचित्र, विश्वम्भरप्रसाद शर्मा 'विद्यार्थी' का कीडी नगरो, अन्नाराम 'सुदामा' का कैई जिकी कर दिखाई तथा भवरलाल नाहटा का आसकरणजी बावाजी सस्मरण, सुन्दरलाल बोहरा का मगरी, बजरग शर्मा का छोरे रो अचइयो गद्यगीत, जमनाप्रसाद पचेरिया का मन्नै क्या कोनी करणो (अनू एकाकी) यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' का धोबी (अनू कथा) लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत का राजस्थान री सस्कृति, श्रीकृष्ण धत का जावा जठे वेई बाता, पन्नालाल लाहोटी का मारवाडी समाज अर साहित्य, शान्ता मू धडा का म्हारो मार्ग एव श्रीलाल नथमल जोशी का आवा मू घा कीया हुग्या लेख।

राजस्थान-भारती[2]

अप्रैल १९४६ मे बीकानेर से प्रकाशन, प्रकाशित अको से प्राप्त राजस्थानी भाषा की विशिष्ट सामग्री —

भवर भादानी की दिनूगै रो भूल्यो, दीनदयाल ओझा की मानखो, रतनसी की आस्या पाछै नार, सूरज करेशा की काळी गुलाब कहानियाँ, सूर्यशकर की खीर अर चोखो सुपनो, कान्ह महर्षि की वात भली दिन पाधरा लोककथाएँ तथा श्रीचन्द राय की खरो सनेव (बाल कथा) भवरलाल नाहटा का रतन (सस्मरण) जगदीश

1 मूलत हिन्दी मासिक पत्रिका, सम्पादक—नारायणदास धूत, पूना

2. त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, सम्पादक—परिवर्तनशील, बीकानेर

माथुर 'कमल' का जीमण, श्रीलाल नथमल जोशी का कामेरी रेखाचित्र, मुरलीधर व्यास का मेवाड री लाज, और दौलतसिंह लोढा का राजा भरतरी एकाकी, प्रकाश परिमल री राजस्थानी एक समीक्षा, अन्नाराम 'सुदामा' की जैनशोध अर समीक्षा, मुरलीधर व्यास की जागती जोता समीक्षा, ठा रामसिंह का प्रेमाश्रम, सगतसिंह राठौड का मूरख ।। गद्यगीत सूर्यशकर पारीक का न्यारा न्यारा सुभावा री वानगी, दीनदयाल ओझा के राजस्थानी लोकगीता मे नारी, सन्त-साहित्य मे वात्सल्य भाव निबन्ध ।

वरदा[1]

सवत् २००२ मे बिसाऊ (झुझुनू) से प्रकाशन प्रारम्भ । प्रारम्भ मे रावत सारस्वत तथा रामनिवास हारीत सम्पादक रहे। इसके अको से प्राप्त राजस्थानी सामग्री -

मनोहर शर्मा की बेटी-जमाई (एकाकी) सोनल भीग, मोमाखी, रोहिडै रा फूल, फूना मारण (व्यग्यमूलक कथात्मक निबन्ध विधा) लक्ष्मीकुमारी चूडावत का राजस्थानी रो महत्व (लेख)

लोक-सस्कृति[2]

जून १९६१ मे रूपायन सस्थान, बोरुदा से प्रकाशित, इसमे विजयदान देथा की लोककथाएँ राजस्थानी भाषा मे प्रकाशित हुई हैं जो "बाता री फुलवाडी" के कई भागो मे आ चुकी है। विजयदान देथा की कुदरत री बेटी, पाणी, माठ, आदमखोर, मायाजाळ, सपनो, आस्था, परस दया आदि लोककथाएँ ।

मधुमती[3]

राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर से जनवरी १९६१ मे प्रकाशित । राजस्थानी के विशेष स्तम्भ मे प्रकाशित विशेष उल्लेखनीय रचनाएँ —

बैजनाथ पवार की कागद रो पेटो, गोपाल राजस्थानी की अधूरा सपना, रामेश्वरदयाल श्रीमाली की मळवटा हरमन चौहान की रजपूतन, माणक तिवारी 'बन्धु' की नू तो, आनन्दचन्द भण्डारी की सुहाग रात, श्रीलाल नथमल जोशी की धरणी अर भरणी, पक्को फैसलो कहानियाँ, सूर्यशकर पारीक की प्यार लेस्यू रे प्यार, गोविन्दलाल माथुर की कोन रो पत्तो बीकर लागो (लोककथाएँ), मुरलीधर व्यास की चौबेजी, झूठो झमेलो शिशु-कथाएँ, चन्द्रसिह का पत्रकार बनाम साहित्यकार, जगदीश माथुर का जोवनिया एकर फिर आवरे, रामवल्लभ सोमाणी का नकुलीस मत, श्रीलाल नथमल जोशी का चिडचा, कबूतर : कागला निबन्ध, शिवराज छगाणी का पत्ती रा रमार, मूलचन्द 'प्राणेश' का चौधरी दादो रेखाचित्र, दीनदयाल ओझा का महायना कैम्प, श्रीलाल नथ-

---

1 त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका, सम्पादक—डा मनोहर शर्मा, बिसाऊ (झुझुनू)

2 हिन्दी मासिक पत्रिका, सम्पादक—विजयदान देथा तथा कोमल कोठारी, बोरुदा

3 हिन्दी मासिक पत्रिका, सम्पादक—परिवर्तनशील, उदयपुर

मल जोशी का त्रिवेणी रै तीर सस्मरण, एव पुरुषोत्तम छगाणी का हाथ गे कगीदो दिल रो दरियाव (रिपोर्ताज) दामोदरप्रसाद का हाथी रा दांत, सुरेन्द्र अचल का सर्मै रो पसवाडो, विनोद सोमानी 'हँस' का रग मे भग एकाकी, चन्द्रदान चारण की रामदूत, जनार्दन राय नागर की वोवजी ग वोल, बद्रीप्रसाद पुरोहित को राजस्थानी लोकजीवण मे वरखा रुत ममीक्षाएँ, लक्ष्मीकुमारी चूडावत की छोरी काई हो वजगग ही (अनू कथा) मुरलीधर व्याम का देश-प्रेम (गद्यगीत) पुरुषोत्तम छगाणी की जालिम दीवान सालमसिंघ (जीवनी)

उत्थान-चक्र[1]

१९७२ मे बीकानेर से प्रकाशन आरम्भ। राजस्थानी की साहित्य-सामग्री आंशिक रूप मे प्राप्त होती है—मनोहर शर्मा का वचन-वीर (लेख) और इनकी आ चुकी अर जा चुकी, करडो आच(कहानिया) श्रीलाल नथमल जोशी की लिछमी-तूठी (कहानी)

मरुश्री[2]

१९७२ ई मे लोक सस्कृति शोध सस्थान नागरी, चुरू से प्रकाशन। राजस्थानी का साहित्य आंशिक रूप मे मिलता है—वैजनाथ पवार की सोनारो सुपनो (कहानी) भागीरथ कानोडिया की कळजुग (पौरा कथा) सुबोधकुमार अग्रवाल की छापर को चौहटियो भैरु सूर्यशकर पारीक की ठाकुरा गी वातां एव रामेश्वर टाटिया की चौत्र देई जिनो चुग्गो भी देसी लोककथाएँ।

परम्परा[3]

अप्रैल १९५६ मे राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी (जोधपुर) से प्रकाशित, सम्पादक—नारायणसिंह भाटी। इस पत्रिका का प्रत्येक अक विशेषांक के रूप मे ही आता है। इनमे से ज्यादातर हिन्दी के नहीं अपितु राजस्थानी के हैं। लोकगीतांक, गोरा हट जा जेठवे रा सोरठा अक, राजस्थानी वात-सग्रह अक, नीति प्रकासाक, ऐतिहासिक वाता अक गज उद्धार ग्रन्थाक, रमीझे राज रा गीताक, राजस्थानी लोक साहित्याक, रसराजाक, राजस्थानी साहित्य का आदिकाल अक, पिंगल-सिरोमणि अक, राठौड रतनसिंघजी री वेलि अक, उम्मेदसिंह सिसोदिया रा गीताक, ऐतिहासिक रुक्के- परवाने अक, हेमाणी अक, राजस्थान मे राजस्थानी साहित्य की खोज अक, टैस्सीटोरी का राजस्थानी ग्रन्थ सर्वेक्षण अक सूर्यमल्ल विशेपाक, वीर सतसई राजस्थानी टीका अक, राजस्थानी व्याकरण एक अध्ययन अक, पाबूजी रा दूहा अक, गुग्ग विजै ब्याह अक प्रकाशित हो चुके हैं जिनमे गोरा हट जा, हेमाणी अक, रस-

---

1 हिन्दी मासिक पत्रिका, सम्पादक-रमेश महर्षि, बीकानेर

2 हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका, सम्पादक—गोविन्द अग्रवाल, चुरू

3 हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका, सम्पादक—डा० नारायणसिंह भाटी, जोधपुर

राज अंक, सूर्यमल्ल विशेषांक तथा राजस्थानी व्याकरण एक अध्ययन अंक अत्यन्त ही श्लाघ्य एव स्तुत्य रहे हैं।

अमर ज्योति, समाजवाणी, झाझरको, राजस्थानी समाज, लोक-सम्पर्क, वैचारिकी एव मरुभारती इत्यादि हिन्दी-पत्र-पत्रिकाओ मे आंशिक राजस्थानी साहित्य मिलता है। इनका विस्तृत विवरण अपेक्षित नही है।

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाएँ—निष्कर्ष :—

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ के विस्तृत विवेचन से निष्कर्षत कुछ तथ्य सामने आते है जो हिन्दी या भारतीय भाषाओ की पत्र-पत्रिकाओ से भिन्न रूप मे है। इनमे प्रथम तो यह है कि लगभग सभी राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओ मे साहित्य की सभी विधाओ मे साहित्यकार एव लेखक श्रीलाल नथमल जोशी का छाया रहना है। द्वितीय, मनोहर शर्मा, लक्ष्मीकुमारी चूडावत, बैजनाथ पवार नृसिंह राजपुरोहित, दामोदरप्रसाद जगदीश माथुर 'कमल' और सूर्यशकर पारीक की रचनाये राजस्थानी की अधिकांश पत्र-पत्रिकाओ मे प्रकाशित होती रही हैं। तृतीय, मरुवाणी हरावळ तथा ओळमो जैसी पत्रिकाओ ने हजारो राजस्थानी विभूतियो को प्रकाश मे लाने के प्रयास किये हैं अत अपनी अमूल्य सेवा के कारण ये पत्रिकाये राजस्थानी की प्राण हैं। चतुर्थ, कुछ पत्रिकाओं को छोड शेष सभी विशुद्ध साहित्यिक पत्रिकायें ही है। पचम, हिन्दी-पत्रिकाओ मे भी मधुमती, राजस्थानी वीर, राजस्थान-भारती और वरदा का राजस्थानी भाषा और साहित्य के विकास मे अभूतपूर्व योगदान रहा है। इन पत्रिकाओं से भी राजस्थानी की साहित्य-सामग्री अत्यधिक मात्रा में मिलती रहा है। मरुवाणी, जागती-जोत, हरावळ तथा राष्ट्र-पूजा जैसी पत्रिकाएँ ही जीवितावस्था मे है। २०-२२ वर्षो की लम्बी यात्रा और सेवा के पश्चात् वित्तीय साधनो के अभाव मे "ओळमो" पत्र अभी विश्राम के क्षणो मे काल-यापन कर रहा है। परन्तु इसके सम्पादक किशोर कल्पनाकान्त की मातृभाषा के प्रति रुचि समाप्त नही हुई है। राजस्थानी के विकास हेतु इनका अथक प्रयास आज भी जारी है। सरकारी सहायता का बिल्कुल न मिलना इनको इतना अधिक नही खटकता रहा जितना कि इनकी ही नही अपितु पूरे राजस्थानियो की प्रिय पत्रिका ,'ओळमो" को राजस्थानी भाषा साहित्य अकादमी, बीकानेर द्वारा साहित्यिक नही स्वीकार करना। अन्तिम, अधिकांश पत्र-पत्रिकाओ ने दो ढाई साल की अल्पावधि मे ही दम तोड दिया है। इसके मुख्य कारण वित्तीय जटिलता तथा साहित्य-सामग्री की पर्याप्त मात्रा मे अप्राप्ति ही हो सकते हैं। विना पारिश्रमिक के राजस्थानी साहित्यकारो द्वारा निरन्तर साहित्य-सेवा मे जुटा रहना कोई कम प्रशसनीय बात है क्या ? राजस्थानी की लगभग सभी पत्रिकाओ मे विना पारिश्रमिक की साहित्य-सामग्री प्रकाशित हुई है तथा हो रही है।

राजस्थानी पत्र-पत्रिकाओं का भविष्य—

ऐसी स्थिति को देखते हुए प्रतीत होता है कि राजस्थानी की पत्र-पत्रिकाओं का भविष्य कोई अच्छा नहीं कहा जा सकता। इससे तो इनकी भूतावस्था ही काफी ठीक रही है। अतः निकट भविष्य में इन पत्र-पत्रिकाओं को आगे बढ़ाने का दायित्व सरकार को अपने हाथ में ले लेना चाहिए। सरकार एक ऐसी योजना बनाये ताकि इन पत्रिकाओं को इन क्षणों में सहारा मिल सके। अभी राजस्थान में राजस्थानी साहित्यिक पत्रिकाओं को आश्रय की आवश्यकता है। पवित्र और निष्पक्ष सरकारी सहायता से पाठकों और लेखकों को एक मिलन-भूमि तैयार की जा सकती है और इनका व्यावसायिक दृष्टिकोण भी यदि हो तो कम हो सकता है। इन्हें अपना अस्तित्व बनाये रखने हेतु अधिक संघर्ष की आवश्यकता है। क्योंकि संघर्ष ही भविष्य का निर्माता है। इसके लिए नए लेखकों को साथ लेना होगा तथा उदीयमान प्रतिभाओं को लेखन के लिए उत्साहित करना होगा। परम्परा के प्रति स्थापित पद्धति के घेरे से बाहर निकल कर एक नया रास्ता भी भविष्य की सुरक्षा के लिए निर्मित करना होगा। यदि प्रत्यक्ष और यथार्थ स्थिति के आधार पर राजस्थानी पत्रिकाओं के भविष्य के विषय में चिन्तन किया जाय तो आशाजनक भविष्य दिखाई नहीं देता है। क्योंकि राजस्थानी की बीस-पच्चीस पत्र-पत्रिकाओं की नींव जिस उत्साह के साथ डाली गई उनमें से अधिकांश की दीवारें निराशा के साथ ढह गई। राज्य में इन पत्रिकाओं के लिए एक आचार-संहिता बना कर यदि राज्य-सरकार बिना किसी प्रतिबन्ध के आर्थिक सहायता देकर इन्हें प्रोत्साहित करे तो इन पत्रिकाओं की नींव पुष्ट हो जायेगी। सम्पादकों तथा प्रकाशकों को भी अपनी अभिव्यक्ति इस तरह प्रस्तुत करनी चाहिए ताकि वह फलवती होकर उत्कृष्ट हो जाय।



अध्याय १२

उपसंहार

राजस्थानी भाषा का प्रश्न:—जब कई प्रान्तीय भाषाओं को संविधान में मान्यता दी जा रही थी तब राजस्थान की ओर से भी रानी लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत तथा बीकानेर के महाराजा डा० कर्णीसिंह ने संसद में राजस्थानी भाषा को भी मान्यता देने का प्रश्न उठाया। परन्तु भारत सरकार ने इनके इतने महत्त्वपूर्ण प्रश्न पर कोई गम्भीर विचार नहीं किया। तत्पश्चात् बार बार विधान सभा में इस प्रश्न को उठाने पर राज्य-सरकार को इस ओर ध्यान देना पड़ा। फलस्वरूप अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा कानून में बालकों को उनकी मातृभाषा में ही शिक्षा दिया जाना स्वीकार कर लिया गया। नीतिरूप में राज्य ने स्वीकार किया कि जहाँ तक हो सके प्रचारात्मक साहित्य और जिस साहित्य का सम्बन्ध सीधा ग्रामीण जनता, जन-जातियों एवं किसानों से हो, वह साहित्य राजस्थानी भाषा में प्रकाशित किया जाय। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में विश्वविद्यालय में भाषाओं के आसन के लिए भी अन्य भाषाओं के साथ राजस्थानी का नाम सम्मिलित किया गया। समाज-शिक्षा विभाग की पुस्तकों की चयन-समिति में राजस्थानी के विज्ञ विद्वान् को भी सम्मिलित किए जाने का निश्चय भी हो गया। इतना होने पर भी संविधान में इस भाषा को मान्यता से दूर ही रखा गया है जबकि सोवियत रूस की राजधानी मास्को में 'इन्स्टीट्यूट आफ एशिया" में राजस्थानी भाषा पर कई पुस्तकें लिखी जा रही हैं। प्रो. सरदुतशेंको का अपने दो सहयोगियों के साथ इसी काम में जुटना इसका ज्वलन्त प्रमाण है।

राजस्थानी भाषा केवल राजस्थान की भौगोलिक सीमा तक ही सीमित नहीं है। प्रवासी राजस्थानियों की संख्या एक करोड़ तथा राजस्थान में राजस्थानी भाषा-भाषियों की संख्या ढाई करोड़ के लगभग मानी जाती है। राष्ट्रभाषा हिन्दी को छोड़कर भारतीय भाषाओं के वक्ताओं की संख्या में राजस्थानी का पाँचवाँ स्थान है। बंगला, तेलुगु, तमिल और मराठी के बाद राजस्थानी भाषा को वक्ताओं की संख्या में गौरवपूर्ण स्थान मिलता है। फिर भी इस भाषा को संविधान में उचित और निर्दिष्ट स्थान नहीं मिल पाया है। राजस्थानी भाषा के विषय में कुछ राजस्थानी-

(१) राजस्थानी भाषा कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है। यह तो हिन्दी की ही एक बोली मात्र है अत राजस्थान हिन्दी-भाषी राज्य है (२) मारवाड़ी, ढूंढाड़ी, हाड़ौती, मेवाड़ी, बीकानेरी, जैसलमेरी, भीली इत्यादि बोलियाँ, राजस्थान मे बोली जाती हैं तथा इनमे नया और पुराना साहित्य भी प्राप्त होता है। प्रश्न यह उठता है कि इनमे से किसे राजस्थानी भाषा मानी जाय ? (३) न तो राजस्थानी भाषा नाम की कोई भाषा है और न ही कोइ राजस्थानवासियो की भाषा-विषयक माग है। यह तो सिर्फ इने-गिने जोधपुरवासियो की अन्य जिलो की भाषाओं पर मारवाड़ी बोली को थोपने का प्रयास है। (४) राजस्थानी नाम की भाषा राजस्थान मे न तो पूर्व मे कभी थी और न वर्तमान समय मे इसे कोई भाषा मानता है (५) इस तरह की भाषा-विषयक माग से प्रान्तीयता के झगड़े का खतरा है अत ऐसी सघर्षमयी माग उठाई नही जानी चाहिए (६) राजस्थानी को अलग भाषा मानने से हिन्दी कमजोर पड जायेगी तथा भविष्य में एक भाषाई विवाद खड़ा हो जायेगा।

परन्तु राजस्थानी के वास्तविक मर्मज्ञ विद्वानो ने इन सब तर्कों पर बहुत कुछ विचार कर लेने के बाद इस प्रकार से खण्डन किया है—

राजस्थानी का हिन्दी से अपना पृथक् महत्त्व एव अस्तित्व है। हिन्दी को राजमहिषी का पद मिला है तो राजस्थानी को उसके अपने घर मे तो उचित तथा सम्मानपूर्ण स्वामित्व मिलना चाहिए। भाषा-शास्त्र की दृष्टि से राजस्थानी को हिन्दी का अग मानना भ्रमपूर्ण है। भाषा के आधार होते हैं—उसका व्याकरण, वाक्य-रचना और शब्दावलि। हिन्दी और राजस्थानी के व्याकरण और वाक्य-रचना भिन्न-भिन्न हैं। राजस्थानी गुजराती के अत्यन्त निकट मानी जा सकती है। १६ वीं सदी तक पश्चिमी राजस्थानी और गुजराती एक ही भाषा थी। १५ वी सदी मे लिखित राजस्थानी का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ "कान्हडदे प्रबन्ध" गुजरात के विश्व-विद्यालयों में प्राचीन गुजराती भाषा के अन्तर्गत आज भी पढाया जाता है। कन्हैया-लाल मणिकलाल मु शी, श्यामसुन्दरदास, सुनीतिकुमार चटर्जी, एल पी तैस्सितोरी, ग्रियर्सन इत्यादि विद्वानो ने राजस्थानी को गुजराती के अत्यन्त निकट माना है।

एक अन्य तर्क यह भी दिया जाता है कि राजस्थानी बोली है, भाषा नही। विभिन्न भागो मे बोली जाने वाली भाषा के एक्सेन्ट के लहजे तथा उच्चारण मे विभिन्नता के कारण लोगो ने राजस्थानी को बोली का रूप दे दिया है। परन्तु यह सभी जानते हैं कि दस-दस बीस-बीस कोस की दूरी पर बोली जाने वाली भाषाओं मे अन्तर पडता ही है। यही अन्तर राजस्थानी मे दिखाई देता है। विश्व की समस्त भाषाओं मे भी यह अन्तर मिलेगा। जैसे ढाका मे बोली जाने वाली और कलकत्ता मे बोली जाने वाली बगला मे अन्तर है। ठीक, इसी प्रकार नागपुर और पूना मे बोली जाने वाली मराठी भी एक-सी नहीं है। गुजरात के एक

जिले से दूसरे जिले में बोली जाने वाली गुजराती के उतने ही प्रकार हैं जितने राजस्थान के जिलों के। यही बात इग्लैण्ड और अमेरिका की बोली जाने वाली ही नहीं, अपितु लिखी जाने वाली अंग्रेजी में स्पष्टतः मिलती है। अतः यह तर्क निराधार और निर्मूल है।

राजस्थानी के प्रश्न उठाने से हिन्दी के कमजोर और भाषाई विवाद उत्पन्न होने की बात का तर्क भी बेबुनियाद और भ्रान्तिपूर्ण है। राजस्थानी के विकास से तो हिन्दी को बल मिलेगा। हिन्दी में तकनीकी शब्दों की कमी की पूर्ति इन प्रांतीय भाषाओं में सम्भव हो सकती है। संस्कृत के क्लिष्ट शब्दों को प्रविष्ट कराने पर राष्ट्रभाषा हिन्दी जनसाधारण से दूर होकर अव्यावहारिक भाषा बन कर रह जायेगी। राजस्थानी के शब्द-कोश के सवा लाख शब्द क्या हिन्दी की अमूल्य निधि को भरने में असमर्थ हैं? राजस्थानी साहित्यकारों ने आज तक हिन्दी की सेवा की है और आगे भी करते रहेंगे। उन्होंने डिंगल और राजस्थानी में लिखा है तो पिंगल और हिन्दी में भी लिखा है। भाषाई विवाद की दलील का उत्तर काका कालेलकर के शब्द दे देते हैं—

"जो लोग प्रान्तीय भाषाओं को अपनाने के लिए तैयार नहीं, वे संकीर्ण प्रान्तीयता को बढ़ाते हैं। वे ही लोग परस्पर द्वेष और अविश्वास का वायुमण्डल पैदा करते हैं। राष्ट्रभाषा के बल पर प्रान्तीय भाषा की अगर हमने उपेक्षा की और किसी भी भाषा के क्षेत्र का तनिक भी संकोच किया तो प्रान्तीयता और अविश्वास बढ़ने वाले हैं।"

देखा जाय तो भाषाई विवाद हम अपनी संकीर्णता के कारण ही पैदा कर रहे हैं। सभी भाषाओं को फलने-फूलने का समान अवसर दिया जाय तो यह भाषाई विवाद पैदा ही नहीं होगा। रूस का उदाहरण स्पष्ट है। वहाँ प्रत्येक रूसी के लिए चाहे वह किसी राज्य का निवासी हो, रूसी भाषा पढ़ना अनिवार्य है जबकि वहाँ के राज्यों की अपनी अपनी भाषायें हैं। राष्ट्रभाषा रूसी भाषा है जो अन्तर्प्रान्तीय और अन्तर्देशीय कार्य के लिए प्रयुक्त होती है। परन्तु राज्यों में शिक्षा तथा वहाँ का शासन-कार्य उनकी प्रांतीय भाषाओं में सम्पन्न होते हैं।

किसी भी देश की संस्कृति को नष्ट करना हो तो उसकी जीभ से मातृभाषा को मिटा दो। रानी लक्ष्मीकुमारी चूंडावत के इस कथन के अतिरिक्त "ग्रन्थमाल" के इस बुलन्द कथन का भी भारत सरकार पर अमिट प्रभाव पड़ा—[1]

"हमारी मातृभाषा राजस्थानी, तीन करोड़ पूतों की वाणी राजस्थानी को हमारे राज्य में ही, हमारे अपने घर में ही उचित स्थान न मिलना समूचे राजस्थान का अपमान है, हम राजस्थानियों का अपमान है और अपमान है उस भाषा का

1. "ग्रन्थमाल" की भूमिका से—ले० लक्ष्मीकुमारी चूंडावत

जिसके साहित्य ने राजस्थान का नाम ससार मे ऊँचा उठाया। हमे हमारी माता चाहिए, उसका स्तनपान करके ही हम जीवन-क्षेत्र मे विकास करेंगे अन्यथा परम्परागत ज्ञान और मातृभाषा का अभाव हमे सर्वदा अपने देश मे ही विदेशी बनाए रखेगा। हमे हमारी सम्यक् प्रगति के लिए चाहिए मातृभाषा, मातृभाषा और मातृभाषा।

"हिन्द जे हिन्दी वाचसी, रजथानी रजथान।
बिन भाषा बिन जीभ रे, जीणो मरण समान।।"

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद की इन सशक्त आवाजो के कारण हमारी कई मागे भारत सरकार द्वारा स्वीकृत कर ली गई हैं—

(१) राजस्थानी भाषा को सविधान मे स्वीकृत होने तक केन्द्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली ने साहित्यिक भाषा के रूप मे स्वीकार कर ली है। (२) प्राथमिक तथा प्रौढ़-शिक्षा के कार्य राजस्थानी भाषा मे सम्पन्न कराए जा सकते हैं। (३) माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा मे राजस्थानी को वैकल्पिक विषय के रूप मे स्वीकार कर लिया गया है। (४) राजस्थानी साहित्य के विकास हेतु एक पृथक् अकादमी की भी बीकानेर मे स्थापना कर दी गई है। (५) प्रचारात्मक साहित्य, फिल्म आदि, ग्रामीण जनता, जन-जाति तथा किसान वर्ग से सम्बन्धित अधिकाश साहित्य का प्रसारण राजस्थानी मे किया जा रहा है। (६) रेडियो का पूरा का पूरा ग्रामीण कार्यक्रम राजस्थानी मे ही आ रहा है।

राजस्थानी गद्य-साहित्य की पूर्व की स्थिति-सामान्य व्यक्ति को अधिक महत्त्व प्रदान करना ही इस युग के साहित्य की सर्वाधिक उपलब्धि है। इससे पूर्व अर्थात् सत्तर-अस्सी वर्षों पूर्व के साहित्य मे साधारण व्यक्ति का कोई स्थान नहीं था। वह अधिकाशत राजा-महाराजाओ एव आवश्यकताओ के अनुरूप लिखा जाता रहा था। किन्तु राजस्थानी साहित्य की एक विशेषता अवश्य रही है कि उसमे राजाओ तथा साम तो की शौर्य-गाथा की भाँति किसी भी सामान्य वीर के असाधारण शौर्य का बखान भी सोत्साह किया गया है। फिर भी साहित्य की आज जैसी स्थिति उस समय नहीं थी। इसका एक मात्र कारण तत्कालीन वातावरण ही हो सकता है।

राजस्थानी गद्य-साहित्य के पिछड़े रहने के कारण—कई कारणो से राजस्थानी गद्य-साहित्य हिन्दी तथा भारतीय इतरेतर भाषाओ के साहित्य से बहुत पीछे रह गया है या इसके विकास की गति अत्यन्त मन्द रही है। सम्भवत इसी कारण से राजस्थानी भाषा को सवैधानिक मान्यता नहीं मिल सकी है। राजस्थानी के आधुनिक साहित्य के विकास की गति के मन्द रहने का मुख्य कारण यहाँ की राजनीतिक, ऐतिहासिक तथा भौगोलिक परिस्थितियाँ है। राजस्थान समुद्रतट से दूर

रहने के कारण पश्चिमी देशो के सम्पर्क मे बहुत बाद मे आया। परिणामस्वरूप उन देशो की वैचारिक, वैज्ञानिक और औद्योगिक चेतना से यहाँ का जन-जीवन काफी समय तक सर्वथा अपरिचित रहा। इसके विपरीत बगाल, मद्रास, महाराष्ट्र, गुजरात आदि प्रान्त इन सभी से परिचित होकर विकास के नूतन पथ पर चले गए। ऐसी स्थिति में राजस्थान इन प्रान्तो की तुलना मे प्रत्येक दृष्टि से बहुत पिछड गया। साहित्य पर भी इस स्थिति का प्रभाव अवश्यमेव पडा। इस अभाव की पूर्ति स्वतन्त्रता-प्राप्ति के तीस-इकतीस वर्षों की अवधि मे भी राजस्थान नही कर सका है।

अग्रेजो ने अपने अधीन भारत के अधिकाश प्रदेशो मे पाश्चात्य शिक्षा-पद्धति और शासन-प्रणाली को लागू किया वहाँ राजस्थान को अपनी रक्षार्थ यहाँ के राजाओ के हाथो मे ही रहने दिया। फलस्वरूप न तो यहा पाश्चात्य शिक्षा-पद्धति लागू हो सकी और न ही शासन-प्रणाली। अधिक विलासी, क्रूर और निष्क्रिय यहाँ के राजाओ का सारा प्रयास अपनी जनता को नवयुग के प्रकाश से दूर रखने मे लगा रहा अतएव राजस्थान शिक्षा और साहित्य के क्षेत्र मे काफी पीछे रह गया।

बीसवी सदी के प्रारम्भ से ही हिन्दी का प्रभाव राजस्थान मे बढता जा रहा था। उस समय यहाँ के प्राचीन साहित्य के परिचय के अभाव मे विदेशी विद्वानो ने इस प्रदेश को हिन्दी प्रदेश का ही एक अग माना और यहाँ की भाषा को हिन्दी बतलाया। परिणामत यहाँ के शासको तथा अल्पाधिक बुद्धिजीवियो ने व्यवहार के लिए हिन्दी को ही अपना लिया अत. राजस्थानी भाषा के साहित्य-सर्जन को कोई प्रोत्साहन नही मिल सका।

राजस्थान मे प्राथमिक शिक्षा के लिए भी शिक्षा के माध्यम के रूप मे हिन्दी को स्वीकृति मिल गई। फलत राजस्थानी केवल कतिपय पारस्परिक रुचि के व्यक्तियो तक ही सीमित रह गई। न तो पाठक वर्ग का निर्माण हो सका और न माँग के अभाव मे प्रकाशन और लेखन-कार्य का विकास। यही कारण है कि कई लेखको की रचनाएँ पाण्डुलिपि मे पडी रही।

शिक्षा, रेल्वे, चिकित्सा एव न्यायालयो आदि विभिन्न राजकीय सेवाओ मे मध्यमवर्गीय बुद्धिजीवी लोग कार्यरत थे। ये अधिकाश उत्तरप्रदेश आदि प्रान्तो के निवासी थे जिनका राजस्थानी भाषा एव साहित्य से कोई लगाव ही नही था। ऐसी स्थिति मे राजस्थानी-समर्थक बुद्धिजीवी वर्ग के अभाव मे राजस्थानी का आधुनिक साहित्य अन्य भारतीय भाषाओ के साहित्य की तुलना मे पीछे रह गया।

अभी तक राजस्थानी साहित्य मे किसी एक ऐसे प्रभावशाली साहित्यकार का प्रादुर्भाव नही हुआ जो रवीन्द्रनाथ टैगोर, जयशकरप्रसाद या प्रेमचन्द की

तरह अपने सम्पूर्ण युग का नेतृत्व कर उसे गति प्रदान कर सके। इस दृष्टि से शिवचन्द्र भरतिया की सेवाएँ सराहनीय हैं जिसने ऐसी विकट स्थिति मे भी राजस्थानी साहित्य के विकास-कार्य में निरन्तर रुचि लेते हुए अथक प्रयास के साथ कार्य किया। फिर भी अकेला चना भाड नही फोड सकता। उस समय आज जैसे लगन, रुचि और उत्साह वाले अन्य साहित्यकार विरले ही थे।

राजस्थानी के प्रचार-प्रसार के लिए न तो सामूहिक स्तर पर आवाज उठी और न ही व्यापक जन-समर्थन मिला जैसे कि हिन्दी और देवनागरी लिपि के लिए समय-समय पर आवाजें उठी और जन-समर्थन भी मिलता रहा इस कारण से राजस्थानी साहित्य का पिछडापन दूर नही हो सका।

भाषा एव साहित्य के उत्थान का बहुत बडा सम्बल उस भाषा या साहित्य की पत्र-पत्रिकाए होती हैं। राजस्थानी में १९०० ई से १९४६ ई तक की अवधि मे "आगीवाण" के अतिरिक्त अन्य कोई पत्र प्रकाशित नही हुआ। इनके स्वय के प्रेस भी नही थे। यह पत्र भी अत्यल्प समय तक ही प्रकाशित होता रहा। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् भी साधनो के अभाव तथा पत्र-पत्रिकाओ की अनियमितता ने राजस्थानी साहित्य को अपेक्षित प्रगति की सुविधाए नही दी। मरुवाणी और ओळमो जैसी पत्रिकाएँ २२-२३ वर्षो, "हरावळ" सात-आठ वर्षो तथा "जागती जोत" तीन-चार वर्षो से राजस्थानी साहित्य की निरन्तर सेवा करती जा रही है जिनके माध्यम से राजस्थानी की नई-नई प्रतिभाएँ प्रकाश मे आ रही है। किन्तु राजस्थान के क्षत्र को देखते हुए ये पत्र-पत्रिकाएँ पर्याप्त नही है।

राजस्थानी भाषा एव साहित्य की प्रगति मे रुकावट के लिए एक सीमा तक राजस्थान के राजनीतिक नेता भी दोषी है। जब भारतीय सविधान मे विभिन्न प्रातीय प्रतिनिधि अपनी अपनी प्रातीय भाषाओ के यथेष्ट स्थान के लिए सजग एव सचेष्ट थे तब यहाँ के लोकनेता इस विषय पर एक प्रकार से मौन थे। प्रान्तीय स्तर पर भी इस हेतु कोई ठोस कदम नही उठाया गया।

किसी भी भाषा और साहित्य को उन्नति मे चलचित्र भी एक महत्त्वपूर्ण साधन है। जहाँ इतरेतर भारतीय भाषाओ मे प्रतिवर्ष शताधिक चलचित्रो का निर्माण होता है वहाँ राजस्थानी के चलचित्र कई सालो मे दो-तीन ही निर्मित होकर जन-समूह के समक्ष दिखाई पडते है। इस प्रगति-युग मे बम्बई मे प्रतिवर्ष दो तीन नाटक अवश्य अभिनीत हो जाया करते है। परन्तु इतना सारा कार्य राजस्थानी भाषा और साहित्य के उत्थान एव विकास हेतु अपर्याप्त है।

स्वातन्त्र्योत्तर-युग का गद्य-साहित्य प्रगति की दिशाएँ —

आधुनिक साहित्य मे विषय के साथ साथ भाषा, शिल्प एव शैली मे भी भारी परिवर्तन आया है। आज गद्य के क्षेत्र मे युगानुरूप उपन्यास, कहानी, नाटक,

नाकी, निवन्ध रेखाचित्र, सस्मरण, रिपोर्ताज, समीक्षा आदि नवीन विधाओ का सूत्रपात हुआ है जिनका प्राचीन राजस्थानी गद्य-साहित्य से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। प्राचीन गद्य-साहित्य की अलौकिक, अविश्वसनीय तथा वायवी कल्पनाओ का आधुनिक साहित्य मे तो कोई स्थान ही नही रहा है। आज का कहानीकार किसी असाधारण प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति को कथा का नायक बनाने की अपेक्षा जीवन की कठोरताओ से सघर्ष करते साधारण व्यक्ति को ही कथा-नायक बनाने का प्रयास करता है। कुछ कथाकारो को तो पात्रो की भी आवश्यकता नही रहती है। वे किसी घटना या तथ्य का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण कर अपनी कथाओ को समाप्त कर देते है। आधुनिक गद्य-साहित्य की शैली भी यथार्थ के अधिक निकट है। आज का गद्य वर्णन-प्रधान, अतिशयोक्ति तथा अतिरजनापूर्ण शैली, तुक और लय के मोह से भी मुक्ति पा चुका है। प्रकृति की स्वतत्र सत्ता की स्वीकृति, आलम्बन के रूप मे प्रकृति का विस्तार से वर्णन, पत्रकारिता का विकास, यथार्थवाद का प्राधान्य, अनुवाद-कला की प्रगति इत्यादि स्वातन्त्र्योत्तर गद्य-साहित्य की उल्लेखनीय विशेषताएँ कही जा सकती है।

स्वतत्रता से पूर्व कोई समय था, राजस्थानी गद्य-साहित्य मे वही प्राचीन डिंगल का गद्य राजस्थानी-साहित्य की शोभा वढा रहा था। परन्तु आज ऐसी वात नही है। ससद् और विधान-सभा मे समय-समय पर राजस्थानी भाषा को मान्यता का प्रश्न उठते रहने के कारण राजस्थानी साहित्य की सर्वतोमुखी प्रगति ही नजर आ रही है। राजस्थानी भाषा मे प्रकाशित पुस्तको की सख्या निरन्तर वढी है। आधुनिक गद्य का विकास और परिमार्जन हुआ है। गद्य और पद्य मे सुन्दर पुस्तको की सर्जना हुई है। पत्र-पत्रिकाओ का प्रावल्य रहा है। एक वृहद् राजस्थानी शब्द-कोश की रचना भी हुई है जिसमे सवा लाख के लगभग शब्द हैं। हिन्दी विश्व-कोश के सम्पादक, प्रसिद्ध इतिहासकार एव लेखक डा भगवतशरण उपाध्याय ने कहा कि हिन्दी मे भी इसके मुकावले का कोई कोश नही है। लोक-साहित्य पर ही नही अपितु राजस्थानी गद्य की अन्यान्य नई विधाओ पर काम हुआ है। हजारो की सख्या मे लोक-गीतो और लोकवार्त्ताओ का सग्रह किया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस समय राजस्थानी साहित्य का विकसित रूप देखने को मिल जाता है। आधुनिक राजस्थानी गद्य-साहित्य की प्रगति मे योगदान का इतिहास इस प्रकार का रहा है—

स्वातन्त्र्योत्तर राजस्थानी गद्य-साहित्य सहयोग के विभिन्न स्वरूप— स्वातन्त्र्योत्तर-काल से पूर्व ही "पचराज" "आगीवाण" इत्यादि पत्र-पत्रिकाओ का प्रकाशन आरम्भ हो गया था। १९४७ ई के पश्चात् राजस्थानी और हिन्दी की अनेकानेक पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित हुई जिनमे मरुवाणी, ओळमो, हरावळ, राजस्थानी

वीर, राजस्थान-भारती, जागती जोत, मूमल, जळमभोम, मधुमती, म्हारो देस, लाडेसर, सरवर, हेलो, कुरजाँ, चामल, ईसरलाट' ओळखाण, वरदा, जाणकारी इत्यादि विशेष उल्लेखनीय है। इन सभी मे राजस्थानी गद्य-साहित्य की अनेक विधाओ—कहानी, निबन्ध, रेखाचित्र, एकाकी, नाटक, उपन्यास, समीक्षा, जीवनी, गद्यकाव्य, सस्मरण एव रिपोर्ताज के दर्शन होते रहे है। इन सभी से गद्य-साहित्य अनवरत समृद्ध होता रहा है।

पत्र-पत्रिकाओ के साथ साथ हम इनके सम्पादको के योगदान को भी नही भूल सकते। "ओळमो" के सम्पादक किशोर कल्पनाकान्त, "मरुवाणी" के सम्पादक रावत सारस्वत "हरावळ" के सम्पादक सत्यप्रकाश जोशी, "राजस्थानी वीर" के सम्पादक नारायणदास धूत, "वरदा" के सम्पादक डा मनोहर शर्मा, "म्हारो देस" के सम्पादक अम्बू शर्मा तथा राजस्थान भारती एव मधुमती के सम्पादको के प्रयास राजस्थानी गद्य-साहित्य के उत्थान हेतु बडे सफल रहे है। विशेषत किशोर कल्पनाकान्त, रावत सारस्वत, सत्यप्रकाश जोशी, नारायणदास धूत और मनोहर शर्मा ने राजस्थानी गद्य-साहित्य की अनेक विधाएँ स्वय लिखकर एव प्रकाशित करवा कर राजस्थानी गद्य-साहित्य की नीव को दृढ कर एक एक सुदृढ भवन तैयार कर दिया है। इन सम्पादको ने स्वय ने लिखा वह तो लिखा परन्तु अन्य अनेक साहित्यकारो को भी प्रोत्साहित कर लिखने को बाध्य किया, उनमे रुचि जागृत की। जगदीशचन्द्र शर्मा, अम्बू शर्मा, किशोर कल्पनाकान्त और रावत सारस्वत ने तो राजस्थानी भाषा को मान्यता दिलाने के प्रयास भी अपनी पत्र-पत्रिकाओ के माध्यम से किये। अन्ततोगत्वा इन्हे इस कार्य मे सफलता भी मिली।

जमनाप्रसाद पचेरिया, शिवचन्द्र भरतिया, नारायणदास धूत, सत्यप्रकाश जोशी, भरत व्यास, दीनदयाल कुन्दन, जगदीशचन्द्र शर्मा, अम्बू शर्मा, रतन शाह, भवरलाल नाहटा और प इन्द्र जैसे प्रवासी राजस्थानियो ने भी राजस्थानी गद्य-साहित्य को समृद्ध बनाने की भरसक चेष्टाये की है। बम्बई के निवासी राजस्थानियो ने तो प्रतिवर्ष दो-तीन नाटको के अभिनय का अभियान चला रखा है। शिवचन्द्र भरतिया की सेवाओ से राजस्थानी साहित्य का मर्मज्ञ पाठक अपरिचित नही रह सकता। "हरावळ" तथा "राजस्थानी वीर" पत्रिकाओ की सेवाएँ भी किसी से छिपी नही है। कई नि स्वार्थ, त्यागी तथा परोपकारी साहित्य-सेवी लेखको ने राजस्थानी साहित्य को समृद्ध बना कर जो नई दिशा दी यह कोई कम गौरव की बात नही है। श्रीलाल नथमल जोशी, सूर्यशकर पारीक, किशोर कल्पनाकान्त, ओकार पारीक, यादवेन्द्र शर्मा, मनोहर शर्मा, रामनिवास शर्मा, लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, व्रजनारायण पुरोहित, रामनाथ व्यास परिकर' सावर दईया, दामोदरप्रसाद, बैजनाथ पवार, नृसिंह राजपुरोहित, अन्नाराम 'सुदामा', नानूराम सस्कर्ता, मुरलीधर व्यास, विजय-

दान देथा इत्यादि साहित्यकारो ने अनेक प्रकार के निबन्ध, उपन्यास, नाटक, कहानी, एकाकी, रेखाचित्र, सस्मरण, समीक्षा आदि लिख कर तन मन और धन से राजस्थानी गद्य-साहित्य की श्लाघनीय सेवा की है जिसे कोई भी युग भूल नही सकता। अनुवाद के क्षेत्र मे भी इन साहित्य-सर्जको का कार्य अनुपम रहा है।

१९५५ ई मे स्थापित राजस्थानी शोध सस्थान, चौपासनी (जोधपुर), १९४५ ई मे स्थापित अन्तरप्रान्तीय कुमार साहित्य परिषद् जोधपुर, १९२३ ई. मे स्थापित राजस्थानी ज्ञानपीठ बीकानेर, १९५७ ई मे स्थापित भारतीय विद्या-मन्दिर शोध प्रतिष्ठान बीकानेर, १९४४ ई मे स्थापित सादुल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, १९५७ ई मे स्थापित हिन्दी विश्वभारती अनुसधान परिषद् बीकानेर, अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर, १९६१ ई मे स्थापित राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन सस्थान बीकानेर, सगीत भारती शोध विभाग बीकानेर, १९७१ ई. मे स्थापित राजस्थानी सस्कृति परिषद् बीकानेर १९५२ ई मे स्थापित भारतीय लोककला-मण्डल उदयपुर, १९५८ ई मे स्थापित राजस्थान साहित्य समिति बिसाऊ, वि स २०२१ मे स्थापित लोक सस्कृति शोध सस्थान, नगरश्री, चुरू, वि स २०१३ मे स्थापित सिद्ध साहित्य शोध सस्थान रतनगढ, १९६१ ई में स्थापित राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार समिति, डूगरगढ, मूमल प्रकाशन जैसलमेर, १९६८ ई मे स्थापित लोक-साहित्य केन्द्र, जोधपुर, १९५२ ई मे स्थापित राजस्थान भाषा प्रचार सभा जयपुर, १९४५-४६ ई मे स्थापित साहित्य सस्थान उदयपुर तथा राजस्थान प्रदेश की कतिपय साहित्यिक सस्थाएँ राजस्थानी साहित्य के विकास हेतु अनवरत सजग एव क्रियाशील है। इनमे से अधिकाश सस्थाये विविध प्रकार की पत्र-पत्रिकाएँ भी प्रकाशित करवा रही हैं। इन सस्थाओ के प्रयास एव कार्य अविस्मरणीय हैं। इनमें से कई सस्थाओ ने तो सरकारी सहायता के अभाव मे ही राजस्थानी साहित्य की सेवा की है और ये आज भी राजस्थानी साहित्य के विकास मे प्रयत्नशील हैं।

जन-सहयोग के साथ सरकारी सहयोग का मणि-काचन योग भी राजस्थानी गद्य-साहित्य को प्राप्त हुआ है। राजस्थानी भाषा-भाषियो की निरन्तर माँग पर सरकारी सहयोग से राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर से सम्बद्ध राजस्थानी भाषा साहित्य सगम की बीकानेर मे पृथक् रूप से स्थापना की गई। यह अकादमी केवल राजस्थानी भाषा और साहित्य के विकास हेतु है। यहा से 'जागती जोत' नामक प्रारम्भ मे त्रैमासिक तथा बाद मे मासिक राजस्थानी पत्रिका का प्रकाशन भी हो रहा है जिसमे राजस्थानी के श्रेष्ठ एव धुरन्धर साहित्यकारो को भरपूर प्रोत्साहन मिलता रहा है। प्रतिवर्ष राजस्थानी भाषा की सर्वश्रेष्ठ कृतियो पर पुरस्कार भी दिए जाते हैं। इसके अतिरिक्त राजस्थानी की कुछ श्रेष्ठ रचनाओ के प्रकाशन का कार्य

एव वित्तीय सहयोग भी यह अकादमी करती है। दूसरा महत्त्वपूर्ण सरकारी सहयोग यह है कि राजस्थानी भाषा को केन्द्रीय साहित्य अकादमी, नई दिल्ली द्वारा साहित्यिक भाषा के रूप मे मान्यता प्रदान कर दी गई है। फलत प्रतिवर्ष राजस्थानी की श्रेष्ठ कृति पर पाच हजार रुपयो के पुरस्कार की योजना भी प्रारम्भ हो गई है। मणि मधुकर, विजयदान देथा, सत्यप्रकाश जोशी, अन्नाराम 'सुदामा' इत्यादि इस पुरस्कार के विजेता हो चुके है। आकाशवाणी भी राजस्थानी के कई कार्यक्रम प्रसारित कर रही है। राजस्थान शिक्षा विभाग, बीकानेर से भी प्रतिवर्ष राजस्थानी पुस्तको का प्रकाशन होता रहता है। बारखडी, माळा, अमरचूनडी सभाळ जूना-वेली नुवा वेली, भगवान महावीर आंधी अर आस्था, चेते रा चितराम, कोरणी कलम री, लखारा इत्यादि रेखाचित्र, कहानी, कविता-सग्रहो तथा उपन्यासो का प्रकाशन राजस्थान शिक्षा विभाग बीकानेर करा चुका है। राज्य के प्रौढ शिक्षण केन्द्र के प्रकाशन भी बडे महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं। कई राजस्थानी-सेवी सस्थाओ को भी राजस्थानी के विकास के नाम पर सन्तोषजनक मात्रा मे सहायता मिल रही है। इसके अतिरिक्त माध्यमिक तथा विश्वविद्यालयीय शिक्षा-स्तर पर राजस्थानी को वैकल्पिक विषय के रूप मे अध्ययन-अध्यापन की स्वीकृति राज्य सरकार से प्रदान कर दी गई है।

निष्कर्ष—इस प्रकार निस्सदेह राजस्थानी भाषा का साहित्य दिनो-दिन प्रगति के शिखर चढता जा रहा है। शनै शनै कई सुषुप्त राजस्थानी साहित्यकारो मे जागृति का सचार भी हो रहा है। अत एक समय ऐसा भी आयेगा कि राजस्थानी भाषा का साहित्य इतरेतर भारतीय भाषाओ के साहित्यो के समक्ष सीना तान कर खडा हो जायेगा। उस समय राजस्थानी-साहित्य के विकास के सहयोगी अगो को कितना गर्व होगा—इसे अनुमान से कहा भी नही जा सकता।



आधार ग्रन्थ

उपन्यास

१ आभै पटकी   श्रीलाल नथमल जोशी, सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट बीकानेर १९५६ ई

२ मां रो बदळो   विजयदान देथा, रूपायन संस्थान, बोरुंदा, सं २०२४

३ तीड़ो राव   विजयदान देथा, रूपायन संस्थान, बोरुंदा, सं २०२१

४ नाच रो भरम . —यही— —यही— —यही—

५, आठ राजकुंवर —यही— —यही— —यही— सं २०१९

६ आभळदे   रामदत्त साँकृत्य, 'हेलो' पत्रिका मे प्रकाशित, १९६८ ई

७ धोरां रो धोरी—श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, १९६८ ई

८ एक बीनणी दो बीन —यही—, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम बीकानेर, १९७३ ई

९ हूं गोरी किण पीवरी   यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', राजस्थान भाषा प्रचार सभा, जयपुर. १९६९ ई

१० जोग-संजोग — —यही— — राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७३ ई

११ मैकती काया मुळकती धरती—अन्नाराम 'सुदामा' धरती प्रकाशन, उदयरामसर, १९६६ ई

१२ आंधी अर आस्था— —यही— शिक्षा विभाग बीकानेर, १९७४ ई.

१३ भगवान महावीर   नृसिंह राजपुरोहित-- ——यही———यही——

१४ गुवारपाठो   दीनदयाल 'कुन्दन' ''हरावळ' पत्रिका मे प्रकाशित, १९७० ई

१५ तिरसकू   छत्रपतिसिंह, राजस्थानी भाषा प्रचार सभा, जयपुर, १९७५ ई

१६. कवळ-पूजा   सत्येन जोशी, १९७४ ई मे प्रकाशित

१७ लालड़ी एक फेरूं गमगी   सीताराम महर्षि, ''राष्ट्रपूजा'' पत्रिका मे प्रकाशित, १९७४ ई

१८ काळ-भैरवी   रामनिवास शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७५ ई

कहानी--संग्रह

१ अमरचूनड़ी—नृसिंह राजपुरोहित, सूर्य प्रकाशन मन्दिर, बीकानेर, १९६९ ई

२ आंधै नै आख्यां—अन्नाराम 'सुदामा' धरती प्रकाशन, उदयरामसर, १९७१ ई

३ कन्यादान—मनोहर शर्मा राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, १९७१ ई

४ ग्योहो—नानूराम संस्कर्ता, राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन बीकानेर, सं २०१४
५ दस दोख— „ „ „ „ „ „ „ सं २०२३
६ घर की गाय— „ लोक साहित्य प्रतिष्ठान, कालू, १९७० ई
७ घर की रेल— „ „ „ „ „ „ १९६८ ई
८ वरसगाठ—मुरलीधर व्यास, सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, सं २०१३
९ रातवासो—नृसिंह राजपुरोहित, नीलकण्ठ प्रकाशन, खांडप (बाड़मेर), १९६१ ई
१०. राजस्थान के कहानीकार (राजस्थानी)—सं दीनदयाल ओझा, राजस्थान साहित्य संगम, उदयपुर १९६१ ई मे प्रकाशित।
११ मऊ चाली माळवै—नृसिंह राजपुरोहित, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, १९७३ ई
१२ लारैसर—बैजनाथ पवार, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, १९७० ई
१३. उकळता आतरा सीला सास—मूलचन्द 'प्राणेश' राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर, १९७३ ई.
१४ वात भली दिन पाधरा—कान्ह महर्षि, १९६९ ई. मे प्रकाशित।
१५ वातां हो चालै—कुंजबिहारी शर्मा, १९६८ ई „ „ ।
१६ तगादो—भंवरलाल सुथार 'भ्रमर' १९७२ ई
१७ प्रेतात्मा री प्रीत—दामोदरप्रसाद शर्मा, राजस्थानी भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७३ ई
१८ परदेसी री गोरडी—मूलचन्द 'प्राणेश' राजस्थानी भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर, सं २०१३
१९ राजस्थानी रा प्रतिनिधि कथाकार—सं मूलचन्द 'प्राणेश' „ „ „ बीकानेर, सं. २०२४
२०. आदमी रो सींग—करणीदान बारहठ, राज भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७४ ई
२१ परण्योडी कवारी—श्रीलाल नथमल जोशी, ———यही———यही——— १९७४ ई
२२ नोनन्न भींग—डा० मनोहर शर्मा ————यही————यही——— १९७६ ई
२३ हूंकारो दो मा—लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, वि सं २०१६
२४ टाबरां री वातां—„ „ राज साहित्य अकादमी उदयपुर, १९६१ ई.
२५ देस देसान्तर री वातां—राजश्री राठौड, राजस्थानी संस्कृति परिषद्, जयपुर, १९६६ ई

२६ असवाडै-पसवाडै—सावर दइया, पोथी परकास, पावूवारी, वीकानेर, १९७५ ई
२७ सभाळ—स. विजयदान देथा, शिक्षा विभाग वीकानेर, १९७५ ई.

नाटक

१ ढोला मरवण : : भरत व्यास, राजस्थान कला मन्दिर, वहादुर हाउस, घोडा-मन्दिर रोड, वम्वई, स. २००६
२. रगीलो मारवाड—भरत व्यास, व्यास व्रदर्स, ६/८ त्रिट्ठलवाडी, विट्ठवा लेन, वम्वई, सं. २००४
३ नई वीनणी—जमनाप्रसाद पचेरिया, राजस्थान ड्रामेटिक सोसाइटी, ८ वी, दूसरी फनसवाड़ी लेन, वम्वई, १९६२ ई
४. पन्ना धाय—आज्ञाचन्द भण्डारी, लक्ष्मी पुस्तक भण्डार, जोधपुर, १९६३ ई
५ तास रो घर—यादवेन्द्र शर्मा, राजस्थानी भाषा प्रचार सभा, जयपुर, १९७३ ई
६. पाणी प'ली पाळ—वद्रीप्रसाद पचोली, राज. भाषा साहित्य मगम, वीकानेर, १९७३ ई.
७. विकाऊ टोरड़ा—फूलचन्द डगायच, १९५८ ई. मे प्रकाशित
८ चूनडी—प. इन्द्र, १९५५ ई मे प्रकाशित
९. गुवाड री जायेडी—सत्यनारायण प्रभाकर 'अमन' "हरावळ" पत्रिका, १९७३ के ६ अको मे प्रकाशित।

एकांकी-संग्रह

१ सतरगिणी—गोविन्दलाल माथुर, नेशनल प्रिन्टर्स पब्लि. कोप. सोसा. जोधपुर, १९५५ ई
२ राम मिलाई जोडी—नागराज शर्मा, सुशील प्रकाशन, पिलानी, १९७२ ई
३ राजस्थानी एकाकी—स गणपतिचन्द्र भण्डारी, रा सा. अका उदयपुर, १९६६ ई.
४ कुमलो फौज मे—मालचन्द कीला, दीवट प्रकासण, लाडनू, १९६७ ई.
५. ठा पडवा लागगी——यही—— ——यही—— ——यही——
६ देस रे वास्तै—आज्ञाचन्द भण्डारी, १९६७ ई.
७ नहरी झगडो—निरजननाथ आचार्य, १९६० ई
८. राजस्थानी हास्य एकाकी—श्रीमन्तकुमार व्यास एव मालचन्द कीला, १९६७ ई.
९. देस रो हेलो सुरग री पुकार—रामदत्त साकृत्य, "ओळमो" का नव. १९६६ ई का अक
१०. नैणसी रो साको—मनोहर शर्मा, राज भाषा सा. मगम, वीकानेर, १९७३ ई
११. टमरक टू—रामनिरजन शर्मा, सारस्वत प्रकाशन प्रतिष्टान, पिलानी, वि. स २०२९

१२. खाग्या वाळण जोगा—जयन्त निर्वाण, १९६७ ई

निबन्ध-संग्रह

१. रोहिड़ै रा फूल—मनोहर शर्मा, राज. भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७३ ई.

२. राजस्थानी निबन्ध-संग्रह—स. चन्द्रसिंह, राज. सा. अका. उदयपुर, १९६६ ई.

रेखाचित्र एवं संस्मरण

१. जूना जीवता चितराम—मुरलीधर व्यास तथा मोहनलाल पुरोहित, राजस्थान साहित्य अकादमी उदयपुर, १९६० ई.

२. सबडका—श्रीलाल नथमल जोशी, राजस्थानी साहित्य परिषद्, जगमोहन मलिक लेन, कलकत्ता, १९६० ई.

३ अटारवां—ब्रजनारायण पुरोहित, राज. भाषा साहित्य संगम, बीकानेर, १९७३ ई.

४. उणियारा—शिवराज छगाणी, कल्पना प्रकाशन बीकानेर, १९७० ई

५. वकील साहब—ब्रजनारायण पुरोहित, राज. भाषा सा. संगम बीकानेर, १९७४ ई.

६ गोधां रै पजा— ,, ,, (टंकित पाण्डुलिपि मे प्राप्त)

७ इक्कीसा— ,, ,, ,, ,, ,,

८, दूर-दिसावर—अन्नाराम 'सुदामा' धरती प्रका. उदयरामसर, १९७५ ई,

लोककथाएं

१ बातां री फुलवाडी भाग १, २ एव ४—विजयदान देथा, रूपायन संस्थान बोरुदा, वि स २०२१

२ ,, ,, ५—विजयदान देथा, रूपा संस्थान, वोरुदा, वि स २०२२

३ ,, ,, ८— ,, ,, ,, ,, २०२३

४. ,, ,, ९— ,, ,, , ,, २०२४

५. ,, ,, १०— ,, ,, ,, ,, १९७२ ई

६ माझल रात—लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, राज संस्कृति परिषद् जयपुर, स २०१४

७ डूगजी जवारजी री वात— ,, ,, ,, ,, ,, १९६६ ई.

८. राजस्थानी लोकगाथा— ,, ,, ,, ,, ,, ,,

९ कै रे चकवा वात— ,, ,, ,, ,, ,, ,,

१० गिरै ऊचा, ऊचा गढा— ,, ,, ,, ,, ,, ,,

११. मूमल— ,, ,, ,, ,, ,, १९६२ ई

१२ अमोलक वाता— ,, ,, ,, ,, ,, ,,

१३ पाबूजी री वात— ,, ,, ,, ,, ,, स २०१८

१८. वाघो भारमली—लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, राज. सस्कृति परिपद्, जयपुर, १९६२ ई.
१५ वरजूडी रो तप—देवकिशन राजपुरोहित, १९६९ ई.
१६ दात कथावां— ,, ,, १९७१ ई.
१७. इक्कै वाळो—मुरलीधर व्यास, १९६३ ई.
१८ हियै तणा उपाय—मूलचन्द 'प्राणेश' राजस्थान भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर, स. २०२३
१९ हास्या हरि मिळै—नृसिंह राजपुरोहित, राज. भाषा सा. सगम, बीकानेर, १९७३ ई
२० खळखळी—मूलचन्द 'प्राणेश' राज. भाषा प्रचार प्रकाशन, बीकानेर, सं. २०२७

जीवनी

१ आपणा वापूजी—श्रीलाल नथमल जोशी, १९६९ ई.
२ शिवचन्द्र भरतिया—किरण नाहटा, स. रावत सारस्वत, राजस्थान भाषा प्रचार सभा, १९७० ई.
३ भारत रा निर्माता—दीनदयाल ओझा, १९७२ ई.
४ छोटी उमर मोटा काम— ,, ,, ,,
५ देस रा गौरव— ,, ,, ,,
६. महावीर री ओळखाण—शान्ता भानावत, १९७५ ई.

अनूदित गद्य-साहित्य

१ वसरी (नाटक)—रावत सारस्वत, रा. सा अकादमी, उदयपुर, १९६१ ई
२ सकुन्तला (,,)—गिरधरलाल शास्त्री, ,, ,, ,, १९६६ ई.
३ मालविकाग्नि मित्र (,,) ,, ,, ,, ,, ,, १९७२ ई.
४ देसी टोरडी पूरबी चाल (,,)—दीनदयाल 'कुन्दन' "हरावळ" १९७२-७३ के अको मे प्रका.
५. सपनो (नाटक)—देवदत्त नाग, १९७४ ई.
६. राजा-राणी (,,)—ब्रजमोहन जावलिया, राज. सा. अका. उदयपुर, १९६७ ई.
७ मैकवेथ (,,)—वृजलाल शर्मा, शिक्षा विभाग, बीकानेर, १९७६ ई. चिन्मय प्रकाशन, जयपुर। "माध्यम" सकलन-ग्रन्थ मे सकलित
८ माटी री काया (एकाकी)—नारायणदत्त श्रीमाली, १९६७ ई.
९. रामराज (निवन्ध)—नृसिंह राजपुरोहित, १९६० ई
१० मिनखपणा रो मोल (निवन्ध)—नृसिंह राजपुरोहित, सम्यक् ज्ञान प्रचारक मडल, जोधपुर, १९६१ ई
११. वैतियारा (उपन्यास)—नन्द भारद्वाज, 'हरावळ" के १९७२-७३ के अको प्रका

१२. पदमणी रो सराप (उप)—किशोर कल्पनाकान्त, जून १९७३ से अक्तूबर १९७४ के "ओळमो" के अको मे प्रकाशित ।

१३ नस्ट नीद (उप)—किशोर कल्पनाकान्त, "ओळमो" के अगस्त १९६४ के अक मे प्रकाशित ।

१४ वर राजा (उप)—भूपतिराम साकरिया, "कुरजा" पत्रिका मे अपूर्ण प्रका

१५ स्सौ की गळत हाथा मे(उप)—सांवर दइया, "हरावळ" मे प्रकाशित ।

१६ रवि ठाकर री वाता (कहानी)—लक्ष्मीकुमारी चू डावत, रा सा अका उदयपुर, १९६१ ई

१७ बाबी (कहानी)—सत्यप्रकाश जोशी, रूपायन सस्थान, बोरुन्दा, १९६२ ई

१८ हितोपदेश (")—गोविन्दलाल माथुर, १९६८ ई

१९. शेक्सपियर री का'णियां— " " १९६४ ई

२० सेक्सपियर री वार्ता—किशोर कल्पनाकात, 'ओळमो" मार्च १९६५ का अक।

२१ लेनिन री जीवणी—लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत, १९७० ई

२२ सर्वहारा क्राति अर दगाखोर काउरसकी—हरीन्द्र चौधरी, १९६९ ई

२३ व्ला ई लेनिन गावा का गरीबा सू— " " "

२४ कम्युनिस्ट पार्टी रो ऐलाननामो— " " "

२५ जनतान्त्रिक क्राति मा सामाजिक जनवाद री दो कायनीतिया— —यही—

२६ व्ला ई लेनिन राज अर क्रांति—हरीन्द्र चौधरी एव श्याम राय, १९६९-७० ई

विविध साहित्य

१. गळगचिया (गद्यकाव्य)—कन्हैयालाल सेठिया, आर्यावर्त्त प्रकाशन-गृह, चौरगी रोड, कलकत्ता, स २०१७

२. बारखडी—शिक्षा विभाग, बीकानेर, १९७४ ई.

३ माळा— " " " १९७२ ई

४. जूना बेली-नुवा बेली— —यही— १९७३ ई

५ विविधा— —यही— —यही— १९७५ ई चिन्मय प्रका. जयपुर ।

६. बानगी—भवरलाल नाहटा, राज सा अ. उदयपुर, १९६५ ई

७ राजस्थानी मणिमाळा—स श्रीलाल नथमल जोशी

८ राजस्थानी गद्य विकास और प्रकाश—स नरोत्तमदास स्वामी

९ वालसाद—चन्द्रसिंह वि स. २०२५

——

सन्दर्भ ग्रन्थ

१ राजस्थानी भाषा एव साहित्य—मोतीलाल मेनारिया, हिन्दी साहि सम्मे प्रयाग, स २००९

२ राजस्थानी भाषा एव साहित्य—हीरालाल माहेश्वरी, आधु पुस्तक भवन कलकत्ता, १९६० ई.

३ राजस्थानी भाषा एव साहित्य—नरोत्तमदास स्वामी, स. २०००

४. राजस्थानी साहित्य का इतिहास—पुरुषोत्तमलाल मेनारिया

५ राजस्थानी गद्य-साहित्य उद्भव और विकास—शिवस्वरूप शर्मा अचल' सादूल राजस्थानी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर, १९६१ ई.

६ आधुनिक राजस्थानी साहित्य . प्रेरणा-स्रोत और प्रवृतिया—किरण नाहटा, चिन्मय प्रकाशन, चौडा रास्ता, जयपुर, १९७४ ई

७. राजस्थानी गद्य-शैली का विकास—रामकुमार गर्वा (अप्रकाशित शोध-प्रबन्ध, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर)

८ राजस्थानी भाषा—सुनीतिकुमार चटर्जी, साहित्य सस्थान, उदयपुर, १९४९ ई

९. राजस्थानी लोक-साहित्य—नानूराम सस्कर्त्ता, रूपायन सस्थान, बोरुन्दा, स २०२४

१० राजस्थानी वात-साहित्य एक अध्ययन—मनोहर शर्मा (अप्रका शोध-प्रबन्ध, राज विश्वविद्यालय, जयपुर)

११. राजस्थानी वार्ता—स. सौभाग्यसिंह शेखावत, साहि. सस्थान, विद्यापीठ, उदयपुर

१२ राजस्थानी साहित्य एक परिचय—नरोत्तमदास स्वामी, नवयुग ग्रन्थ कुटीर बीकानेर

१३ राजस्थानी साहित्य और सस्कृति—स मनोहर प्रभाकर, आशा पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर १९५६ ई

१४ राजस्थानी साहित्य का महत्त्व—स रामदेव चोखानी, ना. प्र स. काशी, स २०००

१५ राजस्थानी साहित्य की रूपरेखा—डा. मोतीलाल मेनारिया

१६ राजस्थानी साहित्य कुछ प्रवृतिया—डा नरेन्द्र भानावत

१७. राजस्थानी सबद कोस—सीताराम लाल्स

१८. आधुनिक राजस्थानी साहित्य—भूपतिराम साकरिया, राजस्थान मैत्री समिति, राजस्थान भवन, अहमदाबाद, १९६९ ई

१९. लोक साहित्य की सास्कृतिक परम्परा—डा मनोहर शर्मा

२०. आधुनिक राजस्थानी साहित्य एक शताब्दी—शान्तिलाल भारद्वाज (लघु शोध-प्रवन्ध, राज. विश्वविद्यालय, जयपुर)
२१ भाषा की उत्पत्ति तथा हिन्दी और उसकी बोलियां—कोमलसिंह सोलंकी
२२ राजस्थानी भाषा का अध्ययन और विदेशी विद्वान्—सुनीतिकुमार चटर्जी
२३. राजस्थानी साहित्य—रावत सारस्वत
२४. राजस्थानी भाषा के प्रतिनिधि साहित्यकार—डा. प्रेमदत्त शर्मा
२५ राजस्थानी लोकगाथा का अध्ययन—डा कृष्णकुमार शर्मा
२६ राजस्थानी प्रेमगाथायें—स मोहनलाल पुरोहित
२७ राजस्थानी साहित्य परम्परा और प्रगति—डा. सरनामसिंह शर्मा
२८ राजस्थानी वात-साहित्य—पूनम दइया, रा सा अकादमी, उदयपुर
२९. राजस्थानी और हिन्दी कुछ साहित्यिक सन्दर्भ—स रावत सारस्वत, राजस्थान भासा प्रचार सभा, जयपुर
३० हाडौती बोली और साहित्य—डा कन्हैयालाल शर्मा
३१ राजस्थानी एकाकी—स गणपतिचन्द्र भण्डारी, राज सा अ उदयपुर
३२ राजस्थान के कहानीकार (राजस्थानी)—स दीनदयाल ओझा, रा सा अ उदयपुर
३३ आधुनिक कहानी का परिपार्श्व—लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, साहित्य-भवन प्रा. लि. इलाहाबाद, १९६६ ई
३४ आधुनिक हिन्दी-साहित्य (सन् १८५० से १९००)—लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२ ई
३५ आधुनिक हिन्दी नाटक—डा नगेन्द्र, नेश, पब्लि हाऊस, १९७० ई.
३६ आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका—लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १९५२ ई
३७ नई कहानी की भूमिका—कमलेश्वर, अक्षर प्रकाशन दिल्ली, १९६८ ई
३८ नई कहानी प्रकृति और पाठ—सुरेन्द्र, परिवेश प्रकाशन जयपुर, १९६८ ई
३९ नव्य हिन्दी नाटक—डा सावित्रीस्वरूप, प्रथम, कानपुर, १९६७ ई
४० महादेवी का सस्मरणात्मक गद्य—चरनसखी शर्मा, शोध-प्रवन्ध प्रका दिल्ली, १९७१ ई
४१ हास्य की प्रवृत्तिया—वरसानेलाल चतुर्वेदी, राज्यश्री प्रका मथुरा, १९६५ ई
४२ हिन्दी उपन्यास-विवेचन—डा. सत्येन्द्र, कल्याणमल एण्ड सस, जयपुर, १९६९ ई.
४३ हिन्दी उपन्यासो का वैज्ञानिक मूल्याकन—ब्रह्मनारायण शर्मा, नवयुग ग्रथागार, लखनऊ, १९६० ई.
४४ हिन्दी उपन्यासो मे लोकतत्त्व—इन्दिरा जोशी, सरस्वती प्रका मन्दिर, इलाहाबाद १९६४ ई

४५. हिन्दी एकाकी : उद्भव और विकास—रामचरण महेन्द्र, साहित्य प्रका नई दिल्ली, १९५८ ई.
४६ हिन्दी कहानियो की शिल्पविधि का विकास—डा. लक्ष्मीनारायणलाल साहित्य भवन प्रा. लि. इलाहाबाद, १९६७ ई.
४७ हिन्दी कहानी उद्भव और विकास—सुरेश सिन्हा, अशोक प्रका दिल्ली, १९६७ ई
४८. हिन्दी कहानी की रचना-प्रक्रिया—परमानन्द श्रीवास्तव, ग्रथम, कानपुर, १९६५ ई
४९ हिन्दी के वैयक्तिक निबन्ध—श्रीवल्लभ शुक्ल, साहित्य भवन, इलाहाबाद, १९६३ ई.
५० हिन्दी गद्यकाव्य का उद्भव और विकास—डा. अष्टभुजाप्रसाद पाण्डेय
५१ हिन्दी नाटक-साहित्य का इतिहास—सोमनाथ गुप्त, हिन्दी भवन, इलाहाबाद, १९४९ ई.
५२ हिन्दी नाटको का विकासात्मक अध्ययन—शान्तिलाल पुरोहित, साहित्य-सदन, देहरादून, १९६४ ई
५३ हिन्दी साहित्य मे रस—डा बरसानेलाल चतुर्वेदी
५४ हिन्दी निबन्ध का विकास—ओकारनाथ शर्मा, अनुसन्धान प्रकाशन, आचार्य-नगर, कानपुर, १९६४ ई.
५५. हिन्दी रेखाचित्र—डा हरवशलाल शर्मा, हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ प्र. १९६८ ई.
५६ हिन्दी रेखाचित्र उद्भव और विकास—कृपाशकरसिंह, विनोद पुस्तक मदिर, आगरा
५७ हिन्दी साहित्य का इतिहास—रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
५८ हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास—स. राजबली पाण्डेय, ना प्र स काशी, स. २००८
५९. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त—डा. गोविन्द त्रिगुणायत
६०. राजस्थान मे हिन्दी की स्वातन्त्र्योत्तर साहित्यिक पत्रिकाएँ—(लघु शोध-प्रबन्ध) भवरलाल पारीक, राज वि. वि जयपुर (अप्रकाशित)



पत्र - पत्रिकाएं

पाक्षिक पत्रिकाएँ

१ ओळमो किशोर कल्पनाकांत, रतनगढ
२ मारवाडी श्रीमतकुमार व्यास, जोधपुर
३ लाडेसर अम्बू शर्मा, कलकत्ता
४ मरवर अम्बू शर्मा, कलकत्ता
५. हेलो जगदीशचन्द्र शर्मा, रतनगढ
६ म्हारो देस अम्बू शर्मा, कलकत्ता

मासिक पत्रिकाएँ

७. हरावळ सत्यप्रकाश जोशी, बम्बई, जोधपुर
८ ईसरलाट बुद्धिप्रकाश पारीक, जयपुर
९ कुरजां अद्भुत शास्त्री, रतनगढ
१० जाणकारी पारस अरोडा, जोधपुर
११ जलमभोम मूलचन्द 'प्राणेश' बीकानेर

१२ वाणी (मासिक) विजयदान देथा एव कोमल कोठारी, बोरुन्दा (जोधपुर)
१३. मूमल (") महेन्द्र, बीकानेर १४ मधुमती स परिवर्तनशील, उदयपुर
१५ ओळखाण (") कल्याणसिंह शेखावत, जोधपुर
१६ उजास (") कृष्णचन्द्र शर्मा, बीकानेर
१७. राजस्थानी वीर (मासिक) नारायणदास धूत, पूना
१८ मरुवाणी (मासिक) रावत सारस्वत, जयपुर
१९ दीठ (प्रारम्भ मे द्वैमासिक, पश्चात् मासिक) स तेजसिंह जोधा, जोधपुर
२० जागती जोत (प्रारम्भ मे त्रैमासिक, पश्चात् मासिक) स परिवर्तनशील, बीकाने
२१ चामल (त्रैमासिक) प्रेमजी 'प्रेम' कोटा
२२ हेलो (") मेघराज शर्मा, बीकानेर
२३. राजस्थान भारती (त्रैमा) स परिवर्तनशील, बीकानेर
२४ वरदा (त्रैमा) मनोहर शर्मा, बिसाऊ
२५ राष्ट्र-पूजा (वार्षिक) स सीताराम महर्षि, रतनगढ

इनके अतिरिक्त मरु-श्री, उत्थान-चक्र, वैचारिकी, विश्वम्भरा, राष्ट्रभारती, परम्परा इत्यादि पत्रिकाएँ।



पुराणमित्येव न साधु सर्वम्
न चापि काव्य नवमित्यवद्यम् ।
सन्त परीक्ष्यान्यतरद् भजन्ते
मूढ परप्रत्ययनेय बुद्धि ।।

कर्णामृत सूक्तिरस विमुच्य
दोषे प्रयत्न सुमहान् खलानाम् ।
निरीक्षते केलिवन प्रविश्य
क्रमेलक कण्टकजालमेव ।।